MAHN204CCT

हिंदी नाटक, एकांकी और रंगमंच

एम.ए.

(द्वितीय सेमेस्टर के लिए)

पेपर-8

दूरस्थ शिक्षा निदेशालय

मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी

हैदराबाद-32, तेलंगाना, भारत

© Maulana Azad National Urdu University, Hyderabad
Course : Hindi Natak, Ekaanki Aur Rangmanch
ISBN: 978-93-95203-94-4
First Edition: October, 2023

Publisher	:	Registrar, Maulana Azad National Urdu University
Edition	:	2023
Copies	:	500
Price	:	340/-
Copy Editing	:	Dr. Wajada Ishrat, MANUU, Hyderabad
		Dr. L. Anil, DDE, MANUU, Hyderabad
Cover Designing	:	Dr. Mohd. Akmal Khan, DDE, MANUU, Hyderabad
Printing	:	Print Time & Business Enterprises, Hyderabad

Hindi Natak, Ekaanki Aur Rangmanch

For

M.A. Hindi

2nd Semester

On behalf of the Registrar, Published by:

Directorate of Distance Education

Maulana Azad National Urdu University

Gachibowli, Hyderabad-500032 (TS), Bharat

*Director:*dir.dde@manuu.edu.in *Publication:* ddepublication@manuu.edu.in

Phone number: 040-23008314 Website: manuu.edu.in

© All rights reserved. No part of this publication may be reproduced or transmitted in any form or by any means, electronically or mechanically, including photocopying, recording or any information storage or retrieval system, without prior permission in writing from the publisher (registrar@manuu.edu.in)

संपादक

डॉ. आफताब आलम बेग
सहायक कुल सचिव,
दूरस्थ शिक्षा निदेशालय, मानू

Editor

Dr. Aftab Alam Baig
Assistant Registrar
DDE, MANUU

संपादक-मंडल
(Editorial Board)

प्रो. ऋषभदेव शर्मा
पूर्व अध्यक्ष, उच्च शिक्षा और शोध संस्थान
दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा, हैदराबाद
परामर्शी (हिंदी), दूरस्थ शिक्षा निदेशालय, मानू

Prof. Rishabhadeo Sharma
Former Head, Higher Education and Research Centre, Dakshin Bharat Hindi Prachar Sabha, Hyderabad
Consultant (Hindi), DDE, MANUU

प्रो. श्याम राव राठोड़
अध्यक्ष, हिंदी विभाग
अंग्रेज़ी और विदेशी भाषा वि.वि.,हैदराबाद

Prof. Shyamrao Rathod
Head, Department of Hindi
EFL University, Hyderabad

डॉ. गंगाधर वानोडे
क्षेत्रीय निदेशक
केंद्रीय हिंदी संस्थान, सिकंदराबाद, हैदराबाद

Dr. Gangadhar Wanode
Regional Director
Central Institute of Hindi
Hyderabad Centre, Secunderabad, Hyd

डॉ. आफताब आलम बेग
सहायक कुल सचिव,
दूरस्थ शिक्षा निदेशालय, मानू

Dr. Aftab Alam Baig
Assistant Registrar, DDE, MANUU

डॉ. वाजदा इशरत
अतिथि प्राध्यापक/असिस्टेंट प्रोफ़ेसर (संविदा)
दूरस्थ शिक्षा निदेशालय, मानू

Dr. Wajada Ishrat
Guest Faculty/Assistant Professor (Cont.)
DDE, MANUU

डॉ. एल. अनिल
अतिथि प्राध्यापक/असिस्टेंट प्रोफ़ेसर (संविदा)
दूरस्थ शिक्षा निदेशालय, मानू

Dr. L. Anil
Guest Faculty/Assistant Professor (Cont.)
DDE, MANUU

पाठ्यक्रम-समन्वयक

डॉ. आफ़ताब आलम बेग

सहायक कुल सचिव, दूरस्थ शिक्षा निदेशालय

मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी, हैदराबाद

लेखक	**इकाई संख्या**
• **डॉ. डॉली**, सहायक प्रोफेसर, हिंदी विभाग, गुरुनानक महाविद्यालय, चेन्नै	1, 2
• **डॉ. इबरार खान**, असिस्टेंट प्रोफेसर एवं अध्यक्ष,हिंदी विभाग,मिर्ज़ा ग़ालिब कॉलेज, गया	3.
• **डॉ. वाजदा इशरत**, अतिथि प्राध्यापक/ असिस्टेंट प्रोफेसर(संविदा), दू. शि. नि. मानू	4, 10
• **डॉ. सुषमा देवी**, प्राध्यापक, हिंदी विभाग, भवन्स विवेकानंद कॉलेज, सैनिकपुरी, सिकंदराबाद	5
• **डॉ. एन. लक्ष्मीप्रिया,** असिस्टेंट प्रोफेसर, महात्मा गांधी सरकारी कॉलेज, मायाबंदर (अंडमान-निकोबार)	6
• **डॉ. सुपर्णा मुखर्जी,** प्राध्यापक, हिंदी विभाग, सेंट एन्स जूनियर एंड डिग्री कॉलेज फॉर गर्ल्स एंड वुमेन, मलकाजगिरी, हैदराबाद.	7
• **डॉ. चंदन कुमारी**, संकाय सदस्य, डॉ. बीआर अंबेडकर सामाजिक विज्ञान विश्वविद्यालय, अंबेडकरनगर (मध्य प्रदेश)	8
• **डॉ. गुर्रमकोंडा नीरजा**, एसोसिएट प्रोफेसर, उच्च शिक्षा और शोध संस्थान, दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा, मद्रास	9
• **श्री. प्रवीण प्रणव,** वरिष्ठ निदेशक (प्रोग्राम मैनेजमेंट), माइक्रोसॉफ्ट, हैदराबाद	11, 12
• **प्रो. गोपाल शर्मा**, पूर्व प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, भाषाविज्ञान विभाग अरबा मींच विश्वविद्यालय, इथियोपिया (पूर्व अफ्रीका)	13, 14
• **डॉ. विजेंद्र प्रताप सिंह**, असिस्टेंट प्रोफेसर, हिंदी राजकीय मॉडल डिग्री कॉलेज, अरनियाँ, खुर्जा, बुलंदशहर (उत्तर प्रदेश)	15, 16

विषयानुक्रमणिका

संदेश	:	कुलपति	7
संदेश	:	निदेशक	9
भूमिका	:	पाठ्यक्रम–समन्वयक	10

खंड इकाई /		**विषय**	**पृष्ठ संख्या**
खंड 1	**:**	**हिंदी नाटक का उद्भव और विकास**	
इकाई 1	:	नाटक का उद्भव और विकास	13
इकाई 2	:	हिंदी एकांकी का उद्भव और विकास	26
इकाई 3	:	हिंदी रंगमंच का उद्भव और विकास	37
इकाई 4	:	नुक्कड़ नाटक का उद्भव और विकास	54
खंड 2	**:**	**जयशंकर प्रसाद और धर्मवीर भारती**	
इकाई 5	:	जयशंकर प्रसाद : एक परिचय	62
इकाई 6	:	स्कंदगुप्त : तात्विक विवेचन	76
इकाई 7	:	धर्मवीर भारती : एक परिचय	102
इकाई 8	:	अंधायुग : वस्तु और समीक्षा	112
खंड 3	**:**	**मृणाल पाण्डेय और असग़र वजाहत**	
इकाई 9	:	मृणाल पाण्डे : एक परिचय	130
इकाई 10	:	‘चोर निकल के भागा’ का विवेचन	143
इकाई 11	:	असग़र वजाहत : एक परिचय	153
इकाई 12	:	‘गोडसे@गांधी.कॉम’ का विवेचन	165

खंड 4	**:**	**एकांकी और नुक्कड़ नाटक**	
इकाई 13	:	नाटककार जगदीशचंद्र माथुर : एक परिचय	182
इकाई 14	:	रीढ़ की हड्डी : तात्विक विवेचन	194
इकाई 15	:	सफ़दर हाशमी : एक परिचय	207
इकाई 16	:	'अपहरण भाईचारे का' का विवेचन	219
		परीक्षा प्रश्न पत्र का नमूना	**231**

प्रूफ रीडर:

प्रथम : डॉ. वाजदा इशरत, अतिथि प्राध्यापक/असिस्टेंट प्रोफ़ेसर(संविदा)

दू. शि. नि., मानू

द्वितीय : डॉ. एल. अनिल, अतिथि प्राध्यापक/असिस्टेंट प्रोफ़ेसर (संविदा),

दू. शि. नि., मानू

अंतिम : डॉ. आफताब आलम बेग, सहायक कुल सचिव, दू. शि. नि., मानू

संदेश

मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी की स्थापना 1998 में संसद के एक अधिनियम द्वारा की गई थी। यह NAAC मान्यत प्राप्त एक केंद्रीय विश्वविद्यालय है। विश्वविद्यालय का अधिदेश है: (1) उर्दू भाषा का प्रचार-प्रसार और विकास (2) उर्दू माध्यम से व्यावसायिक और तकनीकी शिक्षा (3) पारंपरिक और दूरस्थ शिक्षा के माध्यम से शिक्षा प्रदान करना, और (4) महिला शिक्षा पर विशेष ध्यान देना। यही वे बिंदु हैं जो इस केंद्रीय विश्वविद्यालय को अन्य सभी केंद्रीय विश्वविद्यालयों से अलग करते हैं और इसे एक अनूठी विशेषता प्रदान करते हैं, राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में भी मातृभाषा और क्षेत्रीय भाषाओं में शिक्षा के प्रावधान पर जोर दिया गया है।

उर्दू माध्यम से ज्ञान-विज्ञान के प्रचार-प्रसार का एकमात्र उद्देश्य उर्दू भाषी समुदाय के लिए समकालीन ज्ञान और विषयों की पहुंच को सुविधाजनक बनाना है। लंबे समय से उर्दू में पाठ्यक्रम सामग्री का अभाव रहा है। इस लिए उर्दू भाषा में पुस्तकों की अनुपलब्धता चिंता का विषय रहा है। नई शिक्षा नीति 2020 के दृष्टिकोण के अनुसार उर्दू विश्वविद्यालय मातृभाषा / घरेलू भाषा में पाठ्यक्रम सामग्री प्रदान करने की राष्ट्रीय प्रक्रिया का हिस्सा बनने का सौभाग्य मानता है। इसके अतिरिक्त उर्दू में पठन सामग्री की अनुपलब्धता के कारण उभरते क्षेत्रों में अद्यतन ज्ञान और जानकारी प्राप्त करने या मौजूदा क्षेत्रों में नए ज्ञान प्राप्त करने में उर्दू भाषी समुदाय सुविधाहीन रहा है। ज्ञान के उपरोक्त कार्य-क्षेत्र से संबंधित सामग्री की अनुपलब्धता ने ज्ञान प्राप्त करने के प्रति उदासीनता का वातावरण बनाया है जो उर्दू भाषी समुदाय की बौद्धिक क्षमताओं को मुख्य रूप से प्रभावित कर सकता है। ये वह चुनौतियां है जिनका सामना उर्दू विश्वविद्यालय कर रहा है। स्व-अध्ययन सामग्री का परिदृश्य भी बहुत अलग नहीं है। प्रत्येक शैक्षणिक वर्ष के प्रारंभ में स्कूल/कॉलेज स्तर पर भी उर्दू में पाठ्य पुस्तकों की अनुपलब्धता पर चर्चा होती है। चूंकि उर्दू विश्वविद्यालय की शिक्षा का माध्यम केवल उर्दू है और यह विश्वविद्यालय लगभग सभी महत्वपूर्ण विषयों के पाठ्यक्रम प्रदान करता है, इसलिए इन सभी विषयों की पुस्तकों को उर्दू में तैयार करना विश्वविद्यालय की सबसे महत्वपूर्ण जिम्मेदारी है। इन उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए मौलाना आज़ाद राष्ट्रीय उर्दू विश्वविद्यालय अपने दूरस्थ शिक्षा के छात्रों को स्व-अध्ययन सामग्री अथवा सेल्फ लर्निंग मैटेरियल (SLM) के रूप में पाठ्य सामग्री उपलब्ध कराता है। वहीं उर्दू माध्यम से ज्ञान प्राप्त करने के इच्छुक किसी भी व्यक्ति के लिए भी यह सामग्री उपलब्ध है। अधिकाधिक लोग इससे लाभान्वित हो सकें, इसके लिए उर्दू में इलेक्ट्रॉनिक पाठ्य सामग्री अथवा eSLM विश्वविद्यालय की वेबसाइट से मुफ्त डाउनलोड के लिए उपलब्ध है।

मुझे अत्यंत प्रसन्नता है कि संबंधित शिक्षकों की कड़ी मेहनत और लेखकों के पूर्ण सहयोग के कारण पुस्तकों के प्रकाशन का कार्य उच्च-स्तर पर प्रारंभ हो चुका है। दूरस्थ शिक्षा के छात्रों

की सुविधा के लिए, स्व-अध्ययन सामग्री की तैयारी और प्रकाशन की प्रक्रिया विश्वविद्यालय के लिए सर्वोपरि है। मुझे विश्वास है कि हम अपनी स्व-शिक्षण सामग्री के माध्यम से एक बड़े उर्दू भाषी समुदाय की आवश्यकताओं को पूरा करने में सक्षम होंगे और इस विश्वविद्यालय के अधिदेश को पूरा कर सकेंगे।

एक ऐसे समय जब हमारा विश्वविद्यालय अपनी स्थापना की 25वीं वर्षगांठ मना रहा है, मुझे इस बात का उल्लेख करते हुए हर्ष हो रहा है कि विश्वविद्यालय का दूरस्थ शिक्षा निदेशालय कम समय में स्व-अध्ययन सामग्री तथा पुस्तकें तैयार कर विद्यार्थियों को पहुंचा रहा है। देश के कोने कोने में छात्र विभिन्न दूरस्थ शिक्षा कार्यक्रमों से लाभान्वित हो रहे हैं। यद्यपि पिछले दो वर्षों के दौरान कोविड-19 की विनाशकारी स्थिति के कारण प्रशासनिक मामले और संचारचलन भी काफी कठिन रहे हैं लेकिन विश्वविद्यालय द्वारा दूरस्थ शिक्षा कार्यक्रमों को सफलतापूर्वक संचालित करने के लिए सर्वोत्तम प्रयास किया जा रहा है। मैं विश्वविद्यालय से जुड़े सभी विद्यार्थियों को इस विश्वविद्यालय का अंग बनने के लिए ह्रदय से बधाई देता हूं और यह विश्वास दिलाता हूँ कि मौलाना आज़ाद राष्ट्रीय उर्दू विश्वविद्यालय का शैक्षिक मिशन सदैव उनके के लिए ज्ञान का मार्ग प्रशस्त करता रहेगा। शुभकामनाओं सहित!

प्रो. सैयद ऐनुल हसन

कुलपति

संदेश

दूरस्थ शिक्षा प्रणाली को पूरी दुनिया में अत्यधिक कारगर और लाभप्रद शिक्षा प्रणाली की हैसियत से स्वीकार किया जा चुका है और इस शिक्षा प्रणाली से बड़ी संख्या में लोग लाभान्वित हो रहे हैं। मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी ने भी अपनी स्थापना के आरंभिक दिनों से ही उर्दू तबके की शिक्षा की स्थिति को महसूस करते हुए इस शिक्षा प्रणाली को अपनाया है। मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी का बाकायदा प्रारम्भ 1998 में दूरस्थ शिक्षा प्रणाली और ट्रांसलेशन डिविजन से हुआ था और इस के बाद 2004 में बाकायदा पारंपरिक शिक्षा का आगाज़ हुआ। पारंपरिक शिक्षा के विभिन्न विभाग स्थापित किए गए। नए स्थापित विभागों और ट्रांसलेशन डिविजन में नियुक्तियाँ हुईं। उस वक़्त के शिक्षा प्रेमियों के भरपूर सहयोग से स्व-अधिगम सामग्री को अनुवाद व लेखन के द्वारा तैयार कराया गया।
पिछले कई वर्षों से यूजीसी-डीईबी (UGC-DEB) इस बात पर ज़ोर देता रहा है किदूरस्थ शिक्षा प्रणाली के पाठ्यक्रम व व्यवस्था को पारंपरिक शिक्षा प्रणाली के पाठ्यक्रम व व्यवस्था से लगभग जोड़कर दूरस्थ शिक्षा प्रणाली के मयार को बुलंद किया जाय। चूंकि मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी दूरस्थ शिक्षा और पारंपरिक शिक्षा का विश्वविद्यालय है, अतः इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए यूजीसी-डीईबी (UGC-DEB) के दिशा निर्देशों के मुताबिक दूरस्थ शिक्षा प्रणाली और पारंपरिक शिक्षा प्रणाली के पाठ्यक्रम को जोड़कर और गुणवततापूर्ण करके स्व-अधिगम सामग्री को पुनः क्रमवार यू.जी. और पी.जी. के विद्यार्थियों के लिए क्रमशः 6 खंड-24 इकाइयों और 4 खंड – 16 इकाइयों पर आधारित नए तर्ज़ की रूपरेखा पर तैयार कराया जा रहा है।

दूरस्थ शिक्षा निदेशालय यू.जी., पी.जी., बी.एड., डिप्लोमा और सर्टिफिकेट कोर्सेज पर आधारित कुल 15 पाठ्यक्रम चला रहा है। बहुत जल्द ही तकनीकी हुनर पर आधारित पाठ्यक्रम शुरू किए जाएंगे। अधिगमकर्ताओं की सरलता के लिए 9 क्षेत्रीय केंद्र (बंगलुरु, भोपाल, दरभंगा, दिल्ली, कोलकाता, मुंबई, पटना, रांची और श्रीनगर) और 5 उपक्षेत्रीय केंद्र (हैदराबाद, लखनऊ, जम्मू, नूह और अमरावती) का एक बहुत बड़ा नेटवर्क तैयार किया है। इन केन्द्रों के अंतर्गत एक साथ 155 अधिगम सहायक केंद्र (लर्निंग सपोर्ट सेंटर) काम कर रहे हैं। जो अधिगमकर्ताओं को शैक्षिक और प्रशासनिक सहयोग उपलब्ध कराते हैं। दूरस्थ शिक्षा निदेशालय (डी. डी. ई.) ने अपनी शैक्षिक और व्यवस्था से संबन्धित कार्यों में आई.सी.टी. का इस्तेमाल शुरू कर दिया है। इसके अलावा अपने सभी पाठ्यक्रमों में प्रवेश सिर्फ ऑनलाइन तरीके से ही दे रहा है।

दूरस्थ शिक्षा निदेशालय की वेबसाइट पर अधिगमकर्ता को स्व-अधिगम सामग्री की सॉफ्ट कॉपियाँ भी उपलब्ध कराई जा रही हैं। इसके अतिरिक्त शीघ्र ही ऑडियो-वीडियो रिकॉर्डिंग का लिंक भी वैबसाइट पर उपलब्ध कराया जाएगा। इसके साथ-साथ अध्ययन व अधिगम के बीच एसएमएस (SMS) की सुविधा उपलब्ध की जा रही है। जिसके द्वारा अधिगमकर्ताओं को पाठ्यक्रमों के विभिन्न पहलुओं जैसे- कोर्स के रजिस्ट्रेशन, दत्तकार्य, काउंसलिंग, परीक्षा के बारे में सूचित किया जाता है।

आशा है कि देश में शैक्षिक और आर्थिक रूप से पिछड़ी हुई उर्दू आबादी को मुख्यधारा में शामिल करने में दूरस्थ शिक्षा निदेशालय की भी मुख्य भूमिका होगी।

प्रो. मो. रज़ाउल्लाह ख़ान
निदेशक, दूरस्थ शिक्षा निदेशालय

भूमिका

'हिंदी नाटक, एकांकी और रंगमंच' शीर्षक यह पुस्तक मौलाना आजाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी, हैदराबाद के एम.ए. (हिंदी) द्वितीय सत्र (आठवां प्रश्न पत्र) के दूरस्थ शिक्षा माध्यम के छात्रों के लिए तैयार की गई है। इसकी संपूर्ण योजना विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (यूजीसी) के निर्देशों के अनुसार नियमित माध्यम के पाठ्यक्रम के अनुरूप रखी गई है।

हिंदी साहित्य के इतिहास में अनेक विधाओं का विकास हुआ है जिसमें नाटक विधा भी महत्वपूर्ण है. भारत के संदर्भ में नाटक का उद्भव संस्कृत के नाट्यशास्त्र से माना जाता है। हिंदी साहित्य में नाटक विधा में जयशंकर प्रसाद का महत्वपूर्ण योगदान रहा रहा है। नाटक में रंगमंच होता है यह प्रत्यक्ष रूप से पाठकों को रसानुभूति प्राप्त करता है। नाटक के अनेक प्रकार है जैसे – एकांकी, गीतिनाट्य या काव्यनाट्य, नुक्कड़ नाटक और प्रहसन आदि होते हैं। 'हिंदी नाटक, एकांकी और रंगमंच' का यह पाठ्यक्रम विद्यार्थियों को हिंदी नाटक के इन विविध रूपों के विकास के साथ-साथ उनके स्वरूप से भी परिचित कराएगा।

यह पुस्तक पाठ्यचर्या के अनुरूप चार खंडों में विभाजित है। हर खंड में चार-चार इकाइयाँ शामिल हैं। पहले खंड में संक्षेप में हिंदी नाटक, एकांकी, रंगमंच और नुक्कड़ नाटक का उद्भव एवं विकास पर चर्चा की गयी है। दूसरे खंड में नाटक विधाओं के प्रमुख नाटककारों के रूप में जयशंकर प्रसाद और धर्मवीर भारती का परिचय देते हुए उनके एक-एक नाटक को प्रस्तुत किया गया है। पुस्तक के तीसरे खंड में मृणाल पाण्डेय और असगर वजाहत का परिचय देते हुए उनके एक-एक नाटक 'चोर निकलकर भागा' और 'गोडसे @ गांधी.कॉम ' को प्रस्तुत किया गया । चौथे खंड में जगदीशचंद्र माथुर और सफ़दर हाश्मी का परिचय देते हुए उनकी एक-एक एकांकी 'रीढ़ की हड्डी' और 'अपहरण भाईचारे का' का उल्लेख किया गया है।

इस पुस्तक के अध्ययन से विद्यार्थी हिंदी गद्य की विधागत विविधता, विषयगत प्रौढ़ता, भाषागत यात्रा और शैलीगत परिधि के विस्तार को आत्मसात कर सकेंगे। अध्येय पाठों का चयन इस प्रकार किया गया है कि उनके अध्ययन से छात्रों का वैयक्तिक और मानसिक विकास हो सके, उनके भीतर राष्ट्रीय चेतना और लोकतांत्रिक मूल्यों की समझ विकसित हो सके तथा हिंदी के माध्यम से सामाजिक समरसता का संस्कार निर्मित हो सके।

इस समस्त पाठ सामग्री को तैयार करने में हमें जिन विद्वान इकाई लेखकों, ग्रंथों, ग्रंथकारों और पत्र-पत्रिकाओं से सहायता मिली है, उन सबके प्रति हम कृतज्ञ हैं।

-डॉ. आफताब आलम बेग

पाठ्यक्रम समन्वयक

हिंदी नाटक, एकांकी और रंगमंच

Estd. 1998
MAULANA AZAD NATIONAL URDU UNIVERSITY

इकाई 1 : नाटक का उद्भव और विकास

रूपरेखा

1.1 प्रस्तावना
1.2 उद्देश्य
1.3 मूल पाठ : नाटक का उद्भव और विकास
1.3.1 नाटक का अर्थ, परिभाषा और स्वरूप
1.3.2 नाटक का उद्भव और विकास
1.3.3 नाटक के तत्व
1.3.4 नाटक के प्रकार
1.3.5 नाटक की विशेषताएँ और महत्व
1.4 पाठ सार
1.5 पाठ की उपलब्धियाँ
1.6 शब्द संपदा
1.7 परीक्षार्थ प्रश्न
1.8 पठनीय पुस्तकें

1.1 प्रस्तावना

आचार्य भरतमुनि ने अपने नाट्यशास्त्र में नाटक की उत्पत्ति चारों वेदों के उपरांत स्वीकार की है। कुछ विद्वान इसकी उत्पत्ति यूनान के अनुकरण से मानते हैं। हिंदी साहित्य के इतिहास में हम देखते हैं कि सन 1850 के पश्चात हिंदी नाट्य परंपरा का प्रारंभ हुआ। इसके पूर्व जो नाट्य रचनाएँ मिलती हैं, उनमें आधुनिक नाटक की विशेषताएँ नहीं हैं। यह पद्य में लिखे गए नाट्य काव्य है। भारत में रामलीला, नौटंकी, स्वांग आदि नाटकों का अभाव नहीं रहा है किंतु भारतेंदु युग में हिंदी नाट्य परंपरा का जो प्रारंभ हुआ, वह आज तक अक्षुण्ण धारा के रूप में प्रवहमान है। नाटककार अपनी रचनाओं से मनुष्य को जीवन के सर्वोच्च आनंद की ओर ले जाता है। वह उसकी जड़ता समाप्त कर मनोबल बढ़ाता है तथा उसके हृदय में आनंद एवं उल्लास भरता है। उसकी यही व्यवहारिक दृष्टि उसे ऊँचाइयों की ओर ले जाती है तथा उसके नाटकों को सार्वभौमिक बनाती है। ऐसे नाटक पाठकों को आनंद से भर देते हैं और जीवन की सच्चाई से अवगत कराते हैं। जब हम नाट्य साहित्य उठाकर देखते हैं तो यह पाते हैं कि उनमें अखंडता, उदारता तथा व्यावहारिकता, आनंद एवं सौंदर्य समाविष्ट होते हैं। जगत ऐसे नाट्य साहित्य को स्वीकृति प्रदान करता है। जो नाटककार जगत की उपेक्षा करता है वह कभी अपने नाटकों के साथ न्याय नहीं कर सकता। सच्चे नाटककार जन-जन में नव चेतना का संचार करते हैं और ऐसे नाटककार अपने कृतियों के द्वारा पाठकों के बीच सदा के लिए अमर हो जाते हैं। उपन्यास, कहानी आदि के पश्चात नाटक का आना इस बात का सूचक है कि तत्कालीन समाज में व्याप्त विसंगतियों और विषमताओं को व्यक्त करने के लिए नाटकों का प्रारंभ हुआ। इस इकाई में आप नाटक के उद्भव और विकास की जानकारी प्राप्त करेंगे।

1.2 उद्देश्य

प्रिय छात्रो! इस इकाई को पढ़ने के बाद आप -

- नाटक के उद्भव और विकास को समझ सकेंगे।
- नाट्य परंपरा के साथ-साथ इसकी विशेषताओं और महत्व को जान सकेंगे।
- नाट्य और नाटककार के अंतर्संबंध को समझ पाएँगे।
- नाटक के सौंदर्य और उपयोगिता से अवगत हो सकेंगे।
- नाट्य लेखन के उद्देश्य को समझ सकेंगे।

1.3 मूल पाठ : नाटक का उद्भव और विकास

1.3.1 नाटक का अर्थ, परिभाषा और स्वरूप

अभिनय की दृष्टि से संवादों एवं दृश्यों पर आधारित विभिन्न चरित्रों के द्वारा रंगमंच पर प्रस्तुत करने के लिए लिखी गई साहित्यिक रचना नाटक कहलाती है। नाटक में श्रव्य काव्य से अधिक रमणीयता होती है। नाटक 'नट' शब्द से निर्मित है जिसका अर्थ है सात्विक भावों का अभिनय। यह दृश्य काव्य के अंतर्गत आता है। इसका प्रदर्शन रंगमंच पर होता है। भारतेंदु हरिश्चंद्र ने नाटक के लक्षण बताते हुए लिखा है कि 'नाटक शब्द का अर्थ नट लोगों की क्रिया है। दृश्य काव्य की संज्ञा रूपक है। रूपकों में नाटक ही सबसे मुख्य है, इससे रूपक मात्र को नाटक कहते हैं।'

हिंदी में नाटक लिखने का प्रारंभ भले ही पद्य के द्वारा हुआ लेकिन आज के नाटकों में गद्य की प्रमुखता है। नाटक गद्य का वह कथात्मक रूप है जिसे अभिनय, संगीत, नृत्य, संवाद आदि के माध्यम से रंगमंच पर अभिनीत किया जा सकता है। नाटक ऐसा साहित्य है जिसमें जीवन अपनी समग्रता में उद्घाटित होता है। यह ऐसा साहित्यिक रूप है जिसमें अन्य विधाओं की तुलना में साहित्य मूल्यों के साथ ही दृश्य मूल्यों का भी समायोजन होता है। नाटक गद्य का वह कथात्मक रूप है जिसे अभिनय, संगीत, नृत्य, संवाद के माध्यम से रंगमंच पर अभिनीत किया जा सकता है।

अलग-अलग विद्वानों ने नाटक को परिभाषित करने का प्रयास किया है। कुछ प्रमुख परिभाषाएँ इस प्रकार हैं।

नाटक या दृश्य काव्य में अभिनय का प्रधान स्थान होता है। दृश्य कार्य के भीतर का व्यवस्थित चरित्र और दृश्यों का इसी प्रकार से संगठन होता है जिन्हें रंगमंच पर दिखाया जा सकता है। आचार्य भरतमुनि ने नाटक की परिभाषा करते हुए कहा है कि 'यह संपूर्ण लोक का भावानुकीर्तन है।'

भारतेंदु हरिश्चंद्र के अनुसार नाटक शब्द का अर्थ नट लोगों की क्रिया है। दृश्य काव्य की संज्ञा रूपक है। रूपकों में नाटक ही सबसे मुख्य है। रूपक मात्र को नाटक कहते हैं। बाबू गुलाब राय के अनुसार नाटक में जीवन की अनुकृति को शब्दगत संकेतों में संकुचित करके उसको सजीव पात्रों द्वारा एक चलते-फिरते सप्राण रूप में अंकित किया जाता है। नाटक में फैले जीवन

व्यापार को ऐसी व्यवस्था के साथ रखते हैं कि अधिक से अधिक प्रभाव उत्पन्न हो सके। नाटक का प्रमुख उपादान है उसकी रंगमंचीयता।

नाटक काव्य कला का सर्वश्रेष्ठ अंग है। अभिनय के माध्यम से समाज एवं व्यक्ति के चरित्रों का प्रदर्शन ही नाटक है। इसमें कथा-तत्व की प्रधानता होती है। परंपरागत रूप से नाटक कम से कम पाँच अंकों का होना चाहिए जिसमें आरंभ, विकास, चरम एवं अंत दिखाया जाता है। नाटक का उद्देश्य समाज के हृदय में रक्त का संचार करना होता है। पश्चिमी और भारतीय साहित्यकारों ने साहित्य को जीवन की व्याख्या माना है और उसे उसी प्रकार से अपनाया है। नाट्य विधा की परिधि अत्यंत व्यापक है। नाटक में कथा, रस, नृत्य, संगीत, अलंकार, रंग, शिल्प, चित्रकला, वेशभूषा के साथ-साथ एक व्यापक समाज जो नाटकों का दर्शक होता है, इन सभी के मिले-जुले समन्वित रूप को नाटक कहते हैं। नाटक एक समग्र संरचना है। यही इसका स्वरूप है। पाश्चात्य आलोचकों ने नाटक को 'मिश्र कला' माना है। निःसंदेह यह एक जटिल कला रूप है जिसमें एक साथ कई कलाओं का समाहार होता है। यह एक प्राचीन विधा है। इस पर भारतीय एवं पाश्चात्य साहित्य-शास्त्र में प्राचीन काल से गहन चिंतन हुआ है। भारतीय काव्यशास्त्र में भरतमुनि का 'नाट्यशास्त्र' और पाश्चात्य चिंतन में अरस्तु का 'पोएटिक्स' ग्रंथ इस संदर्भ में प्रारंभिक सूत्र माने जाते हैं। नाटक के स्वरूप को परिभाषित करते हुए भरतमुनि कहते हैं कि 'देवता, ऋषि, राजा तथा गृहस्थ जन के जीवन की पूर्व घटनाओं का अनुकरणात्मक प्रदर्शन ही नाट्य कहलाता है।"

बोध प्रश्न

- नाटक किस शब्द से निर्मित है?
- नाटक किसका कथात्मक रूप है?
- नाटक का प्रमुख उपादान क्या है?
- हिंदी में नाटक लिखने का प्रारंभ किस विधा द्वारा हुआ है?
- नाटक में कम से कम कितने अंक होने चाहिए?
- पोएटिक्स के रचनाकार कौन हैं?

1.3.2 नाटक का उद्भव और विकास

हिंदी साहित्य में नाटकों का विकास वास्तव में आधुनिक काल में भारतेंदु युग से हुआ। भारतेंदु युग से पूर्व भी कुछ नाटक पौराणिक, राजनैतिक, सामाजिक आदि विषयों को लेकर लिखे गए। सत्रहवीं-अट्ठारहवीं शताब्दी में रचे गए नाटकों में मुख्य हैं हृदयराम का हनुमन्नाटक, बनारसीदास का समयसार। आचार्य भरतमुनि ने अपने नाट्यशास्त्र में नाटक की उत्पत्ति चार वेदों के उपरांत स्वीकार की है। कुछ विद्वान इसकी उत्पत्ति यूनान के अनुकरण पर मानते हैं परंतु यह निराधार है। भारतीय नाटकों की अपनी मौलिक विशेषता है। हिंदी में नाटक परंपरा का आरंभ भारतेंदु हरिश्चंद्र जी से ही माना जाता है। इनके पूर्व नाटक नाम की जो रचनाएँ मिलती हैं, उनमें आधुनिक नाटक की विशेषताएँ नहीं मिलतीं। यह पद्य में लिखे गए नाटकीय काव्य है। भारत में रामलीला, स्वांग, नौटंकी और नाटकों का अभाव नहीं रहा है, परंतु भारतेंदु ने भिन्न-भिन्न आदर्शों पर नाटकों की रचना आरंभ की। अंग्रेजी, संस्कृत तथा बंगला के नाटकों के अनुवाद

के साथ इन्होंने मौलिक नाटक भी लिखे। भारतेंदु युग से लेकर अब तक नाट्य साहित्य का जो विकास हुआ, उसे निम्नलिखित युगों में बाँट सकते हैं- भारतेंदु युग, द्विवेदी युग, प्रसाद युग, प्रसादोत्तर युग।

भारतेंदु युग

भारतेंदु युग में भारतेंदु के साथ-साथ अन्य प्रसिद्ध रचनाकार हैं बालकृष्ण भट्ट, प्रताप नारायण मिश्र, बद्रीनारायण चौधरी प्रेमघन, बालमुकुंद गुप्त, राधाचरण गोस्वामी आदि। भारतेंदु हरिश्चंद्र हिंदी नाटक के जन्मदाता ही नहीं, अपने युग के सर्वश्रेष्ठ नाटककार भी हैं। इनकी सफलता का सबसे बड़ा कारण इनका रंगमंच विषयक ज्ञान और अनुभव था। इनके नाटकों के कथानक इतिहास, पुराण तथा समसामयिक विषयों से जुड़े रहे। जिस सामाजिक चेतना को काव्य द्वारा उन्होंने व्यक्त करना चाहा। उसके लिए नाटक उन्हें उचित माध्यम प्रतीत हुए। इन्होंने हास्य तथा व्यंग्य के माध्यम से सामाजिक कुरीतियों पर प्रहार किया। इनकी नाट्य कला पर अंग्रेजी, बंगला और संस्कृत तीनों भाषाओं के नाटकों का प्रभाव है। इन्होंने अपना नाटक विद्यासुंदर सन 1867 में प्रकाशित किया। उन्होंने अनेक नाटकों की रचना की जिनमें प्रमुख हैं- वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति, चंद्रावली नाटक वैष्णो भक्ति पर लिखा गया है। नीलदेवी नाटक में नारी व्यक्तित्व की प्रतिष्ठा की गई है। यह दुखांत नाटक की परंपरा के नजदीक है। 'भारत दुर्दशा' में पराधीन भारत की दयनीय आर्थिक एवं सामाजिक स्थितियों का चित्रण है। 'सती प्रताप' सावित्री के पौराणिक आख्यान पर लिखा गया नाटक है। 'अंधेर नगरी' नाटक में भले ही कलेवर छोटा हो किंतु यह नाटक हास्य और व्यंग्य से परिपूर्ण है जिसमें सामाजिक और राजनैतिक परिवेश पर तीखा व्यंग्य किया गया है। भारतेंदु के नाटकों में देश की गरीबी, पराधीनता, अमानवीय शोषण, नवजागरण आदि विषय वस्तु के रूप में चुना गया है।

लाला श्रीनिवास दास के प्रसिद्ध नाटकों में संयोगिता स्वयंवर, राधाचरण गोस्वामी का प्रसिद्ध नाटक अमर सिंह राठौड़, राधाकृष्ण दास का नाटक महाराणा प्रताप, दुखिनी बाला, किशोरीलाल गोस्वामी का मयंक मंजरी, बालकृष्ण भट्ट का नई रोशनी का विष, अंबिकादत्त व्यास का भारत सौभाग्य, गोपाल राम गहमरी का देश दशा अत्यंत प्रसिद्ध हैं। भारतेंदु युगीन नाटककारों ने समाज में व्याप्त अंधविश्वासों और सामाजिक विषमताओं को दूर करने के लिए नाटकों की रचनाएँ की और अनुवाद भी किए। हास्य और व्यंग्य शैली को माध्यम बनाकर पश्चिमी सभ्यता, विदेशी शासन और सामाजिक अंधविश्वासों पर करारा व्यंग्य किया। इस समय के नाटकों में जनवादी विचारधारा, प्रकृति वर्णन, राष्ट्रप्रेम का भाव, भारतीय संस्कृति का गौरवगान जैसी विशेषताएँ दिखाई देती हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि भारतेंदु जी ने नाट्य रचना के क्षेत्र में सर्वाधिक महत्वपूर्ण कार्य किया। उनकी नाट्य रचनाओं को अनुदित नाटक, रूपांतरित नाटक और मौलिक नाटक तीन वर्गों में बाँटा जा सकता है। इन्होंने संस्कृत, बंगला, अंग्रेजी कई भाषाओं के नाटकों का अनुवाद हिंदी में किया। इस युग के नाटकों में देशभक्ति की भावना, राष्ट्रीय जागरण, समाज सुधार, सांस्कृतिक चेतना की भावना दिखाई देती है। पौराणिक नाटक भी लिखे गए तथा ऐतिहासिकता के आधार पर महाराणा प्रताप, मीराबाई, संयोगिता स्वयंवर आदि नाट्य रचनाएँ लिखी गईं। नारी जीवन को लेकर भी अनेक नाटक लिखे गए।

मयंक मंजरी नाटक किशोरी लाल गोस्वामी द्वारा लिखा गया और श्रीनिवास दास द्वारा रणधीर प्रेम मोहिनी नाटक लिखा गया।

द्विवेदी युग

द्विवेदी युग में हिंदी नाटक का विकास अपनी गति को बैठा। इस युग के नाटककारों को एक तो परंपरागत रंगमंच उपलब्ध नहीं हो पाया और दूसरे इनका मध्य वर्ग से संबंध टूट गया। द्विवेदी युग के नाटकों में सुधारवादी दृष्टिकोण स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। इस युग के अधिकांश नाटक इसी भावना को लेकर लिखे गए। पारसी रंगमंच हिंदी क्षेत्र पर छा गया और हिंदी रंगमंच अपना अस्तित्व खोने लगा। इस युग के प्रमुख नाटककारों में आगा हश्र, नारायण प्रसाद, पंडित राधेश्याम कथावाचक, हरिकृष्ण जौहर आदि का नाम लिया जा सकता है।

प्रसाद युग के नाटक

जयशंकर प्रसाद बहुमुखी प्रतिभा के धनी साहित्यकार माने जाते हैं। उन्होंने कवि होने के साथ-साथ कहानी, उपन्यास और नाटक के क्षेत्र में अपनी प्रतिभा का लोहा मनवाया। कवि के बाद प्रसाद नाटककार के रूप में ही सर्वाधिक प्रसिद्ध हुए। इन्होंने आरंभ में कल्याणी परिणय, करुणालय, प्रायश्चित आदि रूपक लिखे किंतु उनके प्रतिभा का उदय राज्यश्री नाटक से माना जा सकता है। इसके पश्चात उनके प्रसिद्ध नाटकों में विशाखदत्त, अजातशत्रु, जनमेजय का नागयज्ञ, एक घूँट, कामना, स्कंदगुप्त, चंद्रगुप्त और ध्रुवस्वामिनी जैसे नाटक माने जाते हैं। इस काल के अन्य नाटककारों में श्री वियोगी हरि, मैथिलीशरण गुप्त, विश्वंभरनाथ शर्मा 'कौशिक' आदि माने जाते हैं। इस समय के लिखे गए नाटकों में विशेष रूप से राष्ट्रीय चेतना के स्वर, सांस्कृतिक चेतना, देशभक्ति आदि की भावनाओं के साथ-साथ मानवीय करुणा और विश्वबंधुत्व की भावना के स्वर सुनाई देते हैं।

प्रसादोत्तर नाटक

प्रसादोत्तर काल से लेकर स्वतंत्रता प्राप्ति तक हिंदी नाटक कई धाराओं में विभक्त रहा। इस काल में एक ओर प्रसाद की नाट्य परंपरा का अनुसरण होता रहा तो दूसरी ओर यथार्थवादी और सामाजिक समस्यामूलक प्रवृत्तियों के आधार पर नाटक लिखे गए। प्रसाद के नाट्य परंपरा की वास्तविक पुनरावृत्ति कभी संभव नहीं हुई क्योंकि, प्रसाद का अपना एक व्यक्तित्व और अपनी प्रतिभा थी, जिसका मुकाबला कोई अन्य नहीं कर पाया था। प्रसादोत्तर युग में हरिकृष्ण प्रेमी, चंद्रगुप्त विद्यालंकार, गोविंद बल्लभ पंत और वृंदावनलाल वर्मा आदि रहे। इन्होंने ऐतिहासिक नाटक रचना की परंपरा को कायम रखा। जहाँ प्रसाद जी ने प्राचीन भारत के गौरवमयी चित्र प्रस्तुत किए थे, वहीं हरिकृष्ण प्रेमी ने अपने नाटकों में मध्यकाल को स्थान दिया। उनके नाटकों में रक्षाबंधन, शिवा साधना, कीर्ति स्तंभ आदि नाटक उल्लेखनीय हैं। जगदीश चंद्र माथुर द्वारा लिखे गए नाटक कोणार्क और शारदीया ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर लिखे हुए नाटक उल्लेखनीय हैं। इस युग के नाटकों की एक महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि इस युग में ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर नाटक लिखे भी गए तो उन्हें समसामयिक आधार पर एक नए रंग में प्रस्तुत किया गया। उदाहरण के लिए मोहन राकेश द्वारा रचित नाटक 'लहरों के राजहंस' ऐतिहासिक पृष्ठभूमि से होते हुए भी मनुष्य के उस अंतर्द्वंद को व्यक्त करता है जो आधुनिक

मानव के लिए अधिक प्रासंगिक लगता है। 'आधे अधूरे' (मोहन राकेश) नाटक भी आधुनिक मध्यवर्गीय परिवार की त्रासद अभिव्यक्ति है। इसी प्रकार नरेश मेहता और मन्नू भंडारी के नाटकों में आधुनिक बोध स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। इस तरह आधुनिक हिंदी साहित्य की अन्य विधाओं के मुकाबले में हिंदी नाटक का विकास अपेक्षाकृत मंद गति से हुआ। वर्तमान स्थितियों में नाटककार नाटक विधा को जीवित रखे हुए हैं और समय की माँग के अनुसार उनमें नए-नए तत्वों का समावेश कर उसे रुचिकर बना रहे हैं।

बोध प्रश्न

- आचार्य भरतमुनि ने अपने नाट्यशास्त्र में नाटक की उत्पत्ति किस प्रकार माना है?
- नाटक का उद्भव और विकास किस सदी से स्वीकार किया जाता है?
- नाट्य साहित्य का विकास किस युग से माना गया?
- भारतेंदु से पूर्व किस भाषा में नाटक लिखे गए?
- शकुंतला नाटक के रचनाकार कौन हैं?
- हिंदी नाटक के विकास को कितने वर्गों में बाँटा गया है?
- वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति किसके द्वारा लिखा गया है?
- द्विवेदी युग में किस दृष्टिकोण से नाटक देखे गए हैं?

1.3.3 नाटक के तत्व

विद्वानों के मतानुसार नाटक के प्रमुख तत्व इस प्रकार हैं - वस्तु, नेता और रस। इसी प्रकार अरस्तु ने नाटक के छह तत्व माने हैं- कथानक, चरित्र चित्रण, पद रचना, विचार तत्व, दृश्य विधान और गीत। जब नाटक कार नाटक की कल्पना करता है तो वह इन तत्वों को अलग-अलग ग्रहण नहीं करता। नाटक एक प्रयोगशील विधा है और इसमें प्रयोगों की गुंजाइश सबसे अधिक होती है। आधुनिक काल में नाट्य संरचना में कार्य व्यापारों का महत्वपूर्ण स्थान माना गया है, लेकिन अनेक परिवर्तनों के बावजूद नाटक को नाट्य विधा के रूप में स्थापित करने वाले स्थायी सूत्र ही नाटक के तत्व हैं अतः उन्हें इस प्रकार देखा जा सकता है-

कथावस्तु- कथावस्तु को नाटक ही कहा जाता है। अंग्रेजी में इसे प्लॉट या थीम कहते हैं, जिसका अर्थ है आधार या भूमि। नाटकों में कथावस्तु का विशेष महत्व होता है क्योंकि, कथावस्तु को केंद्र में रखकर पूरे नाटक का ताना-बाना बुना जाता है। कथावस्तु का तीन भागों में बँटा होना चाहिए। इसका प्रारंभ रुचिकर होना चाहिए, मध्य भाग में कथा का विकास होना चाहिए और अंत में उद्देश्य की पूर्ति होनी चाहिए। कथा एक बीज की तरह होती है। जिस प्रकार आधार के बिना स्तंभ खड़ा नहीं होता, उसी प्रकार नाट्य की रचना के लिए कथा का आधार नितांत आवश्यक है। भारतीय आचार्यों ने कथावस्तु में सर्वभाव, सर्वरस और सर्वकर्मों की प्रवृत्तियों का तथा विभिन्न अवस्थाओं का संविधान आवश्यक माना है। कथावस्तु एक ऐसा समन्वयकारी तत्व है जो कई नाटकीय उपादानों को विभिन्न अंतः सूत्रों से जोड़ता है और अर्थों का निर्माण करता है। नाटककार जो कुछ भी कहना चाहता है उसके लिए कथावस्तु एक माध्यम है। यह एक ऐसा क्षेत्र है जिसमें नाटक का बीज वपन होता है। नाटक की कथावस्तु में जीवन के सघन और सात्विक रूप की खोज के आयाम भी बदलते गए हैं।

पात्र एवं चरित्र- नाटकों में अपने विचारों, भावों आदि का प्रतिपादन चरित्रों के माध्यम से ही किया जाता है। चरित्र दो प्रकार के होते हैं- मूल चरित्र और गौण चरित्र। कथा मूल चरित्र के इर्द-गिर्द घूमती है और गौण चरित्र कथा के विकास में सहायक होते हैं। चरित्रों के व्यक्तित्व की पहचान उनके संवादों से होती है। चरित्रों के माध्यम से कथावस्तु गतिशील होती है। चरित्रों को एक और कथावस्तु की अपेक्षाओं को पूरा करना होता है तो दूसरी ओर मानवीय अभाव और परिवेश के बीच खड़ा होना होता है नाटकीय चरित्र अभिनेता के माध्यम से प्रत्यक्ष रूप में प्रेक्षक तक पहुँचता है। सत्य नाटक का सत्य होता है चरित्र की सफलता इसी में है कि नाटककार अपने चरित्रों को भावों और विचारों की पूर्णता दें।

कथोपकथन या संवाद- नाटक में संवादों का विशेष महत्व होता है क्योंकि, संवादों के द्वारा ही चरित्र के व्यक्तित्व पर प्रकाश पड़ता है। नाटक शब्द आश्रित कला है अतः नाटककार के लिए भाषा और संवाद बहुत बड़ी चुनौती होते हैं। संवाद को नाटक का कलेवर माना जाता है। नाटक की भाषा को अत्यंत अर्थगर्भित, सघन और मितव्ययी होना चाहिए। भाषा और संवाद नाटक के नाटक के ढाँचे का एहसास कराते हैं। यह जीवन के घनीभूत क्षणों की अभिव्यक्ति करता है। अतः नाटक के भाषा और संवाद जीवन के अत्यंत निकट होने चाहिए। संवाद पात्रों के अनुकूल होने चाहिए। देश काल विषय के अनुकूल होने चाहिए, संक्षिप्त होने चाहिए, गतिशील सरल और तर्कसंगत होने चाहिए। नाटक में नाटककार के पास अपनी ओर से कुछ कहने का अवकाश नहीं रहता। वह संवादों के द्वारा ही वस्तु का उद्घाटन तथा पात्रों के चरित्र का विकास करता है।

देशकाल- वातावरण और रंग निर्देश - नाट्य रचना की प्रक्रिया सिर्फ नाटककार द्वारा लिखे जाने पर ही समाप्त नहीं हो जाती बल्कि उसका संप्रेषण रंगमंच पर जाकर होता है और रंगमंच गतिशील कार्य व्यापार के रूप में जीवन की अनुभूति को प्रस्तुत करता है। देशकाल वातावरण के चित्रण में नाटककार को तत्कालीन युग के प्रति विशेष सतर्क रहना पड़ता है। पश्चिमी नाटकों में देश काल के अंतर्गत संकलन त्रय अर्थात समय, स्थान और कार्य की कुशलता का वर्णन किया जाता है। यह तीनों तत्व यूनानी रंगमंच के अनुकूल थे, किंतु आज रंगमंच के विकास के कारण संकलन-त्रय का महत्व कम हो गया है। भारतीय नाट्य-शास्त्र में इसका उल्लेख न होते हुए भी नाटक में स्वाभाविकता, औचित्य तथा सजीवता की प्रतिष्ठा के लिए देश काल वातावरण का उचित ध्यान रखा जाता है। इसके अंतर्गत पात्रों की वेशभूषा, धर्म, युगीन राजनीति और सामाजिक परिस्थितियों का विशेष स्थान है, अतः नाटक के तत्वों में देश काल वातावरण का अपना महत्व है।

रस और अभिनय- नाटक में नौ रसों में से आठ का ही परिपाक होता है। शांत रस नाटक के लिए निषिद्ध माना गया है। वीर या शृंगार में से कोई एक रस नाटक का प्रधान रस होता है। अभिनय नाटक की प्रमुख विशेषता है। नाटक को नाटक के तत्व प्रदान करने का श्रेय अभिनय को ही जाता है। यही नाट्य तत्व वह गुण है जो दर्शकों को अपनी ओर आकर्षित करता है। इस संबंध में नाटककार को नाटकों के रूप, आकार, दृश्यों की सजावट और उसके उचित संतुलन, परिधान व्यवस्था, प्रकाश व्यवस्था आदि का पूरा ध्यान रखना पड़ता है। दूसरे शब्दों में लेखक

की दृष्टि रंगशाला के विधि-विधानों की ओर विशेष रूप से होनी चाहिए। इसी में नाटक की सफलता निहित है।

उद्देश्य- नाटक सदैव उद्देश्य की पूर्ति के लिए लिखे जाते हैं। नाटक एक साहित्यिक विधा ही नहीं है बल्कि एक सामाजिक घटना भी है। समाज के हृदय में रक्त का संचार करना ही नाटकों का उद्देश्य होता है। नाटक के अन्य तत्व इस उद्देश्य के साधन मात्र होते हैं। भारतीय दृष्टिकोण सदैव आशावादी रहा है, इसलिए संस्कृत के सभी नाटक प्रायः सुखांत रहे हैं। पश्चिम नाटककारों व साहित्यकारों ने साहित्य को जीवन की व्याख्या मानते हुए उसके प्रति यथार्थ दृष्टिकोण अपनाया है। उसके प्रभाव से हमारे यहाँ भी कई दुखांत नाटक लिखे गए किंतु सत्य यह है कि उदास पात्रों के दुखांत से मन खिन्न हो जाता है, अतः दुखांत नाटकों का प्रचार कम होना चाहिए।

बोध प्रश्न

- अरस्तु ने नाटक के कितने तत्व माने हैं?
- नाटक कलेवर किसे माना जाता है?
- नाटक में देश काल का क्या महत्व है?

1.3.4 नाटक के प्रकार

नाटक में चार प्रकार के अभिनय किए जाते हैं। इसमें आंगिक अभिनय का बहुत महत्व होता है। शरीर द्वारा किए जाने वाले अभिनय को आंगिक अभिनय कहते हैं। इसी प्रकार वाचिक अभिनय अपना विशेष स्थान रखता है। जब संवाद का अभिनय किया जाता है तो उसे वाचिक अभिनय कहते हैं। इसी प्रकार आहार्य अभिनय अर्थात वेशभूषा, मेकअप, स्टेज विन्यास, प्रकाश व्यवस्था आदि इससे जुड़े होते हैं। सात्विक अभिनय अंतरात्मा से किया गया अभिनय कहलाता है। इसमें रस आदि आते हैं। नाटक की गिनती काव्यों में होती है। काव्य दो प्रकार के माने गए हैं- श्रव्य काव्य और दृश्य काव्य। नाटक को दृश्य काव्य का एक भेद माना गया है। पर दृश्य द्वारा मुख्य रूप से इसका ग्रहण होने के कारण दृश्य काव्य मात्र को नाटक कहने लगे। दृश्य काव्य के मुख्य दो भाग हैं- रूपक और उपरूपक। रूपक के 10 भेद हैं। भारत में अभिनय कला और रंगमंच का वैदिक काल में ही निर्माण हो चुका था। उसके पश्चात संस्कृत रंगमंच तो अपनी उन्नति की पराकाष्ठा पर पहुँच गया था। भरतमुनि का नाट्य-शास्त्र इसी का प्रमाण है। बहुत प्राचीन समय में भारत में संस्कृत नाटक धार्मिक अवसरों, सांस्कृतिक पर्वों, सामाजिक समारोहों में खेले जाते थे। नाटक के प्रकारों में लोक नाटकों का विशेष महत्व है। आज अलग-अलग प्रदेशों में लोक नाटक भिन्न-भिन्न नामों से जाने जाते हैं जैसे उत्तर भारत में रामलीला, बंगाल उड़ीसा पूर्वी बिहार में जात्रा, महाराष्ट्र में तमाशा, उत्तर प्रदेश, राजस्थान, पंजाब में नौटंकी, गुजरात में भवई, कर्नाटक में यक्षगान, तमिलनाडु में तेरुकूत्तु, छत्तीसगढ़ में नाचा आदि।

नाटकों के प्रकारों में संस्कृत नाटक, हिंदी नाटक, एकांकी नाटक, काव्य नाटक, नुक्कड़ नाटक, एकांकी, लोक नाटक, रामलीला, रासलीला, रेडियो नाटक आदि। पहले संस्कृत, हिंदी आदि भाषाओं में विभिन्न प्रकार के सामाजिक विषयों को लेकर नाटक लिखे जाते थे और रंगमंच की व्यवस्था न होने के कारण एक विशेष स्थान पर उनका मंचन किया जाता था, किंतु धीरे-धीरे पारसी रंगमंच का उदय हुआ और नाटकों के लेखन में परिवर्तन हुआ। यह देखा जाने लगा

कि जो भी नाटक लिखे जाते हैं क्या रंगमंच की दृष्टि से वे उपयुक्त हैं। यदि हम प्रसाद के नाटकों को देखें तो उनके नाटकों को रंगमंच की दृष्टि से बदलाव करते हुए खेला जा सकता है।

साहित्य की वह विधा जो रेडियो पर सुनी जाती है उसे रेडियो नाटक कहते हैं। रेडियो श्रव्य माध्यम है। रेडियो नाटक को अंधेरे का नाटक भी कहा जाता है। इसका कारण यह है कि इसका मंचन अदृश्य होता है अर्थात इसे नहीं देखा जा सकता, सिर्फ सुना जा सकता है। भाषा, संवाद, नरेशन, ध्वनि एवं संगीत नाटक के उपकरण होते हैं और कथानक, दृश्य, संवाद एवं उद्देश्य नाटक के प्रमुख बिंदु। नाटककार में संवेदनशीलता का होना बहुत जरूरी है। अध्ययन एवं अनुभव जितना अधिक होगा उतनी ही उसकी प्रक्रिया शक्तिशाली होगी। विचारों का विपुल भंडार होगा। संवादों में रोचकता होगी। नाटककार अपने परिवेश के पात्रों से नाटक से सूत्र प्राप्त कर सकता है। रंगमंचीय नाटक और रेडियो नाटक में बहुत अंतर होता है। रंगमंचीय नाटकों में दृश्य तथा श्रव्य तत्व दोनों विद्यमान होते हैं, जबकि रेडियो नाटक मात्र श्रव्य होता है।

बोध प्रश्न

- नाटक में कितने प्रकार के अभिनय किए जाते हैं?
- सात्विक अभिनय क्या है?
- अंधेरे का नाटक किसे कहा जाता है?
- रंगमंचीय नाटक और रेडियो नाटक में क्या अंतर होता है?

1.3.5 नाटक की विशेषताएँ एवं महत्व

नाटकों में न केवल जीवन का वर्णन होता है बल्कि उसकी व्याख्या भी होती है। व्यापक मानवीय शक्तियों का अन्वेषण या उद्घाटन नाटकों में होता है। यह जीवन की व्याख्या करते हुए उसे सार्थकता प्रदान करते हैं। नाटक काव्य कला का सर्वश्रेष्ठ अंग है। अभिनय के माध्यम से समाज एवं व्यक्ति के चरित्रों का प्रदर्शन भी नाटक कहा जाता है। इसमें कथातत्व की प्रधानता होती है। परंपरागत रूप से नाटक कम से कम 5 अंकों का होना चाहिए जिसमें आरंभ, विकास, चरम एवं अंत दिखाया जाता है। नाट्य शिक्षण का उद्देश्य बड़ा है। साहित्य की अन्य विधाओं में नाटक एक महत्वपूर्ण विधा है, जिसके माध्यम से न सिर्फ साहित्यिक अभिक्षमता का विकास होता है बल्कि इस एक विधा से अन्य विधाओं जैसे कविता, कहानी का कल्पना लोक भी जुड़ता है। नाटक केवल मनोरंजन का साधन ही नहीं है, बल्कि इससे युवाओं को बेहतर शिक्षा के साथ संस्कार और परंपराएँ जानने का अवसर मिलता है। इससे युवा परंपराओं के साथ आदर, प्रेम की शिक्षा ग्रहण करते हैं। नाटक में भाग लेना और नाटक देखना यह दोनों ही क्रियाएँ बच्चों में आलोचनात्मक चिंतन और उनके सौंदर्य बोध को बढ़ाती हैं। हम यह कह सकते हैं कि नाट्य शिक्षा बालक के सर्वांगीण विकास के लिए महत्वपूर्ण है। नाटक अन्य साहित्यिक विधाओं की अपेक्षा जीवन के अधिक निकट होता है और जीवन को अधिक समग्रता और संपूर्णता के साथ प्रस्तुत करता है। उपन्यास, कहानी सिर्फ लेखन, पठन-पाठन तक ही सीमित रहते हैं जबकि नाटक की परिधि अत्यंत व्यापक है। कवि या कथाकार को अपनी बात सिर्फ भाषा द्वारा ही व्यक्त करनी होती है जबकि नाटककार को रंगमंच की आवश्यकताओं का भी विशेष ध्यान

रखना पड़ता है। उपन्यास एक स्वच्छंद रूप है जो काल या समय की सीमाओं में बंधा नहीं होता जबकि नाटक नियमों और प्रतिबंधों से घिरा होता है।

नाटककार को उपन्यासकार, कहानीकार की तरह स्वयं कुछ कहने की स्वतंत्रता नहीं होती, उसे चरित्रों के माध्यम से ही अपनी बात कहनी होती है। यह एक सामूहिक कला है। इस अर्थ में कहानी और उपन्यास एकांतिक पठन की कलाएँ हैं। सामूहिक संप्रेषण के लिए नाटक में अनुभूतियाँ अत्यंत व्यापक और गहरी होनी चाहिए जो दर्शकों में अपनी विचारोत्तेजक और उत्तेजक संवेदनाओं का प्रवाह उत्पन्न कर सकें। नाटक एक प्रदर्शनकारी कला है। नाटकीय रचना का संप्रेषण रंगमंच पर जाकर ही पूर्ण होता है। नाटक की लगभग सभी परिभाषाओं में दृश्यात्मकता की बात कही गई है। समूह में बैठा दर्शक नाटक के प्रदर्शन को प्रभावित करता है। नाटक का व्यावसायिक पक्ष भी अत्यंत महत्वपूर्ण है। नाटक की सामूहिकता, जीवंतता को ध्यान में रखते हुए वामन मानते हैं कि यह जितनी श्रेष्ठ कला है उतनी ही समाहारी और चुनौतीपूर्ण कला भी है। इसीलिए नाटक को 'काव्येषु नाटक रम्यं' कहा गया है।

बोध प्रश्न

- काव्य कला का सर्वश्रेष्ठ अंग क्या है?
- नाटक में किसकी प्रधानता होती है ?
- कौन सी विधा जीवन के अधिक निकट होती है?
- नाटक के संबंध में वामन का क्या विचार है?
- क्या नाटक काल या समय की सीमाओं में बंधा होता है?

1.4 पाठ सार

हिंदी में नाटक के उद्भव और विकास को 19वीं सदी से स्वीकार किया जाता है। नाटक काव्य का एक रूप है जो रचना श्रवण द्वारा ही नहीं अपितु दृष्टि द्वारा भी दर्शकों के हृदय में रसानुभूति कराती है, उसे ही नाटक या दृश्य काव्य कहते हैं। नाटक में श्रव्य काव्य से अधिक रमणीयता होती है। नाटक लोक चेतना से अपेक्षाकृत अधिक घनिष्ठ रूप से संबद्ध होते हैं। नाटक 'नट' शब्द से निर्मित है जिसका आशय होता है सात्विक भाव का अभिनय। यह दृश्य काव्य के अंतर्गत आता है। इसका प्रदर्शन रंगमंच पर होता है। भारतेंदु हरिश्चंद्र ने नाटक के लक्षण देते हुए लिखा है कि नाटक नट लोगों की क्रिया है। यदि आज के संदर्भ में देखा जाए तो नाटक गद्य का वह कथात्मक रूप है जिसे अभिनय, संगीत, नृत्य, संवाद आदि के माध्यम से रंगमंच पर अभिनीत किया जाता है। अलग-अलग विद्वानों ने इसकी परिभाषाएँ दी हैं। नाटक में फैले हुए जीवन व्यापार को ऐसी व्यवस्था के साथ रखते हैं कि अधिक से अधिक प्रभाव उत्पन्न हो सके। नाटकों का प्रमुख उपादान उसकी रंगमंचीयता होती है।

आधुनिक काल में भारतेंदु युग में नाटकों का विकास हुआ। इस युग से पूर्व भी कुछ पौराणिक, राजनैतिक, सामाजिक आदि विषयों को लेकर नाटक लिखे गए। यदि हिंदी नाटकों के विकास क्रम को देखा जाए तो भारतेंदु युगीन नाटकों को 1850 से 1900 ई. तक माना जाता है। इसके पश्चात नाटकों के विकास को द्विवेदी युगीन नाटक, प्रसाद युगीन नाटक, प्रसादोत्तर युगीन नाटक के रूप में देखा जा सकता है। पाश्चात्य विद्वानों के अनुसार इसके प्रमुख तत्वों के रूप में

कथावस्तु, चरित्र चित्रण, संवाद, भाषा शैली, देश काल और वातावरण, रंगमंचीयता और उद्देश्य माने गए हैं तथा भारतीय विद्वानों के अनुसार कथावस्तु, नायक, अभिनय, रस, वृत्ति को नाटक के तत्व स्वीकार किया गया है। नाटकों का समाज के साथ गहरा संबंध है। प्रसिद्ध नाटक सामाजिक व्यवस्थाओं से निकलकर सामने आते हैं। नाटकों ने सदैव समाज को बेहतरीन दिशा दी है। लोगों पर जितना प्रभाव नाटकों का होता है, उतना प्रभाव सीधी बातों का नहीं होता है। धीरे-धीरे नाटकों का एक और रूप नुक्कड़ नाटक अत्यंत प्रसिद्ध हुआ। नाटक सदैव समाज को उचित दशा तक ले जाते हैं और दिशा का बोध कराते हैं।

1.5 पाठ की उपलब्धियाँ

नाटक के उद्भव और विकास से संबंधित इस इकाई की उपलब्धियाँ निम्नलिखित हैं -

1. यह पाठ नाट्य कला तथा नाटक के महत्व को समझने में सहायक है।
2. नाट्य परंपरा, नाटक के तत्व एवं प्रकार तथा उसकी विशेषताओं को उद्घाटित करता है।
3. इस पाठ से छात्र के मन में प्रसिद्ध नाटकों को पढ़ने की रुचि पैदा होगी।
4. यह पाठ हिंदी नाटक के विकासक्रम को समझने के लिए उपयुक्त आधार का काम करेगा।

1.6 शब्द संपदा

1. अनुग्रह = कृपा
2. अभूतपूर्व = अनोखा
3. अवसाद = गहरी निराशा
4. उत्कृष्ट = सबसे उत्तम या सबसे अच्छा
5. उत्थान = उन्नति
6. उत्पत्ति = उत्पन्न होना
7. उद्भव = उत्पत्ति
8. उपजा = पैदा होना
9. कटु = कड़वी
10. चित्तवृत्ति = मन की स्थिति
11. निराधार = आधारहीन
12. निर्विवाद = बिना विवाद के
13. परिलक्षित = दिखाई देना
14. पर्याप्त = उचित
15. प्रौढ़ता = परिपक्वता
16. मंथन करना = गहराई से विचार करना
17. मतभेद = विचारों में अंतर
18. शिल्प = बनावट
19. समसामयिक = समय के अनुसार
20. सरस = रसयुक्त

21. सर्वहारा वर्ग = सामान्य वर्ग
22. सात्विक वृत्ति = पवित्र वृत्ति या पवित्र स्वभाव
23. सृजन = निर्माण करना

1.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. नाटक का उद्भव और विकास बताते हुए उसके स्वरूप की चर्चा कीजिए।
2. नाटक की विभिन्न परिभाषाएँ देते हुए उसके स्वरूप की चर्चा कीजिए।
3. नाटक के तत्वों की चर्चा कीजिए।
4. नाटकों का महत्व बताते हुए उसकी प्रवृत्तियों का उल्लेख कीजिए।
5. नाटक के प्रकारों की चर्चा कीजिए।
6. नाटकों की पृष्ठभूमि का उल्लेख कीजिए।
7. हिंदी नाटक और रंगमंच की चर्चा कीजिए।
8. प्रसादोत्तर युग के नाटककारों की चर्चा कीजिए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. मनुष्य और समाज पर नाटकों का क्या प्रभाव पड़ता है? स्पष्ट कीजिए।
2. ऐतिहासिक नाटक क्या है? उदाहरण सहित समझाइए।
3. काव्य नाटक क्या है? स्पष्ट कीजिए।
4. नाटकों में संवादों का क्या महत्व है? स्पष्ट कीजिए।
5. नाटकों की शैलियों की चर्चा कीजिए।
6. नाटक और एकांकी में क्या अंतर है? स्पष्ट कीजिए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. नाटक की सबसे प्रसिद्ध और प्राचीन पुस्तक है- ( )
   (अ) नाट्यमंडप (आ) नाट्यशास्त्र (इ) कर्पूर मंजरी (ई) नाट्य कला
2. नाटक के कितने तत्व माने गए हैं - ( )
   (अ) आठ (आ) पाँच (इ) छह (ई) सात
3. भारत में कितने प्रकार का रंगमंच हैं? ( )
   (अ) तीन (आ) पाँच (इ) चार (ई) आठ
4. हिंदी के प्रथम नाटककार कौन हैं? ( )
   (अ) प्रसाद (आ) भारतेंदु (इ) द्विवेदी (ई) बालकृष्ण भट्ट
5. नहुष नाटक के रचनाकार कौन हैं? ( )

(अ) धनंजय (आ) कालिदास (इ) मैथिलीशरण गुप्त (ई) भरतमुनि

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. भारतेंदु के .... नाटक में पराधीन भारत की दयनीय आर्थिक एवं सामाजिक स्थितियों का चित्रण है।
2. मोहन राकेश का नाटक .... आधुनिक मध्यवर्गीय परिवार की त्रासद अभिव्यक्ति है।
3. नाटक के लिए .... रस निषिद्ध माना गया है।
4. नाटक .... काव्य है।
5. परंपरागत रूप से नाटक में ...... अंक होने चाहिए।

III. सुमेल कीजिए -

1. ध्रुवस्वामिनी	(अ) भारतेंदु हरिश्चंद्र
2. हिंदी का पहला नाटक	(आ) महाकवि कालिदास
3. हिंदी नाटकों का प्रारंभ	(इ) गोपालचंद्र का नहुष
4. अभिज्ञान शाकुंतलम के रचयिता	(ई) जयशंकर प्रसाद

1.8 पठनीय पुस्तकें

1. रंगमंच और नाटककार की भूमिका : लक्ष्मीनारायण लाल
2. हिंदी साहित्य की भूमिका : हजारी प्रसाद द्विवेदी
3. हिंदी साहित्य - उद्भव और विकास : हजारी प्रसाद द्विवेदी
4. हिंदी के प्रतीक नाटक और रंगमंच : केदारनाथ सिंह
5. नए नाटक स्वरूप और संभावना : चंद्रशेखर मिश्र
6. हिंदी नाटकों के शिल्प विधि का विकास : शांति मलिक
7. भारतीय रंगमंच विवेचनात्मक इतिहास : अज्ञात
8. साहित्यिक निबंध : राजनाथ शर्मा
9. आधुनिक हिंदी नाटकों में प्रयोगधर्मिता : सत्यवती त्रिपाठी

इकाई 2 : हिंदी एकांकी का उद्भव और विकास

रूपरेखा

2.1 प्रस्तावना

2.2 उद्देश्य

2.3 मूल पाठ : हिंदी एकांकी का उद्भव और विकास

2.3.1 एकांकी का अर्थ, परिभाषा और स्वरूप

2.3.2 एकांकी का उद्भव और विकास

2.3.3 एकांकी के तत्व

2.3.4 एकांकी के प्रकार

2.3.5 एकांकी की विशेषताएँ और महत्व

2.4 पाठ सार

2.5 पाठ की उपलब्धियाँ

2.6 शब्द संपदा

2.7 परीक्षार्थ प्रश्न

2.8 पठनीय पुस्तकें

2.1 प्रस्तावना

सामान्य रूप से देखने पर नाटक और एकांकी एक जैसे दिखाई देते हैं किन्तु एकांकी एक स्वतंत्र नाट्य विधा है। एक अंग वाले नाटक को एकांकी कहा जाता है। अंग्रेजी में यह 'वन ऐक्ट प्ले' कहलाता है। नाटक में किसी विषय पर एक समग्र चित्र प्रस्तुत किया जाता है और एकांकी में किसी महत्वपूर्ण विषय या घटना को एक ही अंक में प्रस्तुत किया जाता है। पश्चिम में एकांकी 20वीं शताब्दी में प्रथम महायुद्ध के बाद, अत्यन्त प्रचलित और लोकप्रिय हुआ। हिंदी साहित्य के इतिहासकार एकांकी का प्रारंभ भारतेंदुयुग से मानते हैं। इस युग में दो प्रकार के एकांकी लिखे गए। प्रथम-अनूदित या छायाँकित एकांकी तथा द्वितीय-मौलिक एकांकी।बदलते समय के साथ एकांकी के कथ्य में भी परिवर्तन आते जाएँगे। हिंदी का पहला एकांकी जयशंकर प्रसाद के 'एक घूंट'(1929) को माना जाता है।

2.2 उद्देश्य

प्रिय छात्रो! इस इकाई को पढ़ने के बाद आप -

- एकांकी के उद्भव और विकास को समझ सकेंगे।

- एकांकी परंपरा के साथ-साथ इसकी विशेषताओं और महत्त्व को जान तथा समझ सकेंगे।
- एकांकी और एकांकीकार के अंतर्संबंध को आत्मसात सकेंगे।
- एकांकी के सौंदर्य और उपयोगितासे परिचित हॉ सकेंगे।
- एकांकी लेखन के उद्देश्य को समझ सकेंगे।
- एकांकी लेखन कला से परिचित हो सकेंगे।

2.3 मूल पाठ : एकांकी का उद्भव और विकास

2.3.1 एकांकी का अर्थ, परिभाषा और स्वरूप

एकांकी एक अंग का दृश्य काव्य है जिसमें एक ही कथा और कुछ ही पात्र होते हैं। उसमें एक विशेष उद्देश्य की अभिव्यक्ति करते हुए केवल एक ही प्रभाव की पुष्टि और सृष्टि की जाती है। कम से कम समय में अधिक से अधिक प्रभाव एकांकी का लक्ष्य होता है।एकांकी का अर्थ है एक अंक वाला। इसमें एक ही वस्तु या व्यक्ति का ही पूरी तरह से वर्णन होता है। बीसवीं शताब्दी में प्रथम महायुद्ध के पश्चात एकांकी अत्यंत प्रचलित और लोकप्रिय बन गया। डॉ. रामकुमार वर्मा के अनुसार "एकांकी में एक ऐसी घटना रहती है, जिसका जिज्ञासा पूर्ण एवं कौतूहलमय नाटकीय शैली में चरम विकास होकर अन्त होता है।" एकांकी में एक संपूर्ण कार्य एक ही स्थान और समय में होना चाहिए। एकांकी में वर्णित कथावस्तु अलग-अलग स्थानों एवं कालों में घटित नहीं होनी चाहिए। अधिकांश एकांकी एक ही अंक और एक ही दृश्य में समाप्त हो जाते हैं जिससे प्रभाव की एकता एवं घटनाओं की एकसूत्रता बनी रहती है।

एकांकी का आधार एक मुख्य विचार अथवा सुनिश्चित लक्ष्य होना चाहिए। इसे अनेक भावों एवं अनेक चित्र वृतियों से बचना चाहिए। यह भी आवश्यक है कि जीवन के जिस पक्ष, क्षण अथवा समस्या को एकांकीकार प्रस्तुत करना चाहता है सभी पात्र कथोपकथन और वातावरण उसकी सफलता में सहयोग दें। एकांकी यथासंभव संक्षिप्त होना चाहिए। परिमित रहना तथा एक ही कृत्य के संबंध में होना एकांकी के लिए आवश्यक है। एकांकी की कथा गतिशील होनी चाहिए। उसमें कौतूहल और जिज्ञासा की स्थिति भी जरूरी है। पात्र संख्या कम हो परंतु सजीव होने चाहिए। कथोपकथन छोटे सरल और कथानक को आगे बढ़ाने वाले हों। अभिनेयता किसी भी नाटक और एकांकी का प्राण तत्व है। जिन स्थितियों और प्रेरणाओं ने हिंदी उपन्यास क्षेत्र में कहानी को विकास दिया उन्हीं तथ्यों ने हिंदी नाटक के क्षेत्र में एकांकी को जन्म दिया। हिंदी एकांकी के उदय के पीछे आंतरिक रूप से दो विभिन्न प्रेरणा और शक्तियाँ कार्य कर रही थीं। दोनों माध्यमों के दो अलग-अलग उत्स भी थे।

बोध प्रश्न

- एकांकी का आधार क्या होना चाहिए ?
- एकांकी में क्या जरूरी है?

- एकांकी का प्राणतत्व क्या है?
- एकांकी के संवाद कैसे होने चाहिए?
- एकांकी की कथा कैसी होनी चाहिए?
- एकांकी कितने अंक में समाप्त होना चाहिए?

2.3.2 एकांकी का उद्भव और विकास

एकांकी का प्राण तत्व है 'संघर्ष' संघर्ष से ही नाटकीयता का सृजन होता है। हिन्दी एकांकी को नाटक से अलग अपना स्वतंत्र अस्तित्व स्वीकार करने के लिए बहुत संघर्ष करना पड़ा।ऐतिहासिक दृष्टि से कहानी से बहुत बाद में एकांकी का विकास हुआ। राजनैतिक क्षेत्र में स्वतंत्रता संग्राम की गति बहुत व्यापक और गहरी हो चुकी थी अर्थात राष्ट्रीय संग्राम दर्शन बन कर जीवन में उतर चुका था। दूसरी ओर अंग्रेजों की दमन नीति उग्र से उग्र हो चली थी। शासक की अर्थनीति और शासन नीति में नए-नए दांवपेच लागू हो चुके थे। मध्यकालीन सामंती व्यवस्था के उपरांत भारतीय पूंजीवादी व्यवस्था बड़ी तेजी से उभर रही थी जिसके फलस्वरूप विशुद्ध भौतिक धरातल पर विचित्र द्वंदात्मक सत्य का जन्म होने लगा था। सामाजिक जीवन अपने नैतिक-सामाजिक-आर्थिक तथा सौंदर्य बोध के आयामों में बिल्कुल एक परिवर्तित परिस्थितियों से टकराने लगा था।ऐसी परिस्थितियों में एकांकी का जन्म लेना और विकसित होना हिंदी साहित्य के इतिहास में एक अलग आयाम प्रस्तुत करता है।

हिन्दी एकांकी के विकास क्रम को विद्वानों ने अनेक प्रकार से विभाजित किया है परन्तु सर्वमान्य रूप से इसके क्रमिक विकास को चार भागों में विभक्त किया गया है -भारतेन्दु-द्विवेदी युग (1875-1928), प्रसाद युग (1929-1937), प्रसादोत्तर युग (1938-1947), स्वातंत्र्योत्तर युग (1948 से अब तक)

भारतेंदु-द्विवेदी युग में दो प्रकार के एकांकी लिखे गए। प्रथम, अनूदित या छायाँकित एकांकी तथा द्वितीय, मौलिक एकांकी। ऐतिहासिक आख्यान तथा समाजसुधार के प्रसंग ही उपर्युक्त एकांकियों के विषय हैं। इन्हें आधुनिक एकांकी का प्रांरभिक रूप कहा जा सकता है। लेखकों का झुकाव जीवन की स्थूलता का वर्णन करने की ओर रहा । इनमें से कुछ प्रहसन के रूप में लिखे गए हैं, पर उनमें निर्मल हास्य न होकर व्यंग्य की मात्रा ही अधिक है। एकांकी के लिए अपेक्षित प्रमुख गुण कार्य (ऐक्शन) का इनमें अभाव है। शिल्प की दृष्टि से द्विवेदी युग में एकांकी का विकास हुआ है।

प्रसाद युग - इस समय 'एक घूँट' लिखा गया जिसपर संस्कृत का भी प्रभाव है और बँगला के माध्यम से आए पाश्चात्य एकांकी शिल्प का भी। प्रसाद जी ने इसी बीच 'कल्याणी परिणय' भी लिखा, पर वह अभी तक अप्रकाशित है। साथ ही, इसे उनके 'चद्रंगुप्त' नाटक का एक भाग भी कहा जा सकता है। फ्रांसीसी नाटककार मोलियर के कुछ प्रहसनों का भी इस दौरान हिंदी में

अनुवाद हुआ। 'एक घूँट' में एकांकी के कमोबेश लगभग सभी आधुनिक लक्षण मिल जाते हैं। विवाह समस्या का विवेचन एवं समाधान भावुकतापूर्ण शैली में किया गया है। परंतु 'एक घूँट' एक ही रह गया; अन्य लेखकों को यह एकांकी लेखन की ओर प्रवृत्त न कर सका।

प्रसादोत्तर युग - इस समय एकांकी अपने यथार्थ रूप में सामने आई। युद्ध की विभीषिका तथा बंगाल के अकाल ने एकांकीकारों को झकझोर दिया था। एकांकी में संकलन त्रय को भी महत्वपूर्ण माना जाने लगा था। इस युग के प्रमुख एकांकीकार इस प्रकार हैं- सेठ गोविंददास, उदयशंकर भट्ट, भगवती चरण वर्मा, विष्णु प्रभाकर, डॉ. रामकुमार वर्मा आदि।

स्वातंत्र्योत्तर युग के एकांकीकारों का दृष्टिकोण प्रगतिवादी था। पूंजीवाद के विरोध के स्वर मुखर होने लगे थे। इस काल में एकांकियों को राजकीय प्रोत्साहन मिला। संगीत नाटक एकेडेमी सन् 1958 में दिल्ली में स्थापित हुई। 'तरंग', 'रंगयोग', 'बिहार थियेटर', 'रंग भारती' आदि नाट्य कला से संबंधित कई पत्रिकाओं के प्रकाशन द्वारा एकांकी को बल मिला। मोहन राकेश का नाम इस काल के एकांकीकारों में सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। इस प्रकार हिन्दी एकांकी आज अपने यौवन पर है।

बोध प्रश्न

- एकांकी का उद्भव और विकास कब माना जाता है?
- एकांकी साहित्य का विकास किससे माना जाता है?
- हिंदी एकांकी के विकास को कितने चरणों में बांटा गया है?
- 'एक घूंट' एकांकी किसकी रचना है?
- भारतेंदु युग में कितनी तरह के एकांकी लिखे गए?
- 'एक घूंट' एकांकी पर किसका प्रभाव है?

2.3.3 एकांकी के तत्व

हिंदी एकांकी के प्रमुख तत्व हैं कथावस्तु, पात्र और चरित्र चित्रण, भाषा-शैली, देशकाल-वातावरण, रंगमंचीयता और उद्देश्य।

कथावस्तु

कथावस्तु के माध्यम से एकांकीकार अपना उद्देश्य व्यक्त करता है। इसे वह प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत करता है। अपेक्षित प्रभाव उत्पन्न करने के लिए इसे कथा के क्रम मे इस प्रकार योजना करता है कि दर्शक का मन उसमें रम जाए, कहीं भी उचटने न पाए। उसका मन निरंतर आगे का घटनाक्रम या दृश्य जानने के लिए उत्सुक बना रहे। सरल शब्दावली मे कहें तो उसका कौतूहल बना रहना चाहिए। कथानक या कथावस्तु को तीन भागों मे विभाजित किया जा सकता है - प्रारंभ, विकास, चरमोत्कर्ष। किसी भी कथा का प्रारंभ आकर्षक और रुचिकर होना

चाहिए क्योंकि, तभी पाठक किसी भी रचना की ओर आकर्षित होता है और विकास में कथा का पूरा विकास होना चाहिए। सभी प्रकार की घटनाएँ विकास से ही जुड़ी होती हैं। उसके पश्चात चरमोत्कर्ष में उद्देश्य की पूर्ति होती है।

पात्र और चरित्र चित्रण

एकांकी का दूसरा तत्व पात्र और चरित्र चित्रण है। नाटकों मे नायक तथा उसके सहायकों का चरित्र-चित्रण मूलतः घटनाओं के माध्यम से किया जाता है, किंतु एकांकी के पात्रों के चित्रण नाटकीय परिस्थितियों, भीतर बाहर के संघर्षों के सहारे सांकेतिक रहते हैं। एकांकी के चरित्र चित्रण में स्वाभाविकता, यथार्थता और मनोवैज्ञानिकता का ध्यान रखना आवश्यक होता है। प्रत्येक पात्र के क्रिया-कलाप में कार्य कारण भाव अवश्य सांकेतिक होना चाहिए।चरित्र दो तरह के होते हैं मुख्य चरित्र और गौण चरित्र। मुख्य चरित्र के इर्द -गिर्द कथा की बुनावट की जाती है और गौण चरित्र उस कथा के विकास में सहायक होते हैं।

भाषा-शैली

एकांकी का तीसरा तत्व भाषा और शैली हैं। साहित्य की विभिन्न विधाओं की भाषा-शैली अलग-अलग होती है। एक सी विषय वस्तु के आधार पर कहानी भी लिखी जा सकती है और एकांकी भी काव्य भी लिखा जा सकता है, और नाटक भी। किन्तु उसी विषय वस्तु को कवि अपने ढंग से ग्रहण करेगा और नाटककार अपने ढंग से। विषयवस्तु के प्रति लेखक का जैसा दृष्टिकोण होगा, उसकी अभिव्यक्ति के लिए वह वैसा ही माध्यम भी चुनेगा। माध्यम के भिन्न हो जाने से भाषा शैली भी भिन्न हो जाती है। कहानी की भाषा शैली वर्णन के लिए अधिक उपयुक्त होती है। केवल संवाद मे लिखी गई कहानी की भाषा शैली एकांकी की भाषा-शैली नही हो सकती है, क्योंकि उसमें नाटकीय तत्व नहीं रहता।

एकांकी की भाषा शैली के संबंध मे एक बात और ध्यान देने योग्य है। भाषा का प्रयोग पात्र की शिक्षा, संस्कृति वातावरण, परिस्थितियों के अनुरूप होना चाहिए।एकांकी में संवाद शैली और लाक्षणिक शैली का प्रयोग अधिक मात्रा में किया जाता है. कई बार हास्य और व्यंग्य शैली भी एकांकी को संप्रेषणयुक्त बनाती है.

देशकाल-वातावरण

एकांकी के नाट्यशिल्प को सफल बनाने के लिए संकलन-त्रय का प्राय: आधार लिया जाता है। कहा जाता है कि एकांकी मे देश, काल और कार्य-व्यापार की अन्विति का अर्थ है कि संपूर्ण घटना एक ही स्थान पर घटित हो और उसमें दृश्य परिवर्तन कम से कम हो। सामान्यतः काल की अन्विति से अभिप्राय है कि एकांकी की घटना वास्तविक जीवन मे जितनी देर मे

घटित हुई उतनी देर मे उसका अभिनय भी हो सके। यदि दो घटनाओं मे वर्षों का अंतर हो तो उन्हें एकांकी का विषय नही बनाया जाना चाहिए। कार्य की अन्विति का अर्थ है प्रासंगिक कथाओं को उसमें स्थान न दिया जाए और कार्य व्यापार मे क्रमिकता बनी रहे ।

रंगमंचीयता

एकांकी के सफल अभिनय के लिए उपयुक्त रंगमंच सज्जा के साथ-साथ कुशल अभिनेताओं का होना अनिवार्य है क्योंकि, एकांकी के मूल उद्देश्य की अभिव्यक्ति का मुख्य दायित्व उन्हीं पर होता हैं। उसे और प्रभावशाली बनाने के लिए और प्रकाश का भी यथाअवसर उपयोग किया जाता है। रंगमंचीयता से एकांकी प्रभावशाली बनता है।

उद्देश्य

एकांकी का कोई ना कोई उद्देश्य होना चाहिए। एकांकी हमेशा किसी न किसी समस्या या घटना को लेकर लिखे जाते हैं और उसके द्वारा समाज तक एक संदेश प्रेषित किया जाता है। बिना उद्देश्य के कोई भी रचनाकार किसी रचना या कला का निर्माण नहीं करता।

बोध प्रश्न

- एकांकी के कितने तत्व माने गए हैं?
- कथावस्तु में क्या छिपा होता है?
- संवाद को एकांकी का क्या माना जाता है?
- देश काल और वातावरण एकांकी की किस स्थिति को प्रकट करते हैं?
- एकांकी में भाषा का प्रयोग किन परिस्थितियों के अनुरूप होना चाहिए?
- सात्विक अभिनय क्या है?

2.3.4 एकांकी के प्रकार

विषय की दृष्टि से एकांकी को दस प्रकारों में बाँटा जा सकता है -

सामाजिक एकांकी : सामाजिक समस्याओ को आधार बनाकर सामाजिक एकांकी की रचना की जाती है। सामाजिक एकांकी का क्षेत्र अत्यंत व्यापक है। सामाजिक जीवन के विविध पक्ष, यथा-प्रेम-प्रवाह, वर्ग-संघर्ष, पीढ़ी-संघर्ष तथा अस्पृश्यता इसके अंतर्गत आते हैं। जैसे-'फैसला' (विनोद रस्तोगी), 'लक्ष्मी का स्वागत' (उपेंद्रनाथ अश्क)।

ऐतिहासिक एकांकी : इतिहास अथवा ऐतिहासिक पृष्ठ्भूमि के आधार पर लिखे गये एकांकी ऐतिहासिक एकांकी होते हैं। जैसे-'दीपदान' (डॉ. रामकुमार वर्मा)

मनोवैज्ञानिक एकांकी : मनोविज्ञान के आधार पर रचित एकांकी मनोवैज्ञानिक एकांकी होते हैं। जैसे-'मकड़ी का जाला' (जगदीशचंद्र माथुर)

राजनैतिक एकांकी : किसी राजनैतिक गतिविधि पर प्रकाश डालनेवाले एकांकी राजनैतिक एकांकी होते हैं। जैसे- 'पिशाचों का नाच' (उदयशंकर भट्ट), 'सीमा-रेखा' (विष्णु प्रभाकर)

चारित्रिक एकांकी : इन एकांकियों का मूल उद्देश्य किसी चरित्र-चित्रण का सौंदर्य या असौंदर्य अनुभूत करना होता है। जैसे- 'उत्सर्ग' (डॉ. रामकुमार वर्मा)

पौराणिक एकांकी : पुराणों पर आधारित कथावस्तु को लेकर लिखे गए एकांकी पौराणिक एकांकी होते हैं। जैसे - 'मुद्रिका' (सद्गुरूशरण अवस्थी), 'राजरानी सीता' (डॉ. रामकुमार वर्मा)

सांस्कृतिक एकांकी : सांस्कृतिक समस्या पर आधारित एकांकी सांस्कृतिक एकांकी होते हैं। जैसे - 'प्रतिशोध' (डॉ. रामकुमार वर्मा), 'सच्चा धर्म' (सेठ गोविंददास)

आंचलिक एकांकी : किसी अंचल-विशेष की घटना पर आधारित वहाँ की लोकभाषा,रीति-व्यवहार, रहन-सहन, भूगोल आदि का चित्रण आंचलिक एकांकी में किया जाता है।

दार्शनिक एकांकी : दार्शनिक विषयों पर आधारित दार्शनिक एकांकी होते हैं। यथा - उदयशंकर भट्ट, लक्ष्मीनारायण मिश्र दार्शनिक एकांकीकार हैं।

तथ्यपरक एकांकी : एकांकीकार किसी विशेष संदेश अथवा उद्देश्य पर बल न देकर किसी प्रसंग का नाटकीय चित्र अंकित करके प्रभाव अथवा निष्कर्ष ग्रहण करने का दायित्व पाठक या दर्शक पर छोड़ देता है। जैसे- 'मानव-मन' (सेठ गोविंददास)

बोध प्रश्न

- सामाजिक एकांकी किसे कहते हैं?
- सांस्कृतिक एकांकी का एक उदाहरण दें?
- रामकुमार वर्मा का एकांकी 'उत्सर्ग' किस प्रकार का एकांकी है?
- तथ्यपरक एकांकी में निष्कर्ष ग्रहण करने का दायित्व किस पर होता है?
- चारित्रिक एकांकी का क्या उद्देश्य है?
- तथ्यपरक एकांकी की क्या विशेषता है?

2.3.5 एकांकी की विशेषताएँ एवं महत्व

एकांकी एक ऐसी कला है जिसमें कम से कम उपकरणों के सहारे ज्यादा से ज्यादा प्रभाव उत्पन्न किया जाता है। एकांकी के कथानक का परिप्रेक्ष्य अत्यंत संकुचित होता है। एक ही मुख्य घटना होती है और एक ही चरित्र होता है। एक ही चरमोत्कर्ष होता है। एकांकी सदैव काल और सीमाओं में बना रहता है। यह एक ही घटना या जीवन की एक ही संवेदना पर आधारित होता है। इसमें चरित्र पूर्ण विकसित होते हैं और कथा का विकास अत्यंत तीव्र होता है। एकांकी में

भाव, प्रभाव की तीव्रता, गत्यात्मकता, संकलन त्रय की योजना अनिवार्य होती है। सबसे खास विशेषता यह है कि एकांकी में केवल एक ही अंक होता है।

बोध प्रश्न

- एकांकी किसमें बंधा होता है?
- एकांकी में चरित्र कैसे होते हैं?

2.4 पाठ सार

हिंदी में एकांकी कला का विकास नाटकों के साथ-साथ हुआ। सामान्य रूप से देखने पर नाटक और एकांकी एक जैसे दिखाई देते हैं किंतु दोनों की विशेषताएँ अलग-अलग हैं। नाटक बड़ा होता है और एकांकी में एक ही अंक होता है जिसमें एक ही घटना या कथा को लिया जाता है। एकांकी के लघु आकार-प्रकार में नाटक के सभी तत्व विद्यमान रहते हैं किंतु यह एक स्वतंत्र नाटक विधा है। किसी बड़े नाटक के एक अंक को एकांकी नहीं कहते। नाटक में जीवन का समग्र चित्र प्रस्तुत किया जाता है जबकि एकांकी में जीवन की किसी महत्वपूर्ण घटना परिस्थितियाँ समस्या को एक अंक में प्रस्तुत कर दिया जाता है। हिंदी में एकांकी का प्रचलन नाटक के साथ भारतेंदु युग में हुआ। स्वयं भारतेंदु ने संस्कृत परंपरा पर मौलिक एकांकियों की रचना की। अंधेर नगरी, प्रेम योगिनी आदि उनके मौलिक प्रहसन हैं। इस समय के अन्य एकांकीकारों में राधाचरण गोस्वामी, बालकृष्ण भट्ट, बद्रीनारायण, किशोरी लाल गोस्वामी, अंबिकादत्त व्यास आदि के नाम महत्वपूर्ण हैं। इस समय जो एकांकी लिखे गए उनमें सामाजिक बुराइयों पर व्यंग्य किया गया। इन एकांकियों में कला की दृष्टि से परंपरावादी विशेषताएँ हैं, किंतु विषय की दृष्टि से आधुनिक एकांकी के निकट हैं। शिल्प की दृष्टि से द्विवेदी युग में एकांकी का विकास हुआ, आधुनिक आधुनिक युग तक आते-आते एकांकी लेखन में बदलाव हुआ और 'एक घूंट' एकांकी को पहला एकांकी माना गया जो जयशंकर प्रसाद द्वारा लिखा गया। इस समय के प्रसिद्ध एकांकीकारों में उपेंद्रनाथ अश्क, सेठ गोविंददास, डॉ. रामकुमार वर्मा, उदयशंकर भट्ट, भुवनेश्वर प्रसाद मिश्र, लक्ष्मी नारायण मिश्र आदि के नाम आते हैं। एकांकी के विकास को भारतेंदु- द्विवेदी युग, प्रसाद युग, प्रसादोत्तर युग और स्वातंत्र्योत्तर युग में बाँटा जा सकता है। एकांकी के छह तत्व माने जाते हैं। एकांकी के प्रमुख प्रकारों में सामाजिक, ऐतिहासिक, मनोवैज्ञानिक, राजनैतिक, चारित्रिक, पौराणिक, सांस्कृतिक, आंचलिक, दार्शनिक और तथ्यपरक एकांकी आते हैं। इस तरह मोटे तौर पर देखा जाए तो बदलते समय के साथ एकांकी का महत्व बढ़ता जा रहा है क्योंकि आज भागदौड़ भरी जिंदगी में इतना समय नहीं होता कि बड़े-बड़े नाटक देखे जाएँ।

2.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं -

1. यह पाठ एकांकी कला तथा एकांकी के महत्व को समझने में सहायक है।
2. यह पाठ एकांकी परंपरा, एकांकी के तत्व एवं प्रकार तथा उसकी विशेषताओं को उद्घाटित करता है।
3. यह पाठ से छात्र के मन में प्रसिद्ध एकांकियों को पढ़ने की रुचि और जिज्ञासा उत्पन्न करने में समर्थ है।
4. यह पाठ हिंदी एकांकी के विकास और वैविध्य को समझने में सहायक है।

2.6 शब्द संपदा

1. अपेक्षित = आवश्यक
2. कथाकथन = संवाद
3. जिज्ञासा पूर्ण = कौतूहल पूर्ण
4. झकझोर देना = हिला देना
5. तथ्यपरक = वास्तविकता से परिपूर्ण
6. परिमित रहना = सीमा में बंधे रहना
7. प्रवृत्तियाँ = विशेषताएँ
8. यथार्थ = वास्तविक
9. संकलन त्रय= तीन स्थितियों का संकलन

2.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. एकांकी के उद्भव और विकास की चर्चा कीजिए।
2. एकांकी की विभिन्न परिभाषाएँ देते हुए उसके स्वरूप की चर्चा कीजिए।
3. एकांकी के तत्वों की चर्चा कीजिए।
4. एकांकी के स्वरूप को समझाते हुए उसके महत्व को रेखांकित कीजिए।
5. एकांकी के प्रकारों की चर्चा कीजिए।
6. हिंदी नाटक और रंगमंच की चर्चा कीजिए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. मानव और समाज पर एकांकी का क्या प्रभाव पड़ता है? समझाइए।

2. एकांकी के विकास में पात्रों के चरित्र चित्रण और देश-काल वातावरण का क्या महत्व है? समझाइए।
3. एकांकी के कितने तत्व माने जाते हैं? उनका संक्षिप्त परिचय दीजिए।
4. एकांकी में उद्देश्य का क्या महत्व होता है?
5. नाटक और एकांकी में क्या अंतर है? कुछ प्रमुख एकांकीकारों का परिचय दीजिए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. हिंदी का पहला एकांकी किसे माना जाता है? ( )
   (अ) रीढ़ की हड्डी (आ) एक घूंट (इ) सूखी डाली (ई) पिशाचों का नाच
2. शिल्प की दृष्टि से किस युग में एकांकी का विकास हुआ है? ( )
   (अ) भारतेंदु (आ) द्विवेदी (इ) प्रसाद (ई) प्रसादोत्तर
3. किस तत्व के करण एकांकी प्रभावशाली बनता है? ( )
   (अ) कथा (आ) उद्देश्य (इ) रंगमंचीयता (ई) वातावरण
4. एकांकी में कितने अंक होते हैं? ( )
   (अ) एक (आ) दो (इ) तीन (ई) चार
5. 'मानव मन' एकांकी के रचनाकार कौन हैं? ( )
   (अ) विष्णु प्रभाकर (आ) उदयशंकर भट्ट (इ) सेठ गोविंददास (ई) प्रसाद

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. 'प्रतिशोध' एकांकी के रचयिता ...... हैं।
2. 'एक घूंट' एकांकी के रचनाकार ....हैं।
3. नाटक में उद्देश्य की पूर्ति .... में होती है।
4. एक अंक वाले नाटक को......... कहते हैं।
5. एकांकी का मुख्य लक्ष्य........होता है।

III. सुमेल कीजिए -

1. वन एक्ट प्ले	(अ) भारतेंदु हरिश्चंद्र
2. हिंदी का पहला एकांकी	(आ) विष्णु प्रभाकर
3. हिंदी एकांकी का प्रारंभ	(इ) एक घूंट
4. सीमा-रेखा	(ई) एकांकी

2.8 पठनीय पुस्तकें

1. रंगमंच और नाटककार की भूमिका : लक्ष्मीनारायण लाल
2. हिंदी साहित्य की भूमिका : हजारी प्रसाद द्विवेदी
3. हिंदी साहित्य - उद्भव और विकास : हजारी प्रसाद द्विवेदी
4. रंगमंच एवं नाट्य कला - एक समग्र अध्ययन : देशराज
5. रंगमंच की कहानी : देवेंद्र राज अंकुर
6. रंगमंच के सिद्धांत : महेश आनंद

इकाई 3 : हिंदी रंगमंच का उद्भव और विकास

रूपरेखा

3.1 प्रस्तावना
3.2 उद्देश्य
3.3 मूल पाठ : हिंदी रंगमंच का उद्भव और विकास
3.3.1 रंगमंच : अर्थ, परिभाषा और विकास
3.3.2 प्राचीनकाल में अभिनय और अभिनयशाला
3.3.3 मध्ययुगीन लोकनाट्यों का रंगमंच
3.3.4 रासलीला और रामलीला
3.3.5 आधुनिक हिंदी रंगमंच
3.3.6 भारतेंदुयुगीन हिंदी रंगमंच के प्रमुख केंद्र
3.4 पाठ सार
3.5 पाठ की उपलब्धियाँ
3.6 शब्द संपदा
3.7 परीक्षार्थ प्रश्न
3.8 पठनीय पुस्तकें

3.1 प्रस्तावना

सामान्य रूप से कहा जाता है कि ज़िंदगी एक नाटक है और यह दुनिया एक रंगमंच है। यहाँ सबको अपना-अपना किरदार निभाकर चले जाना है। नाटक के बिना रंगमंच का कोई महत्व नहीं है और रंगमंच के बिना नाटक का महत्व कम हो जाता है। दोनों एक-दूसरे के पूरक हैं। नाटक चाहे किसी भी विषय पर हो उसके लिए एक यथोचित रंगमंच की आवश्यकता होती है। साथ ही उसमें पात्रों की भूमिका निभाने वाले पात्रों का अभिनय भी अच्छा होना चाहिए। नाटक और रंगमंच से संबंधित कुछ धार्मिक आयोजन भी होते हैं-जैसे रासलीला, रामलीला आदि। इनके लिए भी पात्र और रंगमंच की आवश्यकता होती है।

3.2 उद्देश्य

प्रिय छात्रो इस इकाई को !पढ़ने के बाद आप -

- रंगमंच का अर्थ और परिभाषा समझ सकेंगे।
- प्राचीन काल में अभिनय और अभिनयशाला के प्रचलन के बारे में जान सकेंगे।
- मध्ययुगीन लोक नाट्यों के रंगमंच के विषय में जान सकेंगे।
- रामलीला के रंगमंच के विषय में जान सकेंगे।
- आधुनिक हिंदी रंगमंच, व्यावसायिक रंगमंच (पारसी रंगमंच) और अव्यावसायिक रंगमंच के विषय में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- भारतेंदुयुगीन हिंदी रंगमंच के प्रमुख केंद्रों, वर्तमान में काम कर रही नाटक व रंगमंच से संबंधित विभिन्न संस्थाओं के विषय में जान सकेंगे।
- नाटक और रंगमंच से संबंधित महत्वपूर्ण संस्थाओं से परिचित हो सकेंगे।

3.3 मूल पाठ : हिंदी रंगमंच का उद्भव और विकास

3.3.1 रंगमंच : अर्थ, परिभाषा और विकास

'रंगमंच' शब्द दो शब्दों 'रंग' और 'मंच' से मिलकर बना है। यहाँ 'रंग' शब्द का तात्पर्य है-'दृश्य को आकर्षक बनाने के लिए दीवारों, छतों और परदों पर कई प्रकार की चित्रकारी करना। इसके साथ-साथ अभिनेताओं की वेशभूषा और साज-सज्जा में भी विभिन्न रंगों का प्रयोग किया जाना।' इसीलिए यहाँ 'रंग' शब्द का प्रयोग किया जाता है। जहाँ तक 'मंच' शब्द की बात है तो दर्शकों की सुविधा के लिए जमीन के तल से कुछ ऊंचाई देने के उद्देश्य स्थाई (ईंट, सीमेंट, बालू आदि से निर्मित) या अस्थाई (तख्त के द्वारा निर्मित) तौर पर जो ऊंचा स्थान बनाया जाता है। उसे 'मंच' कहते हैं। ऊंचाई के कारण ही सामने या काफी पीछे बैठे हुए दर्शकों को अभिनेता द्वारा किए जा रहे अभिनय देखने में आसानी होती है। इस तरह से 'रंगमंच वह स्थान है जहाँ नृत्य, नाटक, खेल, अभिनय आदि होते हैं।' महादेवी वर्मा अपने 'हिंदी रंगमंच' शीर्षक निबंध में लिखती हैं 'रंगमंच अपने आप में एक महत्वपूर्ण शिल्प भी है।'

बोध प्रश्न

- रंगमंच शब्द में 'रंग' शब्द का प्रयोग किस लिए किया गया है?

'रंगमंच' के स्थान के संदर्भ में कुछ प्रमुख शब्द प्रयोग में लाए जाते हैं। इसमें प्रेक्षागार, नेपथ्य, प्रेक्षागृह या रंगशाला या नाट्यशाला या नृत्यशाला प्रमुख हैं। दर्शकों के बैठने के लिए जो जगह निर्धारित होती है उसे 'प्रेक्षागार' कहते हैं। मंच का पिछला भाग 'नेपथ्य' कहलाता है। यहीं से आकाशवाणी की उद्घोषणा या अन्य दिशा-निर्देश दिए जाते हैं। यहीं अभिनेताओं को मुकुट, मुर्दा शंख इत्यादि लगाकर, पहनाकर सुसज्जित करके दर्शकों के सम्मुख मंच पर भेजा जाता है। 'रंगमंच' सहित पूरे भवन को 'प्रेक्षागृह' या 'रंगशाला' या 'नृत्यशाला' कहते हैं। पश्चिमी देशों में इसके लिए 'थिएटर' या 'ओपेरा' शब्द का प्रयोग किया जाता है।

बोध प्रश्न

- प्रेक्षागृह का क्या तात्पर्य है?

हिंदी प्रदेश में हिंदी रंगमंच के विकास के पूरे अवसर होते लेकिन उसे देश के अन्य भागों की अपेक्षा अधिक संघर्ष करना पड़ा और यही वजह रही कि इस क्षेत्र में रंगमंच का अपेक्षाकृत विकास नहीं हो पाया।

हिंदी रंगमंच को कैसे बेहतर किया जा सकता है? इस विषय में महादेवी वर्मा अपने 'हिंदी रंगमंच' शीर्षक निबंध में लिखती हैं 'अन्य देशों में मंच, यवनिका, नेपथ्य, पट परिवर्तन, आलोक आदि का विज्ञान प्राचीन से आधुनिकतम होते-होते बहुत से क्रम पार कर चुका है।...रंगमंच की कला के विकास के लिए ऐसी रंगशालाएँ अनिवार्यतः आवश्यक हैं, जो केवल अभिनय को ध्यान में रखकर बनाई गई हों और सब नाट्य मंडलियों को नाम मात्र के व्यय पर सुलभ हो सकें। नाट्यशास्त्र तथा रंगमंच संबंधी साहित्य का निर्माण और प्रकाशन भी रंगमंच के विकास को स्वस्थ दिशा दे सकेगा।' इसके साथ-साथ रंगमंच के संदर्भ में शोधकार्य, आर्थिक रूप से सम्पन्न व्यक्तियों से आर्थिक सहयोग लेकर, सरकार से आर्थिक सहयोग लेकर आदि के जरिए रंगमंच का विकास किया जा सकता है।

3.3.2 प्राचीनकाल में अभिनय और अभिनयशाला

नाटक और नाटक खेलने की बात किसी न किसी रूप में बहुत ही प्राचीनकाल से चली आ रही है। हाँ यह अवश्य है कि उसका रूप आज से काफी भिन्न था। आज देश समाज ने प्रगति कर ली है जिससे काफी कुछ अंतर दिखता है। दशरथ ओझा जी ने भरत के नाट्य शास्त्र में नाटक के उल्लेख के विषय में बताया है। साथ ही उन्होंने वैदिक युग, रामायण काल, महाभारत काल, कौटिल्य के अर्थशास्त्र में भी नाटक के संबंध में चर्चा किए जाने की बात कही है।

प्राचीनकाल में रंगशालाओं के दो वर्ग मिलते हैं- स्थाई रंगशाला, अस्थाई रंगशाला। राजभवन के भीतर तो स्थाई रंगशाला होती थी। परंतु राजाओं की विजय यात्राओं के पड़ावों पर अस्थाई रंगशालाएँ भी बनाई जाती थीं। ये रंगशालाएँ तीन तरह की होती थी। पहली-सबसे बड़ी रंगशाला और वर्गाकार रूप में 109 हाथ लंबी होती थी। दूसरी- मध्यम श्रेणी की वर्गाकार 64 हाथ लंबी होती थी। तीसरी- इस प्रकार की रंगशाला त्रिभुजाकार होती थी, जिसकी प्रत्येक भुजा 32 हाथ की होती थी। हजारी प्रसाद द्विवेदी लिखते हैं 'मध्यम श्रेणी की रंगशाला ही अधिक प्रचलित थी।'

बोध प्रश्न

- प्राचीनकाल की रंगशाला के विषय में बताइए।

जहाँ तक रंगशाला की बात है तो दशरथ ओझा लिखते हैं, 'रंगशालाओं के दो भाग होते थे। एक भाग अभिनयकर्ता नटों के लिए नियत होता था। दूसरे में दर्शक बैठा करते थे। जहाँ अभिनय होता था उसे 'रंगभूमि' या केवल 'रंग' कहा करते थे। इस रंगभूमि के पीछे 'तिरस्करणी' या 'पर्दा' होता था। परदे के पीछे का भाग 'नेपथ्य' कहलाता था। यहीं अभिनेता प्रसाधन करते थे। यहीं से रंगभूमि में उतरा करते थे। ऐसा प्रतीत होता है कि यह स्थान (नेपथ्य) रंगभूमि से कुछ ऊंचा होता था, क्योंकि संस्कृत नाटकों में 'रंगावतार' शब्द प्रयुक्त होता है, जिसका अर्थ है 'रंगभूमि में उतरना।'

3.3.3 मध्ययुगीन लोकनाट्यों का रंगमंच

'स्वांग' और 'नौटंकी' तो जैसे भारतीय संस्कृति के अभिन्न अंग हैं। गाँवों में तो विवाह के अवसर पर आज भी नौटंकी ले जाने का रिवाज है। जो नौटंकी लेकर जाता है उसे बहुत ही धनाढ्य व्यक्ति समझा जाता है। दशरथ ओझा बताते हैं 'हिंदी भाषा में स्वांग से प्राचीन नाटक का उल्लेख शायद ही कहीं मिले।' लोकनाट्य के रूप में स्वांग का उल्लेख तो ईसा की चौथी शताब्दी में कालिदास के प्रसिद्ध नाटक 'मलविकाग्निमित्रम्' में मिलता है। जहाँ तक नौटंकी बात है तो डॉ. बाबूराम सक्सेना नौटंकी का आरंभ उर्दू कविता और लोकगीतों से हुआ मानते हैं। उनक ये मानना है कि इसका जन्म 11-12 वीं सदी में पञ्जाबी प्रेम कथा 'हीर-राँझा' से हुआ था। अन्य आलोचकों ने यह माना है कि 13 वीं सदी में अमीर खुसरो ने इसको (नौटंकी) विकसित करने में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया था।

मध्य यूरोप में भारत पर मुसलमानों का राज था। कुछ आलोचक ऐसा मानते हैं कि इस समय नाटक और रंगमंच का अपेक्षित विकास नहीं हो पाया क्योंकि इस्लाम में नाचना और गाना को मना किया गया है। लेकिन यह बात हर बादशाह के राज्य पर लागू नहीं होती। नवाब वाजिद ली शाह ने स्वयं एक किस्सा लिखा था। साथ ही अकबर महान भी इस

तरह के कार्यक्रमों में स्वयं रुचि लेते थे। मध्ययुग के नाटककारों ने भारतीय नाट्य परंपरा को समृद्ध किया और इसे एक खुला रंगमंच दिया। वासुदेवनंदन प्रसाद लिखते हैं 'नौटंकी ने एक नया रंगमंच दिया-परदे हटा दिए और नाटकीय कथानक को अंकों में विभाजित न कर नई व्यवस्था का श्री गणेश किया। 'रंगा' नामक एक कथावाचक रखा गया, जो कथा के छूटे हुए भागों या प्रसंगों की घोषणा किया करता था। संवाद छंदबद्ध होते थे।... कथा प्रसंग के अंत में सभी नाटकीय चरित्र रंगमंच छोड़कर चले जाते थे। इससे प्रत्येक दृश्य की समाप्ति की सूचना मिलती थी। पात्र मंच पर खड़े होकर अर्ध संगीतात्मक और अर्धपाठात्मक ढंग से अपने संवादों को बोलते थे और प्रत्येक संवाद के साथ नगाड़े की आवाज होती थी।' ये ध्वनि इस तरह से होती थी- धिन्न... न... न.... । बाद में 'स्वांग' और 'नौटंकी' अपने परिष्कृत रूप में 'रासलीला' और 'रामलीला' के रूप में प्रतिष्ठित हो गए। इन सबके बीच आज भी अपने थोड़े बहुत बदले रूप में ही सही लेकिन 'नौटंकी' खेली जाती है।

बोध प्रश्न

- नौटंकी के बारे में बताइए।

3.3.4 रासलीला और रामलीला

भारतीय समाज संस्कृति में श्रीकृष्ण और श्रीराम इस तरह से बसे हुए हैं कि उनको इससे अलग करने का तो सवाल ही नहीं उठता। श्रीकृष्ण की भक्ति यदि सूरदास ने की है तो रसखान और ताज बीबी ने भी की है। श्रीराम की भक्ति यदि तुलसीदास ने की है तो अल्लामा इकबाल ने श्रीराम को 'इमामुल हिन्द' कहा है। कृष्ण और राम की लीला को रंगमंच पर भी उतारा गया है। जिसकी चर्चा आगे की गई है। सामान्यतः 'रासलीला' और 'रामलीला' को मंदिरों के प्रांगण में खेला जाता रहा है। धीरे-धीरे ये बाहर किसी मैदान में भी खेला जाने लगा।

(क) रासलीला : 'रासलीला' से एक ओर लोकनाट्य की परंपरा विकसित हुई और दूसरी ओर भक्तिकाव्य का नाटकीय रूप जन समाज को प्राप्त हुआ। हमें एक साथ साहित्य और रंगमंच मिले। डॉ. वासुदेव नंदन प्रसाद लिखते हैं, 16 वीं शताब्दी में कृष्णभक्त आचार्यों = वल्लभ, नारायण भट्ट, हित हरिवंश, घमंडी लाल इत्यादि ने ब्रज भाषा में रासलीला को विकसित किया, जिसमें नृत्य, संगीत और नाट्य का समन्वित रूप खड़ा किया। रासलीला की पुरानी परंपरा आज भी किसी-न-किसी रूप में चल रही है।'

(ख) रासलीला का रंगमंच : मध्ययुग में 'रासलीला' का खूब प्रचलन था। इसका अभिनय मथुरा, वृंदावन के किसी मंदिर, निकुंज, यमुना तट पर किया जाता था। ये अभिनय सामान्यतः खुले मंच पर हुआ करता था। 'रासलीला' में राधा और कृष्ण के साथ गोप-गोपियों की भूमिका में कृष्ण भक्त मंच पर उतरते थे और अपनी भक्ति का परिचय अपने अभिनय के द्वारा दिया करते थे। इसमें अनेक प्रकार के वाद्य यंत्रों का प्रयोग किया जाता था। इसका प्रदर्शन संगीत और नृत्य पर आधारित था। मृदंग तथा तबले का प्रयोग, स्त्रियों के पाँव में नूपुर, कलाइयों में कंकण, और कमर में करधनी होती थी।

जहाँ तक रंगमंच की बात है रंगमंच अत्यंत सरल था। ऊंचे चबूतरे पर चादर या कालीन बिछाई जाती थी। इसी चादर या कालीन बिछे मंच पर अभिनेता उपस्थित होकर अपनी भूमिका निभाते थे। रंगमंच खुला होता था। दर्शक पूरे मंच को घेर कर बैठते थे। स्त्रियाँ

और पुरुष अलग बैठते थे। पूरा माहौल भावुकता और धार्मिकता से परिपूर्ण होता था। वासुदेवनंदन प्रसाद लिखते हैं 'मंच पर राधा कृष्ण के साथ गोपी-गोपियों के आते ही दर्शक आत्मा विभोर हो हर्ष ध्वनि करने लगते थे। इनमें कुछ लोग तो राधा-कृष्ण के चरण स्पर्श करने के लिए मंच तक पहुँच जाते थे।'

(ग) रासलीला का नाट्य साहित्य : मध्ययुग की रासलीला की यह परंपरा मियां अमानत की 'इंदरसभा' और भारतेंदु की 'चंद्रावली' नाटिका से होती हुई वियोगी हरी की 'छद्मलीला' तक किसी न किसी रूप में चलती रही। देवकीनंदन प्रसाद जी ने रासलीला की कुछ विशेषताएँ बताई हैं, जो निम्नलिखित हैं-

1. सम्पूर्ण नाटक छंदबद्ध और गेय हैं।
2. सभी पात्र आरंभ से अंत तक रंगमंच पर वर्तमान रहते हैं।
3. सम्पूर्ण नाटक नृत्य और गीत पर अवलंबित हैं।
4. रास-नाटकों में मंगलाचरण और प्रशस्ति-पाठ स्वांग नाटकों की तरह होते हैं।
5. रास-नाटकों में संस्कृत नाटकों की तरह अंक, प्रवेशक, विष्कंभक, अंकावतार नहीं होते। स्वांग की तरह यहाँ भी दृश्य परिवर्तन नहीं होता।
6. नाटक की भाषा में तत्सम शब्दों के स्थान पर देशज और तद्भवों का प्रयोग अधिक होता है।

(घ) रासलीला का पतन : परिवर्तन प्रकृति का नियम है। धीरे-धीरे हमारे देश के नाटककार अंग्रेजी शैली के नाटकों की तरफ आकर्षित होने लगे। फिर धीरे-धीरे पारसी नाटकों का प्रभाव बढ़ने लगा। इससे रासलीला पतन की बढ़ने लगा। आज ब्रजक्षेत्र में ही विशेष अवसरों पर भले ही इसका आयोजन होता हो लेकिन अब यह उस तरह से प्रचलन में नहीं है जिस तरह से मध्ययुग में था।

बोध प्रश्न

- रासलीला के पतन की मुख्य वजह क्या थी?

(ङ) रामलीला : राम के चरित्र और उनसे संबंधित सीता, भरत, लक्ष्मण, दशरथ, जनक, कैकेयी, कौशल्या आदि को समझने के लिए रामलीला एक महत्वपूर्ण माध्यम है। रामलीला की शुरुआत के संबंध में कहा जाता है कि रामनगर, काशी की रामलीला स्वयं तुलसीदास ने शुरू कारवाई थी। कुछ लोगों का मत है कि तुलसीदास के पहले रामलीला की शुरुआत काशी के ही 'मेघा' नामक व्यक्ति ने शुरू कारवाई थी। ये रामभक्त थे। रामलीला को चाहे 'तुलसीदास' ने शुरू करवाया हो या 'मेघा' ने लेकिन हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि रामलीला के कारण ही बहुत ही सरल तरीके से राम का चरित्र भारतीय जनमानस के पास तक पहुंचा। इससे भारतीय जनमानस ने एक शक्ति ग्रहण की, उसका मार्ग प्रशस्त हुआ। रामलीला उत्तर भारत ही नहीं बल्कि पूरे भारत में वहाँ की भाषा में खेली जाती है। साथ ही भारत के बाहर भी इसका प्रचार हुआ है। वासुदेवनंदन प्रसाद लिखते हैं 'यह (रामलीला) उत्तर भारत ही नहीं, कुछ हेर-फेर के साथ सारे भारत वर्ष तथा उसके पड़ोसी देशों - स्याम, कंबोडिया, बालदीप इत्यादि-का धार्मिक रंगमंच है।'

(च) रामलीला का रंगमंच : रामलीला का रंगमंच गत्यात्मक था बाद में स्थिर हुआ। कहीं कहीं इसके लिए स्थाई रंगमंच बने और कहीं कहीं अस्थाई रंगमंच बनाकर काम चलाया

जाता था। शुरुआत में 'गंगा पार' करने के दृश्य को आस-पास की किसी नहर या जलाशय का प्रयोग कर लिया जाता था। इसके लिए कई रामलीला मंडलियाँ होती थीं जो उस जगह जाकर रामलीला का मंचन किया करती थीं। पांडेय बेचन शर्मा 'उग्र' ने अपनी आत्मकथा 'अपनी खबर' में इस तरह की रामलीला मंडलियों का बखूबी जिक्र किया है। वे स्वयं इन मंडलियों से जुड़े थे और उसमें पाठ किया करते थे। वर्तमान में भी गाँव और शहरों में रामलीला होती है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि रामलीला मंडली वालों ने हिंदी रंगमंच को काफी सहयोग प्रदान किया। नवाब वाजिद अली शाह के बाग में हुए 'इंदरसभा' का अभिनय इसी रामलीला-रंगमंच का अनुकरण था।

बोध प्रश्न

- रामलीला में अस्थाई रंगमंच कैसे बनाया जाता है?

(छ) रामलीला का नाट्य साहित्य : हिंदी क्षेत्र में रामलीला खेलने के लिए संदर्भ ग्रंथ के रूप में तुलसीदास के रामचरितमानस को लिया जाता है। वाल्मीकि के रामायण की भी मदद ली जाती है लेकिन इस मामले में तुलसी का रामचरितमानस भारी पड़ता है। वासुदेवनंदन प्रसाद ने कहा है 'बहुत संभव है कि तुलसीदास ने इसी परंपरा को सुव्यवस्थित रूप देने के लिए 'मानस' की रचना की।'

(ज) रामलीला की वर्तमान स्थिति : वर्तमान में भले ही सिनेमा आदि का प्रभाव बढ़ गया हो लेकिन रामलीला आज भी उसी उत्साह और भक्तिभाव के साथ खेली जाती है। काशी, इलाहाबाद (प्रयागराज), फैजाबाद (अयोध्या), गया, पटना, दिल्ली आदि जगहों पर और गाँवों में रामलीला खेली जाती है। हाँ इसमें कुछ कमी जरूर हुई है। रामलीला के लिए कमेटियाँ भी बनाई जाती थीं। इलाहाबाद में 'पथरचट्टी रामलीला कमेटी', प्रयाग बड़ी ही प्रसिद्ध कमेटी रही है।

इसी तरह से इस इकाई लेखक के गाँव आलानगरी, इलाहाबाद (प्रयागराज) में 'आदर्श रामलीला कमेटी' थी जो अस्थाई रंगमंच बनाकर रामलीला खेलती थी। इसमें गाँव के लोग ही राम, लक्ष्मण, शबरी, रावण, परशुराम आदि का पाठ किया करते थे। इसके व्यवस्थापकों में रामचंद्र धुरिया, प्रदीप पटेल, स्वर्गीय अमरनाथ पटेल आदि गणमान्य व्यक्ति हुआ करते थे। इसके कोषाध्यक्ष इकाई लेखक के बड़े भाई तालिब हुसैन हुआ करते थे। इस इकाई लेखक के पिता मरहूम (स्वर्गीय) अलमास हुसैन इस धार्मिक आयोजन में सक्रिय भूमिका निभाते थे। इसके प्रमुख अभिनेताओं में महादेव प्रजापति (दशरथ और रावण), अरविन्द कुमार प्रजापति (दशरथ और रावण), राजबहादुर पटेल (रावण), सुरेश कुमार शर्मा (राम), संजय कुमार पटेल (लक्ष्मण), जगत बहादुर पटेल (परशुराम), कमलेश कुमार भारतीय (शबरी) आदि थे। बाद में कुछ राजनीतिक कारणों से यह रामलीला कमेटी भंग हो गई। इसकी जगह आज बड़े से स्क्रीन पर रामायण टी. वी. सीरीयल को दिखाया जाता है, फिर मेला लगवाया जाता है।

3.3.5 आधुनिक हिंदी रंगमंच

भारतेंदु जी ने 'नहुष' (1850) को हिंदी का प्रथम नाटक कहा है लेकिन इसके पहले भी नाटक के प्रकाशित होने और खेलने का कुछ उल्लेख मिलता है। वासदेवनंदन प्रसाद जी लिखते हैं 'ग्रियर्सन साहब ने कुमाऊँ के कृष्ण पांडेय का लिखा 'कलियुग' (1915) नाटक

जुलाई, 1901 के रॉयल एशियाटिक सोसाइटी जर्नल में प्रकाशित किया था। संभवतः यह नाटक कहीं खेला गया था। इससे उस समय के मैजिस्ट्रैट मिस्टर टेलर बड़े प्रभावित थे।... दूसरा हिंदी नाटक 'श्रीकृष्ण चरित्रोपाख्यान' नाटक है जो काठमांडू के निकट सन 1835 में खेला गया था।' इसके अलावा भारतेंदु के पूर्व 'रामलीला' और 'रासलीला' की परंपरा थी। ये भी एक प्रकार के नाटक ही हैं। हाँ इनमें धार्मिकता अवश्य है। रामलीला आज भी उत्तर भारत में खेला जाता है। विभिन्न स्तर के लोकनाटकों की अभिव्यक्ति 'अमानत' साहब की 'इंदरसभा' (1853) में हुई। 'इंदरसभा' का विकास पारसी रंगमंच में हुआ और उसका प्रभाव हिंदी नाटक और रंगमंच पर पड़ा।

'आनंद-रघुनंदन' और 'नहुष' की संस्कृत नाट्य-परंपरा, दोनों ने मिलकर आधुनिक हिंदी नाटक और रंगमंच के निर्माण में योग दिया है। भारतेंदु युग में आधुनिक हिंदी रंगमंच का प्रभात शीतला प्रसाद त्रिपाठी के 'जानकीमंगल' नाटक से ही मानना ही चाहिए क्योंकि 'इंदरसभा' के बाद उस युग में आधुनिक रंगमंच पर उसी के अभिनीत होने का प्रमाण मिलता है।

(क) व्यावसायिक रंगमंच (पारसी रंगमंच)

'पारसी रंगमंच' की प्रसिद्धि और जनव्यापकता का कारण उसकी विषय-वस्तु है। उसकी विषय-वस्तु हुआ करती थी प्यार-मोहब्बत, मारधाड़ आदि ऐसे विषय थे जिससे जनता विशेष कर नवयुवक उसकी ओर आकृष्ट होते थे। बच्चन सिंह ने लिखा है 'इश्क, मारधाड़, मेलोड्रेमैटिक क्रियाकलाप, उछलकूद आदि से यह दर्शकों का मनोरंजन करता रहा। सनसनीखेज दृश्यों की प्रस्तुति और वृत्तगंधी संवादों का प्रयोग इनकी मुख्य विशेषताएँ थीं।' ये पारसी रंगमंच पैसे कमाने के उद्देश्य से संचालित हुआ करते थे। इसीलिए इन्हें 'व्यावसायिक रंगमंच' भी कहा जाता है। कुछ आलोचक इनके लिए 'व्यवसायी नाटक मंडली' शब्द का प्रयोग भी करते हैं। व्यवसायी नाटक मंडली का अर्थ 'पारसी नाटक मंडली' से ही लिया जाता है। बच्चनसिंह लिखते हैं, '1853 में पहली पारसी नाटक मंडली की स्थापना हुई। इस मंडली के प्रधान थे श्री फराम जी गुस्ताद जी दलाल। सन् 1961 तक लगभग 20 नाटक मंडलियाँ जनमी और मरीं। 'पारसी नाटक मंडली' बीच-बीच में बंद हो जाती थी लेकिन उसका कार्य बंद नहीं हुआ।' सेठ पेस्टन जी फ्रेम ने 1870 के आसपास 'आरिजनल थीऐट्रिकल कंपनी' खोली। इस मंच पर 'खुदा दोस्त', 'चाँदबीबी', 'इशरत सभा', 'लैला मजनू' आदि नाटक खेले गए। इसके प्रसिद्ध अभिनेताओं में खुरशेद जी बल्लीवाला, सोहराब जी और जहाँगीर जी थे।

बोध प्रश्न

- 'पारसी रंगमंच' को बहुत अच्छी दृष्टि से क्यों नहीं देखा गया?

1872 में खुरशेद जी बल्लीवाला ने अपनी एक कंपनी दिल्ली में खोली जिसका नाम था 'विक्टोरिया थीऐट्रिकल कंपनी'। इसके प्रमुख नाटककारों में मुंशी विनायक प्रसाद 'तालिब', लैलो निहार, दिलेर दिलशेर आदि। इस कंपनी के मंच पर उर्दू नाटक ज्यादा खेले जाते थे लेकिन इस कंपनी ने 'विक्रम-विलास', 'गोपीचन्द' आदि हिन्दुस्तानी नाटक भी खेले। 1898 में बंबई (अब मुंबई) में कावस जी खटाऊ ने एक दूसरी कंपनी खोली थी जिसका नाम था 'अल्फ्रेड थीऐट्रिकल कंपनी'। इस कंपनी ने नाटक लिखने के लिए नारायण प्रसाद 'बेताब',

मेहदी हसन 'अहसन' को नियुक्त किया था। इन नाटककारों ने 'फरेबे मोहब्बत', 'महाभारत', 'रामायण', 'पति-पत्नी', 'कृष्ण सुदामा' आदि नाटकों की रचना की।

1914 के बाद 'न्यू अल्फ्रेड कंपनी' स्थापित हुई। सोहराब जी इसके प्रबंध निर्देशक थे। इस कंपनी ने दो और नाटककार दिए 'आगा हश्र 'कश्मीरी' और 'राधेश्याम कथावाचक'। पारसी रंगमंच को एक नई दिशा देने में नारायण प्रसाद 'बेताब', आगा हश्र 'कश्मीरी' और राधेश्याम कथावाचक का विशेष योगदान है। शुरुआत में पारसी थिएटर पर शेक्सपियर के अनूदित नाटकों को ही खेला जाता था।

नारायण प्रसाद 'बेताब' के 'महाभारत' नाटक से हिंदी रंगमंच का समारंभ स्वीकार किया जाएगा। यह नाटक सर्वप्रथम कावस जी पालन जी खटाऊ की कंपनी ने संगम थिएटर देहली में खेला। 'आगा हश्र 'कश्मीरी' ' असल में कश्मीर के थे लेकिन उनके पिता जी बनारस में आकर बस गए थे। उन्होंने कई उर्दू नाटक लिखे थे जो काफी प्रसिद्ध हुए थे। उनके प्रमुख नाटकों में 'यहूदी की लड़की', 'रुस्तम सोहराब', 'सीता वनवास' आदि हैं। 'राधेश्याम कथावाचक' के प्रमुख नाटकों में 'वीर अभिमन्यु', 'प्रह्लाद' आदि हैं। 'प्रह्लाद' में राष्ट्रीय चेतना की अभिव्यक्ति कुशलतापूर्वक की गई थी। 'प्रह्लाद' में हिरण्यकशिपु अंग्रेजों का प्रतीक था।

सामान्यतः आलोचकों ने पारसी रंगमंच को बहुत अच्छी निगाह से नहीं देखा है। भारतेंदु हरिश्चंद्र जी ने अपने 'नाटक अथवा दृश्य काव्य सिद्धांत विवेचन' शीर्षक निबंध में लिखा है 'काशी में पारसी नाटकवालों ने नाचघर में जब शकुंतला नाटक खेला और उसमें धीरोदात्त नायक दुष्यंत खेमटे वालियों की तरह कमर पर हाथ रखकर मटक-मटक कर नाचने और पतरी कमर बलखाय यह गाने लगा और डॉक्टर थिबो बाबू प्रमदादास मित्र प्रभृति विद्वान यह कहकर उठ आए कि अब देखा नहीं जाता ये लोग कालिदास के गले पर छुरी फेर रहे हैं।' नाचघर के विषय में आगे चर्चा की गई है। इन सबके बीच पारसी रंगमंच का भी अपना महत्व है। महादेवी वर्मा अपने निबंध 'अभिनय कला' में लिखती हैं 'वर्तमान काल में हमें अभिनय-कला का जो परिचय मिला, वह व्यवसायी पारसी थिएटर कम्पनियों के रंगमंच पर ही मिल सका। यह आश्चर्य का विषय है की हिंदी नाटकों के आविर्भाव से लेकर अब तक हमारा कोई रंगमंच नहीं रहा। व्यक्तिगत रूप से कभी कुछ व्यक्तियों ने मनोविनोद के लिए किसी नाटक का अभिनय कर भी लिया तो उससे किसी स्थाई रंगमंच की स्थापना नहीं हो सकी।' कोई भी चीज़ जब हमारे सामने आती है। हम उसके बारे में जानते समझते हैं तो उसकी अच्छाई और बुराई दोनों दिखती हैं। महादेवी जी अपने निबंध 'अभिनय कला' में लिखती हैं 'हमें इन रंगमंचों से अकस्मात कभी भी कोई महत्वपूर्ण सामग्री भी मिलती रही, यह अस्वीकार करना सत्य की उपेक्षा करना होगा, परंतु अधिकांश में वहाँ सस्ती उत्तेजना बढ़ाने वाले गीत, कामुकता को प्रश्रय देने वाले नृत्य और विकृत प्रभाव डालने वाले चरित्रों का ही प्राधान्य रहा। इन रंगमंचों ने वह दिया, जिसे रासधारी, राधा कृष्ण के बहाने देने का निष्फल प्रयास करते थे और इन्होंने वह छीन लिया जिसे रामलीला वाले सफलतापूर्वक देते थे।'

(ख) अव्यावसायिक रंगमंच

अव्यवसायिक रंगमंच का उद्देश्य धार्मिकता का प्रचार-प्रसार, नाटक और रंगमंच के प्रति जनसमूह की रुचि पैदा करना, नाटक के माध्यम से शिक्षा देना, जागरूक करना रहा है। इनका उद्देश्य पैसा कमाना नहीं रहा है।बड़े रंगमंचों के अलावा गाँव में रामलीला खेलने के लिए अस्थाई या स्थाई रंगमंच होते थे। इस तरह से रामलीला खेली जाती थी। किसी व्यक्ति विशेष के द्वारा भी किसी अच्छे नाटक को खिलवाया जाता था। इसी तरह से विद्यालयों, महाविद्यालयों, विश्वविद्यालयों में भी नाटक खेले जाते हैं। इनका भी कोई व्यावसायिक उद्देश्य नहीं होता है।

इसी तरह से राष्ट्रीय स्तर पर प्रसिद्ध अन्य संस्थाएँ/थिएटर थे जिनका उद्देश्य पैसे कमाना नहीं था। इनके नाम हैं- बनारस थिएटर, नाचघर, कवितावर्धिनी, पेनी रीडिंग क्लब, काशी नाटक मंडली, नागरी नाट्य कला प्रवर्तक मंडली, भारतेंदु नाटक मंडली, नागरी नाटक मंडली, आर्य नाट्य समाज, रेलवे थिएटर, रामलीला नाट्य मंडली, हिंदी नाट्य समिति आदि। इन संस्थाओं के विषय में आगे चर्चा की गई है।

3.3.6 भारतेंदुयुगीन हिंदी रंगमंच के प्रमुख केंद्र

उत्तर प्रदेश

काशी (वाराणसी / बनारस)

(क) बनारस थिएटर : शीतला प्रसाद त्रिपाठी का 'जानकीमंगल' काशी के नाट्य प्रेमी बाबू ऐश्वर्या नारायण सिंह के प्रयत्न से 1828 ई. में बनारस थिएटर में बड़ी धूमधाम से खेल गया था। इसमें भारतेंदु हरिश्चंद्र ने लक्ष्मण की भूमिका निभाई थी। असल में जिस लड़के को लक्ष्मण की भूमिका दी गई थी वह बीमार पड़ गया था। भारतेंदु ने उसकी जगह पर लक्ष्मण की भूमिका निभाई थी। भारतेंदु युग में अव्यावसायिक दृष्टि से आधुनिक हिंदी नाटक खेलने का प्रथम प्रयास था।

(ख) नाचघर : बनारस में पारसियों का 'नाचघर' नामक एक रंगमंच था। इस पर बंबई (अब मुंबई) के पारसियों के 'गुलबकावली' और 'शकुंतला' नामक नाटक खेले। एक बार वे अपने मित्रों के साथ शकुंतला' नाटक देखने गए लेकिन बहुत निराश हुए।

(ग) कवितावर्धिनी सभा : भारतेंदु के समय में 'कवि-मंडली' नामक एक साहित्यिक संस्था थी। ये संस्था भारतेंदु हरिश्चंद्र के नेतृत्व में चलती थी। पंडित अंबिकादत्त व्यास ने अपने नाटक 'गोसंकट' (1882) की भूमिका में 'कवि-मंडली' द्वारा इस नाटक को स्वीकृत कर खेले जाने का संकेत किया है। इस कवि मंडली का पूरा नाम 'कवितावर्धिनी सभा' था। भारतेंदु जी ने अपने निवास स्थान राम कटोरा बाग में इसे 1870 में स्थापित किया था।

(घ) पेनी रीडिंग क्लब : इसकी स्थापना 1873 में भारतेंदु ने की थी। यहाँ गायन, वादन, अभिनय आदि का आयोजन होता था। भारतेंदु के नाटकों का अभिनय यहाँ के अलावा काशिराज की सभा में हुआ करता था।

(ङ) काशी नाटक मंडली : भारतेंदु के मित्र दामोदर शास्त्री ने भी एक संस्था स्थापित की थी जिसका नाम 'काशी नाटक मंडली' है। शास्त्री जी की नाटक मंडली ने 'प्रह्लादचरित' (श्री निवासदास) और भारतेंदु के 'वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति' को खेला था। यह मंडली गोरखपुर और बस्ती भी गई लेकिन धनाभाव के कारण बंद हो गई।

(च) नागरी नाट्य कला प्रवर्तक मंडली : 1908 में काशी के हिन्दू स्कूल में राधाकृष्णदास का नाटक 'राणाप्रताप' खेला गया। वहाँ काशी के प्रसिद्ध सेठ बाबू कृष्णदास भी आए थे। वे इससे बहुत प्रभावित हुए। दोबारा इस नाटक के खेलने की बात की गई लेकिन धनराशि की कमी के करण ऐसा नहीं हो पाया। बाद में काशी के बड़े-बड़े लोगों की एक बैठक बुलाई गई और एक मंडली स्थापित की गई। इसका नाम रखा गया- 'नागरी नाट्य कला प्रवर्तक मंडली'। इस पर 'नागरी प्रचारिणी सभा' काशी के नाम का स्पष्ट प्रभाव दिख रहा है। बच्चन सिंह लिखते हैं ' 'नाट्य-कला प्रवर्तक' का कदाचित अभिप्राय यह था कि पारसी नाट्य - कला से दूषित अभिनेयता का प्रवर्तन।' बाद में आपसी मतभेद के कारण दो अलग-अलग मंडलियाँ बन गईं। पहली- 'नागरी नाटक मंडली', दूसरी - 'भारतेंदु नाटक मंडली'।

बोध प्रश्न

- 'नागरी नाट्यकला प्रवर्तक मंडली' के विषय में बताइए?

(छ) भारतेंदु नाटक मंडली : 1908-1909 के आसपास 'भारतेंदु नाटक मंडली' की स्थापना हुई। शुरू में इसकी देख रेख भारतेंदु जी के दो भतीजों श्री कृष्ण चंद्र जी और श्री ब्रज चंद्र जी ने की । इस मंडली ने लगभग 23 साल के पूरे काल में कई नाटक खेले और कई प्रसिद्ध अभिनेता भी दिए। शुरू में राधाकृष्णदास का नाटक 'महाराणा प्रताप', भारतेंदु जी का नाटक 'सत्य हरिश्चंद्र', गोविंद शास्त्री दुगवेकर का नाटक 'सुभद्राहरण' खेले गए। वासुदेवनंदन प्रसाद जी लिखते हैं 'काशी के बड़े-बड़े सम्राट अकबर और बलदाऊ की भूमिका में क्रमशः पंडित विद्यानाथ सुकुल और महाराणा प्रताप के रूप में गोविंद शास्त्री दुग्वेकर को लोग अब भी नहीं भूले हैं।' इसमें वीरेन्द्रनाथ दास उर्फ वीरे बाबू हास्य अभिनेता थे।

(ज) नागरी नाटक मंडली : इस मंडली ने पंडित सुधाकर द्विवेदी की देखरेख में कार्य करना आरंभ किया। बच्चन सिंह लिखते हैं 'कृष्णगढ़ नरेश की सहायता से इस मंडली ने कबीर चौरा में एक रंगमंच का निर्माण भी किया है, समय-समय पर यह मंडली कोई-न-कोई नाटक खेलती रहती है।' यहाँ खेले जाने वाले प्रमुख नाटकों के नाम इस प्रकार हैं - 'अत्याचार', 'सम्राट अशोक, 'महाभारत', 'भीष्म पितामह', 'वीर अभिमन्यु', 'भक्त सूरदास', 'संसार स्वप्न', 'कलियुग', 'पाप-परिणाम' आदि।

इलाहाबाद (प्रयाग / प्रयागराज)

(क) आर्य नाट्य समाज : इलाहाबाद में हिंदी का प्रथम आधुनिक अव्यावसायिक रंगमंच 'आर्य नाट्य समाज' था। इसकी स्थापना 1870-1871 में हुई थी। इसकी स्थापना किस पुण्यात्मा ने की थी? दुर्भाग्य से इसकी जानकारी नहीं मिलती। यह हिंदी का एक पुराना रंगमंच था जिसने पारसियों की नाटक मंडली के विरोध में अनेक नाटकों को खेला। उनमें 'रणधीर' और 'प्रेममोहिनी', देवकीनंदन त्रिपाठी के प्रहसन आदि विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

(ख) रेलवे थिएटर : यह इलाहाबाद की दूसरी नाट्य संस्था थी जिसमें बंगाली और हिंदी भाषी लोग मिलजुलकर अभिनय किया करते थे। उन दिनों दोनों समाज के लोग मिलकर हिंदी रंगमंच का विकास कर रहे थे। दुर्भाग्य से 1888-1889 के आस-पास यह थिएटर बंद हो

गया। उन दिनों वहाँ बंगालियों के तीन नाट्य मंच थे- 'एमेच्ययोर थिएटर', 'लिसियम थिएटर', 'कर्नलगंज थिएटर'। बंगाल का 'ग्रेट नैशनल थिएटर' भी वहाँ आया था।

(ग) रामलीला नाट्य मंडली : इलाहाबाद (प्रयाग) में रामलीला के दो दल पहले से ही थे। पहला दल था खत्रियों का और दूसरा दल था अग्रवालों का। इनमें राजगद्दी के उत्सव में वेश्याओं का नाच होता था। लेकिन जब 1898 में 'रामलीला मंडली' बनी तो वेश्याओं का नाचगाना बंद हो गया। इस कार्य में अग्रवालों ने विशेष उत्साह दिखाया था। 'रामलीला नाटक मंडली' में रामायण से संबंधित नाटकों के अलावा हिंदी साहित्य से संबंधित नाटक भी खेले जाते थे। 7 जनवरी, 1905 को इस मंडली ने भारतेंदु के नाटक 'सत्यहरिश्चंद्र' का मंचन हुआ। इस मंडली को बनाने वालों में पंडित मदन मोहन मालवीय के परिवार के लोग थे। किसी बात पर मालवीय जी के घराने के लड़के अलग हो गए और ये मंडली 1907 में टूट गई। फिर 1908 में पंडित माधव शुक्ल और महादेव भट्ट ने एक नई मंडली बनाई जिसका नाम 'हिंदी नाट्य समिति' रखा गया।

बोध प्रश्न

- 'रामलीला नाट्य मंडली' के बारे में चर्चा कीजिए।

(घ) हिंदी नाट्य समिति : इस नवगठित समिति में कुछ अधिक उत्साह था। इसकी प्रेरक शक्ति पंडित बालकृष्ण भट्ट थे। वे प्रत्येक नाटक के सूत्रधार की जिम्मेदारी खुद निभाते थे। इस नाट्य समिति ने पहला नाटक जो खेला था वह था बाबू राधाकृष्णदास का 'महाराणा प्रताप'। इसे देखने के लिए बाबू राधाकृष्णदास जी स्वयं इलाहाबाद (प्रयाग) आए थे। बाद में पंडित माधव शुक्ल जी जीविका के लिए कलकत्ता चले गए। फिर धीरे-धीरे यह समिति भी छिन्न-भिन्न हो गई।

कानपुर : कानपुर में भारतेंदु जी के अधिकांश नाटक खेले गए थे। प्रताप नारायण मिश्र यहीं के रहने वाले थे। उनके पत्र 'ब्राह्मण' से तत्कालीन नाटकों और उसके खेलने आदि से संबंधित बातें पता चलती हैं। कानपुर में हिंदी रंगमंच के संस्थापक पंडित राम नारायण त्रिपाठी 'प्रभाकर' थे। उन्होंने भारतेंदु के 'सत्य हरिश्चंद्र' और 'वैदिकी हिंसा' के अभिनय का आयोजन किया था। पंडित प्रताप नारायण मिश्र कहते हैं, '1875 के पूर्व कानपुर के लोग यह भी नहीं जानते थे कि नाटक किस चिड़िया का नाम है।' 1882 में प्रताप नारायण मिश्र ने 'नीलदेवी' और 'अंधेर नगरी' का अभिनय कराया था। 1885 में 'भारत दुर्दशा' खेल गया।

उसी साल 'भारत इंटरटेन्मेंट क्लब' स्थापित हुआ। इसने पारसी नाट्य शैली में 'अंजामे बदी' नाटक दो बार खेला। बाद में यह क्लब टूट गया और दो नई संस्थाएँ बनीं। एक-'भारत रंजनी सभा' और दो-'एम. ए. क्लब'। उसी समय 'ए. बी. क्लब' स्थापित हुआ। इसने 9 अगस्त 1885 को 'सदमए इश्क' और 'गोरक्षा' नाटक खेले। इनका अभिनय तो सराहनीय था हाँ इनकी भाषा अवश्य ही उर्दू थी और इनपर पारसियों का प्रभाव पड़ा था। कानपुर में 1897 में 'रसिक समाज' नामक संस्था स्थापित हुई थी जिसने हिंदी के कई नाटकों का अभिनय किया था।

लखनऊ : लखनऊ भी इस मामले में पीछे नहीं रहा। वजह थी स्वयं वहाँ के नवाब साहब का नाटक और रंगमंच के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण। उन्होंने स्वयं 'किस्सा राधा कन्हैया' लिखा था। बच्चन सिंह लिखते हैं 'रंगमंच पर नाटक के अभिनय की ओर झांसी के महाराज

गंगाधरराव और लखनऊ के नवाब वाजिद अली शाह की दृष्टि भी गई। वाजिद अली शाह ने 'किस्सा राधा कन्हैया' स्वयं लिखा।'

बलिया : भारतेंदु जी का बलिया से संबंध रहा है। वे वहाँ के मेले में गए थे। वहाँ उन्होंने जो बातें कहीं थीं वह निबंध के रूप में प्रकाशित हुआ। उसका शीर्षक है 'भारत वर्षोन्नति कैसे हो सकती है'। यह 1884 की बात है। 1884 में बलिया में 'बलिया नाट्य समाज' नामक संस्था की स्थापना हुई। इसके निर्माण और अभिनय ने काफी दिलचस्पी ली। बलिया के रंगमंच पर इनके दो नाटक खेले गए थे- 'सत्यहरिश्चंद्र' और 'नील देवी'।

मुरादाबाद : भारतेंदुयुग में मुरादाबाद ने हिंदी के तीन नाटककारों को जन्म दिया। लाला शालिग्राम वैश्य, पंडित बलदेव प्रसाद मिश्र, पंडित ज्वाला प्रसाद मिश्र। लाला जी के 'अभिमन्यु' नाटक की प्रस्तावना में इस बात का संकेत हुआ है कि राजा कृष्ण कुमार, सी. आई. ई. के पुष्पोद्यान में रामलीला के अतिरिक्त आधुनिक नाटक भी खेले जाते थे और लोग दूर-दूर से नाटक देखने आते थे।

झांसी : वृंदावन लाल वर्मा ने झांसी की 'मोतीबाई नाटकशाला' का पता लगाया है, जो गदर के पहले से ही अव्यावसायिक रंगमंच के रूप में चली आ रही थी। उन्होंने बताया है कि 'राजा गंगाधरराव को नाटक खेलने और खेलवाने का बहुत शौक था। स्त्रियों का अभिनय स्त्रियाँ ही करती थीं। इनमें मोतीबाई थीं।' बच्चन सिंह लिखते हैं 'रंगमंच पर नाटक के अभिनय की ओर झांसी के महाराज गंगाधर राव और लखनऊ के नवाब वाजिद अली शाह की दृष्टि भी गई।

पटना : बिहार की प्रथम नाट्य संस्था 'पटना नाटक मंडली' थी, जो 'बिहारबंधु' के संपादक पंडित केशवराम भट्ट द्वारा 1876 में स्थापित हुई थी। भट्ट जी ने हिंदी में 'शमशाद सौसन' नामक आधुनिक नाटक लिखा था। यह नाटक इस मंडली के रंगमंच पर, बिहारबंधु छापाखाना में खेला गया था। 'पटना नाटक मंडली' के संगठन में भारतेंदु के मित्र और हिंदी के नाटककार पंडित दामोदर शास्त्री का भी हाथ था। पंडित केशवराम भट्ट का दूसरा नाटक 'सज्जाद-संुबुल' भी उक्त रंगमंच पर खेला गया, जिसमें नाटककार ने भी भाग लिया। 'पटना नाटक मंडली' के बाद पटना में दो अन्य नाट्य संस्थाएँ बनीं- 'बिहार थेयट्रिकल ट्रूप' और 'बांकीपुर नाटक मंडली'(1884)। ये मंडलियाँ पारसी नाटक और रंगमंच का अनुकरण करती थीं।

मुजफ्फरपुर : वहाँ 'धर्म संरक्षिणी सभा' नामक एक संस्था थी। उसने पंडित अंबिकादत्त व्यास के एक संक्षिप्त रूपक 'धर्मपर्व' का अभिनय कराया था। इस संस्था में 'धर्मपर्व' रूपक है। वहाँ बहुत सारे लोग आते थे। देखते-देखते भक्ति में लोग डूब गए और अश्रुधारा फूट पड़ी।

आरा (शाहाबाद) : यहाँ के रईस बाबू जैनेन्द्र किशोर (1871-1909) ने भारतेंदु से प्रभावित होकर 1897 'जैन नाटक मंडली' की स्थापना थी। इसके रंगमंच पर प्रायः जैन धर्म के नाटक खेले जाते थे। कुछ वर्षों के बाद यह मंडली टूट गई और इसके स्थान पर 'सार्वजनिक नाटक मंडली' बनी। बाद में ईश्वरी प्रसाद शर्मा ने 'मनोरंजन नाटक मंडली' की स्थापना की। इसके प्रमुख अभिनेताओं में शर्मा जी के अलावा शिवपूजन सहाय, शुकदेव सिंह, कृष्णजी सहाय, शिवशंकर गुप्त, राजेन्द्र प्रसाद उर्फ लल्लू जी के नाम उल्लेखनीय हैं। बिहार के प्रसिद्ध अभिनेताओं में पंडित जगन्नाथ प्रसाद चतुर्वेदी, पंडित ईश्वरी प्रसाद शर्मा और मौलवी लताफ

हुसैन के नाम आज भी सम्मान के साथ लिए जाते हैं। विभिन्न मंडलियों की तरह यह मंडली भी टूट गई।

छपरा (सारण) : शुरुआत में कुछ पढे-लिखे लोगों ने मिलकर 'छपरा क्लब' की स्थापना की। इसके रंगमंच पर बाबू लक्ष्मीप्रसाद के 'उर्वशी' नाटक का सफलतापूर्वक अभिनय हुआ था। इसके बाद भारतेंदु युग के हिंदी लेखक जगन्नाथ शरण का 'प्रह्लाद' नाटक खेला गया। इसी समय वहाँ 'अमेच्योर ड्रामेटिक एसोसिएशन' नामक एक संस्था का निर्माण हुआ।

पटना सिटी : आधुनिक हिंदी रंगमंच के निर्माण में 1905 में पटना सिटी के पंडित गोवर्धन शुक्ल ने 'रामलीला नाटक मंडली' की स्थापना की। इसका रंगमंच सिटी के हाजीगंज मोहल्ले में स्थापित हुआ था। इसके मंच पर तीन अंकों का 'कृष्ण सुदामा' नाटक खेला गया था। स्त्रियों का काम पुरुष करते थे। गुलजारबाग में 'बेलवरगंज नाटक मंडली' उर्फ लल्ला बाबू का क्लब, रग्घू मिस्त्री की 'महावीर थीऐट्रिकल कंपनी' और 'मीतन घाट क्लब', कूँचा नाट्य परिषद की स्थापना हुई।

नाटक व रंगमंच से संबंधित महत्वपूर्ण संस्थाएँ

(क) इप्टा थिएटर (IPTA- Indian People Theatre Association)

इप्टा एक अव्यवसायिक संस्था है। इसकी स्थापना 25 मई, 1943 को मुंबई में हुई थी। इसका नामकरण 'रोमा रोलां' की पुस्तक 'पीपल थिएटर' के आधार पर किया गया था। 1943-1947 के दौरान इप्टा की गतिविधियां अत्यधिक लोकप्रिय और देशव्यापी होने लगी थी। इसने 'खुले थिएटर' (ओपन एयर थिएटर) का बहुत ही सफल प्रयोग किया है। इसके रंगमंच पर कई नाटक खेले गए हैं। जो काफी प्रसिद्ध भी हुए हैं। इसके प्रमुख अभिनेताओं में अली सरदार जाफरी, कैफ़ी आज़मी, उपेन्द्रनाथ 'अश्क', रामविलास शर्मा, रांगेय राघव, ख्वाजा अहमद अब्बास, बलराज साहनी आदि थे।

बोध प्रश्न

- 'इप्टा' के प्रमुख अभिनेताओं के नाम लिखिए।

(ख) पृथ्वी थिएटर

1944 में पृथ्वीराज कपूर ने 'पृथ्वी थिएटर' की स्थापना की। पृथ्वीराज कपूर ने 'पृथ्वी थिएटर' के माध्यम से हिंदी को एक रंगमंच देने का काम किया है। बच्चन सिंह लिखते हैं 'उनका रंगमंच चलता-फिरता रंगमंच था। देश के विभिन्न भागों का दौरा करके उन्होंने अपने नाटकों का प्रदर्शन किया।' इसने कई नाटकों को रंगमंच पर उतारा है। इसके नाम हैं - 'पठान', 'दीवार', 'गद्दार', 'कलाकार', 'शकुंतला', 'आहुति', 'पैसा', 'किसान' 'दत्ता'। इसमें लगभग 80-90 रंग सदस्य थे। यह पारसी थिएटर के बाद ऐसा नाटक समूह था, जो उत्तर एवं दक्षिण भारत के क्षेत्रों की यात्रा करता था। इसके अभिनेताओं में पृथ्वीराज कपूर, राज कपूर, शम्मी कपूर, प्रेमनाथ, जोहरा सहगल, सुदर्शन सेठी आदि महत्वपूर्ण कलाकार थे। 'पृथ्वी थिएटर' के नाटकों में साम्राज्यवाद, सामंतवाद, पूंजीवाद के विकृत रूप का विरोध, हिंदी-मुस्लिम एकता आदि विषय होते थे।

(ग) राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय

अप्रैल 1959 में 'संगीत नाटक अकादेमी' द्वारा 'राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय' की स्थापना की गई। 1960 के बाद हिंदी रंगमंच के विकास में इसने महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

(घ) अन्य

नाटक और रंगमंच से संबंधित विविध संस्थाएँ वर्तमान में कार्यरत हैं। इनके नाम इस प्रकार हैं- अभियान, देशान्तर, थिएटर यूनिट, नया थिएटर, अनामिका, जननाट्य मंच, प्रयोग, दर्पण, रूपांतर, मेघदूत, प्रतिध्वनि, श्रीराम सेंटर, ललित कला मंच गया, कलाकार संघ गया आदि। इसी तरह से हैदराबाद में भी कुछ नाट्य संस्थाएँ काम कर रही हैं। हालांकि आज नाटक तो लिखे जा रहे हैं लेकिन रंगमंच का निर्माण उस तरह से नहीं हुआ है। टेलीविजन, सिनेमा आदि ने रंगमंच की संभावनाओं को कम कर दिया है।

3.4 पाठ सार

इस प्रकार हम देखते हैं कि 'रंगमंच' शब्द 'रंग' और 'मंच' से बना है। रंगमंच पर नाटक खेले जाते हैं। प्राचीनकाल से इसका प्रचलन चला आ रहा है। मध्ययुग में भी इस तरह की व्यवस्था थी जहाँ किसी नाटक को खेला जाता था। उनके विषय भले ही अलग-अलग हो सकते थे। तत्कालिन परिस्थितियों को देखते हुए विषय का चयन किया जाता था।

जनता को इस ओर आकर्षित करने में 'रासलीला' और 'रामलीला' ने बहुत बड़ा योगदान दिया। जनता में भक्तिभाव को जागृत करने में रासलीला और रामलीला ने महती भूमिका निभाई है। इसके बाद 'व्यावसायिक रंगमंच (पारसी रंगमंच)' आता है जिसमें मारधाड़, इश्क मोहब्बत और काफी हद तक उत्तेजना बढ़ाने वाले नृत्य और गीत हुआ करते थे। ये कभी-कभी अश्लीलता की श्रेणी में चले जाते थे। इनका मुख्य उद्देश्य पैसे कमाना था। कुछ अव्यवसायिक रंगमंच थे जिनका उद्देश्य पैसे कमाना नहीं था। भारतेंदु युग में उत्तर प्रदेश, बिहार आदि में नाटक और रंगमंच से संबंधित कई संस्थाएँ थीं। वर्तमान में भी विभिन्न संस्थाएँ इस क्षेत्र में कार्यरत हैं। इसे स्वीकार करने में कोई संकोच नहीं होना चाहिए कि आज नाटक भले ही लिखे जा रहे हैं लेकिन रंगमंच का विकास उस तरह से नहीं हो पा रहा है। जिस तरह से होना चाहिए था।

3.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं -

1. भारत में प्राचीन काल में अभिनयशालाओं का प्रचलन था, जहाँ नाटकों का मंचन किया जाता था।
2. 'रासलीला' और 'रामलीला' ने रंगमंच को आगे बढ़ाने में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया है।
3. 'पारसी रंगमंच' ने भी रंगमंच से जनता को जोड़े रखने का काम किया है। हालांकि इसका मुख्य उद्देश्य पैसा कमाना था। इसकी तरफ युवाओं का बहुत रुझान था।
4. पारसी रंगमंच से जनता को दूर रखने के लिए कुछ गणमान्य व्यक्तियों ने कुछ संस्थाएँ बनाईं जिनके मंच पर नाटक खेले जाते थे। इनका उद्देश्य पैसा कमाना नहीं था।

5. भारतेंदु युग के हिंदी रंगमंच के प्रमुख केंद्रों में काशी, प्रयागराज (इलाहाबाद), कानपुर, बलिया, मुरादाबाद, झांसी, पटना, मुजफ्फरपुर आदि की नाट्य संस्थाएँ और रंगमंच शामिल थे।
6. वर्तमान में इप्टा, राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, अभियान, देशान्तर, श्रीराम सेंटर, ललित कला मंच, कलाकार संघ आदि संस्थाएँ नाटक और रंगमंच के क्षेत्र में अपना योगदान दे रही हैं।

3.6 शब्द संपदा

1. अंकावतार = नाटक में किसी अंक का वह भाग जिसमें अगले अंक की अभिनेय सामग्री का संकेत रहता है, एक नाट्य पद्धति जिसमें किसी अंक के अंत में कोई पात्र अगले अंक की घटनाओं की सूचना देता है
2. आलोक = प्रकाश, लाइट
3. इमामुल हिन्द = हिन्द (हिंदुस्तान) के इमामों के इमाम , मस्जिद में सबसे आगे खड़े होकर नमाज़ पढ़ाने वाला इमाम कहलाता है
4. कंकन = ककना, कडा, कलाई में पहनने का आभूषण, ब्रेसलेट
5. करधनी = कमर में पहने जाने वाला एक जेवर
6. किरदार = नाटक में किसी व्यक्ति, राजा आदि बनकर उसकी तरह व्यवहार करना, चरित्र
7. कोषाध्यक्ष = खजांची, रोकड़िया, धनराशि का हिसाब किताब रखने वाला, ट्रेजरार
8. जीविका = जीवन का स्रोत, रोजी-रोटी
9. तालिब = सत्य का खोजी, विद्यार्थी, सत्य
10. दिलेर दिलशेर = शेरदिल , बहादुर, वीर, साहसी
11. नगाड़ा =एक वाद्य यंत्र जिससे खूब तेज ध्वनि निकलती है
12. निकुंज = मीठी महक, इत्र
13. नूपुर = स्त्रियों के पैर का गहना, पाजेब, घुंघुरू
14. नेपथ्य = रंगस्थल के पिछले भाग में जो एक गुप्त स्थान रहता है। जहाँ पात्रों को सजाया, शृंगार, किया जाता है।
15. प्रवेशक = नाटक में एक प्रकार का अर्थोपक्षेपक जो दो अंकों के बीच में होता है और किसी पात्र के द्वारा किसी भावी (आने वाला) या भूत (बीत जाने वाला या पिछला) कथाअंश की सूचना दी जाती है
16. प्रश्रय = सहारा, प्यार, सम्मान
17. बेताब = बेचैन, उत्सुक, परेशान
18. मेलोड्रेमैटिक = नाटकीय या अतिनाटकीय, नाटक संबंधी
19. यवनिका = कार्य अनुरोध से समस्त रंगस्थल को आवरण करने के लिए नाट्यशाला के सम्मुख जो चित्र प्रक्षिप्त रहता है उसका नाम यवनिका या जवनिका या वाह्यपटी है। जब रंगशाला में चित्रपट

परिवर्तन का प्रयोजन होता है उस समय जवनिका गिरा दी जाती है

20.रूपक = दृश्य काव्य, रूपकों में नाटक सबसे मुख्य है
21.रोमैन्टिक = रूमानी, प्रेमपूर्ण
22.सनसनीखेज = सनसनी पैदा कारण वाला, चौका देने वाली खबर या घटना
23.सूत्रधार = संचालक, व्यवस्थापक, नाट्यशाला का व्यवस्थापक या प्रधान नट

3.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

दीर्घ श्रेणी के प्रश्न (अ)

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. रंगमंच के अर्थ को स्पष्ट करते हुए प्राचीन काल में प्रचलित रंगशालों पर प्रकाश डालिए।
2. रंगमंच की दृष्टि से रामलीला के महत्व पर प्रकाश डालिए।
3. भारतेंदुयुगीन काशी की प्रमुख नाट्य संस्थाओं के बारे में जानकारी दीजिए।
4. भारतेंदुयुगीन हिंदी रंगमंच के कुछ प्रमुख केंद्रों की चर्चा कीजिए।
5. व्यावसायिक रंगमंच (पारसी रंगमंच) क्या है? स्पष्ट कीजिए।

खंड (ब)

लघु श्रेणी के प्रश्न (आ)

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. अव्यावसायिक रंगमंच के विषय में बताइए।
2. इप्टा, पृथ्वी थिएटर और राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय के बारे में लिखिए।
3. रासलीला की संक्षेप में चर्चा करते हुए इसकी प्रमुख विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।
4. मध्ययुगीन लोक नाट्यों के रंगमंच पर प्रकाश डालिए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. 'पृथ्वी थिएटर' कहाँ स्थापित किया गया था? ( )
   (अ) दिल्ली (आ) मुंबई (इ) चेन्नई (ई) हैदराबाद
2. 'रासलीला' में किसकी भक्ति की जाती है? ( )
   (अ) राधा-कृष्ण (आ) राम-कृष्ण (इ) सीता-राम (ई) हनुमान
3. 'रेलवे थिएटर' नामक संस्था कहाँ थी? ( )
   (अ) गया (आ) मुजफ्फरपुर (इ) इलाहाबाद (ई) कानपुर

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. व्यावसायिक रंगमंच को .... भी कहते हैं।
2. 'जानकी मंगल' नाटक में ....ने लक्ष्मण की भूमिका निभाई थी।
3. इप्टा (IPTA) का पूरा नाम .... है।

III. सुमेल कीजिए -

1. नेपथ्य	(अ) रंगावतार
2. इंदर सभा	(आ) नौटंकी
3. रंगभूमि में उतरना	(इ) मंच का पिछला स्थान
4. रंगा	(ई) मियां अमानत

3.8 पठनीय पुस्तकें

1. भारतेंदु के श्रेष्ठ निबंध : सं. सत्यप्रकाश मिश्र
2. भारतेंदु युग का नाट्य साहित्य और रंगमंच : वासुदेव नंदन प्रसाद
3. महादेवी समग्र (खंड-4) : सं. निर्मला जैन
4. हिंदी नाटक : बच्चन सिंह
5. हिंदी नाटक - उद्भव और विकास : दशरथ ओझा

इकाई 4 : नुक्कड़ नाटक का उद्भव और विकास

रूपरेखा

4.1 प्रस्तावना
4.2 उद्देश्य
4.3 मूल पाठ : नुक्कड़ नाटक का उद्भव और विकास
4.3.1 नुक्कड़ नाटक : अर्थ और परिभाषा
4.3.2 नुक्कड़ नाटक का स्वरूप
4.3.3 नुक्कड़ नाटक और मंचीय नाटक में अंतर
4.3.4 नुक्कड़ नाटक का विकास क्रम
4.3.5 नुक्कड़ नाटक की विशेषताएँ
4.4 पाठ सार
4.5 पाठ की उपलब्धियाँ
4.6 शब्द संपदा
4.7 परिक्षार्थ प्रश्न
4.8 पठनीय पुस्तकें

4.1 प्रस्तावना

भारत के विकास का पूंजीवादी मार्ग चुनने से जहाँ एक ओर सामंती-साम्राज्यवादी शक्तिओं को बल मिला वहीं दूसरी ओर जनता के जनवादी अधिकार खतरे में पड़ गए। देश के इस संकट ग्रस्त परिदृश ने संस्कृतिकर्मियों को प्रेरित किया कि वे ऐसे सार्थक और नए कला माध्यम को खोजे जो देश की व्यापक जनता को वस्तु स्थिति का ज्ञान करा कर अपने अधिकारों के प्रति सचेत करा सके। संस्कृतिकर्मियों के इन प्रयासों से नुक्कड़ नाटक अपने नए अस्तित्व के साथ उभरा। नुक्कड़ नाटक की शुरुआत को पारंपरिक लोक नाट्य से जोड़ा जाता है, जिसमें बिना ताम-झाम के जनता के बीच खुले में नाटक किया जाता है। आदिम संस्कृति के तत्व में प्रदर्शन का घेरा - दर्शक और अभिनेता का अभिनय जो रोजमर्रा की जीवन की कथानकों-घटनाओं की अंतरंग प्रतिक्रिया के मंचन का रूप नुक्कड़ नाटक का आधार माना जाता है।

वास्तव में जनता की भावनाओं को अभिव्यक्ति देने वाले लोकप्रिय माध्यम के रूप में नुक्कड़ नाटकों का जन्म हुआ। अतः इसके विकास में इप्टा, जन नाट्य मंच, किसान आंदोलन, महिला आदोलनों तथा विभिन्न नाट्य मंडलों जैसे दस्ता, संकल्प, संभावना, सफ़दर स्मृति आदि ने भी महत्वपूर्ण भूमिका निभायी है।

4.2 उद्देश्य

प्रिय छात्रो! इस इकाई को पढ़ने के बाद आप -

- नुक्कड़ नाटक के अर्थ और स्वरूप से परिचित हो सकेंगे।
- नुक्कड़ नाटक के उद्भव एवं विकास की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

- नुक्कड़ नाटकों के विकास में विभिन्न नाट्य मंडलियों के योगदान से अवगत हो सकेंगे।
- जनवादी आन्दोलन और नुक्कड़ नाटक के संबंध की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- नुक्कड़ नाटक के समाज पर प्रभाव से अवगत हो सकेंगे।

4.3 मूल पाठ : नुक्कड़ नाटक का उद्भव और विकास

4.3.1 नुक्कड़ नाटक अर्थ और परिभाषा

मनुष्य धरती का पहला ऐसा प्राणी है, जो अभिनय की कसौटी पर खरा उतरा है। अनुकरण की प्रवृति से उसने नाट्य तत्वों को रंगमंच से बखूबी उजगार करने का प्रयास किया है। मनोरंजन के साथ-साथ उपदेशात्मक की दृष्टि से नाटक कई विधाओं का प्रयोग हर समय में होता आया है। नाट्य तत्वों की सबसे सहज विधा के रूप में नुक्कड़ नाटक की ओर देखा जाता है। धार्मिक, सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक पहलुओं से निर्मित विडंबनाओं और विसंगतियों का समावेश इन नाटकों के केंद्र में होता है। दर्शकों को प्रभावित करने की दृष्टि से नुक्कड़ नाटक की परंपरा में हिंदी नुक्कड़ नाटक का अनन्य साधारण महत्त्व है।

नुक्कड़ नाटक को अंग्रेजी में Street Play कहते हैं। सामान्य रूप से नुक्कड़ नाटक का अर्थ है, मकान, गली अथवा मार्ग पर आने की ओर निकला हुआ मोड़ या कोना। अतः किसी भी गली, मुहल्ले, चौराहे, प्रांगण, सड़क पर अभिनित होने वाला नाटक 'नुक्कड़ नाटक' कहलाता है। डॉ. सूर्यनारायण रणसुभे जी का मानना है कि "अंग्रेजी शब्द की स्ट्रीट प्ले तथा ब्रेख्त का स्ट्रीट कार्नर धिष्टर ही चौराह या नुक्कड़ नाटक है" अतः समाज की सभी इकाइयों को कला और गुण विशेष के साथ जोड़कर पथ एवं मार्ग पर प्रस्तुत करने की क्रिया ही नुक्कड़ नाटक है।

नुक्कड़ नाटक के माध्यम से आम आदमी के जीवन का यथार्थ रूप प्रस्तुत होता है, जो कलात्मक उद्देश्य के माध्यम से नयी चेतना को प्रकाश में लाता है। विद्वानों ने अपने-अपने अनुसार नुक्कड़ नाटक को परिभाषित भी किया है। हिंदी आलोचना की पारिभाषिक शब्दावली के अनुसार "नुक्कड़ नाटक को अंग्रेजी स्ट्रीट प्ले के नाम से जाना आजाता है। यह एक ऐसी नाट्य विधा है, जिसने किसी सड़क पर, गली चौराहे पर, किसी फैक्ट्री के गेट पर खेला जा सकता है।"

गोविन्द चातक के अनुसार- "नुक्कड़ नाटक नाटक की सर्वथा नै विधा है। यदपि मंच-विहिन नाटक की परमपरा हमारे देश में देव जातराओं, सडक पर, मेले-वेलों में आम बात कही जा सकती है, इनमें न पर्दे की जरुरत होती, न मंच की। इनमें दर्शक और नाटक के बीच कोई दुरी नहीं होती। वस्तुतः यह जनता के लिए जनता का आमा नाटक होने के लिए लोक नाट्य परिधि में आता है, जिसे हम आज नुक्कड़ नाटक कहते हैं।"

नुक्कड़ नाटक के सन्दर्भ में जर्मन नाटककार बर्टोल्ड ब्रेख्त ने कहा है कि "नुक्कड़ नाटक एक बहुत पुरानी विधा है। इसकी उत्पति, इसका लक्ष्य एवं उद्देश्य घरेलु है, इसमें कोई शक नहीं कि यह समाज के लिए महत्त्व की चीज है, जो उसके सभी तत्वों पर छाया हुआ है।"

प्रसिद्ध रंगकर्मी सफ़दर हाशमी कहते हैं कि "नुक्कड़ नाटक आधुनिक समाज के अंतर्विरोधों और उनकी मुखालफत का माध्यम है। नुक्कड़ नाटक एक राजनीतिक आवश्यकता के रूप में भले ही एक समय में स्वीकारा गया हो पर अब तक बढ़ते-बढ़ते राजनीतिक, आर्थिक, और सामाजिक समस्याओं तक पहुँच गया है।"

जन नाट्य मंच दिल्ली के नुक्कड़ रंगकर्मी श्री अरुण शर्मा कहते हैं "नुक्कड़ नाटक बाकायदा एक विशिष्ट कर्म है, जिसमें हमारे शास्त्रीय, पारम्परिक और लोक-रंगमंच की सारी खूबियाँ मोजूद है।" अतः मंचीय नाटक से भिन्न नुक्कड़ नाटक एक ऐसी कला है, जो समाज और देश की समस्याओं को आधार बनाकर गली, नुक्कड़ों आदि पर मंचितहोती है। यह न केवल यथार्थ बोध को विकसित करती है, अपितु अन्याय के खिलाफ संगठित होने की दिशा को भी प्रेरित करती है। यह जन साधारण के बीच से निकली हुई जन साधारण की ही आवाज है।

बोध प्रश्न

- नुक्कड़ नाटक के मध्यम से आदमी के किस रूप को प्रस्तुत किया जाता है?

4.3.2 नुक्कड़ नाटक का स्वरूप

नुक्कड़ नाटक की आधुनिक विधा है। स्थानीय तथा क्षेत्रीय भाषा के शब्दों का मार्मिक प्रयोग, अनौपचारिक रूप में किसी नुक्कड़ पर खेला जाता है और जिसके पात्र सामान्य वेशभूषा में, सपाट शैली में अपनी बात जनता तक पहुंचाते हैं वे नुक्कड़ नाटक है। वस्तुतः इस नाटक में उठाई गई समस्या पर वैज्ञानिक दृष्टिकोण से तत्काल विश्लेषण किया जाता है। इसमें मंचीय नाटकों की भांति साजो-सामान की व्यवस्था नहीं होती है। दरअसल इसका विकसित रूप आज इलेक्ट्रॉनिक मिडिया से नियमित प्रचारित किया जाता है।

बर्टोल्ट ब्रेख्त का मानना है - "नुक्कड़ नाटक बहुत पुरानी विधा है। इसकी उत्पत्ति, इसका लक्ष्य एवं उद्देश्य घरेलु हैं। इसमें कोई शक नहीं कि नुक्कड़ के वातावरण में विशेष तत्वों पर छाया है।"

स्पष्ट है कि नुक्कड़ नाटक वह नाट्यरूप है, जो समाज के लिए नुक्कड़ के वातावरण में विशेष तत्वों को लेकर प्रस्तुत होता है।

बोध प्रश्न

- नुक्कड़ नाटक किस स्थान पर खेला जाता है?

4.3.3 नुक्कड़ नाटक और मंचीय नाटक में अंतर

नाटक जनता के मनोरंजन और उद्बोधन का साधन है। अभिव्यक्ति और उद्देश्य की दृष्टि से नाटक और नुक्कड़ नाटक का भेद हमारे सम्मुख परिलक्षित होता है। असल में, दोनों न एक दूसरे के पर्यायवाची है और न एक दूसरे के विकल्प है। दोनों भी अपनी-अपनी विशेषता की दृष्टि से आधृत है। मंचीय नाटक की ओर देखने से ज्ञात होता है कि रंगमंच, दृश्ययोजना, ध्वनि, प्रकाश, गीत-संगीत, वेशभूषा, रंगकर्मी आदि की अत्यंत आवश्यकता होती है। मंचीय नाटक के द्वारा जीवन के सूक्ष्म गहन और उदात्त पक्ष को अंकित किया जाता है। गौरतलब न मंच न किसी साजो-सामान की आवश्यकता है।

नाटक का दर्शक अर्थभाव का उपभोग लेने की कामना से नाटक की ओर आकर्षित होता है किन्तु नुक्कड़ नाटक राह चलते मुसाफिरों के बीच जाकर अभिव्यक्त होता है। वस्तुतः मंचीय नाटक का दर्शक अर्थात सर्वहारा जीवन का आदमी है। मंचीय नाटक की भांति नुक्कड़ नाटक आकार, समय, प्रस्तुति की तुलना में एक चौथाई भी नहीं है, जबकि कम स्थान, कम समय में गत्यात्मक प्रस्तुति इसे अलग रूप में अभिव्यक्ति करती है। सामान्य दृष्टि से नुक्कड़ नाटक बाईस-पच्चीस मिनटों के अवधि में ख़त्म होता है। मंचीय नाटक की प्रस्तुति घंटे-दो घंटे की सीमा लान्घकर प्रस्तुत होता है।

बोध प्रश्न

- नुक्कड़ नाटक के मध्यम से जीवन के किस चीज को प्रस्तुत किया जाता है?

4.3.4 नुक्कड़ नाटक का विकास क्रम

आदिम युग में सब लोग दिन भर काम से थक जाने के बाद मनोरंजन के लिए कही खुले में एक घेरा बनाकर बैठ जाते थे और उस घेरे के बीचों-बीच ही उनका भोजन पकता रहता, खान-पान होता और वही बाद में नाचना-गाना होता। इस प्रकार शुरू से ही नुक्कड़ नाटकों से जुड़े तीन ज़रूरी तत्वों की उपस्थिति इस प्रक्रिया में भी शामिल थी - प्रदर्शन स्थल के रूप में एक घेरा, दर्शकों और अभिनेताओं का अंतरंग सम्बंध और सीधे-सीधे दर्शकों की रोज़मर्रा की जिंद्रगी से जुड़े कथानकों, घटनाओं और नाटकों का मंचन। मध्यकाल में सही रूप में नुक्कड़ नाटकों से मिलती-जुलती नाट्य-शैली का जन्म और विकास भारत के विभिन्न प्रांतों, क्षेत्रों और बोलियों-भाषाओं में लोक नाटकों के रूप में हुआ। भारत में नाटक का इतिहास सदियों पुराना हैं। प्राचीन समय में लोग अपने जीवन का निर्वहन करने के लिए शिकार आदि पर निर्भर थे। भोजन पकने और खाने के बाद वे मनोरंजन के लिए छोटे नुक्कड़ नाटक किया करते थे। एक गोल घेरा बनाकर बस्ती के लोग अपने अभिनेताओं के अभिनय को देखकर आनन्द की प्राप्ति करते थे, उनके नाटकों का विषय तत्कालीन कथानक व घटनाएँ ही हुआ करती थी।

मध्यकाल नुक्कड़ नाटक के विकास का अहम दौर था, इस समय नाटकों का विषय तत्कालीन घटनाओं से हटकर धार्मिक हो गया। इंग्लैंड, फ्रांस, जर्मनी और स्पेन जैसे पश्चिमी देशों में बाईबिल की घटनाओं पर आधारित नाट्य किये जाने लगे, अब लोगों के आने जाने के साधनों के विकास के साथ ही बड़ी आबादी के स्थानों के चौराहों मैदानों में रात की रोशनी में नाटक प्रस्तुत किये जाने लगे। भारतीय नाट्य विधा में इस दौर ने नाटक में रात्रि के मंचन व प्रकाश के अध्याय को जोड़ा। नुक्कड़ नाटकों का आधुनिक दौर भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के समय कौमी तरानों, प्रभात फेरियों और विरोध के जुलूसों के रूप में देखा जाने लगा। इन माध्यमों के जरिये क्रांतिकारी जनता को जागृत कर ब्रिटिश सत्ता को झुकाने में सफल हुए थे। आज के समय में इनकी विषय वस्तु राजनीति, चुनाव व कम्पनियों के प्रचार तक सीमित हो गया हैं।

बोध प्रश्न

नुक्कड़ नाटक का विकास किस युग से माना जाता है?

4.3.5 नुक्कड़ नाटक की विशेषताएँ

नुक्कड़ नाटक की अपनी अपनी विशेषताएँ हैं। मूलतः मंचीय नाटक के लिए परदा, साज-सज्जा, नेपथ्य, ध्वनि संयोजन, महँगा मंच सेट आदि के साथ इमारत के अंदर सभागार आवश्यक होता है। लेकिन नुक्कड़ नाटक में खुली जगह में बिना किसी साज-सज्जा के ही खेले जाते हैं। नुक्कड़ नाटक की विशेषताएँ निम्न प्रकार से हम देख सकते हैं।

तात्कालिकता : किसी भी घटना, समस्या का वर्तमान जीवन पर सीधे असर होता है। नुक्कड़ नाटक का लेखक किसी तात्कालिक ज्वलंत समस्या को लिखकर उसकी प्रस्तुति करता है ताकि उस विषय के प्रति लोगों में जागरूकता निर्माण हो।

गतिशीलता : नुक्कड़ नाटक के विषय का चयन करते हुए इस बात का ध्यान रखा जाता है कि इसकी प्रवाहमयी धारा में विषय, पात्र तथा दर्शक तेजी से गंतव्य की ओर बढे। नाटक के अंत तक किसी को कुछ सोचने का अवकाश नहीं मिलता। इसमें कथ्य और शिल्प का फैलाव नहीं होता ।

अचूक लक्ष्य : नुक्कड़ नाटक हथियार की तरह जड़ पारम्पारिक रुढियों द्वारा किए जा रहे शोषण, अनाचार को ख़त्म कर वर्गहीन समाज की स्थापना के लिए काम करता है।

संक्षिप्तता : नुक्कड़ नाटक में संक्षिप्तता का तत्व अनिवार्य है। लंबे-लंबे संवाद या विषय का विस्तार इन नाटकों को उबाऊ बना देते हैं। नुक्कड़ नाटक जितना संक्षिप्त होगा, उसका प्रभाव उतना ही अधिक होगा। उसका प्रभाव उतना ही अधिक होगा ।

सहज भाषा और व्यंग्य शैली : नाटककार नुक्कड़ नाटक को प्रायः सहज भाषा और व्यंग्य शैली में प्रस्तुत करता है। बीस-पच्चीस मिनट में किसी गंभीर समस्या का जनभाषा में प्रस्तुतीकरण नुक्कड़ नाटक की स्वाभाविकता और रोचकता को बढाता है।

4.4 पाठ सार

नुक्कड़ नाटक का तात्पर्य है चौक या चौराह पर खेले जाने वाला नाटक । इसे अंग्रेजी में 'street Play' भी कहा जाता है। इसका नाट्य प्रस्तुति सड़क के किनारे, किसी चौक, किसी मैदान, बस्ती, हसुसिंग सोसाइटी के आँगन में कहीं भी खेला जाता है। नुक्कड़ नाटक मूलतः आठवें दशक से लोकप्रिय माना जाता है। नुक्कड़ नाटक के माध्यम से आम आदमी के जीवन का यथार्थ रूप प्रस्तुत होता है, जो कलात्मक उद्देश्य के माध्यम से नयी चेतना को प्रकाश में लाता है। आदिम युग में सब लोग दिन भर काम से थक जाने के बाद मनोरंजन के लिए कही खुले में एक घेरा बनाकर बैठ जाते थे और उस घेरे के बीचों-बीच ही उनका भोजन पकता रहता, खान-पान होता और वही बाद में नाचना-गाना होता।

मध्यकाल नुक्कड़ नाटक के विकास का अहम दौर था, इस समय नाटकों का विषय तत्कालीन घटनाओं से हटकर धार्मिक हो गया। इंग्लैंड, फ्रांस, जर्मनी और स्पेन जैसे पश्चिमी देशों में बाईबिल की घटनाओं पर आधारित नाट्य किये जाने लगे, अब लोगों के आने जाने के साधनों के विकास के साथ ही बड़ी आबादी के स्थानों के चौराहों मैदानों में रात की रोशनी में नाटक प्रस्तुत किये जाने लगे। भारतीय नाट्य विधा में इस दौर ने नाटक में रात्रि के मंचन व प्रकाश के अध्याय को जोड़ा।

नुक्कड़ नाटक की विशेषताएँ तात्कालिकता, गतिशीलता, अचूक लक्ष्य, संक्षिप्तता, सहज भाषा और व्यंग्य शैली हैं। इसे कहीं भी खेला जाता है। रास्ते से आने जाने वाले लोगों को ध्यान में रखते हुए इसे संक्षिप्त में खेलने का प्रयास किया जाता है और सही लोगों तक संदेश पहुंचाने का कार्य नुक्कड़ नाटक के माध्यम से किया जाता है।

4.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं -

1. जनजागरण के लिए नुक्कड़ नाटक अत्यंत प्रभावी जनमाध्यम सिद्ध होता है।
2. समाज को संक्षेप में बड़ा संदेश देना ही नुक्कड़ नाटक का मुख्य उद्देश्य होता है।
3. नुक्कड़ नाटक की यह विशेषता है कि इसे आम जनता के बीच जाकर किसी रंगमंच के बिना खेला जाता है।
4. नुक्कड़ नाटक के कलाकार जनता के पास जाते हैं। इस हेतु इसे चौराहे, गली अथवा खुली जगह में खेला जाता है।

5. नुक्कड़ नाटक कम खर्चीला होता है; और अधिक प्रभावी।

4.6 शब्द संपदा

1. अचूक = जो अपने लक्ष्य से न चुके, सटीक, बिना चूक या भूल किए
2. अभिनेता = अभिनय करने वाला, मंचीय कलाकार
3. जनवादी = जनता को महत्व देने वाला जनवाद को समर्थक या अनुयायी
4. नुक्कड़ = किसी गली या मार्ग का वह सिरा जहाँ कोई मोड़ पड़ता हो, मोड़, नाका
5. नेपथ्य = रंगमंच के पर्दे के पीछे का स्थान, अभिनय करने वालों की वेश भूषा
6. रंगमंच = नाटक खेले जाने का स्थान, नाट्यशाला (स्टेज)
7. लोकप्रिय = सामान्य जन को पसंद आने वाला, जो जनता को प्रिय हो
8. सभागार = वह स्थान जहाँ सभा होती है, सभागृह
9. साज- सज्जा = सजावट
10. साम्राज्य = एक विशाल राज्य जिसके अधीन अनेक छोटे-छोटे राज्य या देश हो.

4.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. नुक्कड़ नाटक की विशेषताएँ को समझाए।
2. नुक्कड़ नाटक के विकासक्रम पर प्रकाश डालिए।
3. नुक्कड़ नाटक के अर्थ और स्वरूप पर प्रकाश डालिए।
4. नुक्कड़ नाटक और मंचीय नाटक के बीच निहित अंतर को स्पष्ट करते हुए नुक्कड़ नाटक की विशेषताओं को रेखांकित कीजिए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. नुक्कड़ नाटक का परिचय दीजिए।
2. नुक्कड़ नाटक के रंगमंच के बारे में लिखिए।
3. नुक्कड़ नाटक के उद्देश्य को स्पष्ट कीजिए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. नुक्कड़ का अर्थ है ..... ( )

(अ) लंबा रास्ता (आ) चौराहा (इ) टेढ़ा रास्ता (ई) खाली जगह

2. नुक्कड़ नाटक का विकास का काल माना जाता है - ( )

(अ) आदिकाल (आ) मध्यकाल (इ) आधुनिक काल (ई) छायावाद काल

3. नुक्कड़ नाटक को अंग्रेजी नाम क्या है? ( )

(अ) story (आ) Play (इ) Street Play (ई) Novel

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. नुक्कड़ नाटक को अंग्रेजी में .... कहा जाता है।
2. नुक्कड़ का अर्थ.......................... है।
3. नुक्कड़ नाटक नाटक आम जनता में .... जाता है।

4.8 पठनीय पुस्तकें

1. नुक्कड़ नाटक : गंगोत्री अमित मिश्रा
2. नुक्कड़ नाटक संरचना एवं सिंद्धांत : कैलाश प्रकाश
3. नुक्कड़ नाटक : अरविंद शर्मा

इकाई 5 : जयशंकर प्रसाद : एक परिचय

रूपरेखा

5.1 प्रस्तावना
5.2 उद्देश्य
5.3 मूल पाठ : जयशंकर प्रसाद : एक परिचय
5.3.1 जीवन परिचय
5.3.2 रचना यात्रा
5.3.3 रचनाओं का परिचय
5.3.4 हिंदी साहित्य में स्थान एवं महत्व
5.4 पाठ सार
5.5 पाठ की उपलब्धियाँ
5.6 शब्द संपदा
5.7 परीक्षार्थ प्रश्न
5.8 पठनीय पुस्तकें

5.1 प्रस्तावना

प्रिय छात्रो! किसी भी साहित्यकार का संपूर्ण परिचय प्राप्त करने के लिए लेखक के जीवन के व्यक्तिगत एवं साहित्यिक दोनों पक्षों की जानकारी प्राप्त करनी होगी। एक साहित्यकार समाज में रहकर सामाजिक विषयों से जुड़कर ही अपने रचना कर्म में प्रवृत्त होता है। जयशंकर प्रसाद ने जब साहित्यिक-यात्रा आरंभ की उस समय हमारे आज़ादी के आंदोलन में देश का प्रत्येक वर्ग, जाति, धर्म, समुदाय जुड़ा हुआ था। जयशंकर प्रसाद के गद्य में देश भक्ति की पराकाष्ठा को तथा पद्य में स्वच्छंदतावादी भावधारा का अवलोकन किया जा सकता है। भारतीय संस्कृति और इतिहास के उज्ज्वलतम पक्ष को उन्होंने बड़ी निपुणता के साथ अपनी रचनाओं में प्रस्तुत किया है। प्रस्तुत इकाई के अध्ययन से आप जयशंकर प्रसाद के व्यक्तित्व और कृतित्व की जानकारी पर प्राप्त कर सकेंगे।

5.2 उद्देश्य

प्रिय छात्रो! इस इकाई को पढ़ने के बाद आप -

- जयशंकर प्रसाद के व्यक्तित्व और कृतित्व की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- काव्य और नाटक क्षेत्र में प्रसाद जी के योगदान से परिचित हो सकेंगे।
- जयशंकर प्रसाद के साहित्य की सामाजिक चेतना से अवगत हो सकेंगे।
- जयशंकर प्रसाद के साहित्य की सांस्कृतिक चेतना से अवगत हो सकेंगे।
- हिंदी साहित्य में जयशंकर प्रसाद के योगदान से परिचित हो सकेंगे।

5.3 मूल पाठ : जयशंकर प्रसाद : एक परिचय

प्रिय छात्रो! हिंदी साहित्य के ‘कवि चतुष्टय’ में से एक हैं जयशंकर प्रसाद। जयशंकर प्रसाद को हिंदी साहित्य के छायावादी साहित्य धारा के 'वृहद्त्रयी' का ब्रह्मा कहा जाता है, जबकि विष्णु सुमित्रानंदन पंत एवं महेश सूर्यकांत त्रिपाठी निराला को माना जाता है। साहित्यकार जिस वातावरण में पलता-बढ़ता है, उसकी सोच भी वैसी ही बनती जाती है। वह अपने परिवेश के हर क्षेत्र पर गहन दृष्टि रखता है। बीसवीं शताब्दी के आरंभिक काल में परिवर्तन व विकास का नित नया रूप सामने आ रहा था। प्रथम विश्व युद्ध के बाद का काल समस्त विश्व में एक बौद्धिक बदलाव लेकर आया है। हिंदी साहित्य में यह काल व्यापक परिवर्तन का काल था। अंग्रेजी माध्यम की शिक्षा प्राप्त करते हुए भारतीय जनमानस को अपने देश की सामाजिक दुरावस्था का पता चलने लगा था। सामाजिक सुधार आंदोलनों से जुड़कर हिंदी के साहित्यकार भी अपना योगदान दे रहे थे। राजनैतिक स्तर पर देश में अंग्रेजी शासन के विरुद्ध संघर्ष चरम पर था। भारतीय जनमानस के दृष्टिकोण में बड़े परिवर्तन आ रहें थे, अब जीवन के प्रति वैज्ञानिक दृष्टिकोण का महत्व बढ़ने लगा था। भारतेंदु युग में सामाजिक नवजागरण की मशाल जल चुकी थी। द्विवेदी युगीन साहित्यकारों ने अपने देश के सांस्कृतिक उत्थान का ऐतिहासिक, पौराणिक कथाओं के माध्यम से बिगुल बजाया। इसके पश्चात काव्य में छायावादी तो गद्य में ऐतिहासिक, पौराणिक तथा मिथकीय गौरव को जयशंकर प्रसाद ने चित्रित करते हुए छायावादी साहित्यिक विचारों को पुष्ट किया। देश की जनता को जागृत करने तथा सामाजिक उन्नयन में जयशंकर प्रसाद का अवदान अत्यंत महत्वपूर्ण है।

बोध प्रश्न

- ‘छायावाद का ब्रह्मा’ किसे कहा जाता है?
- प्रसाद के गद्य साहित्य में किन विषयों को प्रमुख रूप से लिया गया था?

5.3.1 जीवन परिचय

हिंदी साहित्य के छायावादी रचनाकार जयशंकर प्रसाद का जन्म 30 जनवरी, 1889 में उत्तर प्रदेश के वाराणसी के एक प्रतिष्ठित तथा संपन्न परिवार में हुआ था। जयशंकर प्रसाद का परिवार ‘सुँघनी साहू’ के नाम से अपने क्षेत्र में प्रसिद्ध था। इनके पिता का नाम देवी प्रसाद तथा माता का नाम श्रीमती मुन्नी देवी था। इनके पितामह बाबू शिवरतन साहू दान देने में प्रसिद्ध थे तथा इनके पिता बाबू देवीप्रसाद दान के साथ-साथ कलाकारों का सम्मान करने में भी सदैव सन्नद्ध रहते थे। जयशंकर प्रसाद अपने भाई-बहनों में सबसे छोटे थे, इसलिए वे अपने परिजनों के अति लाडले थे। इनकी आरंभिक शिक्षा घर पर ही हुई, जब वे क्वींस कॉलेज से सातवीं कक्षा में पढ़ रहे थे, तो उनके पिताजी की मृत्यु हो गई। अतः उन्होंने घर पर ही स्वाध्याय से हिंदी, संस्कृत, फारसी तथा उर्दू आदि भाषाएँ सीखकर साहित्य साधना आरंभ की। परिवार की जिम्मेदारी इनके बड़े भाई श्री शम्भूशरण ने संभाली। किंतु जयशंकर प्रसाद इसके पश्चात् विद्यालई शिक्षा से वंचित हो गए। जयशंकर प्रसाद के आरंभिक शिक्षक श्री मोहिनीलाल गुप्त थे, जो 'रसमय सिद्ध' के नाम से अपने क्षेत्र में अत्यंत प्रसिद्ध थे। प्रसाद जी की रुचि को संस्कृत और हिंदी भाषा एवं साहित्य की ओर उन्मुख करने में रसमय सिद्ध का बहुत बड़ा योगदान रहा।

प्रसाद जी को संस्कृत साहित्य की गहन शिक्षा चेतगंज के गोपाल बाबा से प्राप्त हुई। दीनबंधु ब्रह्मचारी से उपनिषद आदि की समुचित शिक्षा प्राप्त हुई। प्रसाद के संस्कृत ज्ञान से प्रसन्न होकर बनारस हिंदू विश्वविद्यालय के महान संस्कृत अध्यापक पंडित देवीप्रसाद शुक्ल कवि चक्रवर्ती ने प्रसाद जी को अपना शिष्य बना लिया।

बोध प्रश्न

- जयशंकर प्रसाद का परिवार किस नाम से जाना जाता था?
- जयशंकर प्रसाद के आरम्भिक गुरु कौन थे?

जब प्रसाद जी पंद्रह वर्ष के थे, तभी इनकी माता का देहांत हो गया और दो वर्षों के अंतराल में ही इनके बड़े भाई शम्भूशरण की भी अकाल मृत्यु हो गई। ऐसे में इन पर घर, परिवार तथा व्यवसाय की जिम्मेदारी आ गई। ऐसे विपरीत जीवन स्थितियों में भी प्रसाद जी साहित्यिक मार्ग पर सतत आगे बढ़ते रहें। कवि का प्रकृति प्रेम इन्हें यात्रा हेतु भी प्रेरित करता रहता था। प्रसाद जी शारीरिक रूप से दृढ़ रहकर अपने जीवन के मानसिक कष्टों से लगातार जूझते रहते थे। इनकी पहली पत्नी विंध्यवासिनी की विवाह के कुछ समय के बाद ही मृत्यु हो गई अतः परिजनों के अति आग्रह पर दूसरा विवाह सरस्वती देवी से किया, किंतु वे भी क्षयग्रस्त होकर प्रसाद जी का साथ छोड़ गई। अंततः तीसरा विवाह पुनः परिजनों के आग्रह पर कमला देवी से किया, किंतु वह भी पुत्र जन्म के समय अकाल काल-कवलित हो गईं। जयशंकर प्रसाद के पुत्र का नाम रत्नशंकर था। प्रसाद जी को साहित्य से अत्यधिक लगाव था। प्रसाद जी को कसरत करने, बागवानी करने, शतरंज खेलने तथा भोजन बनाने का बहुत शौक था। जीवन की विपदाओं से जूझते हुए सदैव संघर्षों एवं चिंताओं से घिरे रहने के कारण अंततः इनके शरीर ने इनका साथ छोड़ दिया। 15 नवंबर, 1937 में हिंदी साहित्य के छायावादी ब्रह्मा सदैव के लिए ब्रह्मलीन हो गए।

बोध प्रश्न

- जयशंकर प्रसाद के बड़े भाई का नाम बताइए।
- जयशंकर प्रसाद के पुत्र का नाम बताइए।

5.3.2 रचना यात्रा

प्रसाद जी के साहित्यिक निबंधों, काव्यों में प्रकृति सौंदर्य को सर्वत्र देखा जा सकता है। छायावादी रचनाकारों के दर्शन को देखें तो ज्ञात होता है कि सबकी रचना का आधार अलग-अलग है। जयशंकर प्रसाद की रचनाओं पर शैव दर्शन, सूर्यकांत त्रिपाठी निराला की रचना पर अद्वैतवाद, सुमित्रानंदन पंत की रचनाओं पर अरविंद दर्शन तथा महादेवी वर्मा की रचनाओं पर सर्वात्मवाद का प्रभाव देखा जा सकता है। हिंदी साहित्य में छायावादी साहित्य में उन्होंने वेदना को आधार बनाकर अपनी अनुभूतियों को अभिव्यक्त किया है। प्रसाद ने आनंदवाद की स्थापना का उद्देश्य लेकर निरुक्तिमूलक सर्जना की है। जयशंकर प्रसाद की रचना-यात्रा यद्यपि बहुत अधिक नहीं रही, किंतु बहुमुखी प्रतिभा के धनी वे एक सफल कवि, नाटककार, कहानीकार, उपन्यासकार तथा निबंध लेखक के रूप में प्रख्यात हैं। उन्होंने हिंदी साहित्य के द्विवेदी युगीन कठोर अनुशासन वाले साहित्य को प्रकृति के स्वच्छंद प्रांगण में स्थापित किया। खड़ी बोली हिंदी

को काव्य के क्षेत्र में मधुरिम प्रयोग को गति देने की क्षमता प्रसाद के काव्य-भाषा प्रयोग के बाद से बढ़ गई। जयशंकर प्रसाद की कविताओं में प्रकृति, पुराण तथा मिथक कथाएँ अपनी समस्त छटाओं के साथ उपस्थित हैं, तो गद्य रचनाओं में इतिहास, देशभक्ति तथा भारतीय संस्कृति की गौरव-गरिमा अतुलनीय बन पड़ी हैं। जयशंकर प्रसाद हिंदी साहित्य में एक नए युग की शुरूआत करने वाले साहित्यकार के रूप में प्रसिद्ध हैं। काव्य के क्षेत्र में जयशंकर प्रसाद, सूर्यकांत त्रिपाठी निराला, सुमित्रानंदन पंत, महादेवी वर्मा प्रभृति साहित्यकारों के साथ सर्जना करते रहें। नाटक साहित्य के क्षेत्र में भारतेंदु हरिश्चंद्र के बाद निश्चय ही एक नए युग का आरंभ माना जा सकता है। उनके नाटकों की सजीवता को देखते हुए उन्हें हिंदी साहित्य का 'नाटक सम्राट' भी कहा जाता है। हिंदी जगत को गौरवपूर्ण साहित्य प्रदान करने में जयशंकर प्रसाद का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। जयशंकर प्रसाद की कुछ कहानियाँ तथा उपन्यास रचनाएँ उनके लेखन औदात्य को सिद्ध करने के लिए पर्याप्त हैं।

बोध प्रश्न

- प्रसाद जी ने किसे आधार बनाकर अपनी अनुभूति के अभिव्यक्ति की?

5.3.3 रचनाओं का परिचय

जयशंकर प्रसाद की कृतियाँ इस प्रकार हैं -

काव्य कृतियाँ : 'चित्राधार' (1918), 'कानन-कुसुम' (1913), 'प्रेम-पथिक' (1909), 'झरना' (1918), 'महाराणा का महत्व' (1914), 'करुणालय' (1913), 'आंसू' (1925), 'लहर' (1935) तथा 'कामायनी' (1936)

नाटक : 'कल्याणी परिणय', 'प्रायश्चित', 'विशाख', 'कामना', 'चन्द्रगुप्त', 'एक घूँट', 'सज्जन', 'जन्मेजय का नागयज्ञ', 'स्कंदगुप्त', 'ध्रुवस्वामिनी' आदि कृतियाँ जयशंकर प्रसाद को 'नाटक सम्राट' के पद पर बिठा देती हैं।

कहानी साहित्य : 'छाया', 'प्रतिध्वनि', 'आकाशदीप', 'आंधी', 'इंद्रजाल'

उपन्यास : 'कंकाल', 'तितली', 'इरावती'

निबंध : 'काव्य और कला' तथा अन्य निबंध साहित्य की सर्जना करके जयशंकर प्रसाद छायावादी प्रमुख स्तंभकार बन गए।

प्रसाद जी के साहित्य एवं कला प्रेम की झलक इसी बात से मिलती है कि उन्होंने नौ वर्ष की अल्पायु में ही 'कलाधर' नाम से ब्रजभाषा में पहली कविता 'सावक पंचक' रचकर अपने गुरु रसमय सिद्ध को प्रसन्न कर लिया था। यह कविता 'भारतेंदु पत्रिका' में प्रकाशित हुई थी। प्रसाद जी गीता के सूत्रों को अपने जीवन में उतारने का प्रयत्न किया करते थे। प्रसाद जी की आरंभिक रचनाओं पर भारतेंदुयुगीन तथा द्विवेदीयुगीन परंपराओं का 'चित्राधार' पर प्रभाव देखा जा सकता है। इसके पश्चात् उनकी रचना 'प्रेम-पथिक' सन् 1909 में 'इंदु' में ब्रजभाषा में प्रकाशित हुआ, किंतु बाद में सन् 1914 में प्रेम-पथ' के नाम से तथा इसके बचे हुए अंश को 'चमेली' शीर्षक से प्रकाशित किया गया। तत्पश्चात 'प्रेम-पथिक' को समवेत रूप से प्रकाशित किया गया। इस कृति में कवि की औदात्य धारणा का अवलोकन किया जा सकता है।

सन् 1913 में 'करुणालय' का 'इंदु' पत्रिका में प्रकाशन हुआ। इस रचना को प्रसाद जी ने गीतिनाट्य परंपरा के आधार पर दृश्यकाव्य शैली में रचा है। इस कृति को कवितात्मक रूप में प्रस्तुत करते हुए प्रसाद जी ने रचना के अंत में गीतात्मक पद्य में अतुकांत रूप में प्रस्तुत किया है। यद्यपि इस कृति में वाक्य के अनुसार विरामचिह्न का प्रयोग किया गया है। 'करुणालय' को गीतिनाट्य से अधिक 'काव्यनाटक' कहना अधिक उपयुक्त होगा। 'इंदु' पत्रिका में ही सन् 1914 में 'महाराणा का महत्व' काव्य का प्रकाशन हुआ। इसमें देशप्रेम, आत्मगौरव तथा आत्माभिमान की भावना को बनाए रखने की भावना को कथात्मक रूप में प्रस्तुत किया गया है। सन् 1918 में प्रसाद की आरंभिक रचनाओं को 'चित्राधार' नाम से प्रकाशित किया गया। सन् 1913 में प्रकाशित 'कानन-कुसुम' के प्रथम संस्करण में ब्रजभाषा में रचनाएँ संकलित थीं, जो इसके तीसरे संस्करण में खड़ीबोली में प्रकाशित हुई। इसमें सन् 1909 से 1917 तक की स्फुट रचनाएँ संकलित हैं। उर्वशी, बभ्रुवाहन, ब्रह्मर्षि, पंचायत, सरोज, भक्ति, प्रकृति सौंदर्य आदि विषयों को 'चित्राधार' के अंतिम संस्करण में समाहित किया गया है। इसकी रचना कथात्मक आधार पर तीन धाराओं में हुई है, यथा- 'वन मिलन', 'अयोध्या का उद्धार' तथा 'प्रेम राज्य' आदि। 'अयोध्या का उद्धार' महाकवि कालिदास कृत 'रघुवंश' के सोलहवें सर्ग पर आधारित है। 'वन मिलन' में महाकवि कालिदास की कृत 'अभिज्ञान शाकुंतलम' को आधार बनाया गया है, जबकि 'प्रेम राज्य' एक वीर काव्य के रूप में सृजित है। 'प्रेम राज्य' में विजयनगर तथा अहमदाबाद के मध्य हुए तालीकोट युद्ध को आधार बनाया गया है। सन् 1918 में प्रकाशित 'झरना' काव्य संग्रह में प्रसाद की प्रथम छायावादी कविता 'प्रथम प्रभात' को भी संकलित किया गया है। 'झरना' के प्रथम प्रकाशन के समय इसमें कुल 24 कविताएँ संग्रहित थीं। सन् 1927 में प्रकाशित 'झरना' के दूसरे संस्करण में 33 रचनाएँ और जोड़ी गईं, जिसमें वैविध्य देखा जा सकता है। 'झरना' के बाद के अंशों में रहस्यवाद, व्यंजकता, चित्रविधान का अनोखा समन्वय देखा जा सकता है। यदि हम 'झरना' को प्रेम के विविध भावों के प्रकटीकरण का काव्य कहें तो अत्युक्ति न होगी। 'विषाद', 'खोलो द्वार', 'बालू की बेला', 'बिखरा हुआ प्रेम', 'वसंत की प्रतीक्षा' 'किरण' आदि 'झरना' काव्य संग्रह की बाद की रचनाएँ हैं। प्रेम के साथ वंचितों, दलितों तथा दुखियों के प्रति लोकमंगल का भाव इसे औदात्य रचना की श्रेणी में प्रतिष्ठित करती है। उदात्तता को आघात संग्रह में लयात्मकता की कमी के कारण थोड़ा सा अवश्य लगता है।

प्रसाद काव्य को एक नया आयाम सन् 1925 में प्रकाशित 'आँसू' काव्य संग्रह से मिलता है। इसके पहले संस्करण में 126 छंद थे तथा सन् 1933 में प्रकाशित द्वितीय संस्करण में कुल 190 छंद समाहित हैं। प्रसाद की 'प्रेम-पथिक' के प्रेम सौंदर्य को विस्तार 'आँसू' में मिलता है। ' आँसू' में आत्मा से निकलकर होकर प्रेम विश्वव्यापी बनने लगता है। मानवीय प्रेमभावना का प्रस्फुटन 'आँसू' काव्य में भलीभाँति हुआ है। जब साहित्यकार करुणा भरे हृदय से सृजन करता है तो काव्य की वस्तुपरकता तथा आत्मपरकता उसके लेखन चेतनता को विस्तार देने लगती है।

सन् 1935 में प्रकाशित 'लहर' में 1930 से 1935 तक की काव्य रचनाओं का संग्रह समाहित है। 'लहर' के प्रगीतों की मार्मिकता, गंभीरता तथा बुद्धवादी करुणा विस्तृत जीवनानुभूति को समाहित किए हुए है। इसमें ऐतिहासिक घटनाओं पर आधारित कुछ

कविताओं में प्रसाद के जीवन-दर्शन, तद्युगीन परिवेश तथा नियतिवादी दृष्टि आदि का अवलोकन किया जा सकता है। 'लहर' में संकलित ऐतिहासिक घटनाओं पर आधारित कविताएँ भारतीय संस्कृति की गरिमा को प्रस्तुत करती हैं।

सन् 1936 में प्रकाशित 'कामायनी' जयशंकर प्रसाद की कीर्ति गाथा का प्रत्यक्ष प्रमाण है। इस महाकाव्य का रचनाकाल सात वर्ष रहा। प्रसाद ने अपने अध्ययनशील प्रवृत्ति का परिचय देते हुए पुराण, मिथक तथा पूर्व प्रचलित मान्यताओं का समयानुकूल परिवर्तन किया है। कुल पंद्रह सर्गों में सर्जित यह महाकाव्य छायावादी विशेषताओं से युक्त रचनाओं में शिखर पर स्थित होने की गरिमा से युक्त है। इस महाकाव्य में सृष्टि की उत्पत्ति की कथा को पौराणिक तथा मिथकीय दृष्टि से विवेचित किया गया है।

बोध प्रश्न

- 'आँसू' काव्य संग्रह में कुल कितने छंद हैं?
- मानव की उत्पत्ति-कथा को किस कृति में प्रसाद ने चित्रित किया है?
- 'कामायनी' महाकाव्य का रचनाकाल कितने वर्षों का माना जाता है?

जयशंकर प्रसाद की कहानी 'ग्राम' को आधुनिक ढंग की आरंभिक कहानियों में स्थान दिया जाता है। सन् 1912 में 'ग्राम' कहानी का 'इंदु' पत्रिका में प्रकाशन हुआ। प्रसाद के कुल पाँच संग्रहों में लगभग सत्तर कहानियाँ प्रकाशित हुईं, जो 'छाया' (1912), 'प्रतिध्वनि' (1926), 'आकाशदीप' (1929), 'आँधी' (1931) तथा 'इंद्रजाल' (1936) आदि के रूप में संकलित है। अपनी कहानियों के संदर्भ में प्रसाद जी 'छाया' (1912) कहानी संग्रह की भूमिका में अपने विचारों को स्पष्ट करते हुए कहते हैं कि छोटी-छोटी आख्यायिका में किसी घटना का पूर्ण चित्र नहीं प्रस्तुत किया जा सकता है। प्रसाद जी का मानना है कि आख्यायिका की अपूर्णता ही उसकी सशक्तता का प्रतीक है। यदि कहानी में पूर्णता हो तो पाठक इंगित विषय सीमा तक ही सीमित रह जाएगा। कहानी की अपूर्णता ही पाठक को विविध आयामों की ओर उन्मुख करती है। प्रसाद जी इसे ही कल्पना के विस्तृत आनंद का स्रोत मानते हैं। कहानी के छोटे रूप में भी मनोरंजन, विविध विषयों से संबद्ध समस्याएँ तथा कभी-कभी समाधान और चिंतन-मंथन करने की क्षमता समाहित रहती है। प्रसाद की कहानी दृष्टि आज भी हिंदी कथा जगत में प्रासंगिक बनी हुई है। प्रसाद की कहानियों को हिंदी के समीक्षकों ने आरंभ में अधिक गंभीरता से नहीं लिया किंतु जब समीक्षकों ने प्रसाद की कहानियों पर गंभीरतापूर्वक विचार किया तो इनकी कहानियों की विलक्षण प्रवृत्ति का पता चला। जयशंकर प्रसाद छायावाद के अग्रणी साहित्यकारों में गिने जाते हैं। 'ग्राम' प्रसाद की अति यथार्थवादी कहानी है, इसमें प्रसाद ने अपने समय से बहुत आगे की सोच को अभिव्यक्त किया है। महाजनी सभ्यता के निर्मम तथा अमानवीय पक्ष को वस्तुपरक शैली में प्रस्तुत किया है। प्रसाद की रचनाओं को देखते हुए आलोचकों ने उन्हें सामंती सोच वाला रचनाकार मान लिया था। 'ममता' कहानी में सामंतवाद के पतन का उद्घोष करते हैं तो 'कामायनी' में देवसंस्कृति के अंत का उद्घोष करते हुए सामंती विचारधारा की कमी की ओर इंगित करते हैं । प्रसाद जी 'देव संस्कृति' के पतन का कारण देवों की स्वयं की कमियों को बताया है। उन्होंने अपने स्वर्ग की परिकल्पना को 'स्वर्ग के खंडहर' नामक कहानी में प्रस्तुत किया है।

इस कहानी की पात्र लज्जा सामंती विचारों के पोषक दुर्दांत शेख के समक्ष पृथ्वी को स्वर्ग बनाने से रोकती हुई कहती है कि धरती का सौंदर्य उसकी स्वाभाविक यथास्थिति में ही है, इसे स्वर्ग बनाने वाले ठेकेदारों से बचा लिया जाय तो यह स्वतः स्वर्ग बन जाएगी। कहानी में लेखक मानव को भगवान बनने के बजाय इंसान बने रहने के लिए कहते हैं। लेखक का मानना है कि मानव देवता बनने के प्रयत्न में अधिक दानवत्व की ओर उन्मुख हो जाता है। प्रसाद की यह कहानी द्वितीय विश्वयुद्ध की विनाश लीला को भी परोक्ष रूप से चित्रित करती हुई प्रतीत होती है।

छायावादी दृष्टि के अधिक निकट होने के कारण इनकी कहानियों में प्रेम की तीव्रतम अभिव्यक्ति हुई है। नाटक सम्राट प्रसाद की कहानियों में नाटकीयता को देखा जा सकता है। प्रसाद की कहानियों में दृश्यप्रधानता, चित्रात्मकता तथा नाटकीयता का भरपूर प्रयोग किया गया है। कहानी कला को हिंदी साहित्य के कलाधर ने अपनी विशिष्ट शैली से सुशोभित किया। मानव के अंतर्संघर्ष को कहानियों में प्रसाद ने बखूबी चित्रित किए हैं।

कथाजगत को उपन्यास के क्षेत्र में जयशंकर प्रसाद ने तीन अमूल्य रचनाएँ सौंपी। ‘कंकाल’ (1929), ‘तितली’ (1934) एवं ‘इरावती’ (1938) अपूर्ण उपन्यास साहित्य में प्रसाद की मजबूत पकड़ को देख सकते हैं। प्रायः प्रसाद की ऐतिहासिक नाटकों से असंतुष्ट रहने वाले प्रेमचंद ने प्रसाद के पहले उपन्यास के संदर्भ में प्रशंसा करते हुए अपनी 'हंस' पत्रिका में सन् 1930 के नवंबर के अंक में लिखा था कि 'यह 'प्रसाद' जी का पहला ही उपन्यास है, पर आज हिंदी में बहुत कम ऐसे उपन्यास हैं, जो इसके सामने रखे जा सके ।'

'कंकाल' उपन्यास के माध्यम से प्रसाद ने धर्म के क्षेत्र में व्याप्त अनाचारों को अनावृत किया है। इसके कथ्य को विस्तार देते हुए उन्होंने काशी, प्रयाग, वृंदावन, हरिद्वार आदि तीर्थस्थानों को लेते हुए मुस्लिम तथा ईसाई समाज के अनाचारों को भी सर्वसमक्ष किया है। उपन्यास को पढ़ते हुए कहीं भी जुगुप्सा का अनुभव नहीं हुआ है, बल्कि धर्म जैसी ऊँची भावना के नाम पर मानव की कुत्सित भावनाओं को पढ़ कर पाठक सजग बनने के राह को चुनने के लिए आगे बढ़ता है। स्त्रीवाद वर्तमान विषय हो सकता है किंतु प्रसाद की सूक्ष्म दृष्टि स्त्री की स्थिति के प्रति पहले से ही अति उदार रही है। वे स्त्री के साथ हीनतासूचक व्यवहार की सदैव निंदा करते थे। उनका मानना था कि समाज की कुलीनता तथा सामंतवादी प्रवृत्तियों का कुप्रभाव स्त्रियों पर ही पड़ता है। इस उपन्यास में प्रसाद ने स्त्री की उपेक्षा के प्रति क्षोभ व्यक्त किया है तथा उनकी स्थिति को सुधारने के प्रति आशान्वित भी दिखे हैं।

'तितली' उपन्यास में ग्रामीण जीवन के सन्दर्भ में आशावादी दृष्टिकोण को व्यक्त किया गया है। 'तितली' के संदर्भ में प्रेमचंद ने 'हंस' के जुलाई 1935 के अंक में कहा है कि 'यद्यपि इसमें कंकाल की साहित्यिक छटा नहीं है, पर दृष्टिकोण की स्पष्टता और विचारों की प्रौढ़ता में उससे बढ़ा हुआ है। .... हम चरित्रों की झलक सी देखते हैं। उनका संपूर्ण रूप हमारे सामने नहीं आता, मगर शायद यह उनका अधखुलापन ही है, जो उन्हें हृदय के समीप पहुँचा देता है। कला जितनी छिपाव में है, उतनी दिखाव में नहीं।'

हिंदी समीक्षकों ने आरंभ में 'तितली' उपन्यास को महत्व नहीं दिया था, किंतु बाद में इसे यथार्थ रचना के रूप में मान्यता दी। 'तितली' की ज़मींदारी समस्या के चित्रण को देख कर लगता है कि लेखक ने अपने समय से बहुत आगे बढ़ कर समाज की सोच को सुधारने का कार्य किया है।

प्रसाद जी ने ऐतिहासिक पद्धति पर 'इरावती' उपन्यास की रचना की। हिंदी के कई आलोचकों के आग्रह पर उन्होंने 'शुंगकाल' के विषय को लेकर 'इरावती' उपन्यास की सर्जना शुरू की, किंतु हिंदी साहित्य का यह दुर्भाग्य ही कहा जाएगा कि वे अधूरे में ही चल बसे।

बोध प्रश्न

- 'कंकाल' उपन्यास किस विषय पर आधारित है?
- 'तितली' उपन्यास का केंद्रीय विषय क्या है?
- 'इरावती' उपन्यास में इतिहास के किस काल को लिया गया है?

नाटक, एकांकी एवं निबंध कृतियों में 'उर्वशी' चंपू कृति (1909), 'सज्जन' (1910), 'प्रायश्चित' (1914), 'कल्याणी परिणय' (1912), 'राज्यश्री' (1915), 'विशाख' (1921), 'अजातशत्रु' (1922), 'जनमेजय का नाग-यज्ञ' (1926), 'कामना' (1927), 'स्कंदगुप्त' 'विक्रमादित्य' (1928), 'एक घूँट' (1930), 'चंद्रगुप्त' (1931), 'ध्रुवस्वामिनी' (1933), 'अग्निमित्र' (अपूर्ण कृति) आदि तथा 'काव्यकला', 'रहस्यवाद', 'यथार्थवाद और छायावाद' आदि फुटकर निबंध की रचना करते हुए साहित्यिक भंडार में श्रीवृद्धि की।

'नाटक सम्राट' जयशंकर प्रसाद ने 'उर्वशी' तथा 'बभ्रुवाहन' चंपू नाट्य कृति की रचना की। 'अग्निमित्र' अपूर्ण नाट्यकृति के अतिरिक्त आठ ऐतिहासिक, तीन पौराणिक और भावात्मक आदि नाटकों की संख्या लगभग तेरह है। 'कामना' और 'एक घूँट' नाटक की सामग्री इतिहास से ली गई है। 'सज्जन' में दुरात्मा दुर्योधन के विपरीत धर्मराज युधिष्ठिर की सज्जनता का विषय केंद्र में है।

प्रसाद के नाटकों की भित्ति भारतीय राष्ट्रीय एवं सांस्कृतिक चेतना पर आधारित है। भारतेंदु हरिश्चंद्र ने हिंदी रंगमंच का विकास करते हुए जनचेतना का जो बिगुल बजाया था, उसमें पुनः प्राण फूँकने का कार्य किया है। भारत में नाट्यकला को पुनर्जीवित करने पारसी थियेटर के योगदान को नाटक सम्राट जयशंकर प्रसाद ने भी सराहा है, साथ ही उन्होंने पारसी थियेटर को लोकरुचि की विकृति का कारक भी माना है। यद्यपि प्रसाद जी भारतीय संस्कृति एवं गौरव के सबसे बड़े समर्थक थे, इसलिए देश के गौरव को धूमिल करने वाले किसी भी मंच को उनका समर्थन नहीं मिल सकता था। विदेशी शासन के कारण धूलि-धूसरित भारतीय गौरव गाथा को शीर्ष पर रख कर प्रसाद ने आर्य संस्कृति की रक्षा के लिए हर संभव प्रयत्न किए। प्रसाद के नाटकों की गंभीर शैली ने नाटक विधा के साथ ही बौद्धिकता के उच्च शिखर पर प्रतिष्ठित कर दिया। प्रसाद के नाटकों में तथ्यों का गहन अन्वेषण करते हुए ऐतिहासिक सत्य की सर्जना हुई है। डॉ. सत्यप्रकाश मिश्र प्रसाद के नाटकीय गुण के विशेष अभिलक्षणों का अवलोकन करते हुए कहते हैं - 'अपने समय को परिभाषित करने के क्रम में अपने अतीत के प्राणतत्व को आत्मसात करते चलना उनका स्वभाव था। विचार, भाषा, शिल्प, यथार्थबोध, सभ्यता-समीक्षा, राष्ट्रीय

और मानवीय चेतना, दार्शनिकता, रंगमंचीयता आदि की दृष्टि से वे सतत जागरूक रचनाकार हैं।'

'कल्याणी परिणय' में मौर्यवंशीय शासक के इतिहास को एकांकी के रूप में चित्रित किया है। बाद में इस एकांकी को थोड़े बदलाव के साथ 'चंद्रगुप्त' नाटक में सम्मिलित कर लिया गया। 'करुणालय' में वैदिकयुगीन यज्ञ के लिए बलि जैसी हिंसा के समक्ष करुणा को महत्व दिया गया है। 'अजातशत्रु' में सत्य तथा असत्य के अंतर्विरोधों में सत्य को लोकमंगल के विधायक तत्व के रूप में प्रतिष्ठित किया गया है। ‘कामना’ नाटक के माध्यम से प्रसाद ने संतोष, कामना, भोग-विलास तथा विवेक जैसी भावनाओं का सुंदरतम ढंग से मानवीकरण किया है। ‘जनमेजय का नागयज्ञ’ नाटक में प्रसाद ने आर्य तथा नाग जातियों के बीच संघर्ष का चित्रण करते हुए उनमें सौहार्द स्थापित करने का प्रयत्न किया है। ‘स्कंदगुप्त विक्रमादित्य' नाटक में भारतीय राष्ट्रीय, सांस्कृतिक भावधारा को चित्रित किया गया है। 'एक घूँट' नाटक में विवाह एवं स्वच्छंद प्रेम के पक्ष-प्रतिपक्ष पर विचार करते हुए वैवाहिक सामाजिक स्थिति की प्रतिष्ठा की गई है। 'चंद्रगुप्त' नाटक में मौर्य शासक चंद्रगुप्त की शौर्यगाथा का उल्लेख किया गया है। तद्युगीन भारतीय जन-मन देश के प्रति गौरव भावना की सर्जना करने में प्रसाद के इस नाटक की निश्चय ही महती भूमिका रही है। स्त्री के अधिकार, सम्मान तथा अस्मिता की जो बात वर्तमान समय में उठ रही है, उन सभी स्त्री-विषयक समस्याओं को लेकर प्रसाद ने ‘ध्रुवस्वामिनी’ की रचना की है। ‘अग्निमित्र’ नामक अपूर्ण नाटक सन् 1944 में दैनिक समाचार पत्र ‘आज’ में प्रकाशित हुआ, जो राष्ट्र-चेतनायुक्त रचना के रूप में जानी जाती है।

जयशंकर प्रसाद ने नाटक 'सज्जन' में युधिष्ठिर की धर्मनिष्ठा एवं सरलता-सज्जनता को भारतीय जीवन मूल्य के रूप में चित्रित किया है। ‘प्रायश्चित’ कृति में उन्होंने देशद्रोही जयचंद पर केंद्रित विषय के माध्यम से देशद्रोह को जघन्य अपराध की श्रेणी में चित्रित किया है। इस कृति के द्वारा जयचंद के मन में उठे प्रायश्चित भाव की पूर्णाहुति आत्मवध के रूप में हुई है। ‘राज्यश्री’ तथा ‘ध्रुवस्वामिनी’ नाटकों में मौर्ययुगीन तथा हर्षवर्धनयुगीन भारतवर्ष की गौरवगाथा का चित्रण करते हुए अद्‌भुत रचना कौशल से आवेष्टित किया है। प्रसाद के नाटकों में भारत के स्वर्णिम अतीत की गाथा को देखा जा सकता है। यद्यपि आलोचकों ने उनके ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर आधारित नाटकों को गड़े मुर्दे उखाड़ने तथा सामंती विचारों के पोषणकर्ता कह कर आलोचना की। जब हम देवसेना तथा पर्णदत्त जैसे पात्रों के देश के लिए सब कुछ उत्सर्ग करने की भावना को देखते हैं। वे देश की दुर्दशा से खिन्न होकर जनता को दीन बनकर देवता को पुकारने के बजाय अपने अंदर के देवत्व को जगाकर स्थिति को सुधारने की बात करते हैं। देवसेना दीन-हीन जीवन जीने वाली जनता को अपने भाग्य का निर्माता स्वयं बनने के लिए कहती है। ‘स्कंदगुप्त’ नाटक का ही पात्र पर्णदत्त जब जनता के बीच भीख मांगता है तो भीख में जनता से देश के लिए प्राण उत्सर्ग करने की बात कहता है। प्रसादयुगीन भारतीय परिवेश में जबकि ब्रिटिश शासकों के अत्याचारों से जनता त्रस्त थी 'स्कंदगुप्त', ‘चंद्रगुप्त’ जैसे नाटकों ने जन-मन को समाधानात्मक मार्ग दिखाया। प्रसाद के नाटकों की प्रासंगिकता ने साहित्यिक क्षेत्र को राष्ट्रीय संग्राम का पटल बनाते हुए युद्ध छेड़ दिया था। प्रसाद के नाटकों की

मौलिक उद्भावनाएँ सर्जनात्मक धरातल पर बड़ी तत्परता के साथ स्थापित हो चुकी थीं। जिन समस्याओं पर प्रसाद ने अपने नाटकों में प्रकाश डाला है। वे समस्याएँ अब तक नहीं सुलझ पाई हैं। यदि हम राष्ट्रीय भावबोध को प्रसाद के नाटकीय विधान की आत्मा कहें तो अत्युक्ति न होगी। प्रसाद के लगभग सभी विधाओं में सामाजिक समरसता, राष्ट्रप्रेम की धारणा बलवती रही है।

स्त्री-पुरुष के बीच भेद-भाव, धार्मिक संकीर्णता तथा सांप्रदायिकता की भावना को प्रसाद ने सिरे से नकारा है। संकुचित प्रादेशिकता के दुष्परिणाम को उन्होंने अपनी नाटकीय एवं कथात्मक रचनाओं के माध्यम से व्यक्त किया है। उनकी सर्जनात्मक यात्रा का उद्देश्य मात्र समस्या का अंकन नहीं था, अपितु समाधान भी प्रस्तुत करना था। 'स्कंदगुप्त', 'चंद्रगुप्त' एवं ध्रुवास्वामिनी आदि नाटकों में प्रसाद के समाधानात्मक दृष्टिकोण का अवलोकन किया जा सकता है।

प्रायः प्रसाद जी के नाटकों को मंचन के लिए अनुपयुक्त कहा जाता रहा है। उनके नाटकों की पृष्ठभूमि प्राचीन होने के कारण एवं स्वगत कथनों के विस्तृत प्रयोग किए जाने से किंचित अभिनय की दृष्टि से उनके नाटक दुरूह अवश्य हैं किंतु अनभिनेय तो नहीं हो सकते हैं। क्योंकि उनके कई नाटकों का सफलतापूर्वक मंचन किया जा चुका है। प्रसाद के नाटकों में अनोखापन इसलिए है कि उसमें प्राचीन विषय, संस्कृत कालीन रसवादिता, फारसी नाटक कंपनियों कि शैली, बँगला तथा हिंदी की भरतेंदु युगीन, शेक्सपियर की नाट्य-शिल्प विधि का प्रयोग करते हुए नितांत नई सृजनभूमि का निर्माण किया गया है।

शांता गांधी, वीरेंद्र नारायण आदि वर्तमान आलोचकों ने प्रसाद के नाटकों को सर्वथा मंचनीय बताया है। प्रसाद के नाटकीय कृतियों की समग्र विवेचना के लिए सत्येंद्र कुमार तनेजा ने 'नाटककार जयशंकर प्रसाद' नामक समीक्षात्मक पुस्तक में प्राचीन तथा अद्यतन नाट्य-समीक्षकों के विचारों को समाहित किया है। इस पुस्तक में प्रसाद की नाट्यदृष्टि का सम्यक विवेचन किया गया है। इसके अतिरिक्त महेश आनंद की समीक्षात्मक कृति 'जयशंकर प्रसाद : रंगदृष्टि' एवं 'जयशंकर प्रसाद : रंगसृष्टि' में विविध कोणों से विवेचन किया गया है।

बोध प्रश्न

- 'सज्जन' नाटक में किसकी धर्मनिष्ठा का उल्लेख किया गया है?
- जयशंकर प्रसाद ने मानवीय भावनाओं का मानवीकरण अपने किस नाट्यकृति में विशेष रूप से किया है?
- पारसी नाटकों के संदर्भ मे जयशंकर प्रसाद के क्या विचार थे?

5.3.4 हिंदी साहित्य में स्थान एवं महत्व

जयशंकर प्रसाद हिंदी साहित्य के आधुनिककालीन छायावादी प्रमुख स्तंभों में से एक हैं। हिंदी साहित्य को प्रसाद ने अनमोल कृतियाँ दी हैं। जिस समय हिंदी साहित्य को द्विवेदी युगीन नियमों की परिधि में देशभक्ति की रचनाएँ खड़ीबोली हिंदी में रची जा रही थीं, ऐसे समय में पाश्चात्य 'रोमांटिसिज़्म' साहित्य परंपरा का अनुसरण करते हुए हिंदी साहित्य में छायावादी रचनाओं को आरंभ करने वाले रचनाकार जयशंकर प्रसाद ने इत्तिवृत्तात्मकता से हिंदी साहित्य को मुक्त करते हुए भावनाप्रधान लेखन आरंभ किया। प्रसाद ने अपने जीवन के 48 वसंत में ही

इतनी उच्चस्तरीय रचनाएँ हिंदी साहित्य को सौंपी, जो हिंदी साहित्य की धरोहर मानी जाती है। कविता, नाटक, उपन्यास तथा कहानी आदि सभी क्षेत्रों में प्रसाद की देन अपूर्व है। प्रसाद की अध्ययनशील प्रवृत्ति के कारण उनकी कल्पनाशीलता में भी गहनता का अवलोकन किया जा सकता है। उनके नाटकों पर जब रंगमंच के अनुकूल न होने का आक्षेप लगने लगा तो उन्होंने रंगमंच को नाटक के अनुकूल बनाने की बात कही। साहित्य के क्षेत्र में प्रसाद जी कविता, नाटक, उपन्यास तथा कहानी के क्षेत्र में एक पाठशाला की भाँति सबका मार्गदर्शन कर रहे थे। यह बात तो स्वयं सिद्ध है कि जो किसी भी क्षेत्र में नई राहों का अन्वेषण करता है विरोध के झोंके का सामना भी उसे ही करना पड़ता है। भाषा-शैली तथा शब्द विन्यास की नई शैली का प्रयोग करने पर आलोचना का सामना भी उन्हें करना पड़ा।

प्रसाद के रचना संसार में जीवन की विविध धाराएँ साहित्यकार की विशिष्ट शैली में समाहित है। प्रेम, जीवन-सौंदर्य तथा धर्म, संस्कृति आदि को साहित्य में प्रसाद ने अभिनव रूप में प्रस्तुत किए हैं। हिंदी साहित्य में उनकी सबसे बड़ी देन भारत की सांस्कृतिक गरिमा की प्रतिष्ठापना करना है। प्रकृति के विविध रूपों को उन्होंने अपनी रचनाओं में प्रस्तुत किए हैं। प्रकृति की रूप माधुरी हो या रौद्र रूप दोनों ही प्रसाद ने सजीवतापूर्वक चित्रित किए हैं। साथ ही प्रकृति का मानवीकरण करते हुए अपनी काव्यमयी शैली को शाश्वत अभिव्यक्ति दी है। प्रेम और आनंद के अद्भुत सामंजस्य के कवि प्रसाद अपनी भावतीव्रता के लिए सदैव जाने जाते रहेंगे।

वे खड़ी बोली को आश्चर्यजनक रूप से काव्य की भाषा के रूप में स्थापित करने वाले कवि के रूप में प्रसिद्ध हैं। प्रसाद की कृतियों में गीतितत्व की प्रधानता सहज ही द्रष्टव्य होती है। नई और पुरानी साहित्य पद्धतियों में जो संघर्ष चल रहा था, प्रसाद ने उस संघर्ष को स्वाधीनता की आंच में तपा कर अपनी रचनाओं में व्यक्त किया। छायावादी साहित्य में ईश्वर को संसार में नहीं बुलाया जाता है, बल्कि संसार में उपस्थित जीव-वनस्पति में ईश्वरीय उपस्थिति को अनुभूत किया जाता है। पाश्चात्य शिक्षा के कारण जन-मन में अपनी संस्कृति, परंपरादि के प्रति उपेक्षा की भावना बढ़ती जा रही थी, ऐसी परिस्थिति में प्रसाद ने भारतीय संस्कृति की गौरव गाथा को अपनी रचनाओं में प्रस्तुत करते हुए भारतीयों के आत्मगौरव की भावना को बढ़ाया।

बोध प्रश्न

- जयशंकर प्रसाद ने किस पाश्चात्य परंपरा के आधार पर हिंदी में छायावादी रचनाओं का सृजन आरंभ किया?
- छायावादी कवि प्रकृति को किस रूप में प्रस्तुत करते थे?

5.4 पाठ सार

हिंदी साहित्य के आधुनिककालीन लेखकों में जयशंकर प्रसाद युगीन भावधारा की लीक से हटकर नई भावधारा राष्ट्रीय गौरव तथा छायावाद की प्रतिष्ठापना के लिए अत्यधिक प्रसिद्ध रहें हैं। छायावादी साहित्यकार जयशंकर प्रसाद की 'झरना' कृति को छायावाद की प्रथम प्रयोगशाला कहा जाता है। उनकी रचना 'झरना' को 'हिंदी का मेघदूत' कहा जाता है। प्रसाद के 'कामायनी' को 'छायावाद का उपनिषद्' कहा जाता है। कई आलोचक इसे 'रामचरित मानस'

की श्रेणी की रचना मानते हैं। प्रसाद ने दर्शन जैसे नीरस विषय को भी अपने कल्पना के रंग में रंग कर कर्म और भोग में संतुलन की स्थापना की। छायावाद के प्रवर्तक जयशंकर प्रसाद 'कामायनी' जैसी उत्कृष्ट रचना के माध्यम से हिंदी साहित्य के अमर रचनाकार के रूप में सदैव के लिए प्रतिष्ठित हो गए। इस महाकाव्य के माध्यम से प्रसाद ने काम की सुन्दर व्याख्या करते हुए इसके शरीर से जुड़ने पर वासना तथा मन से जुड़ने पर नवसर्जना का रूप लेने की बात कही है। प्रसाद ने पश्चिमी भोगवादी संस्कृति पर भारतीय आध्यात्मवादी संस्कृति को प्रतिष्ठापित किया। 'शेरशाह का आत्मसमर्पण', 'पेशोला की प्रतिध्वनि', 'अशोक की चिंता', 'प्रलय की छाया' जैसी रचनाएँ 'झरना' काव्य संग्रह में संकलित हैं। प्रसाद ने अपनी रचनाओं में अति वैज्ञानिकता को मानव जाति के लिए विनाशकारी बताया गया है। प्रसाद को भारत के गौरवपूर्व अतीत से अत्यधिक लगाव था, जिसे उन्होंने अपने नाटकों में अभिव्यक्त किया है। उन्होंने अपनी नाटकीय रचनाओं में कर्मवाद, विश्वबंधुत्व, संयम, त्याग, साहस, देशभक्ति आदि भावनाओं का भरपूर प्रस्तुति की है।

प्रसाद की कहानियों में भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों की सुंदर प्रस्तुति हुई है। 'ममता', 'पुरस्कार', 'चूड़ीवाली', 'आकाशदीप', 'भिखारिन' आदि कहानियाँ भी इसी श्रेणी की हैं। वे व्यक्तिगत प्रेम को आध्यात्मिक प्रेम का रूप देने में अत्यंत सक्षम साहित्यकार हैं। दुःखवादी संस्कृति को वे आसुरी संस्कृति का प्रतीक मानते थे। प्रसाद अपनी रचनाओं में किसी भी प्रकार की अति से दूर रहते हुए संतुलित दृष्टिकोण को जीवन के लिए आवश्यक बताते हैं। उनकी रचनाओं में स्त्री, प्रकृति एवं भावों के अतुलित सौंदर्य की पराकाष्ठा है।

5.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं -

1. जयशंकर प्रसाद बहुमुखी प्रतिभा के धनी साहित्यकार थे। उन्होंने जहाँ काव्य के क्षेत्र में ‘कामायनी’ जैसी कालजयी कृति की रचना की वहीं कथा-साहित्य और नाट्य-साहित्य में भी युगांतरकारी रचनाओं का सृजन किया।
2. जयशंकर प्रसाद ने हिंदी नाटक को भारतेंदु के बाद एक नया मोड दिया। इसीलिए छायावाद युगीन नाट्य साहित्य को प्रसाद युग के नाम से भी जाना जाता है।
3. जयशंकर प्रसाद भारतीय वांगमय सहित विश्व इतिहास के गहन अध्येता थे। इसलिए उनकी नाट्य कृतियाँ ऐतिहासिक और सांस्कृतिक नींव पर निर्मित हुई हैं।
4. जयशंकर प्रसाद ने प्राचीन और मध्यकालीन भारत के गौरवपूर्ण इतिहास को नाटकों का विषय बनाकर राष्ट्र-बोध को जगाने का सफल प्रयास किया।
5. जयशंकर प्रसाद के नाटकों में सामाजिक चेतना भी अत्यंत मुखर है। विशेष रूप से इनमें स्त्री विमर्श के स्वर आज भी ध्यान खींचते हैं।

5.6 शब्द संपदा

1. अद्वैतवाद = आत्मा-परमात्मा को एक मानना
2. अरविंद दर्शन = जगत और ब्रह्म दोनों को सत्य मानना

3. अवदान = योगदान
4. आक्षेप = दोषारोपण
5. उत्सर्ग = बलिदान
6. उन्मुख = उत्सुक
7. कुत्सित = घिनौना
8. क्षोभ = खलबली
9. जुगुप्सा = घृणा
10. परिधि = गोलाकार रेखा
11. भित्ति = दीवार
12. वंचित = अलग / रहित
13. विलक्षण = असाधारण
14. शैवदर्शन = शिव को मानने वाले
15. सन्नद्ध = हमेशा तैयार रहना
16. समवेत = एक स्थान पर एकत्र
17. सर्वात्मवाद = ईश्वर की व्याप्ति सब में समान रूप से माना गया है

9.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. प्रसाद के व्यक्तित्व और जीवन पर प्रकाश डालिए।
2. हिंदी साहित्य में छायावादी काव्यधारा के प्रवर्तक के रूप में प्रसाद की उपादेयता को स्पष्ट कीजिए।
3. प्रसाद की रचना-यात्रा को रेखांकित कीजिए।
4. हिंदी साहित्य में जयशंकर प्रसाद के महत्व का निरूपण कीजिए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. प्रसाद की रचनाओं की विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।
2. प्रसाद के नाटक साहित्य की प्रमुख विशेषताओं को स्पष्ट कीजिए।
3. जयशंकर प्रसाद के काव्य सौंदर्य का उल्लेख कीजिए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. जयशंकर प्रसाद का जन्म कब हुआ? ( )

(अ) 1903 (आ) 1889 (इ) 1879 (ई) 1979

2. दीनबन्धु ब्रह्मचारी से जयशंकर प्रसाद ने किस विषय की शिक्षा प्राप्त की? ( )
(अ) पुराण (आ) उपनिषद (इ) इतिहास (ई) वेद
3. जयशंकर प्रसाद की रचनाओं पर किस मत का प्रभाव अधिक पड़ा? ( )
(अ) वैष्णव मत (आ) शैव मत (इ) शाक्त मत (ई) बौद्ध मत
4. जयशंकर प्रसाद की रचना 'चित्राधार' का प्रकाशन किस वर्ष में हुआ था? ( )
(अ) 1918 (आ) 1921 (इ) 1917 (ई) 1945
5. निम्न में से कौन सा विकल्प जयशंकर प्रसाद की रचना नहीं है? ( )
(अ) आंधी (आ) कंकाल (इ) तितली (ई) कानन-कुसुम

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. छायावाद के ब्रह्मा के नाम से ....प्रसिद्ध हैं।
2. प्रसाद के पिता का नाम ....है।
3. छायावादी रचनाकार संसार में उपस्थित जीव-वनस्पति में ....की उपस्थिति को मानते थे।
4. 'कामायनी' महाकाव्य का प्रकाशन वर्ष सन् .... है।
5. 1909 में 'इंदु' में 'प्रेम-पथिक' ....भाषा में प्रकाशित हुआ।

III. सुमेल कीजिए -

1. चित्राधार	(अ) सन् 1913 में
2. करुणालय	(आ) सन् 1918 में
3. कलाधर	(इ) जयशंकर प्रसाद का आरंभिक नाम
4. महाराणा का महत्त्व	(ई) कलाशंकर कवि का नाम
	(उ) सन् 1914 में

5.8 पठनीय पुस्तकें

1. प्रसाद का काव्य : प्रेमशंकर
2. हिंदी साहित्य और संवेदना का विकास : रामस्वरूप चतुर्वेदी
3. हिंदी साहित्य का बृहत् इतिहास : नगेंद्र
4. हिंदी कविता के प्रमुख वाद : आदित्य प्रचण्डिया
5. हिंदी साहित्य का वृहत् इतिहास, भाग-10
6. जयशंकर प्रसाद ग्रंथावली भाग-1 : (सं) ओमप्रकाश सिंह

इकाई 6 : स्कंदगुप्त : तात्विक विवेचन

रूपरेखा

6.1 प्रस्तावना
6.2 उद्देश्य
6.3 मूल पाठ : स्कंदगुप्त : तात्विक विवेचन
6.3.1 स्कंदगुप्त : तात्विक विवेचन
6.3.2 स्कंद्गुप्त नाटक में इतिहास और कल्पना
6.3.3 स्कंदगुप्त नाटक से संबंधित विद्वानों के विचार
6.4 पाठ सार
6.5 पाठ की उपलब्धियाँ
6.6 शब्द संपदा
6.7 परीक्षार्थ प्रश्न
6.8 पठनीय पुस्तकें

6.1 प्रस्तावना

प्रिय छात्रो! आप यह जान चुके हैं कि जयशंकर प्रसाद बीसवीं शताब्दी के आरंभिक दशकों के एक युग-प्रवर्तक नाटककार थे। उन्होंने मुख्य रूप से ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर आधारित नाटकों की रचना की जिनमें 'स्कंदगुप्त' का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण है। जयशंकर प्रसाद ने इस नाटक में स्कंदगुप्त के ऐतिहासिक पक्ष को उजागर करते हुए राष्ट्र-बोध को विशेष रूप से उभारा है। प्रसाद का यह नाटक 1928 में प्रकाशित हुआ था। प्रस्तुत इकाई में इस नाटक का गहन अध्ययन अपेक्षित है।

6.2 उद्देश्य

प्रिय छात्रो, इस इकाई के अध्ययन के बाद आप -

- 'स्कंदगुप्त' नाटक के महत्व से परिचित हो सकेंगे।
- इस नाटक की तात्विक विशेषताओं से अवगत हो सकेंगे।
- इस नाटक में निहित राष्ट्रीय जागरण के संदेश को आत्मसात कर सकेंगे।
- इस नाटक में वर्णित ऐतिहासिक परिवेश से परिचित हो सकेंगे।
- आधुनिक नाट्य साहित्य में 'स्कंदगुप्त' का स्थान और महत्व समझ सकेंगे।

6.3 मूल पाठ : स्कंदगुप्त : तात्विक विवेचन

छात्रो! मूल्यांकन की दृष्टि से नाटक के कुछ तत्व निर्धारित किए जाते हैं जिनमें से कथानक या कथावस्तु, पात्र या चरित्र-चित्रण, कथोपकथन, देशकाल-वातावरण एवं भाषा-शैली, रंगमंच की दृष्टि से उसकी बुनावट आदि प्रमुख होते हैं। इन तत्वों के आधार पर किसी भी नाटक को परखा जा सकता है। रचना पद्धति और नाटकीय गुण के संदर्भ में यह देखा जा सकता है कि प्रसाद का स्कंदगुप्त एक श्रेष्ठ नाटक है। इसमें पाश्चात्य एवं भारतीय नाट्यशास्त्र के प्रमुख

सिद्धांतों का व्यावहारिक प्रयोग किया गया है। वस्तु तत्व, चरित्रांकन, संवाद और देशकाल वातावरण को इसमें बड़ी सूक्ष्मता से संजोया गया है। इसमें व्याप्त काव्यात्मकता के कारण कुछ विद्वान इसमें कमियाँ ढूँढते हैं, लेकिन भारतीय नाट्य-परंपरा के जानकार समालोचक इसे स्वीकारते हैं। तो चलिए छात्रो! स्कंदगुप्त का तात्विक विवेचन पढ़ते हुए आप स्वयं इसका विश्लेषण करने में सक्षम हो जाएँगे।

कथावस्तु

स्कंदगुप्त के पिता, गुप्त साम्राज्य का अधिपति कुमारगुप्त कुसुमपुर में विलासी जीवन में व्यस्त रहता है। स्कंदगुप्त युवक होने के बावजूद राजगद्दी पर बैठने का उसे अधिकार नहीं है क्योंकि गुप्तकुल के उत्तराधिकारी के नियम कुछ अव्यवस्थित हैं। स्कंदगुप्त की छोटी माँ अनंतदेवी का पुत्र पुरगुप्त, जो अभी बालक है, वही राज्य का उत्तराधिकारी होगा। इसलिए, स्कंदगुप्त अधिकार के प्रति उदासीन रहता है। किंतु सभी ओर से गुप्त साम्राज्य पर आक्रमण के बादल मंडराते हैं। ऐसी स्थिति में मालव राज्य पर विदेशियों का आक्रमण होता है, तभी वीर स्कंदगुप्त वहाँ पहुँचकर मालव की रक्षा करता है। लेकिन, सम्राट का निधन तथा कौटुंबिक कलह के कारण स्कंदगुप्त को मालव के सिंहासन को स्वीकार करना पड़ता है। हूणों के आक्रमण से आर्यावर्त की रक्षा करने के उद्देश्य से सेना का संगठन कर आक्रमणकारियों का सामना करता है। लेकिन परिस्थिति उसके विपरीत चलती है। उसकी विमाता अनंतदेवी के कहने पर भटार्क स्कंदगुप्त को पीडित करने लगता है जिसके कारण स्कंदगुप्त की सेना को आपत्ति का सामना करना पड़ता है। कुभा के रणभूमि में स्कंदगुप्त की सेना विच्छिन्न हो जाती है। लेकिन फिर भी स्कंदगुप्त हार नहीं मानता और पुन: एक बार सेना को संगठित करता है और हूणों को पराजित करने में सफल हो जाता है। स्कंदगुप्त का शासनकाल लगभग आक्रमणों से और युद्ध से व्याप्त रही है। बाह्य आक्रमणों के साथ-साथ आंतरिक कलह का भी उसे सामना करना पड़ा है। इतिहास सम्मत इस वस्तु को नाटक का रूप देने हेतु प्रसाद ने इस वस्तुस्थिति तथा घटनाचक्र को 5 अंक, 33 दृश्य और 17 गीत सम्मिलित किया है। प्रथम अंक में 7 दृश्य, द्वितीय अंक में 7, तृतीय अंक में 6 चतुर्थ अंक में 7 तथा पाँचवें अंक में 6 दृश्य अंकित हैं। 17 गीत इस प्रकार सम्मिलित हैं- देवसेना के पाँच (5), विजया के दो (2), नर्तकियों के दो (2), नेपथ्य से दो (2), देवसेना की सखी का एक (1), मातृगुप्त और मुद्गल के सम्मिलित स्वर में एक (1) प्रार्थना गीत, मातृगुप्त के दो (2), समूहगान एक (1) और स्कंदगुप्त के द्वारा एक (1) गीत।

प्रथम अंक परिचयात्मक है। इसमें सभी प्रमुख पात्रों का परिचय, व्याप्त समस्या का अंकन, कुलशीलता का स्पष्ट उल्लेख हुआ है। प्रमुख पात्रों के कुलशील के साथ उनकी मनोवृत्तियों का परिचय भी इस अंक में मिल जाता है। इसके साथ ही नाटक का लक्ष्य, उद्देश्य या फल आदि के प्रति भी संकेत मिल जाता है।

बोध प्रश्न

- आंतरिक कलह कौन कर रहा था?
- बाह्य आक्रमणकारियों के नाम लिखिए।
- इस नाटक में कुल कितने अंक हैं?

- इस नाटक में कितने गीत हैं?
- कुमारगुप्त कैसा जीवन बिता रहा था?

(क) प्रथम अंक

स्कंदगुप्त के प्रथम अंक में कुल 7 दुश्य हैं। उज्जयिनी में गुप्त साम्राज्य का स्कांधावार में टहलते हुए स्कंदगुप्त सोचता है- “अधिकार सुख कितना मादक और सारहीन है।” इस प्रकार सोचता रहता है तभी पर्णदत्त प्रवेश करता है जो अपने आप को आज्ञाकारी सेवक कहकर स्वयं पाठकों को अपना परिचय देता है। अधिकार के प्रति स्कंदगुप्त की उदासीनता को देखकर वह उसे कर्तव्य पथ पर अग्रसर होने के लिए प्रेरित करता है। स्कंदगुप्त के सिंहासन के प्रति उदासीनता को देखकर वह कहता है- “किसलिए? त्रस्त प्रजा की रक्षा के लिए, सतीत्व के सम्मान के लिए, देवता, ब्राह्मण और गौ की मर्यादा में विश्वास के लिए, आतंक से प्रकृति को आश्वासन देने के लिए आपको अपने अधिकारों का उपयोग करना होगा। युवराज! इसीलिए मैंने कहा था कि आप अपने अधिकारों के प्रति उदासीन हैं, जिसकी मुझे बड़ी चिंता है। गुप्त साम्राज्य के भावी शासक को अपने उत्तरदायित्व का ध्यान नहीं।”

संवादों में प्राण भरते हुए इस प्रथम अंक में ही प्रसाद ने स्कंदगुप्त, पर्णदत्त के बीच के वार्तालाप से गुप्त साम्राज्य में व्याप्त आंतरिक कलह, राज नरेश कुमारगुप्त का कुसुमपुर चले जाना, कुमारामात्य महाबलाधिकृत वीरसेन का स्वर्ग सिधर जाना, पुष्यमित्रों के साथ युद्ध की परिस्थिति, म्लेच्छों (हूणों) के आक्रमण की पूरी संभावना और उससे पूरे आर्यावर्त की रक्षा करना, मालव नरेश द्वारा युद्ध में साथ देने हेतु स्कंदगुप्त से निवेदन करना आदि के माध्यम से आगे की कहानी की पृष्ठभूमि को इस पहले दृश्य में ही प्रसाद निर्धारित कर देते हैं। पर्णदत्त द्वारा कही गई यह वाक्य परिस्थिति की विषमता को समझने के लिए पर्याप्त है । वह कहता है- “आँधी आने के पहले आकाश जिस तरह स्तंभित हो रहता है, बिजली गिरने से पूर्व जिस प्रकार नील कादंबिनी का मनोहर आवरण महाशून्य पर चढ़ जाता है, क्या वैसी ही दशा गुप्त-साम्राज्य की नहीं है।”

द्वितीय दृश्य में कुसुमपुर के राज-मंदिर में सम्राट कुमारगुप्त और उनकी परिषद के बीच संवाद होता है। इस दृश्य में कुमारगुप्त के साथ धातुसेन, भटार्क, मुद्गल, पृथ्वीसेन, अनंतदेवी, के बीच के वार्तालाप द्रष्टव्य हैं। इनके बीच के वार्तालाप से इन सभी पात्रों के चरित्र पर प्रकाश पड़ता है। पात्रों के अंकन का उद्देश्य स्पष्ट लक्षित होता है। धातुसेन और कुमारगुप्त के बीच के इस वार्तालाप से कथा को न केवल गति मिलती है, साथ ही साथ कुमारगुप्त की दशा का भी आभास हो जाता है। जैसे-

धातुसेन ; “सुना है सम्राट! स्त्री की मंत्रणा बड़ी अनुकूल और उपयोगी होती है, इसीलिए उन्हें राज्य की झंझटों से शीघ्र ही छुट्टी मिल गई। परम भट्टारक की दुहाई! एक स्त्री को मंत्री आप भी बना लें, बड़े-बड़े दाढ़ी-मूँछ वाले मंत्रियों के बदले उसकी एकांत मंत्रणा कल्याण-कारिणी होगी।’

कुमारगुप्त : (हँसते हुए) लेकिन पृथ्वीसेन तो मानते ही नहीं।

कुमारगुप्त : (मुँह बनाकर) आज तो कुछ पारसीक नर्तकियाँ आनेवाली हैं, आपानक भी है! महादेवी से कह देना, असंतुष्ट न हों, कल चलूंगा, समझा न मुद्गल।”

प्रथम दृश्य में जहाँ स्कंदगुप्त और पर्णदत्त के बीच के संवाद से राष्ट्र के संरक्षण की चिंता स्पष्ट झलकती है, वहीं दूसरे दृश्य में धातुसेन और कुमारगुप्त के बीच के इस वार्तालाप से पता चलता है कि कुमारगुप्त स्त्री सम्मोहन पाश में आबद्ध है। वह अपने कर्तव्यबोध से विमुख है। वह कहता भी है कि "युद्ध तो करना ही पड़ता है। अपनी सत्ता बनाए रखने के लिए यह आवश्यक है", लेकिन उसका व्यवहार इससे विपरीत है। उसमें राज्य की रक्षा का भाव कम, विलासिता में अधिक रुचि दिखाई देती है।

इस दृश्य में भटार्क भी उपस्थित होता है। उसका यह कहना- "नहीं तो क्या रोने से, भीख मांगने से कुछ अधिकार मिलता है?" से उसका उद्देश्य स्पष्ट लक्षित होता है। इसी प्रकार से मुद्गल का प्रवेश और उसकी बातों से यह पता चल जाता है कि वह विदूषक है, उसका यह कहना- जय हो देव! पाकशाला पर चढ़ाई करनी हो तो मुझे आज्ञा मिले। मैं अभी उसका सर्वस्वांत कर डालूँ। में हास्य का पुट है। इसी प्रकार अनंतदेवी का प्रवेश करते हुए यह कहना- "नर्तकियों को बुलवाती आ रही हूँ।" उसके उद्देश्य को स्पष्ट करता है। मदिरा और विलासिता में कुमारगुप्त को उलझाना ताकि स्कंदगुप्त के विरुद्ध षड्यंत्र रचायी जा सके और कुमारगुप्त से इसमें कोई अड़चन उत्पन्न न हो। इस प्रकार इसमें उपस्थित होने वाले प्रत्येक पात्र कथावस्तु का निर्वहण करते हुए अपने चरित्र का भी स्वयं ही परिचय देते हैं। इस दृश्य में नर्तकियों द्वारा एक गीत प्रस्तुत किया जाता है। गीत की कुछ पंक्तियाँ प्रस्तुत है-

न खोज पागल मधुर प्रेम को
न तोड़ना और के नेम को
बचा विरह मौन के क्षेम को
कुचाल अपनी सुधार कोकिल।

इस अंक में मातृगुप्त का भी प्रवेश होता है जो एक कवि है जिसे कालिदास भी कहा गया है। इस प्रकार स्कंदगुप्त के प्रथम अंक में इन सातों दृश्यों में कथा का विस्तार घटना-आवृत्ति के साथ हुआ है। इस अंक की समाप्ति भी आगे के लक्ष्य को इंगित करते हुए उत्साह के साथ हुआ है। मालव पर आक्रमण होता है, स्कंदगुप्त मालव की सहायता करने पहुँचता है और शत्रुओं को बंदी बनाता है। इस अंक में दुर्दम युद्ध-वीरता का आलोकपूर्ण रूप मुखरित हो उठा है। इसके साथ ही स्कंदगुप्त के जीवन में प्रेम प्रसंग का आरंभ भी यहीं से होता है। जयमाला और देवसेना के अतिरिक्त विजया के नवीन और अपरिचित मूर्ति को देख स्कंदगुप्त का उसकी ओर आश्चर्य भाव के साथ आकर्षण दिखाते हुए प्रसाद ने प्रासंगिक कथा का सूत्रपात किया है जो क्रमशः आगे के अंकों में विकसित होता है।

बोध प्रश्न

- भटार्क कौन था?
- भटार्क को उच्च पदवि कौन देता है?
- कुमरागुप्त किसके मोहजाल में फँसा हुआ है?
- पर्णदत्त कौन था?
- कुमारगुप्त कैसा जीवन बिता रहा था?

(ख) द्वितीय अंक

द्वितीय अंक में प्रयत्नावस्था है। अनंतदेवी भटार्क के साथ मिलकर स्कंदगुप्त की माँ देवकी के विरुद्ध कुचक्र रचती है। एक तरफ आंतरिक षड्यंत्र तो दूसरी ओर बाह्य आक्रमणों से देश की रक्षा करना आवश्यक हो जाता है। स्कंदगुप्त की माँ देवकी को बंदीगृह में बंदी बनाकर रखा जाता है। लेकिन फिर भी देवकी नहीं घबराती है और भगवान से प्रार्थना करती रहती है। रामा से वह जब वार्तालाप करती है तो उससे उसके चरित्र में जो सादगीपन है, उसका पता चलता है। वह कहती है- “बुरे दिन कहते किसे हैं? जब सज्जन लोग अपने शील-शिष्टाचार का पालन करें- आत्मसमर्पण, सहानुभूति, सत्यपथ का अवलंबन करें, तो दुर्दिन का साहस नहीं कि इस कुटुंब की ओर आँख उठाकर देखें। इसलिए इस कठोर समय में भगवान की स्निग्ध करुणा का शीतल ध्यान कर।”

सहसा अनंतदेवी वहाँ पहुंचती है और इनकी बातों को सुनकर कहती है- “परंतु व्यंग की विष-ज्वाला रक्तधारा से भी नहीं बुझती देवकी! तुम मरने के लिए प्रस्तुत हो जाओ।” शर्वनाग उसे मारने के लिए आगे आता है, रामा सामने आकर उसे आगे बढ़ने से रोक लेती है। शर्वनाग और उनके बीच में बहस होती है, और अंत में स्कंदगुप्त आ जाता है और उनसे युद्ध करते हुए अपनी माँ देवकी की रक्षा करता है और आंतरिक षड्यंत्र पर नियंत्रण पाता है। दूसरी ओर युद्ध में मालवा की रक्षा करते हुए वहाँ के राजा के देहांत से स्वयं राज्याधिकार स्वीकार कर, सेना और सहयोगियों के द्वारा शक्ति-संचय करता है। इसी के साथ-साथ प्रासंगिक कथा भी गति पाती है। विजया यह स्वीकार करती है कि वह स्कंद के प्रति आकृष्ट है, लेकिन उसके विराग-भाव को देखकर उसका चंचल मन भटार्क की ओर अग्रसर हो जाता है। जब भटार्क तथा अन्य लोगों को बंदी बना लिया जाता है और स्कंदगुप्त के सामने प्रस्तुत किया जाता है, तब उनके बीच विजया को देखकर स्कंदगुप्त चकित और दुखी हो जाता है। वहाँ विजया स्वीकार करती है कि उसने भटार्क का वरण किया है। वहीं पर देवसेना भी होती है जो स्कंद की भावना को देखकर समझ जाती है कि स्कंदगुप्त को विजया से प्रेम था। वह स्वगत में सोचती है - “आह! जिसकी मुझे आशंका थी, वही है। विजया! आज तू हारकर भी जीत गई।” कहानी यहाँ तक पहुँचते-पहुँचते पात्रों की मानसिकता में बदलाव देखने को मिलता है। जो आंतरिक षड्यंत्र रचने में साथ दे रहे थे, उनका मन परिवर्तित हो गया था। जैसे, शर्वनाग, जो देवकी को मार गिराने पर तुला था, आज देवकी ने उसे क्षमा करते हुए अपने पुत्र स्कंद से कहती है- “वत्स! इसे किसी विषय का शासक बनाकर भेजो, जिसमें दुखिया रामा को किसी प्रकार का कष्ट न हो।”

माँ के आदेशों का पालन करते हुए स्कंदगुप्त घोषित करता है, शर्व! तुम आज से अंतर्वेद के विषयपति नियत किए गए। यह लो (खड्ग देता है)।

भटार्क भी अपनी गलतियों को स्वीकार कर क्षमा याचना करता है। वह कहता है- “मैं केवल राजमाता की आज्ञा का पालन करता था।” तब देवकी उससे पूछती है- “क्यों भटार्क! तुम यह उत्तर सच्चे हृदय से देते हो? क्या ऐसा कहकर तुम स्वयं अपने को धोखा देते हुए औरों को भी प्रवंचित नहीं कर रहे हो?”

भटार्क सिर नीचा कर अपना अपराध स्वीकार करता है। इस प्रकार इस अंक में गुप्त साम्राज्य में व्याप्त आंतरिक कलह सुलझ जाता है और स्कंदगुप्त राजगद्दी को शोभित करता है।

(ग) तृतीय अंक

द्वितीय अंक की समाप्ति में पाठक यह महसूस करते हैं कि आंतरिक षड्यंत्र रचने वाले और उसमें सहयोग देने वाले पात्र जैसे भटार्क, शर्वनाग आदि का मन परिवर्तन हो जाता है, किंतु तृतीय अध्याय में पुन: हम देख सकते हैं कि भटार्क का मन वास्तव में परिवर्तित नहीं हुआ है। उसका यह कहना कि "मुझे अपमानित करके क्षमा किया। मेरी वीरता पर एक दुर्वह उपकार का बोझ लाद दिया।" इससे यह बात सिद्ध हो जाता है कि भटार्क के मन में बदले की भावना है क्योंकि उसे ऐसा लगता है कि उसका अपमान किया गया है। इस प्रकार इस अंक में भटार्क का प्रपंचबुद्धि और अनंतदेवी के साथ मिलकर षड्यंत्र रचना और स्कंदगुप्त द्वारा उस षड्यंत्र का सामना करना, मातृगुप्त के साथ मिलकर स्कंदगुप्त द्वारा देवसेना की रक्षा करना, पश्चिमोत्तर की सीमाओं से आक्रमण, भटार्क का धोखा देना, युद्ध भूमि में दुश्मनों से उसका मिल जाना आदि की कथा इस अंक में अंकित है। श्मशान में प्रपंचबुद्धि देवसेना की बलि चढ़ाने के लिए उद्यत है। उसी समय मातृगुप्त और स्कंदगुप्त वहाँ आकर देवसेना की रक्षा करते हैं। इस प्रकार इस अंक में कुल दृश्य हैं, जिनमें अलग स्थान व अलग-अलग घटनाओं का लेखक ने बुनावट की है। पहला दृश्य श्मशान का है जहाँ भटार्क और प्रपंचबुद्धि के बीच स्कंद से बदला लेने के षड्यंत्र से संबंधित वार्तालाप होती है, जिसमें भटार्क की बातों से यह पता चलता है कि स्कंदगुप्त ने उसे क्षमा कर उसे अपमानित किया है जिसका उसे बदला लेना है। दूसरे दृश्य में योगाचार संघ के प्रधान-श्रमण आर्य प्रपंचबुद्धि उग्रतारा की साधना के लिए महाश्मशान में एक राजबलि देना चाहता है। विजया भी चाहती है कि किसी भी तरह देवसेना का अंत हो जाय, वह स्वयं कहती है- "आर्य, मेरा भी एक स्वार्थ है, राजकुमारी देवसेना का अंत।' उस पर प्रपंचबुद्धि कहता है- "और मुझे उग्रतारा की साधना के लिए महाश्मशान में एक राजबलि चाहिए। इस प्रकार देवसेना को मारने हेतु तीनों मिलकर षड्यंत्र रचते हैं और उसमें उन्हें आंशिक सफलता भी मिलती है, देवसेना को विजया श्मशान में लेकर आती है, जब उसे मारने के लिए प्रपंचबुद्धि उद्यत होता है, उसी समय स्कंदगुप्त आकर उसकी रक्षा करता है। तीसरे दृश्य में मगध में अनंतदेवी, पुरगुप्त, विजया और भटार्क के बीच वार्तालाप होता है। स्कंद के विजय पर खेद मनाया जाता है। इन सभी के मन में आक्रोश की भावना है कि स्कंदगुप्त हर युद्ध में जीत जाता है। इस दृश्य में एक तरफ इस बात का पता चलता है कि किस प्रकार चारों तरफ से दुश्मन आक्रमण के लिए उतावले हो रहे हैं, तो दूसरी ओर घर के भीतर रहने वाले भी यही चाहते हैं कि घर को संभाले हुए लोग न रहे तो अच्छा है। आज भी हमारे समाज में इसी प्रकार की स्थिति विद्यमान है। यही कारण है कि आज भी यह नाटक अत्यंत प्रासंगिक एवं हृदयंगम लगता है। इसके हर पात्र आज भी जीवंत हैं।

मुख्य कथा के साथ-साथ प्रासंगिक कथा भी चलती है। अवन्ती के उपवन में जयमाला और देवसेना अन्य सखियों के साथ बातचीत और एक दूसरे की छेड़छाड़ करते हुए हँसी मजाक का वातावरण है। लेकिन देवसेना कुछ उदास भी है। सखियाँ उसे जब छेड़ती हैं तो वह उनसे

कहती है- “क्यों घाव पर नमक छिड़कती है? मैंने कभी उनसे प्रेम की चर्चा करके उनका अपमान नहीं होने दिया है। नीरव- जीवन और एकांत-व्याकुलता, कचोटने का सुख मिलता है। जब हृदय में रुदन का स्वर उठता है, तभी संगीत की वीणा मिला लेती हूँ। उसी में छिप जाती हूँ।’ उसके मन में स्कंदगुप्त के प्रति प्रेम है, लेकिन अभिव्यक्त नहीं करती है। यही कारण है कि विजया उसका अंत करना चाहती है, क्योंकि स्कंदगुप्त विजया को चाहता था, लेकिन वह भटार्क से विवाह कर लेती है, किंतु वह नहीं चाहती है कि स्कंदगुप्त के नीरस जीवन में कोई देवसेना का प्यार उसे प्रफुल्लित न कर दें। आगे युद्ध का दृश्य है। युद्ध के दौरान दोनों पक्षों के मध्य घमासान युद्ध होता है, और हूणों को अपनी पीठ दिखाकर भागना पड़ता है। कुछ दूर भागने के बाद स्कंदगुप्त को पता चलता है कि भटार्क ने उसके साथ गद्दारी की है, स्कंदगुप्त के इन बातों से पता चलता है- नीच भटार्क ने बाँध तोड़ दिया है, कुभा में जल बड़े वेग से बढ़ रहा है। चलो शीघ्र।

इस अंक में पाठक को एक सीख भी मिलती है, भटार्क के उद्गार से। उसका यह कहना कि “ओह! पाप-पंक में लिप्त मनुष्य की छुट्टी नहीं! कुकर्म उसे जकड़कर अपने नागपाश में बाँध लेता है! दुर्भाग्य! तात्पर्य यह कि स्कंदगुप्त के माफ करने के बाद जब वह प्रपंचबुद्धि से श्मशान में मिलता है, तब उसे इस बात का आभास होता है कि एक बार गलत राह पर चल दें तो चाहकर भी अच्छे राह पर नहीं चल सकते।

(घ) चतुर्थ अंक

इस अंक में दिखाया गया है कि स्कंदगुप्त किस प्रकार से क्रूर परिस्थितियों का सामना करता है, जिसे वह पहले से ही करता आया है। उसे तो बस इन कुचक्रों और षड्यंत्रों का ही सामना करना पड़ा है, पूरे जीवन में। कुभा नदी के बाँध टूट जाने के बाद स्कंदगुप्त को न पाकर देवकी व्याकुल हो उठती है। वह भटार्क की माँ कमला के साथ मिलकर भटार्क से पूछती है कि “बता भटार्क! वह आर्यावर्त का रत्न कहाँ है? देश का बिना दाम का सेवक, वह जन-साधारण के हृदय का स्वामी, कहाँ है? उससे शत्रुता करते हुए तुझे....। तब भटार्क कहता है- “क्या कहूँ, कुभा की क्षुब्ध लहरों से पूछो, हिमयान की गल जाने वाली बर्फ से पूछो कि वह कहाँ। मैं नहीं...।” भटार्क की बातों को सुनकर देवकी नीचे गिर पडती है और उसकी मृत्यु हो जाती है। भटार्क की माँ भटार्क को उसकी गलतियों को स्वीकारने के लिए मजबूर करती है। वह माँ की बातों को स्वीकार कर माँ से शपथ करता है- “माँ, क्षमा करो। आज से मैंने शस्त्र त्याग किया। मैं इस संघर्ष से अलग हूँ, अब अपनी दुर्बुद्धि से तुम्हें कष्ट न पहुँचाऊँगा। (तलवार डाल देता है)। जब भटार्क का मन परिवर्तन हो जाता है तो उससे प्यार करने वाली विजया का भी मन परिवर्तन हो जाता है। वह अनंतदेवी से कहती है- “मैं आज ही पासा पलट सकती हूँ। जो झुला ऊपर उठ रहा है, उसे एक झटके में पृथ्वी चूमने के लिए विवश कर सकती हूँ।” शर्वनाग से प्रभावित होकर विजया देशकल्याण कार्यों के लिए तैयार हो जाती है। एक नायक से वह कहती है- झूठ! तुम सबको जंगली हिंस्र पशु होकर जन्म लेना था। डाकू। थोड़े से ठीकरों के लिए अमूल्य मानव जीवन का नाश करने वाले भयानक भेडिये! हूणों से भयभीत देवसेना की सहायता करना जैसी घटनाएँ प्रस्तुत हैं। इस नाटक के माध्यम से प्रसाद ने भारतवासियों के मन में देशभक्ति की भावना और राष्ट्रप्रेम जागृत करना चाहते थे, धातुसेन के शब्दों में प्रसाद का देश के प्रति समर्पण की भावना

व्यक्त हुई है- “भारत समग्र विश्व का है, और संपूर्ण वसुंधरा इसके प्रेम-पाश में आबद्ध है। अनादि काल से ज्ञान की, मानवता की ज्योति विकीर्ण कर रहा है। वसुंधरा का हृदय-भारत किस मूर्ख को प्यारा नहीं है? तुम देखते नहीं कि विश्व का सबसे ऊँचा शृंग इसके सिरहाने और सबसे गंभीर तथा विशाल समुद्र इसके चरणों के नीचे है? एक से एक सुंदर दृश्य प्रकृति ने अपने इस घर में चित्रित कर रखा है। भारत के कल्याण के लिए मेरा सर्वस्व अर्पित है।”

भटार्क की माता कमला कुटी में विचित्र अवस्था में स्कंदगुप्त का प्रवेश होता है। “बौद्धों का निर्वाण, योगियों की समाधि, और पागलों की सी विस्मृति मुझे एक साथ चाहिए। चेतना कहती है कि तू राजा है, और उत्तर में जैसे कोई कहता है कि तू खिलौना है- उसी खिलवाड़ी वटपत्रशायी बालक के हाथों का खिलौना है।......प्रार्थना करता है। शर्वनाग, रामा आदि आते हैं और हूणों के आक्रमण की बात सुनाते हैं। स्कंदगुप्त अपने आप को अकेला महसूस करते हुए कहता है- “आह! मैं वही स्कंद हूँ- अकेला, निस्सहाय! उसके मन में नयी उमंग और जोश भरते हुए कमला उसे पुन: कर्तव्य पथ पर अग्रसर होने के लिए प्रेरित करती है- “कौन कहता है तुम अकेले हो। समग्र संसार तुम्हारे साथ है। सहानुभूति को जाग्रत करो। यदि भविष्यत से डरते हो कि तुम्हारा पतन ही समीप है, तो तुम उस अनिवार्य स्रोत से लड़ जाओ। तुम्हारे प्रचंड और विश्वासपूर्ण पादाघात से विंध्य के समान कोई शैल उठ खड़ा होगा जो उस विघ्न-स्रोत को लौटा देगा! राम और कृष्ण के समान क्या तुम ई अवतार नहीं हो सकते? समझ लो, जो अपने कर्मों को ईश्वर का कर्म समझकर करता है, वही ईश्वर का अवतार है। उठो स्कंद! असुरी वृत्तियों का नाश करो, सोने वालों को जगाओ और रोने वालों को हंसाओ! आर्यावर्त तुम्हारे साथ होगा। और उस आर्य-पताका के नीचे समग्र विश्व होगा।” कमला के ये शब्द प्रत्येक देशवासी को अपने कर्तव्य पथ पर अग्रसर होने के लिए प्रेरणा देते हैं। तभी स्कंदगुप्त को पता चलता है कि वह भटार्क की माता हैं। और उससे स्कंद को पता चलता है कि उसकी माता देवकी की मृत्यु हो चुकी है, सुनकर वह मूर्च्छित हो जाता है। कमला उसे कुटी में लेकर जाती है।

(च) पंचम अंक

इस अंक के प्रथम दृश्य में ही प्रसाद ने मुद्गल के शब्दों में परिस्थिति का वर्णन किया है। बंधुवर्मा की मृत्यु की खबर पाकर जयमाला सती हो गई। देवसेना को लेकर पर्णदत्त माँ देवकी की समाधि पर जीवन व्यतीत कर रहा है। चक्रपालित, भीमवर्मा और मातुगुप्त राजाधिराज को खोज रहे हैं। विजया का मन परिवर्तन तो हुआ है, लेकिन उस पर पूर्ण विश्वास करना मुश्किल है। अनंतदेवी और पुरगुप्त हूणों से संधि कर ली है। घटनाचक्र का परिवर्तन होता है और भटार्क के दक्ष सैन्य संचालन के कारण विपक्ष का महत्वपूर्ण गढ़ बिखर जाता है। कमला के शब्दों से स्कंदगुप्त के मन में नए प्रकाश का संचालन होता है। आर्यावर्त का गौरव और उसकी रक्षा हेतु संघर्ष के लिए वह तत्पर होता है। सभी एक-दूसरे से मिलते हैं। पर्णदत्त के सहयोग से स्कंदगुप्त को धनराशि मिलती है, जिससे वह पुन: सैन्य संगठन के लिए तत्पर होता है। रण क्षेत्र में पुरगुप्त को रक्त की टीका लगाकर पारिवारिक अशांति पर विजय प्राप्त करता है। उसके सारे प्रयत्न सफल हो जाते हैं, लेकिन अपने निजी जीवन में उसे कोई सुख नहीं मिलता। देवसेना के चरणों पर अपना सर्वस्व लुटाने वाले स्कंदगुप्त को देवसेना इसलिए उपलब्ध नहीं हो सकी क्योंकि उसे

मालव राजा के सम्मान का बड़ा ध्यान था। वह आँसू बहाता रह जाता है, और उसी के साथ इस नाटक की समाप्ति होती है।

बोध प्रश्न

- इस नाटक में कौन सती हो जाती है?
- देवसेना किसकी बहन थी?
- क्या स्कंदगुप्त और देवसेना के बीच प्रेम था?
- स्कंदगुप्त किसे पसंद करते थे?
- विजया किसका वरण करती है?
- कुमारगुप्त को किसने मारा?

पात्र एवं चरित्र-चित्रण

प्रसाद आधुनिक साहित्य की अप्रतिम सर्जनात्मक प्रतिभा थे। इनकी सर्जना का उत्कृष्ट रूप चरित्र उद्घाटन में दिखाई पड़ता है। इनके नाटकों के पात्रों को धीरोदात्त या धीरोद्धत आदि बंधे-बंधाए नियमों में नहीं रखा जा सकता, क्योंकि उनके अधिकांश नाटकों में पारंपरिक रूप से निर्धारित नाटकीय सिद्धांतों का अतिक्रमण देखने को मिलता है। उनके पात्रों की विशिष्टता को देखते हुए उन्हें विशिष्ट श्रेणियों में वर्गीकृत किया जा सकता है- महत्वाकांक्षी पात्र, राष्ट्रभक्ति से युक्त पुरुष एवं स्त्री पात्र, कूटनीति के आचार्य, महात्मा और ऋषि, करुणामय नारी, परिस्थितियों से टूटती-उभरती नारी पात्र आदि। इसके आधार पर यहाँ स्कंदगुप्त नाटक के पात्रों का विश्लेषण किया जा रहा है। पात्रों की विशेषता को जानने से पहले इस नाटक में सम्मिलित समस्त पात्रों के नाम अध्ययन की सुविधा के लिए प्रस्तुत है।

अनंतदेवी	: कुमारगुप्त की छोटी रानी, पुरगुप्त की माता
कमला	: भटार्क की माँ
कुमारगुप्त	: मगध का सम्राट और महादंडनायक
खिंगिल	: हूण आक्रमणकारी
गोविंदगुप्त	: कुमारगुप्त का भाई
चक्रपालित	: पर्णदत्त का पुत्र
जयमाला	: बंधुवर्मा की पत्नी, मालव की रानी
देवकी	: कुमारगुप्त की बडी रानी, स्कंदगुप्त की माँ
देवसेना	: बंधुवर्मा की बहिन जो गरीबों व असहायों की सेवा में अपना जीवन अर्पण कर देती है।
धातुसेन (कुमारदास)	: कुमारदास के प्रच्छन्न रूप में सिंहल का राजकुमार
पर्णदत्त	: मगध का महानायक
पुरुगुप्त	: कुमारगुप्त का छोटा भाई
पृथ्वीसेन	: मंत्री कुमारामात्य
प्रख्यातकीर्ति	: लंकाराज, कुल का श्रमण, महाबोधि-विहार का स्थविर (महाप्रतिहार, महादंडनायक, नंदीग्राम का दंडनायक, प्रहरी, सैनिक इत्यादि)

प्रपंचबुद्धि : बौद्ध कापालिक
बंधुवर्मा : मालव का राजा
भटार्क : नवीन महाबलाधिकृत
भीमवर्मा : बंधुवर्मा का भाई
मातृगुप्त : काव्यकर्ता कालिदास
मालिनी : मातृगुप्त की सखी, दासी
मुद्गल : विदूषक
रामा : शर्वनाग की पत्नी
विजया : मालव के धनकुबेर की कन्या
शर्वनाग : अंतर्वेद का विषयपति
स्कंदगुप्त : युवराज (विक्रमादित्य) - नाटक का नायक है।

तो चलिए, पात्र परिचय के बाद, प्रमुख पात्रों की चारित्रिक विशेषताओं को समझें ।

क) **स्कंदगुप्त :** वास्तव में प्रसाद पराधीन भारत के हृदय की प्रत्येक धड़कन पहचानते थे और इसके अर्थ को ठीक से व्यक्त करने के लिए उत्कर्षमूलक ऐतिहासिक चरित्रों का सृजन किया। हिंदी नाटक नामक पुस्तक में बच्चन सिंह स्कंदगुप्त के बारे में लिखते हैं- स्कंदगुप्त मूलत: राष्ट्र का सैनिक और रक्षक है। उसे गुप्त-साम्राज्य के नष्ट होने की उतनी चिंता नहीं है, जितनी आर्य-राष्ट्र के ध्वस्त होने की। उसका सारा आयोजन, क्रिया-प्रणाली, विपुल संघर्ष उसे एक कर्मठ निस्पृह राष्ट्रीय सैनिक सिद्ध करते हैं। महत्वाकांक्षा उसे छू तक नहीं गई है, बल्कि इसके विपरीत वह स्वयं अपने अधिकार के प्रति उदासीन है क्योंकि उसे लगता है कि अधिकार सुख कितना मादक और सारहीन होता है। गुप्त साम्राज्य के उत्तराधिकार का अस्थिर नियम भी उसकी इस उदासीनता का कारण है।

भले उसका मन उदासीन हो, लेकिन वह देश के लिए अपने कर्तव्यों के प्रति उदासीन नहीं है। अधिकारों के प्रति व्यामोह नहीं है, किंतु कर्तव्य के प्रति तत्पर है। बंधुवर्मा स्कंद को आर्यावर्त का एकमात्र आशा मानते हैं और उसी के कल्याण में आर्य-राष्ट्र ऋण मानते हैं। मालव पर जब आक्रमण होता है, तो वह युद्ध में उनका साथ देकर कर्तव्य निभाता है। जब वह मालव नरेश बनता है तो अपने राष्ट्रीय दृष्टिकोण को व्यक्त करते हुए कहता है- “आर्य ! इस गुरु भार उत्तरदायित्व का सत्य से पालन कर सकूँ और आर्य-राष्ट्र की रक्षा में सर्वस्व अर्पण कर सकूँ, आप लोग इसके लिए भगवान से प्रार्थना कीजिए और आशीर्वाद दीजिए कि स्कंदगुप्त अपने कर्तव्य से, स्वदेश सेवा से, कभी विचलित न हो।” उसके मन में साम्राज्य प्रेम नहीं बल्कि देशप्रेम है। भटार्क से वह कहता है कि “भटार्क, यदि कोई साथी न मिला तो साम्राज्य के लिए नहीं, जन्मभूमि के उद्धार के लिए मैं अकेला युद्ध करूँगा।” वह अपने एकाकीपन पर क्षुब्ध होकर मातृभूमि को विस्मृत नहीं करता।

स्कंदगुप्त की उदात्त नैतिक मान्यताएँ, देवोपम आदर्श आदि ने भटार्क जैसे महत्वाकांक्षी व्यक्ति को भी प्रायश्चित करने के लिए प्रेरित करते हैं। माता के प्रति श्रद्धा, विजया के यौवन और

मादक सौंदर्य के प्रति आकृष्ट होना, देवसेना के तपःपूत अनौपचारिक प्रेम आदि से उसके व्यक्तिगत जीवन का पता चलता है।

स्कंदगुप्त के अंदर अनेकानेक आदर्शगुणों के साथ-साथ व्यवहार कुशल भी है। स्थिति की गहनता समझकर अनुकूल आचरण का पालन करता है। उस्की व्यवहार बुद्धि का रूप दो स्थलों पर दिखाई पड़ता है। गुप्तकुल के अव्यवस्थित उत्तराधिकार नियम को स्कंदगुप्त की उदासीनता का कारण बताने पर जिस समय चक्रपालित को पर्णदत्त काटता है, तब स्कंद, चक्र की वकालत करते हुए कहता है- "आर्य पर्णदत्त ! क्षमा कीजिए। हृदय की बातों को राजनीतिक भाषा में व्यक्त करना चक्र नहीं जानता।" दूसरा स्थल वह है जहाँ युद्धभूमि में चक्रपालित ने उसे भटार्क की ओर सावधान रहने और उस पर विश्वास न करने की सलाह देता है, इस अवसर पर स्कंद उत्तर देता है- "मैं भटार्क पर विश्वास तो करता ही नहीं, परंतु उस पर प्रकट रूप से अविश्वास का भी समय नहीं रहा।" ...इन वाक्यों से स्कंद के व्यवहार कुशलता का पता चलता है।

भटार्क के कारण विदेशी आक्रमणकारी सफल होते हैं और कुभा नदी के प्रवाह में गुप्त साम्राज्य के डूबने की परिस्थिति उत्पन्न हो जाती है, तब स्कंद को अपने बारे में दुख नहीं होता, बल्कि उसे इस बात की ग्लानि होती है कि आर्य साम्राज्य का नाश इन्हीं आँखों को देखना था। हृदय काँप उठता है। देशाभिमान गरजने लगता है। मेरा स्वत्वन हो, मुझे अधिकार की आवश्यकता नहीं। यह नीति और सदाचारों का महान आश्चर्य-वृक्ष गुप्तसाम्राज्य हरा-भरा रहे और कोई भी इसका उपयुक्त रक्षक हो।" इस कथन से स्कंदगुप्त का उदार गुण और सच्चा देश प्रेम झलकता है। अंत में जब विजया पुन: एक बार धन का लालच देकर और राष्ट्रोद्धार के नाम पर उसे अपना प्रेम-प्रस्ताव देती है, तब स्कंद का आत्माभिमान जागता है और वह निरादरपूर्वक उत्तर देता है- "साम्राज्य के लिए मैं अपन को नहीं बेच सकता।' अर्थलोभी हूण दस्युओं को घूस देकर मालव और सौराष्ट्र को स्वतंत्र कराने में उसका आत्मसम्मान को कड़ा धक्का लगेगा इसको वह अच्छी तरह जानता है और यह भी समझता है कि इस प्रकार के किसी प्रस्ताव को स्वीकार करने में उसका आजीवन पालित व्यक्तित्व नहीं रह जाएगा। इसलिए वह विजया के प्रस्ताव को एकदम अस्वीकार कर देता है। वह कहता है- 'सुख के लोभ से, मनुष्य के भय से, मैं उत्कोच देकर क्रांत साम्राज्य नहीं चाहता।' इस कथन में उसका आत्मसम्मान झलकता है।

ख) **पर्णदत्त** : पर्णदत्त गुप्त-साम्राज्य का प्रमुख योद्धा और सेनापति है। उसका व्यक्तित्व अत्यंत निर्मल है। वह एक आज्ञाकारी सेवक है जो गुप्त साम्राज्य की रक्षा के लिए सदा तत्पर रहता है। जब गुप्त साम्राज्य पर आपत्ति के बादल मँडरा रहे हैं और कोई योग्य कर्णधार सामने नहीं आता, तब वे क्षुब्ध और अधीर हो जाते हैं। युवराज स्कंदगुप्त को राज्याधिकार की ओर से उदासीन पाकर वे निराश भी होते हैं। उसे कर्तव्य मार्ग पर प्रशस्त करने हेतु वह अत्यंत प्रयास करता है। वह स्कंद से कहता है- अकेला स्कंदगुप्त मालव की रक्षा करने के लिए संबद्ध है। गुप्त साम्राज्य के हित के विरुद्ध अपने पुत्र को बोलता देख उसे सावधान करते हैं- "चक्र ! यदि यह बात हो भी, तब भी तुमको ध्यान रखना चाहिए कि हम लोग साम्राज्य के सेवक हैं। असावधान बालक ! अपनी चंचलता को विषवृक्ष का बीज न बना देना।"

राष्ट्र रक्षा ही उसका एक मात्र लक्ष्य है। कुभा नदी के प्रवाह में जब गुप्त सैन्य बह जाता है, उसके बाद भी पर्णदत्त का एक मात्र प्रयास होता है, किसी भी तरह से सेना की रक्षा करें जो बचे हुए हैं। अंत में वह जनता के सामने हाथ फैलाकर भीख भी माँगते हैं कि “मुझे जय नहीं चाहिए, भीख चाहिए। जो दे सकता है अपने प्राण, जो जन्मभूमि के लिए उत्सर्ग कर सकता हो जीवन, वैसे वीर चाहिए, कोई देगा भीख में। उसका प्रयास सफल हो जाता है, उसे पुन: स्कंदगुप्त जैसे वीर मिल जाते हैं और उसके जीवन का लक्ष्य पूर्ण हो जाता है।

वृद्ध पर्णगुप्त के अतिरिक्त इस नाटक में कई ऐसे पुरुष पात्र हैं, जिनके अंदर देशप्रेम भरा हुआ है और देशसेवा एवं राष्ट्र रक्षा के लिए अपने आप को आहुति देने के लिए वे सदा तत्पर रहते हैं, जो स्कंदगुप्त के हितैषी भी हैं। मातृगुप्त, चक्रपालित, बंधुवर्मा, इन सभी के योगदान से ही स्कंदगुप्त हूणों को पराजित करने में सक्षम हो पाता है।

ग) **भटार्क** : इस नाटक में भटार्क को महत्वाकांक्षी पात्र के रूप में देखा जा सकता है। वह गुप्त साम्रज्य का अत्यंत पराक्रमशील और शौर्यवान सेनानी था। अनंतदेवी की कृपा से उसे महाबलाधिकृत का उच्च पद मिलता है, जिसके कारण वह अनंतदेवी के प्रति कृतज्ञ हो जाता है और स्कंदगुप्त के विरुद्ध रचने वाले षड्यंत्रों में वह अनंतदेवी का साथ देता है और प्रयास करता है कि पुरगुप्त किसी भी तरह से राजा बन जाय। महाराजाधिराज कुमारगुप्त की हत्या, महादेवी देवकी के वध का नीचतापूर्ण प्रयास, देवसेना को श्मशान भूमि में बलि चढ़ाने का प्रयास आदि कार्य उसी ने किया था। और अंत में कुभा नदी के बांध को तोड़कर संपूर्ण गुप्त साम्राज्य को डुबाने का कार्य करता है।

इतना सब कुछ करने के बावजूद उसकी अंतरात्मा उसे बार-बार कचोटती रहती थी। उसका यह कहना कि “पाप-पंक में लिप्त मनुष्य को छुट्टी नहीं। कुकर्म उसे जकड़कर अपने नागपाश में बाँध लेता है। दुर्भाग्य!” कुभा की विभीषिका से आत्मविक्षुब्ध होकर अपने को धिक्कारता हुआ वह कहता है- ऐसा वीर, ऐसा उपयुक्त और ऐसा परोपकारी सम्राट। परंतु गया। मेरी ही भूल से गया। अपनी महत्वाकांक्षा की सिद्धि के लिए वह नैतिक-अनैतिक मूल्यों को कुचलते हुए अपने साध्य को प्राप्त करने के लिए ध्वंसात्मक साधनों का उपयोग करता है, लेकिन बीच-बीच में उसका अंतर्मन उसे रोकता-टोकता भी है। कुछ समय के लिए वह अपने दुष्कर्मों के लिए पश्चात्ताप भी करता है, जिसके कारण देवकी और स्कंदगुप्त उसे माफ कर देते हैं। लेकिन जैसे ही वह प्रपंचबुद्धि से मिलता है और उसके उकसाने पर पुन: विद्रोहियों के संग जुड़ जाता है। लेकिन यह निश्चित है कि उसकी अंतरात्मा उसे अपनी गलती का अहसास बार-बार कराती रहती थी, इसी के चलते बाद में माँ कमला के समझाने पर वह पूर्णतः बदल जाता है, यहाँ तक कि अपनी तलवार को रखकर युद्ध एवं संघर्ष से दूर रहने को उद्यत हो जाता है। अंत में ध्वंसात्मक प्रवृत्ति से निवृत्त होकर देशोद्धार के कार्य में उल्लासपूर्वक जुट जाना उसकी आत्मभर्त्सना और आत्मग्लानि का परिणाम है।

घ) **बंधुवर्मा :** बंधुवर्मा मालव का राजा था। वह अपने राज्य की रक्षा हेतु स्कंदगुप्त से आग्रह करता है। इस नाटक में बंधुवर्मा बस कुछ समय के लिए प्रस्तुत होता है, किंतु एक सच्चे, नेक, ईमानदार एवं कर्तव्यनिष्ठ योद्धा बनकर अपने जीवन समाप्ति के बाद भी याद करने योग्य पात्र

के रूप में उसका चित्रण हुआ है। उसकी पत्नी जयमाला के रूखे व्यवहार से दुखी होकर बंधुवर्मा स्कंदगुप्त का शरण लेता है। उसे पूर्णतः विश्वास है कि स्कंदगुप्त ही वह युवक है जो हूणों से उसके राज्य की रक्षा कर उस पर राज्य करने की क्षमता रखता है। इसलिए वह कहता भी है- “मैं प्रतिज्ञा करता हूँ कि अब से इस वीर परोपकारी के लिए मेरा सर्वस्व अर्पित है। और स्कंदगुप्त को राज्य सौंपकर वह एक साधारण सैनिक पद स्वीकार कर लेता है -“बंधुवर्मा तो आज से आर्य-साम्राज्यसेना का एक साधारण पदातिक सैनिक है।” और देश की रक्षा के प्रति अपने कर्तव्य का पालन करते हुए वह स्वयं समर्पित हो जाता है।
च) **मातृत्गुप्त** : स्कंदगुप्त नाटक की भूमिका में ही प्रसाद ने मातृगुप्त ही महाकवि कालिदास सिद्ध किया है। मातृगुप्त मूलत: कवि है। कश्मीर का निवासी है। म्लेच्छों (हूणों) के आक्रमण से व्याकुल है। वह आर्यावर्त और स्कंदगुप्त का शुभचिंतक है। स्कंदगुप्त का वह बराबर साथ देता है। श्मशान में मातृगुप्त स्कंदगुप्त के साथ मिलकर देवसेना की रक्षा करता है। जिसके कारण उसे कश्मीर का विषयपति बनाया जाता है। कश्मीर में वह अपनी प्रमिका मालिनी से मिलता है, जो वेश्या बन चुकी थी। उसे इस दशा में देख मातृगुप्त का हृदय रो पड़ता है। उसके जीवन में संघर्ष होने के बावजूद वह अपनी कविताओं के माध्यम से लोगों के मन में राष्ट्र भक्ति को जाग्रत करता है।
छ) **अनंतदेवी और विजया** : इस नाटक में ये दोनों ऐसे स्त्री पात्र हैं जिनके अंदर छल, कपट, शक्ति, साध्य की क्षमता सभी कूट-कूटकर भरी हुई है। ये दोनों ही स्वार्थ से युक्त पात्र हैं जो स्वार्थ साधने के लिए किसी भी हद तक जा सकती हैं। अनंतदेवी अपने पुत्र पुरगुप्त को राजा बनाने हेतु स्वयं अपने ही पति कुमारगुप्त को शराब और शबाब दोनों प्रदान करती है। न केवल अपने मोहपाश में रखती है बल्कि उसे कर्तव्य से भी दूर रखती है और विलासितापूर्ण जीवन बिताने को प्रेरित करती है। और अंत में भटार्क और अन्य लोगों के साथ मिलकर उसे खत्म कर देती है। स्कंदगुप्त की माँ देवकी का अंत करने के लिए भी वह षड्यंत्र रचती है, लेकिन सही वक्त पर स्कंदगुप्त आकर अपनी माता की रक्षा करता है। अपने षड्यंत्रों में सफलता पाने के लिए वह भटार्क को अपनी तरफ मिलाने का प्रयास करती है, जिसके लिए वह उसे महाबलाधिकृत की पदवी देकर बार-बार उसके एहसानों की याद दिलाती है, कभी प्रपंचबुद्धि की अमानवीय शक्ति का उल्लेख करते हुए उसे चकित कर देती है तो कभी स्त्री-शक्ति आँसू का उपयोग कर लेती है। पुरुषों की कमजोरियों का उसे पता है, जिसका वह गलत फायदा उठाती है। अपने पति की स्थिति पर या ह्रासोन्मुख गुप्त साम्राज्य पर उसे तनिक भी ममत्व नहीं।

विजया भी एक ऐसा पात्र है, जो स्कंदगुप्त जैसे उदसीन और कर्मठ राष्ट्रसेवी को भी अपनी ओर खींचने की क्षमता रखती है। वह एक सुंदर युवती है, जिसे पहली बार देखकर स्कंदगुप्त विचलित हो जाता है। प्रकृति ने उसे अपार रूप दिया है और पिता ने अपार धन। दोनों का ही वह सदुपयोग करना चाहती है। स्कंदगुप्त के प्रति उसका आकर्षण भी उसके युवराज होने के कारण ही है। स्कंदगुप्त की उदासीनता एवं वैराग्य की भावना को देखकर वह भटार्क की ओर आकृष्ट होती है और फिर भटार्क के लिए वह सारे षड्यंत्रों में सम्मिलित होती है। देवसेना को बलि देने के लिए भी तैयार हो जाती है और वह स्वयं प्रपंचबुद्धि और भटार्क से कहती है कि उसके जीवन की इच्छा है देवसेना की मृत्यु, जिसे पूरा करने के लिए वह प्रपंचबुद्धि का भी साथ

देती है और छल के साथ देवसेना को शमशान में ले जाती है। उस आत्मकेंद्रित नारी कहा जा सकता है जिसमें केवल स्वार्थ भरा हुआ है, उसका मन परिवर्तित होकर वह देश सेवा में लगने पर भी प्रयास करती है कि धन से स्कंदगुप्त को खरीद लिया जाय।

ज) **देवसेना** : देवसेना मालव नरेश बंधुवर्मा की बहन है। वह भिन्न एवं उच्च विचार वाली स्त्री पात्र है। त्याग, देशप्रेम, सहिष्णुता और रहस्योन्मुखी भावनाएँ उसके अंदर भरी हुई हैं। देश कामान, स्त्रियों की प्रतिष्ठा, बच्चों की रक्षा का विचार उसमें दिखाई देता है। यथार्थ जगत से सर्वथा परे रहती है। संगीत की वह अनन्य प्रेमिका है। उसके जीवन का आदर्श एकांत टीले पर, सबसे अलग, शरद के सुंदर प्रभात में फूला हुआ, फूलों से लदा हुआ पारिजात वृक्ष है। उसके लिए 'प्रत्येक परमाणु के मिलन में एक सम है, प्रत्येक हरी-हरी पत्ती के हिलने में एक लय है, पक्षियों को देखो, उनकी चहचह, कलकल, छलछल में कालकी में रागिनी है।" इसी आंतरिक समत्व के कारण वह विश्व के प्रत्येक जीव में समानता और राग पाती है। युद्ध और प्रेम में संगीत का योग चाहती है। विजया उसे धोखे से जब श्मशान लेकर जाती है, तब भी उसे रात के अंधकार से या श्मशान के वातावरण से डर नहीं लगता। जब वह देखती है कि स्कंद विजया के प्रति आकृष्ट है, तब स्कंद के प्रति उसके मन में जो अनुराग था, उसमें लौकिक नहीं अलौकिक संतोष की अनुभूति पाती है। भौतिकता के स्थान पर आध्यात्मिकता आसन जमाती है। अपनी भौतिक लालसा एवं वासना को उस मार्ग से हटा लेती है। अपने प्रिय के सुख के लिए अपनी कोमलतम कामनाओं की आहुति देती है। उसके इस आत्मसमर्पण में देवत्व का गुण निहित है। ऐसा प्रतीत होता है कि देवसेना सामान्य मानव से ऊपर उठकर कोई दैवी शक्ति हो।

जब भटार्क तथा अन्य विद्रोहियों के साथ कैदी के रूप में विजया को देखती है, तब वह पूछती है- 'परंतु, विजया तुमने यह क्या किया।' आगे कहती है- 'आह! जिसकी मुझे आशंका थी। विजया। आज तू हारकर भी जीत गई।' इसके बाद से उसके प्रेम के प्रति व्यामोह पूर्णतः समाप्त हो जाती है और उसमें त्याग और मंगल की भावना जाग्रत हो जाती है। विजया जब उस पर तीखी व्यंग्य करती है कि तुमने स्कंद के मन में राज सिंहासन का लालच देकर उसे अपना बनाना चाहती हो, तब वह निश्चयात्मक स्वर में कहती है- 'देवसेना मूल्य देकर प्रणय नहीं चाहती'। अपने इस वादे को अंत तक वह निभाती है। अंत में जब स्कंद अकेला रह जाता है और देवसेना का साथ चाहता है, तब भी वह इस वादे को निभाने हेतु देश कल्याण कार्यों में संलग्न हो जाती है। इस प्रकार देवसेना एक दृढ़ विश्वास भरी हुई स्त्री पात्र है जो कि स्त्री चरित्रों के लिए एक मिसाल है। मर्यादा तथा आत्मसम्मान की भावना उसमें प्रबल होने के कारण वह बाहर से कुछ कठोर लगती है, किंतु हृदय की गहराइयों से वह कोमल, मुलायम तथा मधुर भावना की प्रतिमूर्ति है। उसके मन में भी स्त्रियोचित गुण लक्षित होते हैं, किंतु उसकी अभिव्यक्ति नहीं कर पाती है। 'हृदय की कोमल कल्पना! सो जा। जीवन में जिसकी संभावना नहीं, जिसे द्वार पर आए हुए लौटा दिया था, उसके लिए पुकार मचाना क्या तेरे लिए अच्छी बात है।' इसके अतिरिक्त देश-कल्याण की भावना, दीन-दुखियारों की सेवा करना आदि सामाजिक कार्यों में वह पूरे समर्पण भाव के साथ जुड़ी होती है। वह अपनी भाभी जयमाला से कहती है- 'क्षुद्र स्वार्थ भाभी, जाने दो, भैया को देखो। कैसा उदार, कैसा महान और कितना पवित्र।' परंतु अंत तक

जयमाला को अपने मंतव्य में स्थिर देख देशभक्तों की मंडली में वह स्वयं मिल जाती है। देश रक्षा में जो वीर घायल होते हैं, उनकी सेवा-सुश्रूषा करती है। अंत में देवकी की समाधि के पास पर्णदत्त के साथ मिलकर वह भी राष्ट्र रक्षा की भीख माँगती है। वृद्ध पर्णदत्त को समझाते हुए वह कहती है- 'क्या है बाबा! क्यों चिढ़ रहे हो। जाने दो, जिसने नहीं दिया उसने अपना, कुछ तुम्हारा तो नहीं ले गया।" इस तरह की बातों के पीछे निस्वार्थ देशप्रेम की भावना निहित है। वह अपने गीतों के माध्यम से नागरिकों को देश के प्रति कर्तव्य निभाने के लिए प्रेरित करती है -

देश की दुर्दशा निहारोगे/डूबते को कभी उबारोगे

हारते ही रहे, न है कुछ अब/ दाँव पर आपको न हारोगे ।

झ) **जयमाला** : जयमाला, मालव नरेश बंधुवर्मा की पत्नी है। उसके अंदर क्षत्रिय होने के गुण कूट-कूटकर भरी हुई है। वह देवसेना की भाँति भावना लोक में विचरती नहीं है, यथार्थ और वास्तविक धरातल पर जीवन जीने वाली एक मानवीय रूप। उसमें स्त्री सुलभ व्यंग्य, वेदना, आदि गुण झलकती है। प्राय: इसीलिए बंधुवर्मा के राज्य दान का प्रस्ताव उसे अच्छा नहीं लगता। अपना राज्य छोड़कर दूसरों की सेवा करनी पड़ेगी - इस बात से वह सहमत नहीं होती है। देवसेना की बातों को काटते हुए वह कहती है- 'विश्वप्रेम, सर्वभूत-हित कामना परम धर्म है, परंतु इसका यह अर्थ नहीं हो सकता कि अपने पर प्रेम न हो।" वह बंधुवर्मा के विचारों का विरोध तो करती है, किंतु अनंतदेवी के जैसे वह कपटी नहीं है। उसमें दुराग्रह का रूप नहीं है। जब सभी का एक समान लक्ष्य देख वह भी अपने मन को बदल लेती है और पति का साथ देने के लिए तैयार हो जाती है। राज्याभिषेक के समय वह स्वयं स्कंदगुप्त से कहती है- "देव! यह सिंहासन आपका है। मालवेश का इस पर कोई अधिकार नहीं...आर्यावर्त के सम्राट के अतिरिक्त अब दूसरा कोई मालव के सिंहासन पर नहीं बैठ सकता।" जब उसका पति बंधुवर्मा युद्ध में जीव त्याग देता है, तब वह भी उसकी चिता में अपना प्राण त्यागकर सती हो जाती है।

ट) **कमला** : कमला भटार्क की माँ है। कमला के अंदर देशभक्ति भावना एवं राष्ट्र-प्रेम कूट-कूटकर भरा हुआ है। जब वह देखती है उसका पुत्र भटार्क गलत राह पर चल पड़ा है, तब वह उसे समझाने का प्रयास करती है, लेकिन उसे बदलते न देख वह अपनी कोख को दोष देती है। जब भटार्क कुभा नदी का बाँध तोड़ देता है और गुप्त सैन्य को बदी की धारा में बह जाना पड़ता है, और स्कंदगुप्त का भी कोई खबर नहीं मिलता, जिसे सुनकर माता देवकी होश गंवाकर नीचे गिर पड़ती है और उसका देहांत हो जाता है उस समय कमला भटार्क को पुनः समझाती है जिससे उसका मन परिवर्तित होकर प्रायश्चित्त करने लगता है। इस प्रकार राष्ट्र की सेवा में कमला का एक अनोखा योगदान है।

देशकाल-वातावरण : प्रत्येक साहित्य अपने युग एवं देशकाल को प्रभावित करने के साथ-साथ ही स्वयं उससे प्रभावित भी होता है। इस संदर्भ में यदि हम प्रसाद के नाटकों को परखें तो हम पाते हैं कि प्रसाद ने अपने समय की परिस्थिति एवं परिवेश को ही अपने साहित्य में स्थान दिया है। प्रसाद का समय स्वतंत्रता संघर्ष, जन जागरण, सामाजिक समरसता, आदमी-औरत के बीच समानता, राष्ट्र के प्रति प्रेम की भावना, देश के प्रति समर्पण की भावना आदि के अनिवार्यता का दौर रहा है। वे जिस युग में लिख रहे थे, वह राष्ट्रीय आंदोलन का युग था। गांधीजी के नेतृत्व में

पूरा देश स्वतंत्रता के लिए संघर्षरत था। एक तरफ अंग्रेजों की विभाजनकारी नीतियाँ जिसके परिणामस्वरूप उत्पन्न सांप्रदायिक दंगे तो दूसरी ओर उपाधि, पदवी आदि का लालच देकर लोगों को अपनी ओर आकर्षित करना, इस प्रकार की तमाम बातें उस दौरान हो रहे थे। कुछ लोग ऐसे भी थे, जो अंग्रेजों के बीच काम करते हुए उनके ही गुलाम बने हुए थे। ऐसी विषम परिस्थिति में साहित्यकार का दायित्व है कि लोगों के मन में अपनी रचनाओं के माध्यम से राष्ट्रभक्ति भावना को जाग्रत करें। भारत-भूमि आक्रमणों के इतिहास से लिखी गई है। आंतरिक कलह, बाह्य आक्रमण, प्रेम, ममता, ईर्ष्या आदि सभी प्रकार की भावनाएँ इस धरती के इतिहास में रची बसी हैं। यही कारण है कि प्रसाद ने ऐतिहासिक घटनाओं के आधार पर तत्कालीन परिस्थिति को अभिव्यक्त करने का प्रयास किया है।

गुप्त साम्राज्य के उत्तराधिकारी स्कंदगुप्त का समय भी कुछ इसी प्रकार के परिवेश से निर्मित हुआ था। आंतरिक कलह और हूणों का आक्रमण इन दोनों से ही पूरा गुप्त साम्राज्य त्रस्त था। ऐसी परिस्थिति में स्कंदगुप्त निरंतर युद्ध करते हुए हूणों को हमेशा हमेशा के लिए भगा देता है। इस प्रकार प्रसाद ने अतीत के माध्यम से वर्तमान की व्याख्या की है। उज्जयिनी, कुसुमपुर, मगध की राजसभाओं व प्रकोष्ठों से संबंधित वातावरण की सृष्टि कर प्रसाद ने गुप्तकालीन ऐतिहासिकता को सुरक्षित रखा है। इसमें भीषण युद्ध और युद्ध भूमि का वर्णन भी है। काल्पनिक प्रसंगों में मनोरंजन हेतु तथा कथा को सुचारू रूप से संचालित करने हेतु प्रसाद ने मालव में शिप्रा-तट कुंज, उपवन, नगर-प्रांत का पथ, बंदीगृह, श्मशान का अंधकार, मठ, बोधि-विहार, बौद्ध-स्तूप, आदि सभी प्रकार के वातावरण एवं परिवेश का संदर्भानुकूल चित्रण किया है। देश-काल वातावरण की दृष्टि से तथा पात्रों की भरमार के कारण पठनीयता में बाधा नहीं होती है, किंतु नाटक की अभिनेयता या रंगमंचीयता की दृष्टि से प्राय: बोझिल लगता है।

कथोपकथन : कथोपकथन नाटक का सर्वप्रमुख उपजीव्य है। नाटक का कथानक कथोपकथन के ताने-बाने से बुना जाता है। कथानक को गतिशील अथवा अगतिशील बनाने में कथोपकथन को श्रेय जाता है। क्रिया व्यापार तथा चरित्र के सूक्ष्म विशेषताओं को भी कथोपकथन द्वारा ही उद्घाटित किया जाता है। लेकिन प्रसाद के नाटकों में कथोपकथन एक अलग ही रूप में प्रस्तुत होता है। उनके संवादों में काव्यमयता दार्शनिकता का पुट जरूर होता है। स्कंदगुप्त का कथोपकथन उसके चरित्र स्कंदगुप्त, पर्णदत्त, मातृगुप्त, अनंतदेवी, विजया, भटार्क, देवसेना, बंधुवर्मा आदि सभी के चरित्रों को उद्घाटित करने में सफल हुआ है। स्कंदगुप्त में छोटे-बड़े सभी प्रकार के संवाद मिलते हैं। कई स्थानों में स्वकथन या एकालाप भी मिलता है। नाटक के प्रारंभ में ही स्कंदगुप्त (टहलते हुए) - “अधिकार सुख कितना मादक और सारहीन है।” यह ऐसा कथन है जिसे वह अपने मन में ही सोचता है। कभी-कभी एक शब्द या छोटे से वाक्य में भी कथोपकथन को समेटा गया है। जैसे यह संवाद देखिए-

भटार्क - कौन? (प्रवेश करके)

शर्वनाग - नायक शर्वनाग?

भटार्क - कितने सैनिक हैं?

शर्वनाग - पूरा एक गुल्म?

भटार्क - अंत:पुर से कोई आज्ञा मिली है?
शर्वनाग - नहीं।
भटार्क - तुमको मेरे साथ चलना होगा।
शर्वनाग - मैं प्रस्तुत हूँ, कहाँ चलूँ?
भटार्क - महादेवी एक द्वार पर।
शर्वनाग - वहाँ मेरा क्या कर्तव्य होगा?
भटार्क - कोई न तो भीतर जाने पाए और न तो भीतर से बाहर आने पाए।
शर्वनाग - (चौंककर) इसका तात्पर्य?
भटार्क - (गंभीरता से) तुमको महाबलाधिकृत की आज्ञा का पालन करना चाहिए।
शर्वनाग - तब भी क्या स्वयं महादेवी पर नियंत्रण रखना होगा?
भटार्क - हाँ।
शर्वनाग - ऐसा!

इस नाटक के संवाद स्वयं पात्रों का परिचय पाठकों से कराते हैं। ये संवाद एक ओर पात्रों की विशेषताओं को मुखरित करते हैं तो दूसरी ओर पाठकों के मन को कचोटते हैं और सोचने के लिए माजबूर करते हैं। देवसेना द्वारा यह संवाद देखिए-

देवसेना - "पवित्रता की माप है मलिनता, सुख का आलोचक है दुख, पुण्य की कसौटी है पाप। विजया ! अआश के सुंदर नक्षत्र आँखों से केवल देखे ही जाते हैं, वे कुसुम-कोमल है कि वज्र कठोर कौन कह सकता है। आकाश में खेलती हुई कोकिला की करुणामयी तान का कोई रूह है या नहीं, उसे देख नहीं पाते। शतदल और पारिजात का सौरभ बिठा रखने की वस्तु नहीं। परंतु संसार में ही नक्षत्र-से उज्ज्वल किंतु कोमल स्वर्गीय संगीत की प्रतिमा तथा स्थायी कीर्ति-सौरभ वाले प्राणी देखे जाते हैं। उन्हीं से स्वर्ग का अनुमान कर लिया जाता है।

इस प्रकार से गंभीर से गंभीर संवाद भी इस नाटक में प्रस्तुत है। प्रसाद ने इस प्रकार के संवाद से पात्रों की मनोदशाओं की व्यंजना की है। उनकी स्थिति, द्वंद्व, चरित्र और मनोदशा संवादों में प्रतिबिंबित हुआ है। कथोपकथन में प्रसाद ने बिंबों का भी सफल प्रयोग किया है। एक उदाहरण देखिए-

"शांत रजनी में मैं ही धूमकेतु हूँ। यदि मैं न होता तो यह संसार स्वाभाविक गति से, आनंद से, चला करता...कहीं भी कामना की वन्या नहीं।" कामना की वन्या न होने पर भी स्कंदगुप्त की स्थिति धूमकेतु जैसी है। अंत:पुर का सारा कुचक्र, छल, आँधी-तूफान, शोर-शराबा उसी को लेकर है। वह न होता तो कुछ न होता। लेकिन वह है परिचारक की भाँति, ढाल की भाँति, धूमकेतु से उसकी संगति स्वाभाविक है। संदर्भ या घटना चाहे कोई भी हो, उसके लिए उचित संवाद का निर्वहण प्रसाद की विशेषता है।

भाषा शैली : यह सर्वविदित है कि जयशंकर प्रसाद संस्कृतनिष्ठ काव्योचित भाषा के प्रयोक्ता हैं। उन्हें मूलतः कवि माना जाता है। अतः उनके कवि हृदय का प्रभाव नाटकों में भी देखने को मिलता है। स्कंदगुप्त नाटक की रचना ऐतिहासिक परिवेश पर आधारित होने के कारण प्रसाद ने

खड़ीबोली के संस्कृतनिष्ठ भाषा का सहज प्रयोग किया है। काव्यात्मकता के साथ-साथ प्रतीकात्मकता, लाक्षणिक-व्यंजना प्रधान, भाव-प्रधान और बिंब-प्रधान भाषा का उन्होंने भरपूर प्रयोग किया है। नाटक में नाटकीयता एवं रोचकता कायम रखने के अनुकूल तथा पात्रानुकूल प्रसाद ने भाषा का प्रयोग किया है। मुहावरों का प्रयोग भी किया गया है। मातृगुप्त, देवसेना आदि पात्रों की विशिष्टता को दर्शाने हेतु प्रसाद ने काव्यमय भाषा का सृजन किया है। जैसे, मातृगुप्त द्वारा इन वाक्यों का प्रयोग करना- "संचित हृदय-कोश के अमूल्य रत्नों की उदारता और दारिद्र्य का व्यंग्यात्मक कठोर अट्टहास, दोनों की विषमता की कौन सी व्यवस्था होगी। मनोरथ को भारत के प्रकांड बौद्ध पंडित को परास्त करने में मैं सबकी प्रशंसा का भाजन बना। परंतु हुआ क्या?" इसी प्रकार देवसेना की बातों में काव्यमयता देखी जा सकती है- "पवित्रता की माप है मलिनता, सुख का आलोचक है दुख, पुण्य की कसौटी है पाप। विजया! आकाश के सुंदर नक्षत्र आँखों से केवल देखे ही जाते हैं, वे कुसुम-कोमल है कि वज्र-कठोर-कौन कह सकता है। आकाश में खेलती हुई कोकिला की करुणामयी तान का कोई रूप है या नहीं, उसे देख नहीं पाते। शतदल पारिजात का सौरभ बिठा रखने की वस्तु नहीं। परंतु संसार में ही नक्षत्र-से उज्ज्वल-किंतु कोमल स्वर्गीय संगीत की प्रतिमा तथा स्थायी कीर्ति सौरभ वाले प्राणी देखे जाते हैं। उन्हीं से स्वर्ग का अनुमान कर लिया जाता है।

स्कंदगुप्त में न केवल काव्यात्मकता, बल्कि संदर्भ, परिवेश या पात्रों के अनुकूल भाषा का प्रयोग हुआ है। भोग-विलास में डूबे हुए नागरिकों के प्रति पर्णदत्त अपना क्रोध इस प्रकार व्यक्त करता है- (दांत पीसकर), नीच, दुरात्मा, विलास का नारकीय कीडा! बालोख को सँवार कर, अच्छे कपड़े पहन कर, अब भी घमंड से तना हुआ निकालता है। कुल-वधुओं का अपमान सामने देखते हुए भी अकड़ कर चल रहा है। अब तक विलास और नीच वासना नहीं गई। जिस देश के नवयुवक ऐसे हों, उसे अवश्य दूसरों के अधिकार में जाना चाहिए। देश पर यह विपत्ति, फिर भी यह निराली धज!"

साहित्य में अक्सर स्वकथन या एकालाप का भी प्रयोग किया जाता है। स्कंदगुप्त में भी एकालाप के अनेक संदर्भ मिल जाते हैं। नाटक का पहला ही वाक्य-अधिकार सुख कितना मादक और सारहीन है, एकालाप है, जिसमें स्कंदगुप्त अपने मन में ही विचार करता है। स्कंदगुप्त की मनोदशा को दर्शानेवाले दो बिंब देखिए-

> "शांत रजनी में मैं ही धूमकेतु हूँ। यदि मैं न होता तो यह संसार स्वाभाविक गति से, आनंद से, चला करता....कहीं भी कामना की वन्या नहीं।"
>
> (अर्थात, कामना की कोई वन्या होने पर भी स्कंदगुप्त की स्थिति धूमकेतु जैसी है। अंत:पुर का सारा कुचक्र, छल, आँधी-तूफान, शोर-शराबा उसी को लेकर है। वह न होता तो कुछ न होता। लेकिन वह है परिचारक की भाँति, ढाल की भाँति, धूमकेतु से उसकी संगति स्वाभाविक है।)

"बौद्धों का निर्वाण, योगियों की समाधि, और पागलों की सी संपूर्ण विस्मृति मुझे एक साथ चाहिए। चेतना कहती है, तू राजा है और उत्तर में जैसे कोई कहता है कि तू खिलौना है- उसी खिलवाडी वटपत्रशायी बालक के हाथों का खिलौना है। तेरा मुकुट श्रमजीवी की टोकरी से

भी तुच्छ है।" (अर्थात, एक साथ ही निर्वाण, समाधि, संपूर्ण विस्मृति की माँग के मूल में परिस्थितिजन्य निराशा का गहरा विक्षोभ है। मुकुट को श्रमजीवी की टोकरी से भी तुच्छ समझना उसकी उदासीनता का क्रियात्मक पक्ष है जिसे प्रारंभ में देखा गया था। इन सभी बिंबों को 'परिचारक और ढाल एकसूत्रता प्रदान करते हैं।)

स्कंदगुप्त में संगीत बिंब अधिक प्रयुक्त हुआ है। जैसे, भैरवी स्वर, श्रृंगीनाद, तांड़व नृत्य से लेकर वागेश्वरी का कोमल करुण स्वर। इसके कुछ उदाहरण देखिए- जयमाला कहती है- ....रुद्र का श्रृंगीनाद, भैरवी का तांड़व नृत्य और शास्त्रों का वाद्य निकलकर भैरव संगीत की सृष्टि होती है। ...ध्वंसमयी महामाया प्रकृति का निरंतर संगीत है।... अत्याचार के श्मशान में ही मंगल का, शिव का, सत्य सुंदर संगीत का समारंभ होता है।"

देवसेना के संवादों में संगीत बिंब बार-बार उभरते हैं- "संगीत सभा की अंतिम लहरदार और आश्रयहीन तान, धूपदान की सूक्ष्म क्षीण गंध-धूम रेखा, कुचले हुए फूलों का म्लान सौरभ, और उत्सव के पीछे का अवसाद, इन सबों की प्रतिकृति क्षुद्र नारी-जीवन"। (इसमें चार बिंबों को पिरोकर उसके जीवन के दुख को और गहरा बनाते हैं।

कुल मिलाकर देखा जा सकता है कि स्कंदगुप्त प्रसाद की एक उत्कृष्ट नाटक है। भले ही अभिनेयता की दृष्टि से, पात्रों की बोझिलता के कारण या लंबे-लंबे स्वगत कथनों के कारण या भाषा की परिपक्वता एवं काव्यमयता के कारण सामान्य पाठक के लिए यह समझने में मुश्किल हो, लेकिन कला की दृष्टि से यह एक उत्कृष्ट रचना है।

उद्देश्य : छात्रो! भले ही स्कंदगुप्त नाटक की रचना ऐतिहासिक हो, इसकी कथावस्तु आज भी प्रासंगिक है। हिंदी के प्रमुख आलोचक जैसे बच्चन सिंह, डॉ. गोविंद चातक आदि का मानना है कि स्कंदगुप्त की रचना भारतीय इतिहास में स्वर्ण युग कहलाने वाले गुप्त काल का बखान करना मात्र नहीं, बल्कि तत्कालीन भारतीय जनता को राष्ट्रीय एकता के लिए सिद्ध करना भी है। इस नाटक का प्रकाशन 1927 में हुआ जब देश आजादी के लिए तीव्र गति से प्रयासरत था। ऐसी परिस्थिति में एक सजग साहित्यकार ने इतिहास की परिस्थितियों को नवीन संदर्भ के अनुकूल प्रस्तुत किया है। इसका मुख्य उद्देश्य न केवल स्कंदगुप्त या गुप्त साम्राज्य का वैभवशाली इतिहास या पतन की स्थिति का वर्णन करना नहीं बल्कि तत्कालीन परिस्थिति में अधिक से अधिक लोगों के मन में देश के प्रति प्रेम या कर्तव्य भावना को जाग्रत करना इसका मुख्य उद्देश्य रहा है।

6.3.2 स्कंद्गुप्त नाटक में इतिहास और कल्पना

प्रसाद ने जब इस नाटक की रचना की थी, उस समय भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन में यह अवसाद और निराशा का समय था। गांधीजी का असहयोग आंदोलन असफल हो चुका था। 1922 में स्वराज पार्टी के निर्माण के कारण कांग्रेस पार्टी का विघटन हो चुका था। राजनीतिक अवसाद, उदासीनता, सांप्रदायिक विद्वेष और विघटन का काल था। अपने युग की इन्हीं अवसादमयी स्थितियों को प्रसाद ने स्कंदगुप्त के चरित्र में दर्शाया है। नाटक की प्रथम पंक्ति 'अधिकार सुख कितना मादक और साराहीन है।' में इस युग-अवसाद की छाया है। अधिकार के प्रति उदासीन होने पर भी स्कंदगुप्त में राष्ट्रप्रेम कूट-कूटकर भरा हुआ है। अपने युगीन परिवेश को व्यक्त करने के लिए प्रसाद को कल्पना का भरपूर सहायता लेनी पड़ी। अंग्रेजी सत्ता के सम्मुख

बड़े-बड़े नेता धाराशायी हो गए थे और उनकी कूटनीतियों से क्रांतिकारी आंदोलनों के प्रयास भी असफल होते जा रहे थे। सारे वातावरण में यहां तक कि नेताओं में भी उदासी और हताश का भाव था। ऐसी हाताशा के वातावरण में भी स्कंद का व्यक्तित्व दायित्व बोध से रहित नहीं है। संकट में त्याग और बलिदान के आदर्श को प्रस्तुत करता है। ऐसी परिस्थिति को उजागर करने के लिए वीर पर्णदत्त को भी हूण आक्रमण से परास्त होकर देवसेना के साथ भीख मांगते हुए दिखाया गया है।

छात्रो! आप यह जान चुके हैं कि स्कंदगुप्त कुमारगुप्त प्रथम का पुत्र था। उसका एक छोटा भाई था जिसका नाम पुरगुप्त था। कुमारगुप्त महेंद्रादित्य के शासनकाल के अंतिम दिनों में साम्राज्य अंतर्बाह्य संघर्षों से ग्रस्त था। इसके अतिरिक्त हूणों का निरंतर आक्रमण एवं उनका अधिक बलशाली होना वास्तव में गुप्त साम्राज्य के लिए चिंता का विषय था। जिनके कारण स्कंदगुप्त को राज्य की राक्षा करने हेतु शासन को अपने हाथ में लेना पड़ा चूँकि पुरगुप्त छोटा बालक था। कहा जाता है कि स्कंदगुप्त का शासन काल पूर्णतः युद्धों से घिरा हुआ था। बलशाली हूणों से गुप्त साम्राज्य की रक्षा करने का भार स्कंदगुप्त के ऊपर था। वह एक ऐसा पराक्रमी राजा था जिसने युद्ध के दौरान कई दिनों तक जमीन पर सोकर अपने साम्राज्य की रक्षा की थी। स्कंदगुप्त नाटक के प्रारंभिक पृष्ठों में इस नाटक के ऐतिहासिक पक्षों पर प्रकाश डाला गया है जिसमें स्वयं प्रसाद इस प्रकार लिखते हैं- कुछ अलोगों का अनुमान है कि नर्मदा के निकटवर्ती पुष्यमित्रों ने जब गुप्त साम्राज्य से युद्ध प्रारंभ किया था तभी कुमार स्कंदगुप्त के नेतृत्व में गुप्त साम्राज्य की सेना ने उज्जयिनी पर अदिकार किया। इन्हीं स्कंदगुप्त का सिक्कों में परम भागवत श्री विक्रमादित्य स्कंदगुप्त के नाम से उल्लेख मिलता है। इनके शिलालेख से पता चलता है कि कुललक्ष्मी विचलित थी, म्लेच्छों और हूणों से आर्यावर्त्त आतंकित था, अपनी सत्ता बनाए रखने के लिए इन्होंने पृथ्वी पर सोकर रातें बिताईं। हूणों के युद्ध में जिसके विकट पराक्रम से धरा विकंपित हुई, जिसने सौराष्ट्र के शकों का मूलोच्छेद करके पर्णदत्त को वहाँ का शासक नियत किया वे स्कंदगुप्त ही थे, जूनागढ़ वाले लेख में इसका स्पष्ट उल्लेख है। स्कंदगुप्त की प्रशंसा में उसमें लिखा है-

“आपिच जितमिव तेन प्रथयन्ति यशंसि यस्य
रिपवोप्यामूल भग्नदर्पा निर्वचना म्लेच्छदेशेषु ॥

स्कंदगुप्त को सौराष्ट्र के शकों और तोरमाण के पूर्ववर्ती हूणों से लगातार युद्ध करना पड़ा। वैमातृक भाई पुरगुप्त से आंतरिक द्वंद्व भी चल रहा था। उस समय की विचलित राजनीति को स्थिर करने के लिए प्राचीन राजधानी पाटलिपुत्र या अयोध्या से दूर एक केंद्र स्थल में अपनी राजधानी बनाना आवश्यक था। इसलिए वर्तमान मालव को मौर्यकाल की अवंती नगरी को स्कंदगुप्त ने अपने साम्राज्य का केंद्र बनाया और शक हूणों को परास्त करके उत्तरीय भारत से हूण तथा शकों का राज्य निर्मूल कर ‘विक्रमादित्य’ की उपाधि धारण की।

स्कंदगुप्त के समय की परिस्थिति को आधार बनाकर प्रसाद ने इस नाटक की रचना की है क्योंकि तत्कालीन परिस्थितियाँ स्कंदगुप्त के समय की परिस्थितियों से मिलते-जुलते हैं। जिस प्रकार स्कंदगुप्त अपने साम्राज्य की रक्षा हेतु तत्पर थे, जिस प्रकार उनके अंदर देशभक्ति अपने

राज्यभक्ति कूट-कूटकर भरी हुई थी, उसी प्रकार प्रसाद के समय में देश आजादी के संघर्ष में तत्पर था। लोगों में देश भक्ति को जगाना, राष्ट्र भक्ति को जाग्रत करना प्रसाद का मुख्य उद्देश्य रहा। इतिहास की चेतना में निहित वर्तमान की तलाश प्रसाद का ध्येय था। इसीलिए उन्होंने प्राय: स्कंदगुप्त के कालखंड़ को आधार बनाया।

छात्रो! वैसे देखा जाय तो इतिहास के पन्नों पर स्कंदगुप्त के बारे में अधिक जानकारी प्राप्त नहीं होती है। लेकिन फिर भी जो भी तथ्य उपलब्ध थे, उन्हें प्रसाद ने घटनाक्रम में प्रस्तुत कर उसे नाटक का रूप दिया है। इस प्रकार स्कंदगुप्त प्रसाद की एक प्रौढ़ रचना है। प्रसाद ने इतिहास के पात्रों को अक्षुण्ण रखते हुए अपनी सर्जनात्मक कल्पना से उसमें मानवीय संबंधों एवं संवेदनाओं तथा भारतीय दर्शन और संस्कृति के आधारभूत जीवन-मूल्यों को अभिव्यक्त करने के लिए काल्पनिक प्रसंगों को भी बड़ी कुशलता से प्रस्तुत किया है। इसीलिए आलोचक यह मानते हैं कि स्कंदगुप्त में इतिहास और कल्पना का सुंदर समन्वय हुआ है। इस समन्वय के फलस्वरूप ही इतिहास आत्मवान या प्राणवान प्रतीत होता है। इतिहास के क्षीण कलेवर को कल्पना से सजीव तो किया है, किंतु ऐतिहासिक निष्ठा की क्षति नहीं होने दी है। इसके कारण ही नाटक के कथ्य का मार्मिक प्रभाव पड़ता है। इस संबंध में स्वयं प्रसाद का कहना है- इतिहास का अनुशीलन किसी भी जाति को अपना आदर्श संगठित करने के लिए अत्यंत लाभदायक होता है। मेरी इच्छा भारतीय इतिहास के अप्रकाशित अंश में से उन प्रकांड घटनाओं की दिग्दर्शन कराना है, जिन्होंने हमारी वर्तमान स्थिति को बनाने का प्रयत्न किया है।

गुप्त साम्राज्य के कुमारगुप्त विक्रमादित्य की दो रानियाँ थीं। छोटी रानी अनंतदेवी का उल्लेख मिलता है, लेकिन बड़ी रानी का कोई उल्लेख नहीं मिलता है। प्रस्तुत नाटक में प्रसाद ने इस पात्र का नाम कल्पित कर देवकी रखा है। वह स्कंदगुप्त की माता हैं, मर्यादा, औदार्य एवं क्षमा जैसे गुणों से युक्त पात्र। लेकिन अनंतदेवी एक कुटिल नारी है, छल-छद्म में वह निपुण थीं। किसी भी हाल में अपने पुत्र को राजा बनाने के लिए वह आतुर है। जिसके कारण वह षड्यंत्र रचती है और गृहकलह को जन्म देती है। वह विचारों से क्रूर होने पर भी रूपवती थी और अपने रूप जाल में कुमारगुप्त को फँसाकर रखती है। बड़ी रानी देवकी को बंदी करवाती है। कुमारगुप्त की हत्या करवाती है। इसके साथ ही प्रसाद ने छायावाद के अनुरूप रोमांस को भी इसमें महत्व दिया है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल लिखते हैं- "यद्यपि प्रसाद के नाटक ऐतिहासिक हैं, पर उनमें आधुनिक आदर्शों और भावनाओं का आभास इधर-उधर बिखरा मिलता है। स्कंदगुप्त और चंद्रगुप्त दोनों में स्वदेश प्रेम, विश्व प्रेम, आध्यात्मिकता का आधुनिक रूप-रंग बराबर मिलता है। अपने पुत्र को गुप्त साम्राज्य की उत्तराधिकारी बनाने हेतु अनंतदेवी देवकी और स्कंदगुप्त के प्रति अनेकानेक षड्यंत्र रचती है। इसमें भटार्क उसका साथ देता है। वास्तव में इतिहास में इस बात का जिक्र नहीं मिलता है, लेकिन रोचकता उत्पन्न करने के लिए प्रसाद ने इस कल्पना का समावेश किया है।

स्कंदगुप्त के ऐतिहासिक पक्ष को सुरक्षित रखते हुए प्रसाद ने कल्पना का ऐसा समावेश किया है जिससे ऐतिहासिक पात्रों व घटनाओं को ठेस नहीं पहुँचती। खिंगल, प्रपंचबुद्धि, मुद्गल, प्रख्यातकीर्ति, देवसेना, विजया, कमला, रामा, आदि ऐसे ही काल्पनिक पात्र हैं जिनसे वस्तु को

गति मिलती है। न केवल पात्र, बल्कि कई प्रसंग, घटनाएँ आदि का भी प्रसाद ने काल्पनिक सृष्टि की है जिससे मूल इतिहास को ठेस नहीं पहुँचती है। प्रसाद स्वयं इस बात पर अपना विचार व्यक्त करते हुए लिखते हैं- पात्रों की ऐतिहासिकता के विरुद्ध चरित्र की दृष्टि जहाँ तक संभव हो सका है वही होने दिया गया है, फिर भी कल्पना का अवलंब लेना ही पड़ा। केवल घटना की परंपरा ठीक करने के लिए। उनके अनुसार उन्होंने कल्पना का सहारा उतना ही लिया है जिससे कहानी को आगे बढ़ाया जा सके। सारे विद्वान भी इससे सहमत हैं।

बोध प्रश्न

- अधिकार सुख कितना मादक और सारहीन होता है- ऐसा कौन सोच रहो है?
- स्कंदगुप्त समय के सिक्कों पर क्या लिखा हुआ मिलता है?
- स्कंदगुप्त की छोटी माँ का नाम क्या था?
- पुरगुप्त के भैया का क्या नाम था?
- क्या प्रसाद ने इस नाटक में देशभक्ति को जाग्रत करने का प्रयास किया है?

6.3.3 स्कंदगुप्त नाटक से संबंधित विद्वानों के विचार

रामचंद्र शुक्ल : हमारे वर्तमान नाटक क्षेत्र में डॉ. नाटककार बहुत ऊँचे स्थान पर दिखाई पड़े- स्वर्गीय जयशंकर प्रसाद जी और श्री हरिकृष्ण 'प्रेमी'। दोनों की दृष्टि ऐतिहासिक काल की ओर रही है। प्रसाद जी ने अपना क्षेत्र हिंदूकाल के भीतर चुना और प्रेमी जी ने मुस्लिम काल के भीतर। प्रसाद के नाटकों में स्कंदगुप्त श्रेष्ठ है और प्रेमी के नाटकों में रक्षाबंधन।

डॉ. नगेंद्र : उनके नाटकों में पौराणिक युग के जनमेजय का नागयज्ञ से लेकर हर्षवर्धन-युग (राज्यश्री) तक के भारतीय इतिहास की गौरवमयी झांकी देखने को मिलती है।

डॉ. बच्चन सिंह : वास्तविकता तो यह है कि वे वर्तमान में अपने समसामयिक समस्याओं के बिंदु से अतीत को देखते और भविष्य को परिकल्पित करते हैं। अतीत, वर्तमान और भविष्य उनके लिए अखंड़, एककालिक और अविभाज्य है।

दशरथ ओझा : इस नाटक में मनुष्य को पूर्णता पर पहुँचाने का एक मार्ग दिखाया गया है जिसे भागवत धर्म कहते हैं।

प्रो. वासुदेव : प्रसाद जी ने भारतीय इतिहास के इन गौरवपूर्ण पृष्ठों को नाटक का रूप केवल इसलिए नहीं दिया कि वह इसके माध्यम से अतीत कालीन भारतीय संस्कृति का गुणगान करना चाहते थे, अपितु उन्होंने अतीत के माध्यम से वर्तमान का अध्ययन किया है। समसामयिक समस्याओं को उठाया है और उसका समाधान प्रस्तुत किया है तथा अनागत के लिए संदेश भी दिया है।

डॉ. रामचंद्र तिवारी : प्रसाद के नाटक ऐतिहासिक तथ्यों की रक्षा करते हुए भी सांस्कृतिक वातावरण उपस्थित करने में पूर्णतः सफल है। उसमें राष्ट्रीय चेतना सर्वत्र देखी जा सकती है।

जयशंकर प्रसाद : अपने द्वारा सृष्टि की गई पात्रों के बारे में स्वयं जयशंकर प्रसाद इस प्रकार लिखते हैं- 'स्कंदगुप्त' विक्रमादित्य होना प्रत्यक्ष प्रमाण से सिद्ध होता है।" मातृगुप्त

(कालिदास) और धातुसेन को भी साक्ष्यों के आधार पर जयशंकर प्रसाद ने ऐतिहासिक पात्र माना है। भीमवर्मा, चक्रपाणी, पर्णदत्त, शर्वनाग, पृथ्वीसेन, खिंगिल, प्रख्यातकीर्ति, भीमवर्मा, गोविंदगुप्त आदि सभी ऐतिहासिक व्यक्ति हैं"। प्रसाद के अनुसार प्रपंचबुद्धि तथा मुद्गल कल्पित पात्र हैं। स्त्री पात्रों में स्कंदगुप्त की माँ देवकी को रखा है। देवसेना और जयमाला वास्तविक और काल्पनिक पात्र दोनों हो सकते हैं। विजया, कमला, रामा और मालिनी जैसी दूसरी नामधारी स्त्री की भी उस काल में संभावना है तब भी ये कल्पित हैं।

बोध प्रश्न

- राष्ट्रीय चेतना सर्वत्र देखी जा सकती है- किसका कथन है?
- देवकी का नाम देवकी क्यों रखा गया?
- इस नाटक में मनुष्य को पूर्णता पर पहुँचाने का एक मार्ग दिखाया गया है - किसका कथन है।

6.4 पाठ सार

प्रसाद के इस ऐतिहासिक नाटक में युगीन संदर्भों को ऐतिहासिक दृष्टि से या ऐतिहासिक तथ्यों के आधार पर प्रस्तुत किया गया है। नाटककार ने स्कंदगुप्त के समय की गुप्तकालीन परिस्थितियों को देखते हुए महसूस किया है कि उनके समय की तत्कालीन परिस्थितियों और गुप्तकालीन परिस्थितियों में कोई ज्यादा अंतर नहीं है, क्योंकि गुप्त साम्राज्य में स्कंदगुप्त के युग में न केवल आंतरिक कलह था बल्कि पूरा साम्राज्य हूणों के आक्रमण के कारण असुरक्षित था। ऐसी परिस्थिति में प्रसाद के समय का भारत था। एक तरफ अंग्रेजों का भारत पर आधिपत्य स्थापित हो चुका था। देश को आजाद करने के लिए पूरा देश और देश के प्रमुख नेता प्रयासरत थे। इसके साथ ही कुछ ऐसे भारतीय भी थे जो अंग्रेजों की सहायता करते हुए उनका पक्ष ले रहे थे। प्रसाद ने बड़े ही खूबसूरत ढंग से इन दोनों युगों की परिस्थितियों को माला के रूप में पिरोकर स्कंदगुप्त नाटक को हिंदी साहित्य के पाठकों के लिए समर्पित किया है। रम्गमंच की दृष्टि से इस नाटक की अपनी सीमाएँ होने के बावजूद, पात्रों की बोझिलता होने के बावजूद, घटनाक्रम के अधिकता के बावजूद, भिन्न-भिन्न वातावरण एवं संवाद होने के बावजूद, बड़े-बड़े तथा परिपक्व संवाद होने के बावजूद स्कंदगुप्त नाटक का हिंदी साहित्य में एक विशिष्ट स्थान है। इस नाटक में कई ऐसे पात्र हैं जिन्हें पढ़कर हमारे मन में देशभक्ति अपने आप जाग्रत होती है। राजा के कर्तव्य, देश के प्रति समर्पण की भावना, स्त्री-धर्म आदि सभी पहलुओं पर नाटक प्रकाश डालता है।

प्रसाद ने स्कंदगुप्त के ऐतिहासिक वृत्त को इतिहास-ग्रंथों, शिला-लेखों आदि के आधार पर प्रामाणिक रूप से प्रस्तुत किया है। लेकिन प्रामाणिक वस्तु को नाटकीय रूप में प्रस्तुत करने के लिए प्रसाद को कुछ हद तक कल्पना का सहारा लेना पड़ा है। कुछ जगहों पर प्रसाद अनुमान भी लगाया है। इस दृष्टि से इस नाटक में इतिहास, अनुमान और कल्पना का आश्रय लिया गया है। नाटक के प्रारंभ में भी स्कंदगुप्त अकेला ही था और नाटक के अंत में भी वह अकेला ही है। उसके मन में भी द्वंद्व है और देवसेना के मन में भी द्वंद्व है, इसीलिए दोनों का मिलन असंभव हो गया। इसमें आत्मसम्मान और प्रणय का संघर्ष दिखाया गया है। यह भी दर्शाया गया है कि एक स्त्री

चाहे तो किसी भी हद तक जा सकती है। अनंतदेवी और विजया इसके अनुरूप पात्र हैं जो अपनी महत्वाकांक्षा की पूर्ति के लिए अपने आस-पास के लोगों से खिलवाड़ करते हैं। इस प्रकार यह नाटक एक तरफ देशभक्ति, राष्ट्रप्रेम और कर्तव्य भावना को जाग्रत करता है तो दूसरी ओर प्रेम के विविध रंग, बौद्ध धर्म, युद्ध के भीषण चित्र आदि सभी पक्षों को सुचारू ढंग से अभिव्यक्त करता है। तमाम दृष्टि से स्कंदगुप्त पढ़ने तथा समझने और समझाने योग्य नाटक है।

6.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं -

1. 'स्कंदगुप्त' जयशंकर प्रसाद की इतिहास दृष्टि की स्पष्टता का परिचायक नाटक है।
2. नाटककार ने इतिहास को साहित्यिक कृति का रूप देने के लिए आवश्यक नाटकीयता और कल्पना का उपयुक्त समावेश किया है।
3. जयशंकर प्रसाद का समय भारत में स्वतंत्रता संग्राम और विशेष रूप से महात्मा गांधी के सत्याग्रह आंदोलन का युग था। उस युग के अनुरूप भारतीयों में सांस्कृतिक चेतना, राष्ट्रीय स्वाभिमान और स्वतंत्रता की भावना जगाने के लिहाज से 'स्कंदगुप्त' एक सफल नाटक सिद्ध होता है।
4. जयशंकर प्रसाद ने टेकनीक के स्तर पर जिस प्रकार के प्रयोग अपने नाटकों में किए उनके कारण उस काल में कुछ विद्वानों को वे रंगमंच के लिए कठिन प्रतीत हुए। परंतु आधुनिक रंगमंच के विकास के बाद ही उनकी रंगमंचीय संभवानाएँ स्वतः उजागर हो गईं। इस दृष्टि से प्रसाद को एक प्रयोगधर्मी नाटककार कहा जा सकता है।

6.6 शब्द संपदा

1. अंतर्बाह्य = आंतरिक तथा बाह्य
2. आत्मवान = जो आत्मा को छूती हो
3. क्षीण कलेवर = जो टूटने के कगार पर हो
4. तात्विक समीक्षा = तत्वों के आधार पर वर्णन करना
5. प्राणवान = जिसमें प्राण हो, जीने की ऊर्जा हो
6. मादक = नशीला, उन्माद उत्पन्न करना
7. मूलोच्छेद = पूर्णतः समाप्त करना
8. म्लेच्छ = हूण, बाह्य आक्रमणकारी, विदेशी आक्रमणकारी

6.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. स्कंदगुप्त में प्रमुख नारी पात्रों पर चर्चा कीजिए।
2. भाषा शिल्प की दृष्टि से स्कंदगुप्त की प्रमुख विशेषताएँ रेखांकित कीजिए।
3. स्कंदगुप्त के उद्देश्य को अपने शब्दों में स्पष्ट करें।

4. स्कंदगुप्त के कथानक अपने शब्दों में लिखिए।
5. स्कंदगुप्त का चरित्र चित्रण कीजिए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. स्कंदगुप्त कौन था? उसका जीवन कैसे बीता।
2. क्या स्कंदगुप्त को विक्रमादित्य कहा गया है? तर्कसंगत प्रस्तुत कीजिए
3. अनंतदेवी द्वारा किए गए षड्यंत्रों को अपने शब्दों में लिखें।
4. विजया का चरित्र चित्रण कीजिए।
5. देवसेना के चरित्र पर प्रकाश डालिए।
6. पर्णदत्त के बारे में लिखिए।
7. मातृगुप्त की चारित्रिक विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।
8. नाटक के तृतीय अंक की कथा को अपने शब्दों में लिखिए।
9. स्कंदगुप्त नाटक का अंत कैसे होता है?

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. मातृगुप्त कौन हैं? ( )
   (अ) नामदास (आ) अनामदास (इ) कालिदास (ई) बावनदास
2. मुद्गल कौन हैं? ( )
   (अ) डराने वाला (आ) हँसाने वाला (इ) रुलाने वाला (ई) पीटने वाला
3. स्कंदगुप्त कौन हैं? ( )
   (अ) देवकी का पुत्र (आ) कुमारगुप्त का पुत्र (इ) दोनों (ई) इनमें से कोई नहीं
4. पुरगुप्त कौन हैं? ( )
   (अ) बालक (आ) युवक (इ) वृद्ध (ई) अबोध
5. कमला कौन हैं? ( )
   (अ) देवसेना की माँ (आ) भटार्क की माँ (इ) स्कंदगुप्त की माँ (ई) कोई नहीं

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. बंधुवर्मा .... राज्य के राजा थे।
2. अनंतदेवी का पुत्र ....था।
3. कुमारगुप्त को ....ने मारा।
4. अनंतदेवी ने ....को बंदी बनाया था।
5. विजया ....को मारने के लिए श्मशान में ले जाती है।

III. सुमेल कीजिए -

1. प्रपंचबुद्धि	(अ) कवि
2. मुद्गल	(आ) रामा का पति
3. मातृगुप्त	(इ) पर्णदत्त का पुत्र
4. कमला	(ई) विदूषक
5. चक्रपालित	(उ) उग्रतारा
6. शर्वनाग	(ऊ) भटार्क की माँ

6.8 पठनीय पुस्तकें

1. स्कंदगुप्त : जयशंकर प्रसाद
2. हिंदी नाटक : बच्चन सिंह
3. नाट्य-विमर्श : (सं) रमेश गौतम
4. हिंदी साहित्य एवं संवेदना का विकास : रामस्वरूप चतुर्वेदी

मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी Estd. 1998 MAULANA AZAD NATIONAL URDU UNIVERSITY

इकाई 7 : धर्मवीर भारती : एक परिचय

रूपरेखा

7.1 प्रस्तावना
7.2 उद्देश्य
7.3 मूल पाठ : धर्मवीर भारती : एक परिचय
7.3.1 धर्मवीर भारती : प्रारंभिक जीवन
7.3.2 आजीविका, स्वभाव और साहित्य साधना
7.3.3 धर्मवीर भारती : बहुमुखी व्यक्तित्व
7.4 पाठ सार
7.5 पाठ की उपलब्धियाँ
7.6 शब्द संपदा
7.7 परीक्षार्थ प्रश्न
7.8 पठनीय पुस्तकें

7.1 प्रस्तावना

प्रिय छात्रो! धर्मवीर भारती प्रतिभा संपन्न बहुमुखी साहित्यकार थे। वे 'नई कविता' के प्रतिनिधि कवि और प्रयोगवादी उपन्यासकार के रूप में अधिक चर्चित रहे। इस इकाई में उनके व्यक्तित्व और कृतित्व की जानकारी प्राप्त करेंगे।

7.2 उद्देश्य

प्रिय छात्रो! इस इकाई को पढ़ने के बाद आप -

- धर्मवीर भारती के जीवन और व्यक्तित्व से परिचित हो सकेंगे।
- धर्मवीर भारती के कृतित्व के विविध आयामों से अवगत हो सकेंगे।
- धर्मवीर भारती के साहित्य की भाव-भूमि को समझ सकेंगे।
- आधुनिक हिंदी साहित्य में धर्मवीर भारती के महत्व से परिचित हो सकेंगे।

7.3 मूल पाठ : धर्मवीर भारती : एक परिचय

7.3.1 धर्मवीर भारती : प्रारंभिक जीवन

धर्मवीर भारती की प्रतिभा बहुमुखी रही। वे 'नई कविता' के प्रतिनिधि कवि और प्रयोगवादी उपन्यासकार के रूप में अधिक चर्चित रहे। साधारण पाठकों में वे धर्मयुग के पूर्व संपादक के रूप में अधिक विख्यात हैं, तो आधुनिक राष्ट्रीय समस्याओं के चिंतनशील पाठकों को उनके निबंध, यात्रा-वृतांत और रिपोर्ताज अधिक प्रभावित करते हैं।

डॉ. धर्मवीर भारती का जन्म 25 दिसंबर, सन् 1926 को प्रयाग के अतरसूइया मुहल्ले में हुआ था। इनके पिता का नाम चिरंजीवी लाल वर्मा तथा माता का नाम चंदा देवी था। इनके पिता का संबंध शाहजहाँपुर के निकट खुदाबक्स कस्बे के पुराने जमींदार परिवार के साथ था। इनके पिता 5 भाइयों में से एक थे। उन्होंने जमींदारी रहन-सहन छोड़कर रुड़की में ओवरसीयरी

की शिक्षा प्राप्त की। उन्होंने कुछ दिनों तक बर्मा (म्यानमार) में सरकारी नौकरी की फिर बाद में ठेकेदारी की। वापस उत्तर प्रदेश लौटकर वे पहले कुछ समय तक मिर्जापुर में रहे और फिर अस्थायी रूप से इलाहाबाद में बस गए। भारती जी ने अपने बचपन के 1-2 वर्ष पिता के साथ आजमगढ़ तथा भऊनाथ भंजन में भी बिताया था। इनकी प्रारम्भिक शिक्षा घर से ही प्रारंभ हुई और बाद में इलाहाबाद के डी.ए.वी. हाईस्कूल में चौथी कक्षा में इनका दाखिला करवाया गया। जब ये 8 वीं कक्षा में थे तभी इनके पिता जी की मृत्यु हो गई। इनके मामा जी श्री अभय कुमार जौहरी इनके अभिभावक बने और इन्हीं के प्रोत्साहन के सहारे अनेक कठिनाइयों के बाद भी धर्मवीर भारती ने डॉ. धीरेंद्र वर्मा के निर्देशन में 'सिद्ध साहित्य' पर शोध कार्य किया तथा पीएच.डी. की उपाधि प्राप्त की। भारती जी में राष्ट्रीयता की भावना बचपन से ही थी। इसी कारण से उन्होंने स्कूल में ही 'भारतीय' अपना उपनाम रख ल था। बी.ए. तक आते-आते इस उपनाम का अंतिम अक्षर लुप्त हो गया और वे अपना उपनाम केवल 'भारती' लिखने लगे। 'भारती' जी का प्रथम विवाह श्रीमती कांता कौल के साथ हुआ था, जो कि असफल सिद्ध हुआ। बाद में दूसरा विवाह श्रीमती पुष्पा शर्मा के साथ हुआ जो उनके सुखी एवं स्थायी जीवन का दृढ़ आधार बनी। उनके तीन संतानें हैं - पारमिता, किंशुक तथा प्रज्ञा। भारती जी की मृत्यु 4 सितंबर, 1979 में हुई।

बोध प्रश्न

- भारती जी की माता का नाम क्या था?
- भारती जी के पिता का नाम क्या था?
- भारती जी का जन्म कब हुआ?
- भारती जी की मृत्यु कब हुई?

7.3.2 आजीविका, स्वभाव और साहित्य साधना

पिता की मृत्यु के बाद अत्यधिक गरीबी के कारण भारती जी को कम उम्र में ही आत्मनिर्भर होना पड़ा। बी.ए. की पढ़ाई के समय ही वे ट्यूशन करके खर्च चलाते थे। इन्होंने एम. ए. की पढ़ाई का खर्च 'अभ्युदय' (स. श्री पदमकांत मालवीय) पत्र में पार्ट-टाइम काम कर निकाला। सन् 1948 में ये 'संगम' (स. पंडित इलाचंद्र जोशी) में सहकारी संपादक नियुक्त हुए और दो वर्ष तक इस पद पर रहे। तदुपरांत एक वर्ष तक 'हिन्दुस्तानी एकेडेमी' में उप सचिव का कार्य किया। उसके बाद ये प्रयाग विश्वविद्यालय के हिंदी विभाग में प्राध्यापक के पद पर नियुक्त हुए और सन् 1960 तक वे वहीं अध्यापन करते रहे। विश्वविद्यालय में अध्यापन के दौरान उन्होंने 'हिंदी कोश' के संपादन में सहयोग दिया। उन्होंने 'निकष' तथा 'आलोचना' पत्रिकाओं का संपादन किया। 'नई कविता' पत्रिका की स्थापना एवं संपादन में भी भारती जी सक्रिय रहें। 1960 में वे साप्ताहिक पत्रिका 'धर्मयुग' के संपादक पद पर नियुक्त होकर मुंबई आ गए जहाँ वे 27 वर्ष तक प्रधान संपादक के पद पर बने रहें। भारती जी दूसरे सप्तक के कवि हैं। कवि होने के साथ-साथ प्रसिद्ध नाटककार एवं कथाकार भी हैं। कनुप्रिया, ठंडा लोहा, सातगीत वर्ष इनकी प्रसिद्ध काव्य कृतियाँ हैं। गुनाहों के देवता, सूरज का सातवाँ घोड़ा प्रसिद्ध उपन्यास तथा

अंधायुग प्रसिद्ध नाट्य कृति है। इसके अतिरिक्त ठेले पर हिमालय, बंद गली का आखिरी मकान, मानव मूल्य और साहित्य भारती जी की अन्य कृतियाँ हैं।

भारती जी बहुत ही सरल स्वभाव के व्यक्ति थे। उनके जीवन में किसी प्रकार का कोई आडंबर देखने को नहीं मिलता है। उनका घर सुरुचिपूर्ण पुस्तकों के संग्रह और कला-वस्तुओं के संग्रह के लिए भी विख्यात था। अंग्रेजी और विदेशी साहित्य के वे अध्येता थे, पर उनकी अपनी रहन-सहन ठेठ हिन्दुस्तानी था। एक साक्षात्कार में उन्होंने अपनी पसंदीदा अभिनेत्रियों के नाम वहीदा रहमान, जय बच्चन, माधुरी दीक्षित बताया था। उन्होंने यह भी बताया था कि उनके जीवन में सबसे प्रिय व्यक्ति उनकी पत्नी पुष्पा जी रहीं। फुरसत के समय उन्हें अपनी नाती के साथ खेलना पसंद था। भारती जी स्वभाव से बड़े संकोची एवं कल्पना प्रिय थे। भारती जी को खूब पढ़ना, खूब घूमना और फूलों का भी बेहद शौक था।

बोध प्रश्न

- धर्मवीर भारती किस पत्रिका के संपादक रहे?
- धर्मवीर भारती किस सप्तक के कवि रहे?
- विश्वविद्यालय में अध्ययन के दौरान उन्होंने किस कार्य में अपना सहयोग प्रदान किया?
- भारती जी को फुरसत के पल में क्या करना पसंद था?

7.3.3 धर्मवीर भारती : बहुमुखी व्यक्तित्व

किसी भी साहित्यकार की रचनाओं की पृष्ठभूमि में उसका व्यक्तित्व सक्रिय रूप से विद्यमान रहता है। किसी रचना में यह परोक्ष रूप में रहता है तो किसी में परोक्ष रूप से मुखरित हो उठता है। इसी कारण से भारती जी को साहित्यकार के रूप में समझने के लिए, उनकी रचनाओं को समझने के लिए सबसे पहले उनके व्यक्तित्व को प्रभावित करने वाले तत्वों को समझ लेना आवश्यक है।

भारतीय राजनीति और धर्मवीर भारती

भारती जी ने अपने विद्यार्थी जीवन में 1942 के आंदोलन में भाग लिया था जिसे उन्होंने 'नायक हीन क्रांति' का नाम दिया था। इस आंदोलन के विषय में उन्होंने लिखा है, 'वह नायक हीन क्रांति' थी जिसका दायित्व तक लेने को तैयार नहीं होता था- वह तो साधारण जन का अपना विक्षोभ था, अपनी नियति की समस्त प्रक्रिया को, सारी बागडोर को आगे बढ़कर उसने अपने हाथों में ले लिया था और वह लघु क्रांति चाहे राजनीतिक स्तर पर कुचल दी गई थी- हमारी चेतना और हमारे भाव बोध में पलती रही'। भारती जी की दृष्टि में आर्थिक आत्मनिर्भरता के बिना राजनीतिक स्वतंत्रता की बात एक भ्रम है। भारती जी के अनुसार, 'सामान्य जन के स्वतंत्र होने का यह अर्थ नहीं है कि उसे भोजन और कपड़े मिल जाएं, उनके लिए स्वतंत्र होने का अर्थ है-उसके मानस में जो अंधविश्वास, कुंठाएँ, अविवेक, मूर्च्छा, मृत परंपराएँ आदि उनसे मुक्ति'।

हिंदी पत्रकारिता और धर्मवीर भारती

भारती जी के जीवन का एक महत्वपूर्ण पक्ष है। हिंदी पत्रकारिता में उनका योगदान। उनके जीवन के इस पक्ष पर दृष्टि डाले बिना उनके जीवन का अध्ययन अधूरा है। वैसे तो

विद्यार्थी जीवन में ही वे पत्रकारिता के साथ जुड़ गए थे लेकिन 1945-1947 तक वे 'अभ्युदय' के साथ जुड़े रहे और यहीं उन्हें सही अर्थों में पत्रकारिता का प्रशिक्षण प्राप्त हुआ। 1948-1950 तक वे 'संगम' पत्रिका के सह संपादक के रूप में काम किया। इस पत्रिका के संपादक इलाचंद्र जोशी थे। 'संगम' में प्रकाशित भारती जी के लेखों ने तब ही इस बात का संकेत दे दिया था कि उनकी कलम दैनिक समाचारों के नीरस पत्रकारिता के लिए नहीं बनी है। 1950-1960 के बीच इलाहबाद विश्वविद्यालय के हिंदी प्राध्यापक के रूप में काम करते हुए भारती जी ने 'नई कविता', 'निकष' और 'आलोचना' नामक पत्रिकाओं से संपादक या परामर्शदाता के रूप में जुड़े रहे। सन् 1960 में वे 'धर्मयुग' के संपादक के रूप में नियुक्त होकर वे बंबई आ गए। भारती जी ने हिंदी पत्रकारिता को शुद्ध रचनात्मक, उद्देश्य पूर्ण स्वरूप ही नहीं प्रदान किया, बल्कि राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर सम्मान दिलाने के लिए अपने को एक कर्मयोगी की तरह समर्पित भी कर दिया।

स्वच्छंदतावाद और धर्मवीर भारती

प्रेम और काम भावना भारती जी के जीवन और साहित्य का एक महत्वपूर्ण पहलू है। वे पले तो थे आर्य समाजी परिवार में थे पर उनका मन जब वे विद्यार्थी थे तब से ही वृंदावनी रस में रंग गया था। भारती जी का स्वच्छंदतावादी मन छोटी आयु से ही जलपरी के आकर्षण में बँध गया था। उन्होंने अक्सर लिखा है, 'वह अक्सर किसी निर्जन गुलाबी द्वीप, शिलाओं से बँधी किसी बंदिनी उदासिनी जलपरी की कल्पना किया करता था, जिसे वह तलवारों से ज़ंजीरें काटकर आजाद कर देगा, फिर फैली-फैली मखमली बालू पर दोनों रंग बिरंगी सीपियों और मूँगे-मोतियों से खेलेंगे ज़िंदगी भर, साथ-साथ ज़िंदगी भर'। उनकी इस भावना का प्रत्यक्ष प्रभाव उनकी कविताओं में देखा जा सकता है।

मार्क्सवादी चिंतन और धर्मवीर भारती

मानव मूल्यों की खोज में भारती जी ने कार्ल मार्क्स के विचारों का भी विवेचन किया है। भारती जी के अनुसार 18 वीं और 19 वीं शताब्दी की चिंतन के फलस्वरूप जिस मर्यादा ने साहित्य में अपने को प्रमुख रूप में विकसित किया, वह थी सामाजिक प्रगति की मर्यादा। भारती जी मार्क्सवादी चिंतन का विरोध करते हुए कहते है कि प्रगति की कसौटी समाज नहीं है, 'प्रगति की कसौटी मनुष्य है। मनुष्य अपनी आंतरिक मर्यादाओं सहित और बाह्य परिस्थितियाँ उसका आंतरिक विकास करें ही, यह आवश्यक नहीं। आंतरिक विकास के लिए आंतरिक प्रेरणा होनी चाहिए'। भारती जी के अनुसार मार्क्सवादी चिंतन व्यक्ति-स्वातंत्र्य का विरोधी चिंतन है, अतः मानव-मूल्य विरोधी है। भारती जी ने रचनाकारों से ऐसी रचनाएँ देने को कहा है जो जीवन में साहस पैदा कर सकें, आस्था को दृढ़ कर सकें। भारती जी के अनुसार साहित्यकार का यही नया दायित्व है।

तो, हमने यहाँ भारती जी की संक्षिप्त जीवन दृष्टि की जानकारी को प्राप्त किया। इस अध्ययन के आधार पर यह कहा जा सकता है कि भारती जी पर किसी एक विचारधारा का प्रभाव नहीं पड़ा है, जहाँ भी उन्हें जो कुछ सकारात्मक मिला है, उसे उन्होंने अपना लिया है।

बोध प्रश्न

- भारती जी ने अपने छात्र जीवन में जिस आंदोलन में भाग लिया था उसका नाम उन्होंने क्या रखा था?
- भारती जी ने किन-किन पत्रिकाओं का संपादन किया था?

नई कविता : प्रतिनिधि कवि धर्मवीर भारती

भारती जी 'नई कविता' के कवि हैं। उन्होंने भी अपनी रचनाओं में मनुष्य के वर्तमान जीवन को चित्रण को महत्व देने के लिए व्यक्ति-स्वातंत्र्य, उदार प्रगतिशील भावना, विवेक और दायित्व जैसे मानव मूल्यों पर विशेष बल दिया है। अतः देखना यह है कि उनके काव्य-चिंतन का स्वरूप क्या है? यह किन रूपों में मानवीय सम्बन्धों की व्याख्या करता है? उनकी रचनाओं में जीवन को ग्रहण करने की दृष्टि क्या है? वह कितनी सार्वभौम है, कितनी व्यापक है और कितनी कवि के विश्वासों से ओतप्रोत है क्योंकि कविता नई है या पुरानी, उसके परखने का सर्वमान्य निकष उसमें ग्रहीत मानव-जीवन या भारती जी को शब्दों में 'मानव-मूल्य' ही होगा। चूँकि भारती जी 'नई कविता' के कवि हैं, अतः उनके काव्य को 'नई कविता' की सामान्य प्रवृत्तियाँ के आधार पर परखना उचित होगा।

(अ) आधुनिकता-बोध

भारती जी ने आधुनिकता को संकट-बोध कहा है। भारती जी के अनुसार आधुनिकता और वर्तमान जीवन का संकट-बोध परंपरा वलम्बित है। आज का संकट इतना व्यापक है, धर्म, दर्शन, ज्ञान-विज्ञान, कला, भाषा, सभी क्षेत्रों में इतना गहरा है, जितना किसी युग के अनुभव में कभी नहीं रहा। आधुनिकता के कारण हम ज्यों-ज्यों इस संकट के प्रति जागरूक होते जा रहे हैं, त्यों-त्यों मानव-नियति के प्रति हमारी चिन्ता गहरी होती जा रही है। आज व्यापक सांस्कृतिक संकट की इतनी गहन चेतना, विघटित मानव मूल्यों की तीव्रतम अनुभूति इसी आधुनिकता का परिणाम है। भारती जी के अनुसार इस संकट-बोध के तीन कारण है। पहला विज्ञान का उदय, जिसने यंत्रों और मशीनों का निर्माण करके मनुष्य को यंत्रवत बना दिया है। दूसरा कारण जनसंख्या की वृद्धि जिसने समाज को भीड़ बना दिया और उसमें मनुष्य खो गया। तीसरी कारण औद्योगिक पूँजीवाद और सरकारी नियंत्रण है जिसने साहित्यकार को अपनी सुविधाओं के अनुसार एक बना-बनाया दर्शन निर्धारित कर दिया और साहित्यकार को उसी के अनुसार चिंतन करने और अभिव्यक्ति देने को मजबूर कर दिया।

भारती जी की 'कनुप्रिया' में यह आधुनिकता बोध राधा के व्यक्तित्व में रागात्मकता के माध्यम से व्यक्त हुआ है। 'कनुप्रिया' की राधा अपने प्रेम के समक्ष कृष्ण द्वारा किए गए सारे ऐतिहासिक कार्यों और घटनाओं को झूठा सिद्ध करती है क्योंकि वे विवेकपूर्ण निर्णय या अपनी चेतना से उत्पन्न निर्णय नहीं थे। युद्ध में कृष्ण का सिर्फ यह कहकर युधिष्ठिर का पक्ष लेना विवेकपूर्ण निर्णय नहीं था कि उनके सिरहाने दुर्योधन और पैताने अर्जुन थे। युद्ध की सामूहिक अनुभूति से वह अधिक विश्वसनीय और गरिमामयी है। इसीलिए राधा अपने तर्कों से कृष्ण के आदर्शवादी व्यक्तित्व को पराजित कर देती है।

(आ) अस्तित्ववादी बोध

अस्तित्ववाद से हिंदी का परिचय स्वतंत्रता के बाद विशेषतः 'नई कविता' के उदय के साथ हुआ। द्वितीय विश्वयुद्ध की समाप्ति पर अस्तित्ववाद फ्रांस को केंद्र बनाकर एक नए वैचारिक आंदोलन के रूप में यूरोपीय मानस को प्रभावित कर रहा था और यह मात्र नए का आकर्षण ही था कि अस्तित्ववाद हिंदी में गृहीत हुआ। हिंदी की 'नई कविता' प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप में अस्तित्ववादी चिंतन से प्रभावित लगती है। 'नई कविता' का समष्टि की तुलना में व्यक्ति को अतिशय महत्व देना उसका इसी प्रभाव को प्रकट करता है। भारती जी 'नई कविता' के उन कवियों में से हैं जिन्होंने अस्तित्ववादी दर्शन से प्रभावित होकर एक स्वस्थ दृष्टिकोण लेकर काव्य की रचना की हैं। यही कारण है कि उनका 'अंधा युग' और 'कनुप्रिया' जैसी रचनाएँ कालजयी बन सकी। भारती जी ने अस्तित्ववादी चिंतन का काफी गहराई से अध्ययन किया है, जैसा कि उन्होंने स्वयं 'मानव मूल्य और साहित्य' में लिखा है। भारती जी सार्त्र के विचारों से विशेष रूप से प्रभावित हैं। वे मानते हैं कि साहित्य की मर्यादा प्रगति है और प्रगति की मर्यादा विवेकपूर्ण आचरण में है। आचरण की प्राथमिक शर्त है स्वतंत्र विवेकपूर्ण मानवीय संकल्प और इस मानवीय संकल्प या निर्णय का आधार है व्यक्ति स्वातंत्र्य और दायित्व या स्वधर्म का भाव।

अस्तित्ववाद का सबसे महत्वपूर्ण प्रत्यय व्यक्ति-स्वातंत्र्य पर बल देना है, जिसके न रहने से मनुष्य, जिसे अपने अस्तित्व की चेतना है, विवशता और लाचारी महसूस करता है। इस संदर्भ में भारती जी की 'बाणभट्ट' और 'बृहन्नला" कविताएँ देखी जा सकती हैं। व्यक्ति-स्वातंत्र्य के अभाव में बाणभट्ट की सारी तेजस्विता राजा हर्षवर्द्धन के हाथों बिकी हुई है और अर्जुन बृहन्नला बनकर राजा विराट के यहाँ भयाक्रांत जीवन बिता रहा है।

(इ) वैयक्तिकता

हिंदी की 'नई कविता' में वैयक्तिकता का विशेष महत्व है। 'नई कविता' में स्वातंत्र्य, विवेक और दायित्व जैसे मानव-मूल्यों की खोज व्यक्ति क ध्यान में रखकर किया गया है। भारती जी 'मानव मूल्य और साहित्य' में 'नई मर्यादा का उदय' लेख में वैयक्तिक स्वातंत्र्य के संबंध में विस्तार से विचार किया है। भारती जी ने दायित्व की भावना को गीता में बताए हुए 'स्वधर्म' के समान कहा है। अपने 'स्व' के अनुसार धर्म या दायित्व की स्वीकृति हर व्यक्ति को उसकी वैयक्तिक सार्थकता प्रदान करती है। व्यक्ति स्वातंत्र्य का इतना तीखा बोध 'नई कविता' से पहले हिंदी कविता में पहले कभी नहीं आया। भारती जी का 'प्रमुथ्य' धरती का अंधकार नष्ट करने के लिए स्वर्ग से जो अग्नि चुराता है, वह उसका अपना निर्णय है। इसके लिए वह हर प्रकार के कष्ट सहने को तैयार है।

'जिनमें नहीं है साहस प्रमुथ्य बनने का
उनको बिना पीड़ा के मिल जाने वाली अग्नि
माँजती नहीं है और पशु बनाती है'।

इस संदर्भ में यह कहना भी उचित होगा कि कवि में मानव मूल्यों की रक्षा का विवेक और साहस जिसे नए कवियों ने वैयक्तिकता माना, समाज और जन शक्ति से जुड़ने पर ही पैदा होता

है। भारती जी ने व्यक्ति-स्वातंत्र्य के लिए विवेकपूर्ण दायित्व के निर्वाह के लिए आंतरिकता की खोज की, परंतु रास्ता नितांत वैयक्तिक होने के कारण वह खोज निराशा में बदल गई।

(ई) अनुभूति की सच्चाई एवं बुद्धिमूलक यथार्थवाद

उक्त दोनों तत्व 'नई कविता' के मुख्य प्रतिमान है। 'नई कविता' में अनुभूति की सच्चाई को एक प्रतिमान के रूप में स्वीकार किया गया है। अनुभूति की सच्चाई का संबंध चाहे एक क्षण से हो या समूचे काल से, किसी सामान्य व्यक्ति का हो या किसी विशेष व्यक्ति का, आशा से हो या निराशा से, वह सब कविता के लिए मूल्यवान है। ये अनुभूतियाँ अपनी सच्चाई में कविता के लिए और कविता के लिए अमूल्य हैं। भारती जी की कविताओं में अनुभूति छायावादी कविता की तरह दूरस्थ, वायवीय और परोक्ष रूप से नहीं हुई है। भारती जी के प्रणय गीतों में अनुभूति का सीधा साक्षात्कार होता है। उन्हें अगर प्रिय के चरण अच्छे लगते हैं तो फिर वे उस पर एक से बढ़कर एक उपमानों की झड़ी लगा देते हैं। जैसे-

'ये शरद के चाँद से उजले धुले से पाँव
मेरी गोद में देवताओं के नयन के अश्रु से धोई हुई
चुंबनों की पाँखुरी के दो जवान गुलाब
मेरी गोदी में!
सात रंगों की महावर से रचे माहताब
मेरी गोदी में!'

(उ) मानव मुक्ति की भावना

'नई कविता' ने आधुनिकता के प्रत्यय के भीतर जिस नए मनुष्य की प्रतिष्ठा की, पुरानी रूढ़ियों, इतिहासों से मुक्ति दिलाने और उसके खोए हुए मानवीय गौरव और आन्तरिक्ता को पुनः प्रतिष्ठित करने का प्रयत्न किया है, वह जीवन के महत्वपूर्ण और सार्थक रूपों की आत्म-चेतना है। भारती जी मानव मुक्ति के पक्षधर हैं। उन्होंने मूल्य-विघटन की व्यापक चर्चा के बाद मानव-मुक्ति के उद्देश्य से व्यक्ति-स्वातंत्र्य, विवेक और दायित्व जैसे सांस्कृतिक मूल्यों की प्रतिष्ठा की है। भारती जी की मान्यता रही कि अगर इन मूल्यों के अनुसार आचरण किया जाए तो समस्त मानव नियति को विघटनकारी तत्वों से मुक्ति दिलाई जा सकती है, मनुष्य की नष्ट हुई आंतरिकता पुनः प्रतिष्ठित हो सकती है। भारती जी लिखते हैं-

'इसलिए तलवार टूटी, अश्व घायल
कोहरे डूबी दिशाएँ,
कौन दुश्मन, कौन अदने लोग
सब कुछ धुंध-धूमिल
किन्तु कायम युद्ध का संकल्प है
अपना अभी भी
क्योंकि है सपना अभी भी'।

प्रश्न यह भी उठता है कि यह कौन सा सपना है जिसके लिए कवि युद्ध का संकल्प ले रहा है। इस युद्ध के संकल्प के विषय में भारती जी ने स्वयं ही कहा है, 'यह युद्ध मानव-मात्र में दिनों-दिन कम होती जा रही मानवीयता को बचाने का युद्ध'।

संक्षेप में, हम यह कह सकते हैं कि भारती जी 'नई कविता' के कवि हैं और उनकी रचनाओं में व्यक्ति को केंद्र बनाकर विकसित होनेवाले स्वातंत्र्य, विवेक और दायित्व संबंधी मानव मूल्य उपलब्ध होते हैं, जो कि 'नई कविता' के अनुरूप है। किन्तु मूल दृष्टि रोमानी होने के कारण भारती जी की रचनाओं में विचारों का अंतर्द्वंद्व प्रायः उभर नहीं पाया है, परंतु अनुभूति की तरलता अवश्य मौजूद है। भारती जी निषेधवादी नहीं, आस्थावादी कवि हैं। उनकी रचनाओं में उदार मानवतावादी दृष्टि दिखाई देती है, जो सामान्य जन को अभावों से मुक्ति दिलाने की बात करती है। भारती जी के काव्य में आधुनिकता का स्वर भी मिलता है।

बोध प्रश्न

- हिंदी की 'नई कविता' में किसका विशेष महत्व है?
- भारती जी कैसे कवि थे?
- भारती जी की 'कनुप्रिया' में आधुनिकता बोध किसके माध्यम से व्यक्त हुई है?

7.4 पाठ सार

धर्मवीर भारती की एक बहुमुखी प्रतिभाशाली साहित्यकार थे। वे 'नई कविता' के प्रतिनिधि कवि और प्रयोगवादी उपन्यासकार के रूप में अधिक चर्चित रहें हैं। साधारण पाठकों में वे धर्मयुग के पूर्व संपादक के रूप में अधिक विख्यात हैं, तो आधुनिक राष्ट्रीय समस्याओं के चिंतनशील पाठकों को उनके निबंध, यात्रा-वृतांत और रिपोर्ताज अधिक प्रभावित करते हैं। डॉ. धर्मवीर भारती का जन्म 25 दिसंबर, 1926 को प्रयाग के अतरसूइया मुहल्ले में हुआ था। इनके पिता का नाम चिरंजीवी लाल वर्मा तथा माता का नाम चन्दा देवी था। इनके पिता का संबंध शाहजहाँपुर के निकट खुदाबक्स कस्बे के पुराने जमींदार परिवार के साथ था। इनके पिता 5 भाइयों में से एक थे। उन्होंने जमींदारी रहन-सहन छोड़कर रुड़की में ओवरसीयरी की शिक्षा प्राप्त की। उन्होंने कुछ दिनों तक बर्मा (म्याँमार) में सरकारी नौकरी की फिर बाद में ठेकेदारी की। वापस उत्तर प्रदेश लौटकर वे पहले कुछ समय तक मिर्जापुर में रहे और फिर अस्थायी रूप से इलाहाबाद में बस गए। भारती जी ने अपने बचपन के 1-2 वर्ष पिता के साथ आजमगढ़ तथा मऊनाथ भंजन में भी बिताया था। इनकी प्रारंभिक शिक्षा घर से ही प्रारंभ हुई और बाद में इलाहाबाद के डी ए वी हाईस्कूल में चौथी कक्षा में इनका दाखिला करवाया गया। जब ये 8 वीं कक्षा में थे तभी इनके पिता जी की मृत्यु हो गई। इनके मामा जी श्री अभय कुमार जौहरी इनके अभिभावक बनें और इन्हीं के प्रोत्साहन के सहारे अनेक कठिनाइयों के बाद भी धर्मवीर भारती ने डॉ. धीरेंद्र वर्मा के निर्देशन में 'सिद्ध साहित्य' पर शोध कार्य किया तथा पीएच.डी. की उपाधि प्राप्त की। 'भारती' जी का प्रथम विवाह श्रीमती कांता कौल के साथ हुआ था, जो कि असफल सिद्ध हुआ। बाद में दूसरा विवाह श्रीमती पुष्पा शर्मा के साथ हुआ जो उनके सुखी एवं स्थायी जीवन का दृढ़ आधार बनी। उनके तीन संतानें हैं - पारमिता, किंशुक तथा प्रज्ञा। भारती जी की मृत्यु 4 सितंबर, 1979 में हुई। पिता की मृत्यु के बाद अत्यधिक गरीबी के कारण भारती जी को

कम उम्र में ही आत्मनिर्भर होना पड़ा। बी.ए. की पढ़ाई के समय ही वे ट्यूशनें करके खर्च चलाते थे। इन्होंने एम.ए. की पढ़ाई का खर्च 'अभ्युदय' (स. श्री पदमकांत मालवीय) पत्र में पार्ट-टाइम काम कर निकाला। सन् 1948 में ये 'संगम' (स. पंडित इलाचंद्र जोशी) में सहकारी संपादक नियुक्त हुए और दो वर्ष तक इस पद पर रहे। तदुपरांत एक वर्ष तक 'हिंदुस्तानी एकेडेमी' में उप सचिव का कार्य किया। उसके बाद ये प्रयाग विश्वविद्यालय के हिंदी विभाग में प्राध्यापक के पद पर नियुक्त हुए और सन् 1960 तक वे वहीं अध्यापन करते रहे। विश्वविद्यालय में अध्यापन के दौरान उन्होंने 'हिंदी कोश' के संपादन में सहयोग दिया। उन्होंने 'निकष' तथा 'आलोचना' पत्रिकाओं का संपादन किया। 'नई कविता' पत्रिका की स्थापना एवं संपादन में भी भारती जी सक्रिय रहें। 1960 में वे साप्ताहिक पत्रिका 'धर्मयुग' के संपादक पद पर नियुक्त होकर मुंबई आ गए जहाँ वे 27 वर्ष तक प्रधान संपादक के पद पर बने रहें। भारती जी दूसरे सप्तक के कवि हैं। कवि होने के साथ-साथ प्रसिद्ध नाटककार एवं कथाकार भी हैं। कनुप्रिया, ठंडा लोहा, सातगीत वर्ष इनकी प्रसिद्ध काव्य कृतियाँ हैं, गुनाहों के देवता, सूरज का सातवाँ घोड़ा प्रसिद्ध उपन्यास तथा अंधायुग प्रसिद्ध नाट्य कृति है। इसके अतिरिक्त ठेले पर हिमालय, बंद गली का आखिरी मकान, मानव मूल्य और साहित्य भारती जी की अन्य कृतियाँ हैं।

7.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं -

1. धर्मवीर भारती का रचनाकाल मुख्यतः द्वितीय विश्वयुद्ध के समय से आरंभ होता है। इसलिए उनके साहित्य में प्रयोगशीलता और अस्तित्व के प्रश्न दिखाई देते हैं।
2. धर्मवीर भारती की ख्याति कवि के अतिरिक्त उपन्यासकार, काव्य-नाटककार, पत्रकार और रिपोर्ताज लेखक के रूप में भी है।
3. काव्य के क्षेत्र में धर्मवीर भारती जहाँ 'तार सप्तक' के एक महत्वपूर्ण रचनाकार के रूप में जाने जाते हैं वहीं काव्य-नाटक के क्षेत्र में 'अंधा युग' उनकी कालजयी कृति है।
4. व्यक्ति स्वातंत्र्य और रोमानी प्रेम के स्वर धर्मवीर भारती के साहित्य में विशेष रूप में मुखर है। इस दृष्टि से उनका प्रसिद्ध काव्य 'कानुप्रिया' और उपन्यास 'गुनाहों के देवता' उनके रोमानी यथार्थवाद की परिचायक कृतियाँ हैं।

7.6 शब्द संपदा

1. आफताब = सूरज
2. ठेठ = शुद्ध
3. पैताने = पाँव के नीचे
4. विवेकपूर्ण = बुद्धि के साथ

7.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. धर्मवीर भारती के जीवन पर प्रकाश डालिए।
2. धर्मवीर भारती की जीवन दृष्टि पर प्रकाश डालिए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. आधुनिकता बोध के संबंध में भारती जी के क्या विचार थे?
2. मार्क्सवाद को लेकर भारती जी क्या सोचते थे?

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. भारती जी की पत्नी का नाम क्या था? ( )
   (अ) पुष्पा भारती (आ) सीता भारती (इ) रश्मि भारती (ई) लक्ष्मी भारती
2. धर्मवीर भारती जी का जन्म कब हुआ था? ( )
   (अ) 1927 (आ) 1926 (इ) 1925 (ई) 1930
3. 'अभ्युदय' में भारती जी कितने साल काम किया? ( )
   (अ) 7 साल (आ) 6 साल (इ) 2 साल (ई) 8 साल

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. धर्मवीर भारती की माता का नाम .... था।
2. धर्मवीर भारती के पिता का नाम .... था।
3. धर्मवीर भारती की मृत्यु .... में हुई।

III. सुमेल कीजिए -

1. धर्मयुग	(अ) राधा
2. संगम	(आ) बुद्धि का प्रतीक
3. अंधा युग	(इ) 1948-1950
4. कनुप्रिया	(ई) धर्मवीर भारती

7.8 पठनीय पुस्तकें

1. धर्मवीर भारती की काव्य-साधना : मंजूषा श्रीवास्तव

इकाई 8 : अंधायुग : वस्तु और समीक्षा

रूपरेखा

8.1 प्रस्तावना
8.2 उद्देश्य
8.3 मूल पाठ : अंधायुग : वस्तु और समीक्षा
8.3.1 अंधायुग : कथावस्तु
8.3.2 अंधायुग का समीक्षात्मक अनुशीलन
8.3.2.1 पात्र योजना एवं चरित्र सृष्टि
8.3.2.2 नाट्य शिल्प एवं भाषा-शैली
8.4 पाठ सार
8.5 पाठ की उपलब्धियाँ
8.6 शब्द संपदा
8.7 परीक्षार्थ प्रश्न
8.8 पठनीय पुस्तकें

8.1 प्रस्तावना

प्रसादोत्तर युगीन नाटककारों में से एक प्रमुख नाटककार धर्मवीर भारती (1926ई.-1997ई.) हैं। मानवीय आस्था के गंभीर साहित्यकार के रूप में इन्होंने ख्याति अर्जित की है। अज्ञेय द्वारा संपादित दूसरा सप्तक के ये एक प्रमुख कवि भी रहे हैं। कविता के साथ कहानी, उपन्यास, व्यंग्यात्मक निबंध, एकांकी और अनुवाद जैसी विधाओं में अपना योगदान देकर इन्होंने हिंदी साहित्य को निरंतर समृद्ध किया। 'ठंडा लोहा, सात गीत वर्ष, कनुप्रिया, सपना अभी भी' इत्यादि कृतियाँ इनकी कविताओं और गीतों का संकलन है। उनका एक एकांकी संग्रह है 'नदी प्यासी थी'। उनकी कृति 'अंधायुग' (1954ई.) में काव्य और नाटक, दोनों के तत्त्वों का समावेश है। इसलिए इसे हिंदी साहित्य की विधाओं के अंतर्गत गीति नाट्य (काव्य नाटक) की श्रेणी में रखा गया है। महाभारत युद्ध के अठारहवें दिन की संध्या से लेकर प्रभास-तीर्थ में कृष्ण की मृत्यु के क्षण तक की कथा को आधार स्वरूप ग्रहण करके धर्मवीर भारती ने 'अंधायुग' कृति की रचना की। अपने साहित्यिक अवदान के लिए इन्हें प्रतिष्ठित सम्मानों से नवाजा गया, जो इस प्रकार हैं- पद्मश्री (1972ई.), केंद्रीय संगीत नाटक अकादमी द्वारा सर्वश्रेष्ठ नाटककार के सम्मान से अभिहित किया गया, भारत-भारती सम्मान (उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान द्वारा), व्यास सम्मान (1994ई.) इत्यादि। 'परिमल' संस्था के सक्रिय सदस्य के रूप में भी उन्हें स्मरण किया जाता है। 'धर्मयुग' और 'अभ्युदय' में अपनी सेवाएँ देकर वे पत्रकारिता के क्षेत्र से भी जुड़े रहे।

उनकी कृति 'अंधायुग' के प्रकाशन से पूर्व उनका एक उपन्यास 'गुनाहों का देवता' और एक काव्य संकलन 'ठंडा लोहा' प्रकाशित हो चुका था। महाभारत के युग में जो अंधता व्याप्त थी उससे वर्तमान युग शून्य नहीं है। उस अंधता और अनास्था के मध्य तब भी मानवीय आस्था कायम थी और आज भी यह उपस्थित है। युद्ध की विभीषिका जनता पर केवल संकट लाती है। शासक, शासक ही होते हैं। शासन का परिवर्त्तन मुकुट के निमित्त शीश का परिवर्त्तन मात्र है।

यदि सामान्य जनता की त्रासद स्थिति पर सत्ता विचार करती तो हरी-भरी धरती को लाल करने वाले ये युद्ध शायद कभी न होते। युद्ध का नरसंहार किसको प्रसन्न करता है और किसको सुकून देता है? विजय हो या पराजय- इन दोनों पक्षों के ऊपर एक अट्टहास करता हुआ केवल नरसंहार नाम का दानव ही वास्तव में विजयी होता है। प्रजा को अन्न चाहिए जो युद्ध से कभी नहीं मिल सकता है! युद्ध में हताहत केवल मनुष्य ही नहीं होते! वहां उनकी व्यक्तिगत आस्था भी छलनी होती है! पर मनुष्य की सृजनशील प्रवृत्ति उसके अस्तित्व को बचाए रखती है। भारत का इतिहास विध्वंसों पर हुए अनेकानेक नवनिर्माण का साक्षी है। भयावह दुखों की धार जीवन की खुशियों को भले लील जाएँ पर उन खुशियों के संचार के स्रोत (मानवीय आस्था) को नहीं सुखा सकतीं। यह आस्था क्षत-विक्षत होकर भी पुनः सृजित होती है। महाभारत की कथा का मिथकीय आधार लेकर धर्मवीर भारती ने वस्तुतः वर्तमान समय के नब्ज को टटोला है। द्वितीय विश्व युद्ध के प्रतीक के रूप में उन्होंने महाभारत की कथा का चुनाव किया।

8.2 उद्देश्य

प्रिय छात्रो! इस इकाई को पढ़ने के बाद आप -

- 'अंधायुग' की कथावस्तु से परिचित हो सकेंगे।
- 'अंधायुग' के रंगमंचीय विधान की विशेषता से अवगत हो सकेंगे।
- महाभारतकाल और आधुनिक काल के परिप्रेक्ष्य में, जनता पर युद्ध के प्रभाव को समझ सकेंगे।
- महाभारतकालीन पात्रों की आधुनिक संदर्भ में प्रतीकात्मकता को जान सकेंगे।
- अंधायुग की भाषा-शैली की विशेषताओं से परिचित हो सकेंगे।

8.3 मूल पाठ : अंधायुग : वस्तु और समीक्षा

8.3.1 अंधायुग : कथावस्तु

अंधायुग की कथावस्तु मुख्यतः प्रख्यात है। महाभारत के युद्ध से सभी परिचित हैं। कौरवों और पांडवों के मध्य हो रहे इस युद्ध के अठारहवें दिन की संध्या बेला से लेकर श्रीकृष्ण के महाप्रयाण की बेला तक की कथा को आधार रूप में यहाँ लिया गया है। गौण रूप से इसमें उत्पाद्य कथा भी हैं। पर इनका कलेवर बहुत संक्षिप्त है। वृद्ध याचक और युयुत्सु की प्रेतात्मा का संयोजन कथा प्रवाह के निमित्त किया गया है परंतु इनका संबंध नाटककार की कल्पना जगत से है। कौआ और उल्लू का संदर्भ भी उत्पाद्य कथा है। उत्पाद्य कथा का प्रवाह आद्यांत नहीं है इसलिए अंधायुग की कथावस्तु को प्रख्यात कथा की श्रेणी में रखा जाता है।

इस गीति नाट्य में कुल पाँच अंक हैं। उन पाँच अंकों के क्रम इस प्रकार हैं- कौरव नगरी (पहला अंक), पशु का उदय (दूसरा अंक), अश्वत्थामा का अर्द्धसत्य (तीसरा अंक), पंख पहिये और पट्टियाँ (अंतराल), गांधारी का शाप (चौथा अंक), विजय एक क्रमिक आत्महत्या (पाँचवाँ अंक), प्रभु की मृत्यु (समापन)। अंतराल और समापन के साथ इसकी स्थापना इस नाटक के बीज तत्व को उद्घाटित करती है। यह गीति नाट्य रंगमंच पर प्रदर्शन की दृष्टि से लिखा गया है। अतः इसके आरंभ में स्थापना के अंतर्गत मंगलाचरण और उद्घोषणा दी गई है। इन्हें नर्त्तक मंच पर

प्रस्तुत करता है तथा तथ्यों के अनुरूप अपने भावों को बदल-बदल कर पेश करता है। उद्घोषणा का आधार विष्णु पुराण है। उक्त ग्रंथ में उल्लिखित श्लोकों के साथ उसका हिंदी रूपांतरण 'अंधायुग' कृति में दिया गया है। यहाँ केवल हिंदी रूपांतरण द्रष्टव्य है-उस भविष्य में/ धर्म अर्थ ह्रासोन्मुख होंगे/ क्षय होगा धीरे-धीरे सारी धरती का/ सत्ता होगी उनकी जिनकी पूँजी होगी/ जिनके नकली चेहरे होंगे/ केवल उन्हें महत्त्व मिलेगा/ राजशक्तियाँ लोलुप होंगी/ जनता उनसे पीड़ित होकर/ गहन गुफाओं में छिप-छिपकर दिन काटेगी।.........युद्धोपरांत/ यह अंधा युग अवतरित हुआ/ जिसमें स्थितियाँ, मनोवृत्तियाँ, आत्माएँ सब विकृत हैं/ है एक बहुत पतली डोरी मर्यादा की/..........यह कथा उन्हीं अंधों की है/ या ज्योति की है उन्हीं अंधों के माध्यम से।

इन पंक्तियों से अंधायुग का स्वरूप स्पष्ट हो रहा है। इस युग का उदय महाभारत युद्ध के बाद होता है। इस युग में आसक्ति ही मानव जाति के मध्य फलीभूत हो रही सभी प्रकार की विकृतियों के मूल में है। एकमात्र कृष्ण जो अनासक्त हैं, केवल वही इस भविष्य के रक्षक हैं। बाकी सभी पथभ्रष्ट और विकृत हैं। इस उद्घोषणा के बाद पटाक्षेप होता है।

पहला अंक कौरव नगरी का आरंभ तीन बार तूर्यनाद के बाद कथा गायन से होता है। कथा गायन के उपरांत पर्दा उठता है। दो प्रहरी टहलते हुए बात करते हैं, "इस सूने शोक-संतप्त राजमहल में वे किसकी रक्षा कर रहे हैं?" अपने कर्म, साहस, श्रम और अस्तित्व की निरर्थकता समझकर वे थकान महसूस कर रहे हैं। इन सत्रह दिनों तक उन्होंने केवल रोगी मर्यादा और अंधी संस्कृति की रक्षा की है। दोनों प्रहरी शोर सुनकर ऊपर देखते हैं तो पाते हैं कि आज अचानक कौरव नगरी का आसमान नरभक्षी गिद्धों से भरा हुआ है। ये सारे गिद्ध कुरुक्षेत्र की ओर बढ़ रहे हैं। यह अमंगलकारी है। तभी विदुर का प्रवेश होता है। वे प्रहरी से पूछते हैं कि क्या धृतराष्ट्र ने इस दृश्य को देखा। जन्मांध धृतराष्ट्र इसे कैसे देख सकते थे! कोई बताता तो सुन लेते। कौरव नगरी में कुछ ही लोग बचे हैं। विदुर चिंतित हैं। वे अन्तःपुर में जाकर धृतराष्ट्र से मिलते हैं। आशंकित धृतराष्ट्र को देखकर विदुर कहते हैं कि जो आशंका आज आपको व्यापी है, वह वर्षों पहले सबको हिला गई थी। धृतराष्ट्र कहता है, "तुमने मुझसे पहले क्यों नहीं कहा?" विदुर कहता है, "भीष्म ने कहा था/ गुरु द्रोण ने कहा था/ इसी अंतःपुर में आकर/ कृष्ण ने कहा था-/ मर्यादा मत तोड़ो/ तोड़ी हुई मर्यादा/ कुचले हुए अजगर-सी/ गुजलिका में कौरव वंश को लपेटकर/ सूखी लकड़ी-सा तोड़ डालेगी।" यह सुनकर सफाई देने की मुद्रा में धृतराष्ट्र कहता है मैं तो जन्मांध हूँ। मैं सामजिक मर्यादा को कैसे ग्रहण कर सकता हूँ? विदुर का आक्षेप कि जैसे आपने जीवन को ग्रहण किया। पुनः धृतराष्ट्र अपनी सीमा बताता है, "मेरा स्नेह, मेरी घृणा, मेरी नीति, मेरा धर्म/ बिल्कुल मेरा ही वैयक्तिक था।/ उसमें नैतिकता का कोई बाह्य मापदंड था ही नहीं।/ कौरव जो मेरी मांसलता से उपजे थे/ वे ही थे अंतिम सत्य/ मेरी ममता ही वहां नीति थी/ मर्यादा थी।" पारस्परिक संवाद के माध्यम से कथा आगे बढ़ती है। एक जन्मांध व्यक्ति केवल सुन सकता है। उन सुनी हुई बातों का दृश्य चित्र वह अपने मन में साकार करने में अक्षम होता है। "कल्पित कर सकता नहीं/ कैसे दुशासन की आहत छाती से/ रक्त उबल रहा होगा/ कैसे क्रूर भीम ने अंजुली में/ धार उसे/ ओंठ तर किए होंगे।" धृतराष्ट्र के इन वाक्यों को सुनकर माता गांधारी कानों पर हाथ

रख लेती हैं और कहती हैं, "इसे मत दोहराइए। यह असहनीय है।" इस प्रकार समस्त नाटकीय भाव भंगिमा के साथ आगे बढ़ती है।

द्वितीय अंक में अश्वत्थामा युधिष्ठिर के अर्द्धसत्य को सच करते हुए बर्बर पशु बन जाता है। उसके भीतर बदले की मनोग्रंथि जन्म ले लेती है। इस कारण अपने पक्ष से अलग सभी लोग उसे शत्रु नजर आते हैं। इसी आवेश में वह संजय का भी वध करने को उद्द्यत हो जाता है। संजय अवध्य और महाभारत का तटस्थ पात्र है। यही नहीं इस अंक के अंत में वह वृद्ध याचक के वंचकपन से क्रुद्ध होकर उसका गला घोंटने के लिए उसे घसीटता है और नेपथ्य से गला घोंटने की आवाज आती है। कहानी को आगे बढ़ाने का नाटककार का प्रयत्न यहाँ दृष्टिगोचर होता है। किसी प्रकार के मनोग्रंथि से ग्रसित व्यक्ति कुछ भी कर देता है और उसे अपने कृत्य का भान भी नहीं होता। वृद्ध का गला घोंटने के बाद अश्वत्थामा से जब कृतवर्मा और कृपाचार्य पूछते हैं कि तुमने क्या कर दिया? तो अश्वत्थामा प्रतिप्रश्न के रूप में प्रत्युत्तर देता है कि मैंने क्या किया?

तीसरे अंक में संजय का रथ हस्तिनापुर नगर के द्वार पर पहुँचता है। सभी हारी और बची हुई कौरव सेना की प्रतीक्षा कर रहे होते हैं। अंग-भंग, शोणित से लथपथ कौरव सेना का नगर में प्रवेश होता है। अंग-भंग हुए सैनिकों के अंगों को छूकर धृतराष्ट्र, उनमें संजय के शब्दों का आकार ढूंढता है। एक गूंगा, प्यासा और ज्वर से पीड़ित सैनिक का प्रवेश होता है। उसे पानी पिलाकर वहीँ विश्राम कराने का आदेश देकर दानगृह से वस्त्र देने को कहते हैं। अपने पुत्रों की पराजय और मृत्यु के शोक से आकुल माता गांधारी आज दानगृह में नहीं थीं। उनकी दशा बताते हुए विदुर कहते हैं, "उनकी आँखों में/ आँसू भी नहीं हैं/ न शोक है/ न क्रोध है/ जड़वत पत्थर-सी वे बैठीं हैं सीढ़ी पर"। फिर एक विपक्षी योद्धा के रूप में नगर में युयुत्सु का प्रवेश होता है। एकमात्र विदुर उनका स्वागत करते हैं। माता-पिता और प्रजा से उन्हें तिरस्कार मिलता है। सबके प्रेम को खोकर यह जीत भी मन में हारा सा महसूस होती है। विदुर उन्हें सांत्वना देते हैं और समझाते भी हैं कि सत्य से समझौता कर लेना अपने-आप को भीतर से जर्जर करने जैसा है। जो लोग पारंपरिक चलन से अलग अपने जीवन का पथ आप बनाते हैं, उन्हें इस प्रकार के प्रतिकूल अवसरों के लिए तैयार रहना चाहिए। यह कहकर वह गूंगे सैनिक की ओर इशारा करके कहता है कि इसे स्नेह दो, इसे जल दो। वह सैनिक युयुत्सु को देखते ही चीत्कार कर उठता है। कारण कि उसके अंग-भंग युयुत्सु के बाण से ही हुए थे। वह कौरव पक्ष का एक अश्वारोही सैनिक था। तभी अंतःपुर से भयानक आर्तनाद आता है। भीम और दुर्योधन के मल्ल युद्ध के परिणामस्वरूप दुर्योधन पराजित हुआ है- यह खबर ही इस घोर आर्त्तनाद के स्वर का कारण है। तभी दृश्य बदलता है। अश्वत्थामा छद्म वेश धरकर उस मल्ल युद्ध को देख रहा था। और वह जानता है अधर्म से भीम ने दुर्योधन को पराजित किया है। वह कृपाचार्य से यह बताता है। कृतवर्मा, कृपाचार्य और अश्वत्थामा तीनों ही पांडवों की जय-ध्वनि सुनते हैं और कृष्ण-बलराम को उनसे विलग आता देखकर ओट में हो जाते हैं। बलराम भीम की अधर्म-नीति और उसमें कृष्ण के सह से क्रोधित हैं। और कहते हैं, "सारी तुम्हारी कूटबुद्धि/ और प्रभुता के बावजूद/ शंखध्वनि करते हैं/ अपने शिविरों को जाते हैं पांडवगण/ वे भी निश्चय मारे जाएँगे अधर्म से।" बलराम की अंतिम पंक्ति को अश्वत्थामा दुहराता है। उसे कौरव दल का सेनापति बनाया जाता

है जिसमें उसके अतिरिक्त दो ही लोग शेष हैं। दोनों सो जाते हैं। सेनापति अश्वत्थामा पहरा देता है। रात के अंधकार में उसे कौआ और उल्लू दिखाई देते हैं। उल्लू कैसे कौआ को सोया जानकार घात से उसपर हमला करता है। इस घटना में वह अपने प्रतिशोध का प्रारूप पा लेता है। कृतवर्मा और कृपाचार्य उसे समझाने की कोशिश करते हैं पर वह दृढ़प्रतिज्ञ है। इसलिए कहता है, "साथ न दोगे तो अकेले ही चला जाऊँगा" और चल देता है। दोनों उसके पीछे-पीछे जाते हैं।

नाटक के चौथे अंक से पूर्व अंतराल है। अंतराल का शीर्षक है- पंख, पहिए और पट्टियां। इसमें अश्वत्थामा द्वारा वधित वृद्ध याचक प्रेतात्मा बनकर आता है और वर्तमान युग को अंधा समुद्र कहते हुए उसे विस्तार से व्याख्यायित करता है। युयुत्सु, विदुर और संजय उस वृद्ध के पीछे खड़े हो जाते हैं। और युद्ध के बाद की अपनी मनःस्थिति को स्पष्ट करते हुए कहते हैं-

युयुत्सु : 'मैं उस पहिए की तरह हूँ/ जो पूरे युद्ध के दौरान रथ में लगा था/ पर जिसे अब लगता है कि वह गलत धुरी में लगा था/ और मैं अपनी उस धुरी से उतर गया हूँ।'

संजय : 'मैं दो बड़े पहिए के बीच लगा हुआ/ एक निरर्थक शोभा चक्र हूँ/ जो बड़े पहियों के साथ घूमता है/ पर रथ को आगे नहीं बढ़ाता है/ .....और जिसके जीवन का सबसे बड़ा दुर्भाग्य यह है/ कि वह धुरी से उतर भी नहीं सकता।'

विदुर : 'और अब मेरा स्वर संशयग्रस्त है/ क्योंकि लगता है कि मेरे प्रभु/ उस निकम्मी धुरी की तरह हैं/ जिसके सारे पहिए उतर गए हैं/ और जो खुद घूम नहीं सकती/ पर संशय पाप है और मैं पाप नहीं करना चाहता।'

इन सबके बाद एक मोरपंख वृद्ध याचक की प्रेतकाया के पास गिरता है, जिसे वह उठाता है और अनुमान लगाता है कि यह कृष्ण का ही है जो संभवतः गांधारी को आश्वासन देकर लौटने के समय गिर गया होगा। इन सब प्रकरण के मध्य अश्वत्थामा भी अपने गंतव्य तक पहुँच गया।

नाटक का चौथा अंक है- गांधारी का शाप। अश्वत्थामा पांडवों के शिविर पर जब पहुँचता है तो वहां भगवान शिव को उनकी रक्षा करते देखता है। शिव अश्वत्थामा से कहते हैं, "पहले मुझे जीतो फिर अंदर जाना"। युद्ध प्रारंभ होता है। अश्वत्थामा के सारे दिव्यास्त्र उनमें समा गए। तब भगवान को पहचान कर अश्वत्थामा ने उनकी स्तुति की। प्रसन्न होकर शिव ने उन्हें विजय का आशीर्वाद दिया। वह रात्रि में ही पांडव पक्ष पर टूट पड़ा। उसके हत्याकांड का वर्णन संजय के मुख से सुनकर गांधारी हर्षित होती है। इन तीन कौरव वीरों ने योद्धाओं के साथ बच्चे, बूढ़े, स्त्रियाँ और नौकरों तक को काट डाला। इस हत्याकांड के दौरान अश्वत्थामा के स्वरूप का वर्णन करते हुए संजय कहते हैं, "धुँआ, लपट, सोए घायल, घोड़े, टूटे रथ/ रक्त मेद, मज्जा,मुंड/ खंडित कवचों में/ टूटी पसलियों में/ विचरण करता था अश्वत्थामा/ सिंहनाद करता हुआ/ नररक्त से वह तलवार उसके हाथों में/ चिपक गई थी ऐसे/ जैसे वह उगी हो उसी के भुजमूलों से।" परंतु गांधारी के विचार में जो समस्त कौरव पक्ष नहीं कर सका उसे अकेले अश्वत्थामा ने कर दिया। इसलिए उस तेजोमय वीर को वह देखना चाहती थी। उसे यह भी अंदेशा था कि इस कृत्य के बाद कृष्ण उसे जीवित नहीं छोड़ेंगे। अपनी विजय के बाद अश्वत्थामा मरणासन्न दुर्योधन के पास पहुँच जाता है। सारा हाल सुनाता है। गांधारी जो संजय की दिव्यदृष्टि से अश्वत्थामा को देखना चाहती थी, वहीँ उसे अपने मरणासन्न पुत्र दुर्योधन का मुख

भी देखना होगा जो एक माता के लिए असहयनीय था; यह सोचकर वह अपना विचार बदल देती है और अपनी पट्टी नहीं उतारती। पर फिर वह अश्वत्थामा के शरीर को वज्र-सा बनाने के लिए देखना चाहती है लेकिन अब संजय अपनी दिव्य दृष्टि खो चुके थे। यह उन्हें केवल युद्ध की अवधि के लिए ही प्राप्त हुआ था। मृतक योद्धाओं के अंतिम संस्कार हेतु अब रणक्षेत्र की ओर गांधारी, धृतराष्ट्र, युयुत्सु, विदुर, संजय और सभी कौरव विधवाओं का प्रस्थान होता है। अश्वत्थामा की उपस्थिति के आभास पर सभी रुक कर उससे मिलते हैं। युयुत्सु चूँकि विपक्षी दल का योद्धा था इसलिए उसे अश्वत्थामा जके सामने आने से बचा लिया जाता है, इस डर से कि कहीं वह युयुत्सु की हत्या न कर दे जो बूढ़े माँ-बाप का इकलौता पुत्र शेष रहा है। कृष्ण पांडवों के साथ वन में अश्वत्थामा को ढूँढ रहे हैं। यह सुनकर गांधारी कहती है, “मार नहीं पाएँगे कृष्ण उसे/ मैंने उसे देखकर/ वज्र कर दिया है उसके तन को।” अश्वत्थामा जो वल्कल धारण करके शांत जीवन बिताने का इच्छुक था, वन में उसपर बाण प्रहार करके पांडवों ने उसे पुनः युद्ध की ओर प्रवृत्त किया। उसने बदले में ब्रह्मास्त्र छोड़ दिया, इधर अर्जुन ने भी वही किया। आकाशवाणी के माध्यम से व्यास ने अर्जुन और अश्वत्थामा दोनों को अस्त्र वापस लेने के लिए कहा। अर्जुन ने ब्रह्मास्त्र वापस ले लिया पर अश्वत्थामा ने कहा यह तो नहीं हो सकता। उसने अस्त्र का लक्ष्य बदल दिया। उस अस्त्र ने उत्तरा के गर्भ को नष्ट कर दिया। उत्तरा से जन्मे मृत शिशु को जीवन का वरदान कृष्ण ने दिया। और अश्वत्थामा को भ्रूण हत्या के अपराध के लिए शाप दिया तथा उसका मणि लेकर उसे छोड़ दिया।

पाँचवा अंक ‘विजय एक क्रमिक आत्महत्या’ है। “सब विजई थे लेकिन सब थे विश्वास ध्वस्त/ थे सूत्रधार खुद कृष्ण किंतु थे शापग्रस्त/ इस तरह पांडव राज्य हुआ आरंभ पुण्यहत, अस्त-व्यस्त/ थे भीम बुद्धि से मंद प्रकृति से अभिमानी/ अर्जुन थे असमय वृद्ध, नकुल थे अज्ञानी/ सहदेव अर्द्धविकसित थे शैशव से अपने/ थे एक युधिष्ठिर/ जिनके चिंतित माथे पर/ थे लदे हुए भावी विकृत युग के सपने।” पांडव राज्य का आरंभ हो गया पर महाराज युधिष्ठिर इस युद्ध को जीत कर भी स्वयं को हारा हुआ महसूस कर रहे हैं। अर्द्धसत्य, रक्तपात और हिंसा के बीज से प्रभावित पीढ़ी का भविष्य उन्हें अंधकारमय दीख रहा है। पुण्यों की क्षय बेला में पांडव राज्य का उदय हुआ है। कुछ भी शुभकर प्रतीत नहीं हो रहा है। अमंगल और अशकुन ही देखने को मिल रहा है। अपने कुटुंबियों के व्यवहार में भी सात्विकता शेष न रही। भीम की कटूक्तियों से दुखी होकर गांधारी और धृतराष्ट्र वनगमन कर गए। भीम के व्यंग्य बाणों से युयुत्सु भी अत्यंत मर्माहत रहते थे। महल के भीतर ही नहीं बाहर भी उसका अपमान होता था। भिखमंगे, लंगड़े-लूले और गंदे बच्चों की भीड़ उसपर ताना कसती थी। भिखमंगा गूंगा सैनिक उसे पत्थर मारता है। उसका तर्क है कि युद्ध में इसने मेरे पैर तोड़े तो मैं इससे बदला क्यों न लूँ? इस प्रसंग में ही भाले से युयुत्सु आत्महत्या कर लेता है। धर्मराज युधिष्ठिर के राज्य में धर्म का पक्ष लेने वाले की यह दुर्गति है। इस आत्मघाती प्रकरण पर कृपाचार्य कहते हैं, “यह आत्महत्या होगी प्रतिध्वनित/ इस पूरी संस्कृति में/ दर्शन में, धर्म में, कलाओं में/ शासन व्यवस्था में/ आत्मघात होगा बस अंतिम लक्ष्य मानव का।” दूसरे दृश्य में कुंती, गांधारी और धृतराष्ट्र दावानल (जंगल की आग) की भेंट चढ़ जाते हैं। युधिष्ठिर हिमालय की शिखरों में जाकर गल जाना चाहते हैं। विदुर उनसे

कहते हैं कि वह भी आत्मघात है, "शिखरों की ऊँचाई/ कर्म की नीचता का/ परिहार नहीं करती/ वह भी आत्मघात है।"उधर द्वारका में निरंतर अशकुन हो रहे हैं। दोनों प्रहरियों के आपसी बातचीत से कथा आगे बढती है।

इस काव्य नाटक का अंतिम अंश 'समापन' है जिसका शीर्षक 'प्रभु की मृत्यु' है। प्रभु की वंदना से नाटक के इस भाग का आरंभ होता है। अश्वत्थामा का प्रवेश होता है और वह कहता है कि ये वंदना झूठ है। कृष्ण ने भी वही किया है जो मैंने किया था। अंतर सिर्फ इतना है कि मैंने सोते हुए शत्रुओं पर प्रहार किया और इसने नशे में डूबे हुए अपने ही वंशवालों को मारा है। वह कृष्ण से पूछना चाहता है कि ये जख्म जो उसके तन पर फूटे हैं वे उनके तन पर क्यों नहीं फूट रहे हैं? संजय जिसके घुटने दावानल में झुलस गए थे, वह भी घसीटता हुआ प्रभास तीर्थ पहुँच गया था। उसने देखा झाड़ियों में छिपे व्याध को बैठे हुए जो प्रभु कृष्ण को मृग समझ कर उन पर निशाना लगाए बैठा था। वह उसे रुकने के लिए कहता है। पर व्याध बाण छोड़ देता है। और पीपल के वृक्ष के नीचे प्रभु कृष्ण का महाप्रयाण होता है। अश्वत्थामा ठठा कर हँसता है और संजय चीत्कार कर अर्द्धमूर्छित-सा गिर जाता है। अपने अवसान के समय प्रभु ने व्याध से कहा, "मरण नहीं है यह व्याध/ मात्र रूपांतरण है वह/ सबका दायित्व लिया मैंने अपने ऊपर/ अपना दायित्व सौंप जाता हूँ मैं सबको/ अब तक मानव भविष्य को मैं जिलाता था/ लेकिन इस अंधे युग में मेरा एक अंश/ निष्क्रिय रहेगा, आत्मघाती रहेगा/ और विगलित रहेगा/ संजय, युयुत्सु, अश्वत्थामा की भांति/ क्योंकि इनका दायित्व लिया है मैंने/ वे बोले/ लेकिन शेष मेरा दायित्व लेंगे बाकी सभी/ मेरा दायित्व वह स्थित रहेगा/ हर मानव-मन के उस वृत्त में/ जिसके सहारे वह/ सभी परिस्थितियों का अतिक्रमण करते हुए/ नूतन निर्माण करेगा पिछले ध्वंसों पर/ मर्यादायुक्त आचरण में/ नित नूतन सृजन में/ निर्भयता के/ साहस के/ ममता के/ रस के/ क्षण में/ जीवित और सक्रिय हो उठूँगा मैं बार-बार।" कृष्ण के इन अंतिम वचनों को व्याध ने सुना है जिसे वह बार-बार दोहराता है। उसने प्रभु के इन वचनों को युयुत्सु,संजय और अश्वत्थामा को सुनाया। ये लोग निराश, अंधे, निष्क्रियऔर अर्द्ध पशु निकले। अब वह पूछता है कि क्या कोई और इसे सुनेगा?

बोध प्रश्न

- अंधायुग से कवि का क्या अभिप्राय है?
- 'अंधायुग' अंधों की कथा है या अंधों के माध्यम से ज्योति की कथा है?
- युद्ध के पश्चात पात्रों की मनःस्थिति को स्पष्ट करें।

8.3.2 अंधायुग का समीक्षात्मक अनुशीलन

'अंधायुग' के रूप में कवि ने एक व्यापक सत्य की निजी उपलब्धि को प्रस्तुत किया है। इस प्रस्तुति का उद्देश्य पुनः उस निजी उपलब्धि का व्यापक हो जाना है। इस कृति का लिखा जाना एक संयोग है जिस पर प्रकाश डालते हुए धर्मवीर भारती लिखते हैं, "पर एक नशा होता है- अंधकार के गरजते महासागर की चुनौती को स्वीकार करने का, पर्वताकार लहरों से खाली हाथ जूझने का, अनमापी गहराइयों में उतरते जाने का और फिर अपने को सारे खतरों में डालकर आस्था के, प्रकाश के, सत्य के, मर्यादा के कुछ कणों को बटोरकर, बचाकर धरातल तक

ले आने का- इस नशे में इतनी गहरी वेदना और इतना तीखा सुख घुला मिला रहता है कि उसके आस्वादन के लिए मन बेबस हो उठता है। उसी की उपलब्धि के लिए यह कृति लिखी गई। ...कुंठा, निराशा, रक्तपात, प्रतिशोध, विकृति, कुरूपता, अंधापन- इन से हिचकिचाना क्या, इन्हीं में तो सत्य के दुर्लभ कण छिपे हुए हैं, तो इनमें क्यों न निडर धँसू।"

सत्य के दुर्लभ कण को खोजने के लिए इन सबमें धँसने की आवश्यकता की पूर्ति महाभारत के इस कथांश से हो जाती है। इसमें वह सबकुछ व्याप्त है जो अंधायुग की संभावित परिस्थितियाँ हैं। धर्म और अर्थ अधोगति को पा रहे हैं। जिस अर्थ से प्रजा का पोषण, राज्य का उन्नयन या धार्मिक प्रयोजनों को पूरा किया जा सकता था, वह अर्थ (धन) युद्ध और हथियार के निमित्त खर्च किया जा रहा है। युद्ध का प्रयोजन भी महज स्वार्थ जनित राज्यलिप्सा की परिपूर्णता से है। युद्ध जीतने के लिए धर्मशील अपने धर्म से च्युत होने को बुरा नहीं समझेंगे। इतना ही नहीं असली महत्वपूर्ण लोगों की कोई पूछ नहीं होगी और नकली चेहरेवाले प्रभावशाली लोग पूजे जाएँगे। जिनकी सत्ता होगी और जिनकी पूंजी होगी; उन सबकी पूजा होगी। स्वतंत्रता के बाद भारत की परिस्थिति भी कमोबेश ऐसी ही थी। राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान इस अंधायुग का दर्शन हर ओर लोगों ने किया। चारो तरफ विकृति और प्रतिशोध का वातावरण था। मनुष्य नैराश्य और विपन्नता से घिरा जीवन जीने की जगह उससे जूझ रहा था। जीवटता हार रही थी। पीड़ा जीत रही थी। इस घोर अनास्था की घड़ी में कृष्ण आस्था की दिव्य ज्योति हैं। वे अनासक्त हैं। उनमें ही वह शक्ति है जो इन अमर्यादितों के बवंडर में मर्यादा की पतली-सी डोर को सुलझा कर रख सकते हैं। एक क्षण आता है जब भविष्य के रक्षक कृष्ण रूपी दिव्य ज्योति का अवसान हो जाता है। प्रभास तीर्थ में पीपल के वृक्ष के नीचे विश्राम मुद्रा में लीन कृष्ण को व्याध का तीर लग जाता है। वे महाप्रयाण कर जाते हैं। उनके महाप्रयाण करते ही अंधायुग अपने पूरे जोर से उदित हो जाता है। अब इस संसार में मनुष्य की रक्षा का भार कौन लेगा? अपने आस्थावान भक्तों के लिए कृष्ण व्याध से कहते हैं कि यह उनकी मृत्यु नहीं है। यह उनका केवल रूपांतरण भर है। वे संजय, अश्वत्थामा और युयुत्सु का दायित्व लेंगे जिससे इस संसार में उनका एक अंश निष्क्रिय और आत्मघाती रहेगा। इसके अतिरिक्त उनका सारा दायित्व उन्होंने सृष्टि के सभी मानवों को समर्पित किया। सर्व हितार्थ की भावना से मानव मन की शुभ वृत्तियों में प्रभु प्रेरित दायित्व निहित है। जहाँ कहीं भी निर्भयता होगी, ममता होगी, मर्यादयुक्त आचरण होगा वहां श्रीकृष्ण की शक्ति सक्रिय होगी। जो कोई भी विध्वंसों के बाद नए सृजन के लिए दृढ़ प्रतिज्ञ होकर उस ओर कर्मरत होगा वह प्रभु का ही दायित्व पूर्ण कर रहा होगा। इस प्रकार श्रीकृष्ण ने अपने अंतिम समय में भी कभी न बुझनेवाली आस्था की ज्योति मानव समाज को दे दी। मर्यादा की जिस पतली डोर को सुलझाना केवल कृष्ण के वश में थी; वह शक्ति उन्होंने सबमें बाँट दी। कौन उस शक्ति के प्रति अपनी जिम्मेदारी निभाता है? कौन कृष्ण की सक्रियता बनता है और कौन उनके एकमात्र निष्क्रिय अंश को पकड़ता है, यह मनुष्य की बुद्धि पर निर्भर है।

अंधायुग में विवेक हारता है और बुद्धि जड़ हो जाती है। जैसे विदुर,भीष्म, द्रोणाचार्य इत्यादि परम ज्ञानी और दूरद्रष्टा थे। इन सबने बार-बार धृतराष्ट्र और दुर्योधन को मर्यादाहीन

आचरण करने से रोकने की निष्फल चेष्टा की पर युद्धभूमि में उनके ही पक्ष में डटे भी रहे। यह उनकी अंधी राजनिष्ठा और वचनबद्धता का प्रतिफल है। अंधता उपयुक्त नहीं है फिर भी राजधर्म के अपने ही बंधन में स्वयं की चेतना की इनलोगों ने बलि दी। यदि दुर्योधन के अमर्यादित आचरणों और अनुचित मांगों पर आरंभ में ही अंकुश लगा दिया जाता तो उसकी स्वार्थपरता का विस्तार कुरुक्षेत्र के युद्ध के रूप में कदापि न होता। अंधे माता-पिता की संतान के प्रति मोहांधता ने उसके अस्तित्व को ही खतरे में डाल दिया। एक अस्वस्थ मानसिकता द्वारा पोषित दुर्योधन में विकृतियों का होना स्वाभाविक है। विकृतियों की परख के बाद व्यक्ति स्वयं भी उसके निवारणार्थ उपाय कर सकता है। अपनी विकृतियों पर अभिमान रखकर उद्दंड आचरण करनेवाले ऐसी ही गति पाते हैं जैसी दुर्योधन ने पाई। मल्लयुद्ध में दुर्योधन की हार कृष्ण की कूटनीति का परिणाम थी। भीम ने उनके ही इशारों पर उसकी जंघा को तोड़ा था, जो कि मल्लयुद्ध के नियम के विरुद्ध था। इस घटना को अश्वत्थामा ने छिपकर देखा था। उसकी आंखों में प्रतिशोध की ज्वाला थी। वह अपने मित्र के प्रति अधर्म से किए गए इस वार का प्रतिवार और भयंकर रूप में करना चाहता था। इससे पूर्व वह अपने पिता की छल से की गई हत्या का प्रतिशोध लेने के लिए कृतसंकल्प था ही।

यहाँ प्रश्न है कि क्या घोषित धर्म के पक्ष वालों को अधर्म करने की खुली छूट होती है? शायद यह रणनीति का एक हिस्सा हो। युयुत्सु जिसने अपने भाइयों के विरुद्ध धर्म का पक्ष जानकार पांडवों की ओर से लड़ा। युद्ध के पश्चात उसका हश्र क्या हुआ? विजय श्री प्राप्त योद्धा को देखकर नगर में हलचल मच गई। सबने उसे गिद्ध की तरह शिशुभक्षी माना। नगरवासियों समेत गांधारी और धृतराष्ट्र ने उसका तिरस्कार किया। धर्म का पक्ष लेने के बाद यह दुर्दशा उसकी हुई। जिन बंधुओं को उसने अपने ही बाणों से मारा अब कुरुक्षेत्र में उसे उनका ही तर्पण करना है। प्रश्न है कि क्या वे उसके हाथों किया गया तर्पण स्वीकार करेंगे? युधिष्ठिर के राज्य में भीम ने भी उसकी कम अवहेलना न की। युयुत्सु का मानसिक अंतर्द्वंद्व आज के मनुष्य का अंतर्द्वंद्व है। वह अनास्था से जूझ रहा है। अपने निर्णय उसे असमंजस की स्थिति में ला खड़ा करते हैं। किंकर्तव्यविमूढ़ता की स्थिति में वह युयुत्सु की भांति आत्मघात का चुनाव करता है। यह सही स्थिति नहीं है। शस्त्र की सहूलियत से आत्मघात करने की सुविधा बढ़ी है। यह प्रवृत्ति अनुकरणीय नहीं है। इस स्थिति से मनुष्य को दूर रखने के लिए ही विदुर ने कहा है कि आत्मघात करनेवालों को कभी मुक्ति नहीं मिलती है। व्यक्ति जब आस्था खोता है तभी इस ओर प्रवृत्त होता है। घोर निराशा, हताशा और अव्यवस्था के सामने घुटने टेक देना अंधायुग को कायम रखने जैसा है। जबकि इन परिस्थितियों का अतिक्रमण करते हुए सुस्थिर और सुचिंतित जीवन जीना कृष्ण की शक्ति को सक्रिय करना है। शुभता की सक्रियता से ही अँधेरा छंटेगा।

अश्वत्थामा जो अर्द्धपशु बन चुका था, जिसने व्याध द्वारा कृष्ण का वध देखने के लिए अपने शरीर के घावों में ताड़ के पत्तों की चुभन भी बड़े धैर्य से सहा; वह घोर अनास्थावादी अश्वत्थामा कृष्ण के मृत्यु के क्षण में आस्थावादी बन गया। जब उसने देखा कि जो नीला रक्त उसके घाव से बह रहा है वही कृष्ण के तलवे से भी बह रहा है। उसके शरीर पर घाव तो अब भी थे किंतु उसे उसकी असहय पीड़ा नहीं हो रही थी। श्रीकृष्ण ने उसकी पशुता का दायित्व स्वयं

पर ले लिया था। उसको आस्थावान बनता देखकर युयुत्सु उसपर हँसता है क्योंकि उसने अपने जीवन में आस्था का परिणाम देखा था। उसे आस्था अब एक खोटा और घिसा हुआ सिक्का लगता है, जो अनायास अश्वत्थामा की मुट्ठी में आ गया है।
कृष्ण, व्याध और विदुर ये तीन पात्र मानव के मन में आस्था की ज्योति जगाते हैं। मनुष्य परिस्थितियों और संघर्षों के मध्य जीता है। ऐसे में उसके भीतर जीने की शक्ति यह आस्था ही देती है। मजबूत मनुष्य परिस्थितियों से जीत जाता है और कमजोर मनुष्य उसका शिकार बन जाता है। परिस्थितियाँ जीते हुए मनुष्य को भी हार की अनुभूति करा जाती है। युधिष्ठिर जीत चुके हैं। पर उनके राज्य में जो बचे हैं वे कैसे लोग हैं? सबके विश्वास टूटे हुए हैं। अपने ही बंधु-बांधवों के रक्त पर फहराती विजय पताका उनके मन को कचोटती है। यह युद्ध कहने के लिए धर्म और अधर्म के मध्य हुआ था। कौरव पक्ष में जो कमियां युद्ध से पूर्व थीं आज उसी प्रकार की दुर्नीति का आश्रय पांडव पक्ष के बचे हुए लोग ले रहे हैं। फिर धर्म की स्थापना तो औचित्यहीन हो गई जब सभी विधर्मी बनने को आतुर हैं।

8.3.2.1 पात्र योजना एवं चरित्र सृष्टि

'अंधायुग' की कथावस्तु के अनुरूप ही कुछ प्रमुख एवं गौण पात्रों का संयोजन किया गया है। प्रमुख पात्रों में विदुर, गांधारी, धृतराष्ट्र, संजय, अश्वत्थामा, युधिष्ठिर, युयुत्सु, व्याध इत्यादि हैं। गौण पात्र कई हैं। कुछ काल्पनिक पात्र भी हैं- दोनों प्रहरी, वृद्ध याचक, गूंगा सैनिक इत्यादि। उल्लू और कौआ की घटना का संयोजन भी मुख्य अवांतर कथा है। मुख्य और गौण पात्रों का परिचय यहाँ निम्नवत है-

गांधारी : अंधायुग काव्य नाटक की प्रमुख स्त्री पात्र है गांधारी। ये कौरवों की माता और धृतराष्ट्र की पत्नी है। इसी कारण हस्तिनापुर की महारानी भी हैं। अपने आँखों पर इन्होंने पट्टी बाँध रखी है। इनका मानना है कि धर्म, नीति, अनासक्ति और मर्यादा बाहरी आडंबर हैं। इनके भीतर ही बर्बर अंधी प्रवृत्तियाँ निवास करती हैं। निर्णय के क्षणों में विवेक और मर्यादा को व्यर्थ सिद्ध होता उन्होंने कई बार देखा है। बाह्य जगत के इस घने आडंबर को और देखना न पड़े इसलिए उन्होंने अपने आँखों पर पट्टी बांध रखी है। उनकी दृष्टि में इतनी शक्ति है कि व जिसे एकबार देख लें उसका सारा शरीर वज्र-सा हो जाता है। अपनी इस शक्ति का प्रयोग उन्होंने दुर्योधन पर किया था।

धृतराष्ट्र: ये हस्तिनापुर के महाराज हैं जो जन्मांध हैं। सौ कौरव इनके पुत्र हैं। ये कौरव और उनके प्रति इनकी ममता ही इनके जीवन का अंतिम सत्य रहा। इनकी सारी नीतियाँ इस अंधी ममता से ही संचालित थी। अपनी अंधता का भान इन्हें तब हुआ जब कौरव कुल का विनाश हो चुका था। इन्हें मोहांधता का प्रतीक कहा जाता है।

कृतवर्मा: कौरव पक्ष का एक सैनिक जो अंत तक कृपाचार्य और अश्वत्थामा के साथ बचा रहा। और न चाहते हुए भी अश्वत्थामा की नृशंस और अधर्म प्रेरित युद्ध की योजना का सहभागी बना।

संजय : एक सामान्य राजसेवक था जिसे महर्षि वेदव्यास ने दिव्य दृष्टि दी थी ताकि वह धृतराष्ट्र को युद्ध का हाल सुना सके।

वृद्ध याचक : यह पहले हस्तिनापुर में गांधारी और धृतराष्ट्र को भविष्य बताते हुए कहता है कि दुर्योधन की जय होगी। उसकी भविष्यवाणी से प्रसन्न गांधारी उसे स्वर्ण मुद्राएँ दान में देती हैं। पुनः युद्धोपरांत जब अश्वत्थामा में पशुता का उदय हो जाता है तब वह उससे भेंटता है और कहता है जय अश्वत्थामा की। अश्वत्थामा उसे यह कहने से रोकता है और कहता है तुम्हारी भविष्यवाणी की भांति ही मेरा धनुष भी व्यर्थ हुआ। वृद्ध याचक कहता है, "नहीं है पराजय यह दुर्योधन/ इसको तुम मानो नए सत्य की उदय-बेला/ मैंने बतलाया था/ उसको झूठा भविष्य/ अब जाकर उसको बतलाऊँगा/ वर्त्तमान से स्वतंत्र कोई भविष्य नहीं/ अब भी समय है दुर्योधन/ समय अब भी है/ हर क्षण इतिहास बदलने का क्षण होता है।"
प्रहरी : दो प्रहरी हैं जो तत्कालीन परिस्थितियों पर टिपण्णी व आपसी वार्तालाप करते हुए कथा को गतिशील बनाते हैं।
व्यास : व्यास एक महर्षि हैं जिन्होंने संजय को दिव्य दृष्टि दी। महाभारत के युद्ध में जब अर्जुन और अश्वत्थामा दोनों ने एक दूसरे पर ब्रह्मास्त्र साधा तब उन्होंने उन्हें रोकने के लिए युद्ध भूमि में आकाशवाणी की।
विदुर : विदुर कृष्ण के भक्त तथा अनुगामी थे। ये कौरवों की राजसभा में एक मंत्री और नीतिज्ञ पुरुष थे।
युधिष्ठिर : पांडवों के ज्येष्ठ भ्राता जिनके अर्द्धसत्य के कारण द्रोणाचार्य की मृत्यु हुई। ये सशरीर स्वर्ग गए परंतु अपने इस अर्द्धसत्य वाले छल के कारण उनकी एक ऊँगली गल गई। इन्हें उच्चतर मानवीय मूल्यों का प्रतीक माना जाता है।
द्रोणाचार्य: कौरवों और पांडवों ने बाल्यकाल में इनसे शस्त्र विद्या सीखी थी। शास्त्रों का ज्ञान पाया था। महाभारत के युद्ध में गुरु द्रोणाचार्य कौरवों के पक्ष से लड़ रहे थे। अश्वत्थामा इनका पुत्र था। 'अश्वत्थामा हतो हत, नरो वा कुंजरो' के शोरगुल में इनका ध्यान विभ्रमित हो गया। युधिष्ठिर की वाणी पर इनका अटूट विश्वास था। उसके मुख से 'अश्वत्थामा मारा गया' सुनते ही गुरु द्रोण ने अपना शस्त्र नीचे रख दिया और तभी मौका पाकर छल से धृष्टद्युम्न ने इनकी हत्या कर दी।
अश्वत्थामा : अश्वत्थामा कौरव पक्ष का अंतिम सेनापति जिसने कृतवर्मा एवं कृपाचार्य के सहयोग से रात्रि के समय शिविर में सोते हुए पांडवों को छल से मारने की योजना बनाई। और एक नृशंस हत्याकांड किया। उसके भीतर जो बर्बरता व्यापी उसके संदर्भ में उसका विचार है कि "उस दिन से मेरे अंदर भी/ जो शुभ था, कोमलतम था/ उसकी भ्रूण हत्या/ युधिष्ठिर के अर्द्धसत्य ने कर दी/ धर्मराज होकर वे बोले/ नर या कुंजर/ मानव को पशु से उन्होंने पृथक नहीं किया/ उस दिन से मैं हूँ/ पशु मात्र, अंध बर्बर पशु" युधिष्ठिर के अर्द्धसत्य ने उसे पशु बना दिया। वह अपने पिता की हत्या का बदला लेने को आतुर है। वह अपने मित्र दुर्योधन की पराजय का बदला लेना चाहता है। पाश्विक वृत्ति के प्रतीक के रूप में अश्वत्थामा का चरित्र उभरा है।
कृपाचार्य: अश्वत्थामा के मातुल और कौरव पक्ष के योद्धा।
युयुत्सु: कौरवों में से एक जिसने पांडवों का पक्ष लिया, यह जानकर कि उनका पक्ष सत्य और धर्म का है। कौरवों के विरुद्ध जाकर उसने अपने सगे भाइयों, माता-पिता एवं प्रजाजनों का

तिरस्कार सहा। पांडव पक्ष की विजय के बाद जब वह राजमहल लौटा तो उसकी संज्ञा गिद्धवत शिशुभक्षी, मायावी और दैत्याकार से दी गई।

भीम के निरंतर व्यंग्य बाणों से आहत होकर एक दिन उसने स्वयं को ही भाले से वेध दिया। युयुत्सु के रूप में एक आस्थावान मनुष्य की आस्था छलनी हो गई जिससे वह आत्मघात की ओर प्रवृत्त हुआ।

गूंगा सैनिक : "नष्ट किया है खुद मैंने/ जिसका जीवन/ वह कैसे अब मेरी ही करुणा स्वीकार करे/ ...जय है यह कृष्ण की/ जिसमें मैं वधिक हूँ/ मातृवंचित हूँ/ सबकी घृणा का पात्र हूँ।"- यह कथन युयुत्सु का है। यह गूंगा सैनिक वही है जिसके घुटने युयुत्सु के बाण से झुलस गए थे। अभी वह सैनिक प्यासा है जिसे पानी पिलाने के लिए विदुर युयुत्सु को भेजते हैं तब वह यह कहता है कि जिसका जीवन मैंने ही नष्ट किया वह मेरी करुणा को कैसे स्वीकार करेगा!

बलराम: कृष्ण के बड़े भाई जो कृष्ण की कूट बुद्धि से क्रोधित हैं। कृष्ण के प्रति उनका कहना है कि कौरव और पांडव दोनों ही संबंधी हैं फिर युद्ध में सत के नाम पर किसी एक पक्ष के हितार्थ उनके द्वारा कूट बुद्धि का प्रयोग क्यों किया गया?

कृष्ण: अंधायुग के विशिष्ट और दिव्य पात्र। कुरुक्षेत्र के युद्ध में वास्तविक जीत इनकी ही हुई क्योंकि यही परात्पर ब्रह्म हैं जिनकी इच्छा से सब संचालित होता है। गांधारी के शाप को अंगीकार करके इन्होंने अपनी उदात्तता का परिचय दिया।

धृष्टद्युम्न: द्रौपदी का भाई और राजा द्रुपद का पुत्र।

शिखंडी: द्रुपद का पुत्र जिसकी ओट लेकर अर्जुन ने भीष्मपितामह को बाण मारा।

सात्यिकी: पांडव पक्ष का एक योद्धा।

शतानीक: पांडव पक्ष का एक योद्धा।

अर्जुन: सर्वश्रेष्ठ धनुर्धारी और पराक्रमी योद्धा जिसने व्यास के वचन को मानकर अपना ब्रह्मास्त्र वापस ले लिया। पांडवों में से एक जिसने स्वयंवर में लक्ष्यवेध करके द्रौपदी से विवाह किया था।

भीम: बलशाली और गदाधारी भीम जिनके व्यंग्य बानों से आहत होकर धृतराष्ट्र और गांधारी वन को चले गए तथा युयुत्सु ने आत्महत्या कर ली। पांडवों में से एक।

दुर्योधन: कौरवों का ज्येष्ठ भ्राता और धृतराष्ट्र का ज्येष्ठ पुत्र जिसके अहं, राज्यलिप्सा और स्वार्थपरता के कारण कुरुक्षेत्र का युद्ध हुआ।

बोध प्रश्न

1. अश्वत्थामा के चरित्र पर प्रकाश डालिए।
2. द्रोणाचार्य की मृत्यु कैसे हुई?

8.3.2.2 नाट्य शिल्प एवं भाषा-शैली

'अंधायुग' की रचना मंचन की दृष्टि से ही की गई है। अपने समय के मानव जीवन में फलीभूत होते आंतरिक और बाह्य द्वंद्वों को उद्घाटित करने के लिए इससे बेहतर कथा नहीं मिल सकती। कौरव और पांडव एक ही कुल के बंधुओं के मध्य संघर्ष की यह गाथा और इससे उत्पन्न परिणाम को देखकर वर्तमान में सजगता का संचरण हो, संभवतः यह नाटककार का अभीष्ट रहा हो। नाट्य शिल्प के तहत जिन महत्वपूर्ण तत्वों की ओर ध्यान दिया जाता है, वे इस प्रकार हैं-

दृश्य विधान, कथा के अनुकूल रंगमंच का विधान, पात्रों के अनुकूल भाषा, संवादों के माध्यम से अंतर्द्वंद्व का प्रभावी उद्घाटन, मूल कथा को प्रवाहमय बनाए रखने के लिए विविध काल्पनिक घटनाओं एवं पात्रों का सृजन, कथागायन एवं नर्तक की व्यवस्था। का दृश्य विधान निर्देश भी हर अंक के प्रारंभ में दे ही दिया गया है। जैसे प्रथम अंक में, "नेपथ्य से उद्घोषणा तथा मंच पर नर्त्तक के द्वारा उपयुक्त भावनाट्य का प्रदर्शन। शंख ध्वनि के साथ पर्दा खुलता है तथा मंगलाचरण के साथ-साथ नर्त्तक नमस्कार मुद्रा प्रदर्शित करता है। उद्घोषणा के साथ-साथ उसकी मुद्राएँ बदलती जाती हैं।" यही नहीं अंक के बीच-बीच में भी पात्रों की गति तथा प्रकाश संबंधी निर्देशों को नाटककार ने दिया है जिससे दृश्य विधान की चारुता बनी रहे।

नाटक के आरंभ में निर्देश शीर्षक के अंतर्गत भी इसके रंगमंच के विधान एवं नाट्य शिल्प पर प्रकाश डाला गया है जो इस प्रकार है, "समस्त कथावस्तु पाँच अंकों में विभाजित है। बीच में अंतराल है। अंतराल के पहले दर्शकों को लंबा मध्यांतर दिया जा सकता है। मंच विधान जटिल नहीं है। एक पर्दा पीछे स्थायी रहेगा। उसके आगे दो पर्दे रहेंगे। सामने का पर्दा अंक के प्रारंभ में उठेगा और अंत तक उठा रहेगा। उस अवधि में एक ही अंक में जो दृश्य बदलते हैं, उनमें बीच का पर्दा उठता गिरता रहता है। बीच का और पीछे का पर्दा चित्रित नहीं होना चाहिए। मंच की सजावट कम-से-कम होनी चाहिए। प्रकाश व्यवस्था में अत्यधिक सतर्क रहना चाहिए।

दृश्य परिवर्तन के समय कथागायन की योजना है। यह पद्धति लोकनाट्य परंपरा से ली गई है। कथानक की जो घटनाएँ मंच पर नहीं दिखाई जाती, उनकी सूचना देने, वातावरण की मार्मिकता को और गहन बनाने या कहीं-कहीं उसके प्रतीकात्मक अर्थों को भी स्पष्ट करने के लिए यह कथागायन की पद्धति अत्यंत उपयोगी सिद्ध हुई है। कथागायक दो रहने चाहिए एक स्त्री और एक पुरुष। कथागायक में जहाँ छंद बदला है, वहाँ दूसरे गायक को गायन-सूत्र ग्रहण कर लेना चाहिए। वैसे भी, आशय के अनुसार उचित प्रभाव के लिए, पंक्तियों को स्त्री या पुरुष गायकों में बाँट देना चाहिए। कथागायन के साथ अधिक वाद्ययंत्रों का प्रयोग नहीं होना चाहिए। गायक स्वर ही प्रमुख रहना चाहिए।"

नाट्य शिल्प की गुणवत्ता उसकी संवाद योजना एवं अभिनय कौशल पर अधिकाधिक निर्भर करती है। संवादों को बोलते समय उसे केवल कविता की तरह या गद्य की तरह सामान्य रूप से उच्चारण कर देना नाटक का यथेष्ट नहीं है। काव्यात्मक संवादों को एक विशेष लय में कहने की आवश्यकता होती है जबकि गद्यात्मक संवादों को भी अर्थ के अनुरूप शब्द विशेष पर बल देकर ही कहना उपयुक्त होता है। ऐसा करने से अभिनेता और अभिनीत पात्र का ऐक्य स्थापित होता है और दर्शक या श्रोता उस अभिनय कला से संचरित रस का आनंद प्राप्त करते हैं।

समूचा नाटक संवादात्मक शैली में लिखा गया है। दोनों प्रहरी जो लेखक के अपने काल्पनिक पात्र हैं; उनका पारस्परिक संवाद पूरे घटनाचक्र के तह को खंगालता है। खोने-पाने और जीने का अर्थ ढूंढते हुए वे पाते हैं कि शासक बदले, विक्षिप्त हुए, शोकग्रस्त हुए पर प्रजाओं का क्या? उन्हें अन्न चाहिए। उन्हें जीवन यापन का साधन चाहिए। उन्हें स्वस्थ विचार वाले शासक चाहिए जिनके उचित आदेशों का वे पालन कर सकें। युद्ध की विभीषिका ने बहुत कुछ निगला पर दिया क्या? पहले अंक के आरंभ में ही कथा गायन के माध्यम से भी युद्ध के परिणाम

के मार्मिक सत्य को व्यंजित किया गया है। देखें, “यह अजब युद्ध है नहीं किसी की भी जय/ दोनों पक्षों को खोना ही खोना है/ अंधों से शोभित था युग का सिंहासन/ दोनों ही पक्षों में विवेक ही हारा/ दोनों ही पक्षों में जीता अंधापन/ भय का अंधापन, ममता का अंधापन/ अधिकारों का अंधापन जीत गया/ जो कुछ सुंदर था, शुभ था कोमलतम था/ वह हार गया, द्वापर युग बीत गया।”

संवादों में प्रयुक्त भाषा सरल, भावानुकूल और पात्रों की मनःस्थिति को सफलता से दर्शाने वाली है। अश्वत्थामा के प्रसंग में स्थिति के अनुकूल उग्र भाषा का प्रयोग किया गया है जिसमें भाषिक प्रयोग के साथ आंगिक चेष्टा भी अपने पूरे उभार पर है। काव्य नाटक प्रायः मुक्त छंद में ही लिखे जाते हैं। यह भी ऐसा ही है। नाटकीय कौशल की दृष्टि से संवादों के प्रयोग में सुविधा हो इसलिए ही मुक्त छंद का प्रयोग किया जाता है। लेकिन नाटक के अंकों के प्रारंभ होने से पहले जो कथागायन का आयोजन किया जाता है, उनमें छंदबद्धता होती है। हर अंक के कथागायन में अलग-अलग छंद व उनके अनुरूप लय का समावेश किया जाता है। इस काव्य नाटक की भाषा बिंबधर्मिता और लयात्मकता से पूर्ण है। इसके कुछ विशिष्ट भाषिक प्रयोग निम्नवत हैं-

शाप की भाषा: क्यों नहीं तुमने वह शाप दिया भीम को/ जो तुमने दिया निरपराध अश्वत्थामा को/ तुमने किया है प्रभुता का दुरूपयोग/ यदि मेरी सेवा में बल है/ संचित तप में धर्म है/ तो सुनो कृष्ण/ प्रभु हो या परात्पर हो/ कुछ भी हो/ सारा तुम्हारा वंश/ इसी तरह पागल कुत्तों की तरह/ एक दूसरे को परस्पर फाड़ खाएगा/ तुम खुद उनका विनाश करके कई वर्षों बाद/ किसी घने जंगल में/ साधारण व्याघ्र के हाथों मारे जाओगे।

विनम्र और करुण भाषा: माता! प्रभु हूँ या परात्पर/ पर पुत्र हूँ तुम्हारा, तुम माता हो/ मैंने अर्जुन से कहा/ सारे तुम्हारे कर्मों का पाप-पुण्य, योगक्षेम मैं/ वहन करूँगा अपने कंधों पर/ अट्ठारह दिनों के इस भीषण संग्राम में/ कोई नहीं केवल मैं ही मरा हूँ करोड़ों बार/ जितनी बार जो भी सैनिक भूमिशायी हुआ/ कोई नहीं था/ वह मैं ही था/ गिरता था घायल होकर जो रणभूमि में/ अश्वत्थामा के अंगों से/ रक्त पीप, स्वेद बनकर बहूँगा/ मैं ही युग-युगांतर तक/ जीवन हूँ मैं/ तो मृत्यु भी तो मैं ही हूँ माँ/ शाप यह तुम्हारा स्वीकार है।

पश्चाताप की भाषा: कर देते शाप यह मेरा तुम अस्वीकार/ तो क्या मुझे दुःख होता/ मैं थी निराश, मैं कटु थी,/ पुत्रहीना थी।

इसका दृश्य विधान भी अत्युत्तम है। पूरा दृश्य तो भयंकर रक्तपात और नरसंहार या विलाप का है पर प्रभास तीर्थ का बहुत सुरम्य वर्णन यहाँ किया गया है साथ ही महाप्रयाण से पूर्व श्रीकृष्ण की अंतिम छवि का मधुर चित्रण भी यहाँ देखने योग्य है- “वह था प्रभास वन-क्षेत्र, महासागर तट पर/ नभचुम्बी लहरें रह-रह खाती थीं पछाड़/ था घुला समुद्री फेन समीर झकोरों में/ बह चली हवा,वह खड़ खड़ खड़ कर उठे ताड़/ थी वनतुलसा की गंध वहाँ, था पावन छायामय पीपल/ जिसके नीचे धरती पर बैठे थे प्रभु शांत, मौन, निश्चल/ लगता था कुछ-कुछ थका हुआ वह नील मेघ-सा तन सांवल/ माला के सबसे बड़े कमल में बची एक पंखुड़ी केवल।”

इसी प्रभास क्षेत्र में हिरण के भ्रम में जरा नाम के व्याध ने प्रभु पर बाण छोड़ा, जो उनके देहावसान का कारण बना।

भाषा और संवादों के प्रयोग से पात्रों की चारित्रिक गतिविधि भी स्पष्ट हुई है। गांधारी स्त्री है, कोमल मन वाली है पर उसकी अंधी ममता का क्रूरतम रूप तब देखने को मिलता है जब वह संजय से अश्वत्थामा द्वारा पांडवों के शिविर में भयानक रक्तपात की घटना को प्रसन्न मन से सुनती है। जब उत्तरा के गर्भ पर ब्रह्मास्त्र गिर जाता है तब धृतराष्ट्र, युयुत्सु से कहता है कि तुम मेरी आयु लेकर भी जियो, क्या पता पांडव तुम्हें ही राजपाट दे दें। जिस अंधता का परिणाम पूरा कुरुवंश झेल रहा है उस अंधता से धृतराष्ट्र का मोह अब भी नहीं छूटा है।

बोध प्रश्न

- अंधायुग के नाट्य शिल्प पर प्रकाश डालें।
- प्रभास तीर्थ एवं श्रीकृष्ण की अंतिम छवि का वर्णन करें।
- अंधायुग की भाषा-शैली पर प्रकाश डालें।
- कथागायन की व्यवस्था नाटकों में क्यों रखी जाती है?

8.4 पाठ सार

'अंधायुग'काव्य नाटक धर्मवीर भारती की रचना है। यह कुल पांच अंकों का काव्य नाटक है। महाभारत के अठारहवें दिन की संध्या से लेकर प्रभास तीर्थ में कृष्ण के मृत्यु के क्षण तक की कहानी को नाटककार ने इसके आधार स्वरूप ग्रहण किया है। इस नाटक की रचना मंचन के उद्देश्य से ही की गई। इसे लोकनाट्य के रूप पर, रंगमंच पर कई बार प्रस्तुत किया गया। इसका रेडियो रूपांतरण भी प्रस्तुत किया जा चुका है।

इस नाटक के रचनाकार इसकी रचना को एक संयोग मात्र मानते हैं। सत्य के कुछ दुर्लभ कण को खोजने के लिए उन्हें इस अंधायुग में पैठने की आवश्यकता महसूस हुई। महाभारत का अंधायुग जो युद्ध के बाद प्रकट हुआ पर इसके प्रकट होने के आसार युद्ध से पूर्व से ही बन रहे थे। युद्ध के उपरांत धर्मराज युधिष्ठिर के राज में भी इन विकृतियों और पथभ्रष्टता ने अपनी जड़ें जमा लीं। युद्ध का परिणाम यही होता है। आधुनिक समाज भी राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर हुए युद्ध व उनके परिणामों को देख चुका है। युद्ध के रक्तपात और नरसंहार से किसी का भला नहीं होता है। वर्तमान समय में भी इस रचना की प्रासंगिकता बरकरार है। पाँच अंकों के इस काव्य नाटक में संजय महर्षि व्यास द्वारा प्राप्त दिव्यदृष्टि से धृतराष्ट्र को युद्ध के पल-पल की खबर देता है। युद्ध के उपरांत जब उसकी दिव्यदृष्टि छिन जाती है तो उसे लगता है कि अब वह अपनी सीमित दृष्टि से कैसे संतुष्ट रह पाएगा? यह मानव का स्वभाव है असीमित उपभोग के बाद सीमित साधनों में उसे संतुष्टि नहीं मिलती है। युद्ध के बाद पूरा हस्तिनापुर का महल कौरव विधवाओं से भरा हुआ है। प्रहरी आसमान में गिद्धों को मंडराते हुए देख रहे हैं जो अशकुन का प्रतीक है। दुर्योधन की हार की खबर से अंतःपुर में आर्त्तनाद शुरू हो जाता है। युद्धभूमि से घायल सैनिक वापस आते हैं। धृतराष्ट्र उनके अंगों को छूकर संजय द्वारा सुने हुए शब्दों को साकार देखने की कोशिश करता है। सफल नाटकीय संयोजन के साथ कथा आगे बढती है। दोनों प्रहरी अपने वार्तालाप के माध्यम से स्थिति की गंभीरता पर टिप्पणी करते हैं। उनकी टिप्पणियों से यथार्थ

को समझने में मदद मिलती है। अश्वत्थामा दुर्योधन को भीम द्वारा अधर्म से हराए जाने पर बौखलाया हुआ है और प्रतिशोध लेने को आतुर भी। दुर्योधन की उपस्थिति में उसे कौरव दल का नया सेनापति बनाया गया। कौआ और उल्लू की अवांतर कथा का संयोजन कर नाटककार ने अश्वत्थामा के प्रतिशोध लेने का तरीका निश्चित कर दिया। रात्रि में पांडव शिविर पर हमला बोलकर अश्वत्थामा ने अपनी बर्बर पशुता को स्थापित कर दिया। बची हुई पाशविकता का परिचय उसने उत्तरा के गर्भ पर ब्रह्मास्त्र गिरा कर दे दिया। पुत्र शोक से व्याकुल गांधारी अश्वत्थामा के इस कृत्य से अत्यंत प्रसन्न हुई। वह उससे मिलना चाहती है। कौरव पक्ष के सभी लोगों का अंतिम संस्कार करने हेतु महल के बचे हुए सारे लोग प्रस्थान करते हैं, युयुत्सु भी साथ में है। अश्वत्थामा की आहट पा सभी उसे रोक देते हैं। गांधारी अश्वत्थामा को देखकर उसके शरीर को वज्र का बना देती है ताकि कृष्ण उसका कुछ न बिगाड़ पाए। उत्तरा का गर्भ नष्ट करने के पाप का फल उसे भोगना ही था। उसके पूरे शरीर पर रक्त-पीप भरे फोड़े निकल आए। पुत्र शोक से व्याकुल गांधारी ने कृष्ण को शाप दिया कि कोई साधारण व्याध तुम्हारा वध करेगा और उससे पूर्व तू अपने हाथों से अपने वंश का नाश करोगे। कृष्ण ने सहर्ष माता गांधारी का शाप अंगीकार कर लिया। तब गांधारी को पछतावा हुआ। उस समय कृष्ण ने एक सत्य गांधारी से कहा कि युद्ध में जो लोग मरे, वास्तव में वे लोग नहीं, मैं ही मर रहा था। अश्वत्थामा के घावों से जो रक्त-पीप बह रहा है वह मैं ही हूँ। मैंने सदा ही सबका भार अपने ऊपर लिया है। अपने अंतिम समय में कृष्ण ने अपना दायित्व सभी लोगों में बाँट दिया। अब तक वे सबको जिलाने का काम करते थे, सृजन करते थे। द्वापर के बीतते ही उन्होंने यह सृजन की शक्ति मनुष्य के मन में निवास करने वाली शुभ वृत्तियों को सौंपा। जब भी कहीं शुभ और सकारात्मक प्रयत्न होंगे वहां श्रीकृष्ण सक्रिय रहेंगे- यह उनका अंतिम वचन है।

यह संवादात्मक शैली में रचित है। संवादों की भाषा सरल और व्यावहारिक है। पात्रों की स्थिति के अनुरूप भाषा का संयोजन किया गया है। देश काल और स्थिति को ध्यान में रखकर ही संवादों की योजना बनाई गई है। भाषा में काव्यात्मकता का सहज पुट होने से बिंबधर्मिता का भी निर्वाह किया गया है। लयात्मकता हर जगह एकरूप नहीं है। पात्रों के मनोभावों के अनुरूप सटीक शब्दों का चयन किया गया है। पात्रों की भाषिक अभिव्यक्तियाँ उनके चरित्र को स्पष्ट करती हैं।

8.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं -

1. भय और आशंका से मुक्त होकर ही व्यक्ति वास्तविक ज्ञान प्राप्त कर सकता है या परम सत्ता से साक्षात्कार कर सकता है।
2. सत्य का स्वरूप व्यापक है। वैयक्तिक सीमाओं में ज्ञात होनेवाला सत्य व्यक्ति की अपनी मोह और ममता से संचालित होता है। पराजय से उत्पन्न पीड़ा व्यक्ति को दृढ़ बनाती है।
3. नियति पूर्व निर्धारित नहीं होती है। मानव अपने कर्म और निर्णय से अपनी नियति को बनाता और बिगाड़ता है।

4. आत्मघात अपराध है। विदुर के शब्दों में, “मुक्ति मिल जाती है सबको कभी-न-कभी/ वह जो बंधुघाती है/ हत्या जो करता है माता की, प्रिय की/ बालक की, स्त्री की/ किंतु आत्मघाती/ भटकता है अँधियारे लोकों में/ सदा सदा के लिए बन कर प्रेत।”
5. आस्था मनुष्य को परिस्थितियों से जूझना सिखाती है।

8.6 शब्द संपदा

1. अवध्य = जिसका वध न किया जा सके
2. आद्यांत = आदि से अंत तक
3. उत्पाद्य = कल्पना पर आधारित कथा
4. गिद्धवत = गिद्ध की तरह
5. तटस्थ = निरपेक्ष
6. नरो वा कुंजरो = मनुष्य या हाथी
7. पटाक्षेप = पर्दा का गिरना (किसी भी नाट्य मंचन में पर्दा का गिरना)
8. प्रख्यात = इतिहास या पुराण पर आधारित कथा
9. भान = ज्ञान
10. मातुल = मामा
11. हतो हत = मारा गया

8.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. अंधायुग की कथावस्तु को अपने शब्दों में लिखें।
2. आधुनिक युग के संदर्भ में अंधायुग की प्रासंगिकता पर विचार करें।
3. अंधायुग में वर्णित मानसिक अंतर्द्वंद्व का चित्रण कीजिए।
4. अंधायुग की भाषा-शैली एवं संवाद योजना पर प्रकाश डालिए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. अंधायुग के मुख्य पात्रों की चरित्रगत विशिष्टताओं का उल्लेख करें।
2. युधिष्ठिर का अर्द्धसत्य क्या है? इसके परिणामों की चर्चा कीजिए।
3. उल्लू और कौआ के घटना से कौन प्रभावित हुआ?
4. धर्मवीर भारती के साहित्यिक अवदान पर प्रकाश डालें।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. अंधायुग काव्य नाटक में कितने अंक हैं? ( )

(अ) 4 (आ) 5 (इ) 1 (ई) 6

2. अंधायुग की कथा ....है। ( )

(अ) प्रख्यात (आ) उत्पाद्य (इ) दोनों (ई) कोई नहीं

3. निम्नलिखित में से कौन-सी रचना धर्मवीर भारती की नहीं है? ( )

(अ) ठंडा लोहा (आ) गुनाहों का देवता (इ) अंधायुग (ई)पल्लव

4. महाभारत के किस दिन की कथा को अंधायुग रचना का आधार बनाया गया? ( )

(अ) 1 (आ) 12 (इ) 18 (ई) 10

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. हर क्षण .... बदलने का क्षण होता है।
2. ....अपराध है।
3. गिद्धों का मंडराना ....सूचक है।
4. वह था .... वन क्षेत्र महासागर तट पर।

III. सुमेल कीजिए -

1. संजय	(अ) आशा का प्रतीक
2. अश्वत्थामा	(आ) ज्ञानी
3. विदुर	(इ) आत्मघाती अंध
4. युयुत्सु	(ई) नरपशु
5. मोरपंख	(उ) निष्क्रिय

8.8 पठनीय पुस्तकें

1. अंधायुग : धर्मवीर भारती
2. अंधायुग पाठ और प्रदर्शन : जयदेव तनेजा
3. कविता का प्रति संसार : निर्मला जैन

इकाई 9 : मृणाल पाण्डे : एक परिचय

रूपरेखा

9.1 प्रस्तावना
9.2 उद्देश्य
9.3 मूल पाठ : मृणाल पाण्डे : एक परिचय
9.3.1 जीवन परिचय
9.3.2 रचना यात्रा
9.3.3 हिंदी साहित्य में मृणाल पाण्डे का स्थान
9.4 पाठ सार
9.5 पाठ की उपलब्धियाँ
9.6 शब्द संपदा
9.7 परीक्षार्थ प्रश्न
9.8 पठनीय पुस्तकें

9.1 प्रस्तावना

प्रिय छात्रो! मृणाल पाण्डे एक प्रसिद्ध उपन्यासकार, कथाकार, नाटककार, पत्रकार और स्तंभकार हैं। साठोत्तरी महिला साहित्यकारों में मृणाल पाण्डे का महत्वपूर्ण स्थान है। वे एक बहुमुखी प्रतिभा संपन्न कथाकार, नाटककार, समीक्षक एवं पत्रकार हैं। इस इकाई में आप मृणाल पाण्डे का सामान्य परिचय प्राप्त करेंगे।

9.2 उद्देश्य

प्रिय छात्रो! इस इकाई के अध्ययन से आप -

- मृणाल पाण्डे के जीवन और व्यक्तित्व को समझ सकेंगे।
- मृणाल पाण्डे की रचना यात्रा से परिचित हो सकेंगे।
- मृणाल पाण्डे की प्रमुख कृतियों से परिचित हो सकेंगे।
- मृणाल पाण्डे के रचना वैशिष्ट्य को जान सकेंगे।
- मृणाल पाण्डे के साहित्य की पृष्ठभूमि से अवगत हो सकेंगे।
- हिंदी साहित्य में मृणाल पाण्डे के स्थान एवं महत्व को जान सकेंगे।

9.3 मूल पाठ : मृणाल पाण्डे : एक परिचय

प्रिय छात्रो! साहित्यकार अपने जीवन के अनुभवों और अनुभूतियों को साहित्य के माध्यम से अभिव्यक्त करता है। अतः साहित्यिक कृतियों में उस साहित्यकार के व्यक्तित्व का प्रभाव दिखाई देना स्वाभाविक है। मृणाल पाण्डे के साहित्य पर भी उनके व्यक्तित्व के प्रभाव को देखा जा सकता है। तो आइए! पहले उनके व्यक्तित्व से संबंधित पहलुओं को समझने का प्रयास करेंगे।

9.3.1 जीवन परिचय

मृणाल पाण्डे का जन्म 26 फरवरी, 1946 में मध्य प्रदेश के टीकमगढ़ नामक गाँव में हुआ। यह एक पहाड़ी अंचल है। आप उनके लेखन पर इस अंचल के प्रभाव को देख सकते हैं। कहने का आशय है कि उनकी रचनाओं में पहाड़ी जन-जीवन से संबंधित अनेक आयामों को आप देख सकते हैं, उन्हें पहचान सकते हैं।

मृणाल पाण्डे के पिताजी का नाम है शुकदेव पंत और माता का नाम है गौरा। उनके पिता जी कर्तव्य-दक्ष व्यक्ति थे। वे हमेशा अपने परिवार के साथ खड़े रहते थे। मृणाल पाण्डे की माँ गौरा हिंदी साहित्य जगत में शिवानी के नाम से प्रसिद्ध हैं। उनको याद करते हुए मृणाल कहती हैं कि "माँ का जन्म 17 अक्टूबर को विजयादशमी के दिन हुआ था। इसलिए हम उनके जन्मदिन पर दो बार याद करते हैं। उनका जीवन बहुत उतार-चढ़ाव भरा रहा, पर उन्होंने कभी भी हिम्मत नहीं हारी। मैं उनकी सबसे मुँहलगी और पहली संतान थी। जब माँ ने अपनी पहचान बनानी शुरू की, तब मैं स्कूल में पढ़ती थी। साठ के दशक तक माँ के उपन्यास धर्मयुग और साप्ताहिक हिंदुस्तान में छपने लगे थे। वह बहुत तेजी से लिखती थीं और कई बार तो वह अपना नाम लिखना ही भूल जाती थीं। वह हाथ से सादे फुलस्केप कागज पर लिखतीं और मैं उसे हर सप्ताह रजिस्टर्ड पोस्ट करती थी। कभी-कभी मैं उन्हें धमकाती थी कि परसों वाली तुम्हारी पांडुलिपि में हल्दी के छींटे थे। मुझे बहुत शर्म आ रही थी। कम से कम कागज-पत्तर तो साफ-सुथरे भेजा करो।" छात्रो! यदि कहें कि मृणाल को साहित्य के प्रति अनुराग विरासत में मिली तो गलत नहीं होगा।

मृणाल की प्रारंभिक शिक्षा-दीक्षा नैनीताल में संपन्न हुई। उसके बाद उन्होंने इलाहाबाद विश्वविद्यालय से एम.ए. की उपाधि प्राप्त की। अंग्रेजी एवं संस्कृत साहित्य, प्राचीन भारतीय इतिहास, पुरातत्व, शास्त्रीय संगीत तथा ललित कलाओं की शिक्षा वाशिंगटन डी सी के कारकोरन स्कूल ऑफ आर्ट्स से प्राप्त की। उन्होंने मध्य प्रदेश, भोपाल और नई दिल्ली के साथ-साथ अमेरिका तथा यूरोप में भी अध्यापन का कार्य किया। एक साक्षात्कार में उन्होंने यह स्पष्ट किया कि जो कुछ सीखा वे स्वांत:सुखाय के लिए सीखा है। "मैंने संगीत प्रदर्शन के लिए नहीं, बल्कि अपने आनंद के लिए सीखा। बाहर गाने की कभी सोची नहीं। वैसे मैंने अमेरिका में चित्रकला की भी विधिवत शिक्षा ली है, पर वह भी निजी स्वाद के लिए। हर चीज दूसरों को परोसने का आग्रह नहीं रहा।"

मृणाल पाण्डे एक सफल मीडियाकर्मी भी हैं। 1984 से 1987 तक महिला पत्रिका 'वामा' का संपादन किया। 2009 तक हिंदी दैनिक 'हिंदुस्तान' की संपादक रहीं। स्टार न्यूज से भी जुड़ी। 'प्रसार भारती' की चेयरमेन भी बनी। लोकसभा चैनल के साप्ताहिक साक्षात्कार कार्यक्रम 'बातों-बातों में' का संचालक भी हैं। पत्रकारिता के क्षेत्र में विशिष्ट योगदान हेतु भारत सरकार ने उन्हें पद्मश्री से सम्मानित किया।

मृणाल पाण्डे ने कई वर्ष तक महिला रोजगार योजना में भी कार्य किया था। उनके चिंतन- मनन में 'स्त्री' की भलाई को देखा जा सकता है। वे स्त्रियों के लिए ग्रास रूट स्तर पर कार्य करती हैं। वे एक समाजसेवी भी हैं। भारत की महिला पत्रकारों की राष्ट्रीय संस्था 'इंडियन

वीमेन प्रेस कॉर्पस' की वे संस्थापक अध्यक्ष हैं। अनेक संस्थाओं से भी वे जुड़ी हैं। उन्होंने नेशनल हेराल्ड समूह के संपादकीय सलाहकार के रूप में भी महत्वपूर्ण निभाई। कुछ वर्षों तक उन्होंने 'सेल्फ इम्पलोइड वीमेन कमीशन' की सदस्य के रूप में भी महती भूमिका निभाई। स्त्री शिक्षा और स्त्री अधिकारों को लेकर वे विशेष रूप से जनता में जागृति लाने की कोशिश करती हैं। उनका मानना है कि शिक्षा किसी भी व्यक्ति के लिए आत्मसम्मान का सबसे बड़ा द्वार है। यह अँधेरे से उजाले की ओर जाने की चाबी है।

मृणाल पाण्डे शांत स्वभाव की हैं। लेकिन अन्याय को देखकर को मौन धारण नहीं कर सकती। अन्याय के विरुद्ध आवाज उठाने में वे पीछे नहीं हटती। वे अपने विचारों को किसी लाग-लपेट के धड़ल्ले से व्यक्त करती हैं। मृणाल पाण्डे प्रतिभा संपन्न, कुशाग्र, जिज्ञासु स्वभाव की मनीषी हैं।

बोध प्रश्न

- मृणाल पाण्डे ने किस महिला पत्रिका का संपादन किया?
- मृणाल पाण्डे के माता-पिता के बारे में आप क्या जानते हैं?
- मृणाल पाण्डे किस संस्था के संस्थापक अध्यक्ष हैं?

9.3.2 रचना यात्रा

प्रिय छात्रो! मृणाल पाण्डे साहित्य के क्षेत्र में अपनी एक निजी पहचान बना चुकी हैं। उनका रचना संसार विपुल है। नाटक, कहानी, उपन्यास, निबंध, अनुवाद, आलोचना और पत्रकारिता आदि क्षेत्रों को उन्होंने समृद्ध किया। स्त्री विषयक लेखन के लिए वे विशेष रूप से जानी जाती हैं।

बचपन से ही सृजनात्मक लेखन के प्रति मृणाल पाण्डे का रुझान रहा। इक्कीस वर्ष की आयु में उनकी पहली कहानी 'कोहरा और मछलियाँ' (1967) हिंदी साप्ताहिक 'धर्मयुग' में प्रकाशित हुई। तब से वे निरंतर लिखने लगी। उनकी प्रेरणा उनकी माँ शिवानी ही है। नाना-नानी से भी मृणाल को लेखन की प्रेरणा मिली।

मृणाल पाण्डे की प्रमुख रचनाएँ हैं - 'यानी कि एक बात थी', 'बचुली चौकीदारिन की कढ़ी', 'दरम्यान', 'शब्द बेधी', 'एक नीच ट्रैजेडी', 'एक स्त्री का विदागीत' और 'चार दिन की जवानी तेरी' आदि प्रमुख कहानी संग्रह हैं तो 'विरुद्ध', 'अपनी गवाही', 'हमका दियो परदेस', 'रास्तों पर भटकते हुए', 'पटरंगपुर पुराण', 'देवी' और 'सहेला रे' प्रमुख उपन्यास हैं। 'ओ उब्बीरी', 'बंद गलियों के विरुद्ध', 'स्त्री : लंबा सफर', 'स्त्री : देह की राजनीति से देश की राजनीति तक', 'ध्वनियों के आलोक में स्त्री' आदि प्रमुख आलोचना ग्रंथ हैं। 'जो राम रचि राखा', 'आदमी जो मछुआरा नहीं था', 'काजर की कोठारी', 'चोर निकल के भागा', 'शर्मा जी की मुक्ति कथा' उनके प्रसिद्ध नाटक हैं तो 'सुपरमैन की वापसी' तथा 'धीरे-धीरे रे माना' रेडियो नाटक है।

मृणाल पाण्डे साहित्य को स्त्री और पुरुष के दायरे से अलग करने को सही नहीं मानती। वे यहाँ तक कहती हैं कि "नारीवादी विमर्श हिंदी में बहुत सतही और नकलची बना हुआ है। जमीनी शोध और लेखन की बजाय उसमें आत्मकथात्मकता और आत्मप्रदर्शन ही अधिक है।" उनके लेखन के संबंध में जब प्रश्न पूछा गया तो उन्होंने कहा कि लेखकीय मन कई स्त्रोतों से

निरंतर जीवन रस ग्रहण करता रहता है। अतः कब, किस लिए, क्या परिपाक होगा यह कहना कठिन है। लेखक का दायित्व है यथास्थिति को सामने रखना। इसका यह अर्थ भी नहीं कि यथार्थ के नाम पर फूहड़ साहित्य रचा जाए।

मृणाल पाण्डे अनेक पुरस्कारों से सम्मानित हो चुकी हैं। पत्रकारिता के क्षेत्र में उग्र स्मृति सम्मान, महिला शिरोमणि पुरस्कार, हरिदत्त शर्मा पुरस्कार, महाराणा ऑफ मेवाड़ फाउंडेशन हल्दीघाट पुरस्कार तथा साहित्य के लिए दिल्ली राज्य साहित्य अकादमी पुरस्कार भी प्राप्त हुआ। 2006 में पत्रकारिता के क्षेत्र में विशिष्ट योगदान हेतु उन्हें पद्मश्री पुरस्कार से सम्मानित किया गया था।

बोध प्रश्न

- मृणाल पाण्डे की पहली कहानी का नाम बताइए।
- मृणाल पाण्डे की आलोचनात्मक कृतियों का नाम बताइए।
- मृणाल पाण्डे को पत्रकारिता के क्षेत्र में किस सम्मान से सम्मानित किया गया है?

साहित्यिक प्रदेय

छात्रो! मृणाल पाण्डे यह मानती हैं कि हर लेखक के सामने चुनौती होती है और संकट की स्थिति तो हर समय विद्यमान रहता है। वे कहती हैं कि "संकट अब दिशाहीनता का नहीं, हर लेखक को अपने लिए सही विधा चुनने का है।" उन्होंने लेखन के लिए कहानी, उपन्यास और नाटक के साथ-साथ आलोचना आदि विभिन्न विधाओं को अपनाया है। उनकी प्रमुख कृतियों पर अब थोड़ी सी चर्चा कर लेंगे।

कहानीकार के रूप में

मृणाल पाण्डे की कहानियों में मध्यवर्गीय परिवार को देखा जा सकता है। टूटते मानवीय मूल्यों के प्रति गहन चिंता को इनकी कहानियों में देखा जा सकता है। अपनी कहानियों के संबंध में स्वयं मृणाल पाण्डे ने लिखा है कि "हर कहानी या उपन्यास घटनाओं-पात्रों के जरिए सत्य से एक आंशिक और कुतूहल भरा साक्षात्कार होता है। साहित्य हमें जीवन जीना सिखाने की बजाय टुकड़ा-टुकड़ा दिखाता है। वे तमाम नरक-स्वर्ग, वे राग-विराग, वे सारी उदारता और संकीर्णता भरे मोड, जिनका सम्मिलित नाम मानव-जीवन है। जो साहित्य उघाड़ता है, वह अंतिम सत्य या सार्वभौम आदर्श नहीं बहुस्तरीय यथार्थ होता है।" (मृणाल पाण्डे, यानी की एक बात थी, फ्लैप से)। दरम्यान (कहानियों का पहला संग्रह), शब्द बेधी, एक स्त्री का विदागीत, एक नीच ट्रेजेडी, यानी की एक बात, बचुली चौकीदारिन की कढ़ी, चार दिन की जवानी तेरी, गंध गाथा आदि उनके प्रसिद्ध कहानी संग्रह हैं।

मृणाल पाण्डे की पहली कहानी है 'कोहरा और मछलियाँ'। इसमें रति नामक युवती की मानसिक अंतर्द्वंद्व का मार्मिक चित्रण है। 'गंध गाथा' कहानी संग्रह की कहानियों के बारे में स्पष्ट करते हुए मृणाल पाण्डे कहती हैं कि साहित्य पढ़ना उनके लिए एक सजीव अनुभूति है। और "ये कहानियाँ उसी अनुभूति को रसिक पाठकों के मन में उबारने की कोशिश हैं। डिजिटल भाषा में कहूँ तो स्मृतियों में कहानियाँ मेरे लिए मनोलोक के पिक्सेल सरीखी हैं। 'एंटर' का बटन दबाते ही वे पहले टुकड़ों में मन के पर्दे पर उभरने लगती हैं। फिर बाद के कुछ और अनुभव कहानियों

के पिक्सलों के आस-पास सिमटते हैं और फिर उनसे न जाने किस तरह के रूपाकार बनते जाते हैं।" एक उत्कृष्ट कहानी के लिए व्यक्तित्व और घटनाएँ प्रधान नहीं होती। हर कथा लेखक कितनी कुशलता से कथा को पिरोता इस पर निर्भर करता है।

मृणाल पाण्डे की कहानियों में विषय-वैविध्य को देखा जा सकता है। व्यक्ति की मानसिक कुंठा से लेकर सामाजिक रुग्णताओं तक का अंकन उनकी कहानियों में है। 'बचुली चौकीदारिन की कढ़ी' में बड़े घर के बिगड़े हुए लोगों का चित्रण है। स्त्री समस्याओं को भी प्रमुख रूप से देखा जा सकता है। एक स्त्री का विदागीत, कुनू, लक्का-सुन्नी, हमसफ़र, यानी कि एक बात थी, लड़कियाँ आदि स्त्री केंद्रित कहानियाँ हैं। उन्होंने इन कहानियों के माध्यम से अनेक स्त्री विषयक प्रश्नों को उठाया है।

मृणाल पाण्डे स्वयं एक पत्रकार हैं। उन्होंने अपने पत्रकारीय अनुभव को 'चार दिन की जवानी तेरी' शीर्षक कहानी के माध्यम से व्यक्त किया है। संपादक के मुँह से उन्होंने कहलवाया है कि - "काम का प्रेशर नहीं होता यहाँ। बस ऊपर का प्रेशर होता है। ऊपर वालों को संभाल लिया तो टिक जाएँगे।" एक जगह वे भ्रष्ट लोकतंत्र का चित्र खींचते हुए कहती हैं कि "हमारे देश में तो प्रेस की मार्फत ही होगा लोकतंत्र का सच्चा उद्धार। दरअसल लोकतंत्र के चारों पायों में अब मीडिया ही है जो बच रहा है। शेष तो टूट फूट के जाने कहाँ रह गए। अब मीडिया है, और ये लोग हैं हमारी उम्मीदों के चिराग।" 'एक नीच ट्रेजेडी' शीर्षक कहानी में पीढ़ी अंतराल को देखा जा सकता है। 'दोपहर में मौत' में प्रवासी पुत्र के असमय निधन पर माता-पिता की वेदना को दिखाया गया है। 'माया ने घुमायो' बाल कथा संग्रह है।

बोध प्रश्न

- कहानियों के संबंध में मृणाल पाण्डे क्या कहती हैं?
- साहित्य पढ़ना मृणाल पाण्डे को किस प्रकार की अनुभूति देती है?
- मृणाल पाण्डे की बाल कथाओं के संग्रह का नाम बताइए।

उपन्यासकार के रूप में

'विरुद्ध', 'अपनी गवाही', 'हमका दियो परदेस', 'रास्तों पर भटकते हुए', 'पटरंगपुर पुराण', 'देवी' और 'सहेला रे' आदि मृणाल पाण्डे के प्रसिद्ध उपन्यास हैं।

'विरुद्ध' मृणाल पाण्डे का प्रथम उपन्यास है। इस उपन्यास की नायिका रजनी उच्चवर्गीय शिक्षित युवती है। उदय से प्रेम विवाह करती है। समस्त सुख-सुविधाएँ प्राप्त होने पर भी वह संतुष्ट नहीं रह पाती। वह अपनी अस्मिता और आत्मसम्मान के लिए संघर्ष करती रहती है।

'अपनी गवाही' पत्रकारिता और राजनैतिक अंतर-संबंधों पर आधारित उपन्यास है। इसमें मृणाल पाण्डे के निजी अनुभव निहित है। पूर्वदीप्ति शैली में कही गई इस कथा की नायिका कृष्णा है। कृष्णा के नाना कमायूँ में भसे एक डॉक्टर हैं। वे छुआछूत का विरोध करते हैं, जबकि उसकी पत्नी परंपरावादी हैं। कृष्णा के पिता की मृत्यु कैंसर के कारण होती है। माँ अकेली ही कृष्णा और उसके भाई-बहनों का पालन-पोषण करती हैं। कृष्ण के पति सरकारी नौकर है। स्थानांतरण के करण उन्हें कभी इधर तो कभी उधर भटकना पड़ता है। यह दोनों को ही पसंद न होने के करण पति सरकारी नौकरी छोड़ देता है। कृष्णा अध्यापन का कार्य करती है और बाद में

पत्रकारिता को चुन लेती है। इसमें मृणाल पाण्डे ने यह दिखाया है कि अंग्रेजी पत्रकारों को हर तरह की सुविधाएँ प्राप्त हैं जबकि हिंदी पत्रकारों की स्थिति दयनीय है। इस उपन्यास का एक पात्र कहती है कि आखिर "भाषाई पत्रकारिता की गंदी नाली में क्यों फँसते हो?"

'पटरंगपुर पुराण' शीर्षक उपन्यास 16 पर्वों में विभाजित है। इसमें पाखंड और चुनावी राजनीति का खुला चित्रण है। एक पात्र के मुँह से लेखिका कहलवाती हैं कि "पुराने लोग गए तो नए लोग, पुराने राजा मरा तो नए की जै जैकार। चंदों का राज और ब्राह्मण फलते-फूलते चले गए बंस दर बंस। नित नए नाप जोख नए-नए अंधेर।" इस पटरंगपुर में विकास के नाम पर कुछ नहीं होता, सिवाय पाखंड के। लोकतंत्र में राजा (नेता) चुनाव जीतकर जनता के बीच से ही आता है। चुनाव के समय बड़े-बड़े वादे करते हैं लेकिन चुनाव जीतकर नेता बनने के बाद नौ दो ग्यारह हो जाते हैं।

'रास्तों पर भटकते हुए' शीर्षक कहानी की मंजरी के भीतर यह जानने की छटपटाहट होती कि जो होता रहा है, वह क्यों होता है? इस कशमकश में वह अनेक बार लहूलुहान होती है। बंटी और उसकी माँ की नृशंसा हत्या के संबंध में सुरक्षातंत्रों की चुप्पी मंजरी को इन घटनाओं के तह तक जाने को बाध्य करती है। वह अपनी अंतरात्मा के रास्तों पर भटकती है। लेखिका ने इस उपन्यास में समाज में व्याप्त भ्रष्टाचार का चित्र खींचा है - "उसूल-वसूल को छोड़ो। उसूलों का पालन किसी को कुछ नहीं देता। न पुलिस को न पत्रकारों को। पुलिस और कॉर्पोरेट दुनिया और आज की खोजी पत्रकारिता की दुनिया सब में मुन्नी एक भाईचारा बना हुआ है। चोर-चोर मौसेरे भाई।"

'अपनी गवाही' उपन्यास की कृष्णा पत्रकार बनना चाहती हैं। इस उपन्यास के माध्यम से मृणाल पाण्डे ने मीडिया के बदलते चरित्र को दिखाया है। लेखकीय टिप्पणी देखें - "राजनेताओं, मीडिया मालिकों और नौकरशाहों के बीच बहुत ही पुख्ता गठजोड़ बन चुका था। निचले स्तर तक पहुँच कर सही निष्ठा रखते हुए काम करने वाले कार्यकर्ता, उनकी अब कोई पूछ नहीं थी।"

'हमका दियो परदेस' में लेखिका ने एक संवेदनशील बच्ची की आँखों से देखे गए संसार को चित्रित किया है। यह हिंदी में अनूदित उपन्यास है। इसका अनुवादक हैं मधु बी. जोशी। इस उपन्यास में लेखिका ने नौकरी करने वालों की समस्याओं को दर्शाया है। मुख्य रूप से स्थानांतरण के करण होने वाली समस्याएँ। इस उपन्यास का एक पात्र कहता है - "हमें घर बदलने की इतनी आदत हो चुकी थी कि मुझे तबादले को दूसरे तबादले से अलग करके याद रख पाने में बड़ी दिक्कत होती थी।" इस उपन्यास में मृणाल पाण्डे ने युवा पीढ़ी पर सिनेमा के कारण पड़ने वाले प्रभावों को भी स्पष्ट किया है - "मरे कमबख्त, सिनेमा के बनने से पहले दिन ब्याहे छोकरे-छौकरियों को ऊटपटाँग बातें नहीं सूझती थीं, वो जिसे उनके घर वाले ढूँढ़ लाते थे, उससे ब्याह कर लेते थे।" लेखिका ने पहाड़ी क्षेत्रों में व्याप्त असुरक्षा भाव को भी दर्शाया है - "साहब लोगों के मैदानों की तरफ चले जाने पर बंगलों के रखवाले बौरा जाते थे। फिर कस्बा बाजारू औरतों और शराबियों के ही लायक रह जाता था। सयानी होती बेटियों को लेकर माँ वहाँ कैसे रह सकती थी।" इस कथन में लेखिका की चिंता मुखरित है।

'देवी' शीर्षक कहानी संग्रह में संकलित कहानियों को स्वयं मृणाल पाण्डे ने 'स्त्रियों की समयातीत गाथाएँ' कहा है। यह रिपोर्ताज शैली में लिखी गई कृति है। स्त्री विमर्श के मुद्दों के साथ-साथ समाज में अन्य विषय भी in कहानियों में विद्यमान हैं। वस्तुतः इस उपन्यास के माध्यम से उन्होंने जीवन मूल्यों को दर्शाया है।

'सहेला रे' (2017) शीर्षक उपन्यास की केंद्रीय पात्र हैं अंजलीबाई और उनकी माँ हीरा। दोनों मशहूर गायिकाएँ हैं। हीरा और एक अंग्रेज अफसर के बीच रिश्ता बनता है। परिणामस्वरूप हीरा बेटी को जन्म देती है। उस अफसर की मृत्यु के बाद माँ-बेटी बनारस पहुँचते हैं। बनारस संगीत के लिए जाना जाता है। मृणाल पाण्डे ने इस उपन्यास में संगीत को प्रमुख स्थान दिया है। पाँच वंशों की कहानी को लेखिका ने शब्दबद्ध किया है। उपन्यास की शुरूआत में वंशावली दी गई है। पत्रात्मक शैली में लिखा गया यह उपन्यास पुराने समय के संगीत से लेकर आधुनिक गानों तक की चर्चा करता है - "आज आई पोड और यू-ट्यूब ने घर-घर स्वघोषित तानसेन-काँसेन पैदा कर दिए हैं। .... आज संगीत को सहारा देने वाली हर संस्था उस संगीत को बस अपनी अंटी में कस कर रखना और उसका भद्दा प्रदर्शन करना चाहती है।"

बोध प्रश्न

- मृणाल पाण्डे के प्रथम उपन्यास का नाम बताइए।
- 'पटरंगपुर पुराण' में किसका चित्रण है?
- 'हमका दियो परदेस' में मृणाल पाण्डे ने मुख्य रूप से किस समस्या की ओर संकेत किया है?
- 'देवी' उपन्यास की शैली क्या है?
- 'अपनी गवाही' में मृणाल पाण्डे ने किस पर टिप्पणी की है।
- 'सहेला रे' का केंद्रीय विषय क्या है?

नाटककार के रूप में

प्रिय छात्रो! मृणाल पाण्डे सृजनात्मक लेखन के क्षेत्र में कहानियों और उपन्यासों के माध्यम से आई। नाटकों का सृजन तो उन्होंने बाद में ही किया था। इस संबंध में मृणाल पाण्डे का यह कथन उल्लेखनीय है - "बात 1979 की है। भोपाल स्थित मध्य प्रदेश कला परिषद से मुझे पत्र मिला। परिषद की ओर से 'पहले-पहल' नाम के आयोजन के तहत सातवें मध्यप्रदेश नाट्य समारोह में नए नाटक लेखकों की कृतियाँ मंचित होने जा रही थीं। मुझसे कहा गया था, कि एक लेखक होने के नाते यदि मैं इसमें भागीदार होना चाहूँ, तो अपनी पांडुलिपि अमुक तारीख पर अमुक पते पर भेज दूँ। तब तक मैंने कहानियों और (मात्र एक) उपन्यास पर ही काम किया था।" नाट्य लेखक के रूप में मृणाल पाण्डे का पहला अनुभव यह था कि उन्होंने श्री अशोक लाल के साथ ज्यॉर्ज ऑखेल के चर्चित उपन्यास 'दि एनीमल फार्म' का हिंदी में 'जंतु परंतु' नाम से नाट्य रूपांतरण किया था।

'पहले-पहल' उत्सव के लिए मृणाल पाण्डे ने जातक-कथा के आधार पर एक नाटक लिखा। कहानी इस प्रकार है - एक दब्बू और गाँव को त्रस्त करने वाले तीन धूर्तों को अचानक सोने का एक ढेर मिल जाता है। सोना पाने के बाद तीनों के बीच लड़ाई-झगड़ा शुरू हो जाता है। आपसी फूट पड़नी शुरू हो जाती है। जो काम व्यवस्था नहीं कर पाती, वह सोना कर देता है।

आपसी लड़ाई के कारण त्रिगुट नष्ट हो जाता है। "कालांतर में यह नाटक 'नटरंग' पत्रिका में भी छपा। शीर्षक था 'मौजूदा हालात को देखते हुए' ('जो राम रचि राखा')। इस नाटक की आधार वस्तु विजेदान देथा की राजस्थानी लोककथा 'खोजी' है। इस नाटक में कुल 3 अंक और 7 दृश्य हैं। पहले दो अंकों में दो-दो दृश्य हैं तथा तीसरे अंक में तीन दृश्य हैं। इस नाटक का मन्ना सेठ एक ऐसा युवक पात्र है "जो अपने परिवेश और पारिवारिक पृष्ठभूमि का पूरा फायदा उठाते हुए अब अपने पारिवारिक रसूख के कवच के भीतर सुरक्षित बैठे चिर-विद्रोही कहलाने-बनने का स्मार्ट सुख ले रहे थे।" यह पात्र दिन में माओ की माला जपते हुए दिखाई देता है और रात को आई ए एस परीक्षा की तैयारी करता है। "बीट कवियों और बीटल्स की नकल में पनपा उनका बोहीमियनवाद मन्ना सेठ में साकार हुआ।" मन्ना सेठ चोरी करने की कोशिश करता है और करता भी है। एक महीना बीत भी जाता है। राज्य में कोई नहीं बचता जिसके घर चोरी न हुई हो। लेकिन पकड़ा जाना तो दूर, कहीं चर्चा तक नहीं होती। उसके हाथों गलती से हरचरना की मौत होती है लेकिन उसके एवज में भी वह राजा से इनाम पाता है। उसकी डैकैती की योजना भी असफल होती है। जेल के स्थान पर उसका जय-जयकार होने लगता है। उसे अवतारी पुरुष माना जाता है। यह सब देखकर मन्ना सेठ सिर पीठने लगता है। सारी योजनाएँ असफल होने पर तलवार की नोक से राजा की पगड़ी उछलकर पैरों से रौंदता है। लेकिन धन्ना सेठ के इशारे पर मुसाहब पगड़ी से विषैला साँप निकालता है। अतः यह योजना भी असफल पाकर मन्ना मूर्छित होता है। होश आने पर अपना हार मानकर एकांतवास करने चला जाता है। मृणाल पाण्डे ने समाज में अंध मान्यता को दर्शाया है।

14 अक्टूबर, 1979 को भोपाल में भाऊ खिरवड़कर के निर्देशन में 'जो राम रचि राखा' नाटक खेला गया था।" 1981 में श्रीराम सेंटर फॉर आर्ट, दिल्ली की निदेशक सुश्री पन्ना भरतराम ने सेंटर के पांडुलिपि संकलन के लिए 'जो राम रचि राखा' को चुना तो मृणाल पाण्डे ने उसे पुनः सृजित किया। 1982 में श्रीराम सेंटर की राममंडली द्वारा यह नाटक श्री बंसी कुल के निर्देशन में दिल्ली में मंचित हुआ। 1982 में ही अंग्रेजी की थियेटर पत्रिका एनैक्ट (अंक 181-82) में मृणाल पाण्डे के लंबे साक्षात्कार के साथ इसका अंग्रेजी अनुवाद छपा, जो 1991 में कोलकाता के सीगल प्रकाशन द्वारा 'That which Ram has ordained' नाम से प्रकाशित किया गया।

'आदमी जो मछुआरा नहीं था' 1983 में प्रकाशित हुआ। यूरोपीय लोककथा 'The Fisherman and his wife' की कथा को मृणाल पाण्डे ने शुरूआती तौर पर प्रयोग किया है। नाटक का केंद्रीय पात्र एक 'समर्पित' नौकरशाह है। "अपनी आका की इच्छा और अपनी तथा अपनी पत्नी की महत्वाकांक्षा के दबावों से उम्र भर काम करने के बाद वह पाता है कि मनुष्य के लिए उसकी स्वतंत्रता और नियति अंततः एक निजी सवाल है। एक दुविधा भरे महत्वाकांक्षी राजसेवक के मन का राज-समाज तथा निजी जीवन से जुड़े तीखे सवालों के टकराव से जूझना और उसके परिवार का बिखराव इस नाटक की त्रासदी का मूल है।" 1994 में 'अभियान' द्वारा राजेंद्रनाथ के निर्देशन में यह नाटक खेला गया।

मृणाल पाण्डे ने 'काजर की कोठरी' नाम से देवकीनंदन खत्री की एक कम चर्चित उपन्यास का नाट्य रूपांतरण किया है। इसमें 19 वीं सदी के बाद के गड्ड-मड्ड होती भारतीय

समाज की नैतिकता की झलकियों को दिखाया गया है - बेटी की शादी अपनी शर्तों पर अपनी पसंद के लड़के से करने पर उतारू पिता, जायदाद के लिए बहन का अपहरण करते चचेरे भाई आदि को दिखाया गया है।

'चोर निकल के भागा' की रचना 1995 में हुई थी। इस नाटक के संबंध में मृणाल पाण्डे कहती हैं कि "चोर निकल के भागा नाटक नाट्य जगत के तमाम किस्म के राग-विराग भरे अनुभवों के बाद लिखा गया है।" इस नाटक में उन्होंने भारतीय समाज और संस्कृति में बढ़ते बाजारीकरण के कारण पतन हो रही नैतिक मूल्यों तथा उन मूल्यों के प्रभाव से बदलते हुए मानव जीवन के मानदंडों को दर्शाया है. यह एक तरह से बढ़ती बाजारीकरण के कारण ही है।

'शर्मा जी की मुक्तिपथ' की रचना 2002 में हुई थी। यह नाटक "मीडिया और आरक्षणवादी व्यवस्था में चल रहे एक मंथन के विक्षिप्त दौर" में लिखा गया है। 'सुपरमैन की वापसी' और 'धीरे-धीरे रे मना' रेडियो नाटक हैं। मृणाल पाण्डे के नाटकों का संकलन 'संपूर्ण नाटक' नाम से संकलित है।

बोध प्रश्न

- 'चोर निकल के भागा' में मुख्य रूप से क्या दर्शाया गया है?
- 'काजर की कोठारी' में किस प्रकार की स्थितियों का चित्रण है?

आलोचक के रूप में

प्रिय छात्रो! मृणाल पाण्डे आलोचक के रूप में भी सफल हैं। स्त्री समस्याओं और उनसे जुड़े अनेक अनछुए पहलुओं को उन्होंने अभिव्यक्त किया है। 'स्त्री : देह की राजनीति से देश की राजनीति तक', 'परिधि पर स्त्री', 'स्त्री : लंबा सफर', 'ध्वनियों के आलोक में स्त्री', 'जहाँ औरतें गढ़ी जाती हैं' आदि उनके प्रमुख आलोचना संग्रह हैं। क्षमा शर्मा के साथ मिलकर उन्होंने 'बंद गलियों के विरुद्ध' शीर्षक वैचारिक लेख संग्रह का संपादन किया जो स्त्री विमर्श की दृष्टि से उल्लेखनीय है। मृणाल पाण्डे अपने निबंधों में भी स्त्रियों की स्थिति, समस्याओं और उनके हितों की बात करती हैं।

'स्त्री : देह की राजनीति से देश की राजनीति तक' में कुल 23 चिंतनपरक लेख संकलित हैं। वे बार-बार यह प्रश्न करती हैं कि स्त्री को कमतर या द्वितीया मानने वाले यह क्यों भूल जाते हैं कि स्त्रियों की स्थिति, समस्याओं और उनके हितों की नाल तो हमेशा से सीधे और बड़े स्पष्ट रूप में पूरे मानव-जगत और कार्य-व्यापारों के मूल से जुड़ी हुई है। वे इस बात को उजागर करती हैं कि सर्वहारा का अधिकांश हिस्सा स्त्रियों और बच्चों का ही है। मृणाल पाण्डे कहती हैं कि एक स्त्री को 'वह' से 'मैं' तक की यात्रा स्वयं करनी होगी। "स्त्री की तमाम बनी-बनाई रूढ़िबद्ध छवियों को नकारकर स्त्रियों द्वारा अपनी अस्मिता की सही खोज शिक्षा और उसके द्वारा आई जीविकोपार्जन की क्षमता से ही संभव है।" (निज मन मुकुर सुधारी, स्त्री : देह की राजनीति से देश की राजनीति तक)

मृणाल पाण्डे बिना कोई लाग-लपेट के निष्पक्ष रूप से स्त्री से जुड़ी प्रश्नों पर चर्चा करती हैं। वे यही कहती हैं कि संविधान को बदलने की जरूरत नहीं, बल्कि जो कानून हैं, उन्हें ईमानदारी से लागू करना काफी होगा। ऐसा करने से समाज में व्याप्त स्त्री-शोषण और अत्याचार

को रोका जा सकता है। हर मनुष्य की सीमाएँ और विवशताएँ अवश्य होती हैं। 'मन न रँगाए, रँगाए जोगी कपड़ा' शीर्षक विचारोत्तेजक लेख में मृणाल पाण्डे ने यह विचार व्यक्त किया है कि स्त्री-उत्थान के जगन्नाथ-रथ को रोकने का प्रयास करने के बजाय स्वयं अपने प्रांत के करोड़ों भूख और गरीबी से छटपटाते जनों के कष्ट निवारण और सेवा में जुटना ही धर्म है। (परिधि में स्त्री)

इक्कीसवीं सदी में स्त्री-मुक्ति के सवाल को उसके सभी पहलुओं से देखने-समझने के लिए संसद से लेकर घर और दफ़तर तक का पूरा घटना-दर-घटना पढ़ना होगा। मृणाल पाण्डे 'स्त्री : लंबा सफर' शीर्षक संग्रह में इन्हीं घटनाओं की चर्चा करती हैं। ये 'हिंदुस्तान' दैनिक में समय-समय पर प्रकाशित वैचारिक लेख हैं। वे इस बात पर बल देती हैं कि "स्वतंत्रता तो चाहे वह स्त्री की हो या पूरी राष्ट्र की, वह मनुष्य प्रजाति की एक ऐसी बुनियादी जैविक जरूरत है, जिससे न्याय, सहकारिता, समता और सर्वधर्म समभाव सरीखे मूल्य पैदा होते हैं। स्वतंत्रता है तो मूल्य भी हैं।" (स्त्री : लंबा सफर)।

'ध्वनियों के आलोक में स्त्री' शीर्षक संग्रह में मृणाल पाण्डे ने संगीत के क्षेत्र में स्त्री के साथ हो रहे अत्याचारों का मार्मिक चित्रण किया है। उन्होंने इस बात पर प्रकाश डाला है कि "कई बार संगीत की धुनी गायिकाएँ प्रेम वश नहीं, बल्कि कला को निखार पाने के लिए भी अपना तन-मन उन गुरुओं को निःसंकोच सौंप देती थीं जो सामान्यतः तवायफों को विधिवत तालीम देने से विरक्त रहते थे।" (ध्वनियों के आलोक में स्त्री)।

बोध प्रश्न

- स्त्री मुद्दों की बात करते हुए मृणाल पाण्डे क्यों कहती हैं कि संविधान को बदलने आवश्यकता नहीं है?

9.3.3 हिंदी साहित्य में मृणाल पाण्डे का स्थान

प्रिय छात्रो! उपर्युक्त अध्ययन से आप जान ही चुके हैं कि मृणाल पाण्डे एक सशक्त साहित्यकार हैं। उन्होंने पत्रकारिता के क्षेत्र को भी समृद्ध किया है। उनके साहित्य में भी इस पत्रकार रूप को भलीभाँति देखा जा सकता है। वे उपेक्षित लोगों के साथ खड़ी रहती हैं। विशेष रूप से बच्चे, स्त्री और वृद्धों की समस्याओं के निवारण हेतु वे उन समस्याओं के तह तक जाती हैं। उनके लेखन में सामाजिक-राजनीतिक सरोकारों तथा गहन मानवीय दृष्टि को रेखांकित किया जा सकता है। उनकी मान्यता है कि हर किसी को अपने अस्तित्व की तलाश रहती है। और यह तलाश वस्तुतः समाज से रिश्ता कायम करना होता है। समाज से मनुष्य का निजी रिश्ता अर्थात 'स्व' की तलाश का स्वरूप कायम करता है। मृणाल पाण्डे के लेखन में इस 'स्व' की तलाश को देखा जा सकता है।

मृणाल पाण्डे उपेक्षित वर्ग के पक्ष में अपनी आवाज बुलंद करती है। वे स्त्रीवाद को संकीर्ण परिधि से बाहर बहुसंख्यक आबादी से जोड़ती है। वे अपनी सजग, विवेकपूर्ण पत्रकारीय दृष्टि से स्त्री-मुक्ति और स्त्रीवाद को बड़े-बड़े नारों के चक्रव्यूह से बाहर निकालकर नितांत व्यावहारिक धरातल पर प्रतिष्ठित करती हैं। यही वस्तुतः उनकी सबसे बड़ी शक्ति है। उनके सामने आंकड़ों के साथ-साथ समाज की बहुसंख्यक आबादी के प्रत्यक्ष अनुभव है। वे वस्तुतः स्त्री विषयक लेखन के लिए चर्चित हैं।

9.4 पाठ सार

प्रिय छात्रो! हिंदी साहित्य जगत में मृणाल पाण्डे का एक विशिष्ट स्थान है। उनकी माँ शिवानी (प्रसिद्ध लेखिका) के करण मृणाल को बचपन से ही साहित्य के प्रति रुचि उत्पन्न होने लगी। उन्होंने अंग्रेजी एवं संस्कृत साहित्य, प्राचीन भारतीय इतिहास, पुरातत्व, शास्त्रीय संगीत तथा ललित कलाओं की शिक्षा प्राप्त की। उनकी कृतियों ('ध्वनियों के आलोक में स्त्री', 'सहेला रे') में संगीत ज्ञान को देखा जा सकता है। वे गहन अध्ययन के उपरांत ही किसी भी विषय पर लिखती हैं। बिना कोई ठोस सबूत के वे किसी विषय पर चर्चा नहीं करती। यह उनकी पत्रकारीय दृष्टि का परिचायक है।

9.5 पाठ के उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं -

1. मृणाल पाण्डे बहुमुखी प्रतिभा संपन्न, कुशाग्र एवं जिज्ञासु स्वभाव की लेखिका हैं।
2. शांत स्वभाव के बावजूद मृणाल पाण्डे अन्याय को देखकर मौन धारण किए रहना अनुचित मानती हैं।
3. मृणाल पाण्डे स्त्री विषयक लेखन के लिए वे विशेष रूप से जानी जाती हैं।
4. मृणाल पाण्डे समाज द्वारा थोपी गई रूढ़िगत मान्यताओं को ललकारती हैं।
5. मृणाल पाण्डे ने साहित्य के साथ-साथ पत्रकारिता को भी समृद्ध किया है।

9.6 शब्द संपदा

1. अस्मिता	=	अपनी सत्ता की पहचान
2. आरक्षण	=	सुरक्षित किया हुआ स्थान
3. जीविकोपार्जन	=	रोज़ी कमाने की प्रक्रिया
4. नौकरशाही	=	अफसरशाही
5. शोषण	=	श्रमिकों पर होने वाला शारीरिक अत्याचार

9.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. मृणाल पाण्डे के व्यक्तित्व पर प्रकाश डालिए।
2. मृणाल पाण्डे की रचना यात्रा की चर्चा कीजिए।
3. मृणाल पाण्डे के साहित्यिक प्रदेय को रेखांकित कीजिए।
4. मृणाल पाण्डे के उपन्यास साहित्य पर प्रकाश डालिए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. मृणाल पाण्डे के जीवन पर प्रकाश डालिए।

2. 'मृणाल पाण्डे की कहानियों में विषय-वैविध्य को देखा जा सकता है।' इस कथन की पुष्टि कीजिए।
3. मृणाल पाण्डे के नाटक साहित्य की विशेषताओं की चर्चा कीजिए।
4. हिंदी साहित्य में मृणाल पाण्डे के स्थान को निर्धारित कीजिए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. मृणाल पाण्डे को किस सम्मान से अलंकृत किया गया है? ( )
   (अ) पद्मभूषण (आ) पद्मविभूषण (इ) ज्ञानपीठ (ई) पद्मश्री
2. 'सहेला रे' उपन्यास की शैली क्या है? ( )
   (अ) डायरी (आ) पत्रात्मक (इ) पूर्वदीप्ति (ई) स्वगत
3. मृणाल पाण्डे ने किस महिला पत्रिका का संपादन किया? ( )
   (अ) गृहशोभा (आ) वामा (इ) महिला दर्पण (ई) सारिका
4. मृणाल पाण्डे की पहली कहानी का क्या नाम है? ( )
   (अ) कोहरा और मछलियाँ (आ) दोपहर में मौत
   (इ) शब्द बेधी (ई) दरम्यान

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. पत्रकारिता के क्षेत्र में विशिष्ट योगदान हेतु मृणाल पाण्डे को .... पुरस्कार से सम्मानित किया गया था।
2. मृणाल पाण्डे .... विषयक लेखन के लिए चर्चित हैं।
3. मृणाल पाण्डे ने 'चोर निकल के भागा' नाटक में .... के कारण पतन हो रही नैतिक मूल्यों को दर्शाया है।
4. मृणाल पाण्डे ने संगीत के क्षेत्र में स्त्री के साथ हो रहे अत्याचारों का मार्मिक चित्रण .... में किया है।

III. सुमेल कीजिए -

1. शर्मा जी की मुक्तिपथ	(अ) निबंध संग्रह
2. सहेला रे	(आ) नाटक
3. परिधि में स्त्री	(इ) जो राम रचि राखा
4. चुनावी राजनीति	(ई) उपन्यास
5. मन्ना सेठ	(उ) पटरंगपुर पुराण

9.8 पठनीय पुस्तकें

1. मृणाल पाण्डे के कथा साहित्य मैं आधुनिक बोध : योगिता दत्ता घुमरे
2. मृणाल पाण्डे का रचना संसार : अर्चना शुक्ला

इकाई 10 : 'चोर निकल के भागा' का विवेचन

रूपरेखा

10.1 प्रस्तावना
10.2 उद्देश्य
10.3 मूल पाठ : 'चोर निकल के भागा' का विवेचन
10.3.1 'चोर निकल के भागा' नाटक के विविध आयाम
10.3.2 पात्रों का चरित्र चित्रण
10.4 पाठ सार
10.5 पाठ की उपलब्धियाँ
10.6 शब्द संपदा
10.7 परीक्षार्थ प्रश्न
10.8 पठनीय पुस्तकें

10.1 प्रस्तावना

समकालीन हिंदी कथा-साहित्य, नाटक और पत्रकारिता को अपनी रचनात्मक उपस्थिति से समृद्ध करने वाली रचनाकार मृणाल पाण्डे की यह नाट्यकृति है। हिंदी रंगमंच पर भी यह नाटक चर्चित रहा है। हास्य रंगमंच से भरपूर अपने चुटीले भाषा-शिल्प और लोकनाट्य की अनेक दृश्य-छवियों को उजागर करता हुआ यह नाटक वस्तुत: हमारी कला-संस्कृति के बाजारीकरण से जुड़े सवालों को उठाता है। कला, सौंदर्य प्रेम और परम्परा जैसे तमाम मूल्यों का सौदा हो रहा है और इस सौदे में राष्ट्रीय-अंतरराष्ट्रीय स्तर पर कितने ही सफेदपोश शामिल हैं। नाटक की उक्त अंतर्वस्तु को उद्घाटित करने के लिए लेखिका ने प्रेम और सौंदर्य के प्रतीक ताजमहल की चोरी की कल्पना की है। वास्तव में यह एक फैंटेसी भी है, जिसके सहारे लेखिका उन मानव मूल्यों पर मंडराते खतरों को रेखांकित करती हैं, जिनकी सफलता मनुष्य जाति की तमाम कलात्मक उपलब्धियों को निरर्थक कर देगी। साथ ही वह कलाओं के उस जनतंत्र को भी लक्षित करती है, जिसे लेकर सत्ता-स्वायत्ता जैसी बहसें अक्सर होती रहती हैं। अत: यह कहा जा सकता है कि मृणाल पाण्डे की यह नाट्य रचना अपने हास्यावरण में गंभीर अर्थों तक जाने की क्षमता लिए हुए है।

10.2 उद्देश्य

प्रिय छात्रो! इस इकाई को पढ़ने के बाद आप -

- 'चोर निकल के भागा' नाटक की कथा वस्तु से अवगत हो सकेंगे।
- नाटक में फेंटेसी के प्रयोग की महत्ता और तकनीक से परिचित हो सकेंगे।
- विवेच्य नाटक में चित्रित परिवेश के विविध आयामों की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

- विवेच्य नाटक के मुख्य और गौण पात्रों की चारित्रिक विशेषताएँ जान सकेंगे।
- विवेच्य नाटक में निहित व्यंग्य को समझ सकेंगे।

10.3 मूल पाठ : 'चोर निकल के भागा' का विवेचन

यह नाटक कल्पना प्रधान है। नाटक के आरंभ से लेकर अंत तक फैंटसी दिखाई देती है। इस नाटक में कुल तीन अंक हैं और छः दृश्य हैं। इस नाटक के कथावस्तु को जानने से पहले नाटक के पात्रों के बारे में जान लेना आवश्यक है। इस नाटक में कुछ गौण पात्र हैं और कुछ मुख्य पात्र हैं। मुख्य पात्र के अंतर्गत गेंदालाल, शरीफा बी, महेश, सुरेश, रमेश, नीता आदि आते हैं और गौण पात्र के अंतर्गत बाबाजी, बब्बर, टीटो-पीटो, जोकर, जेम्स बांड आते हैं।

10.3.1 'चोर निकल के भागा' नाटक के विविध आयाम

सामाजिक आयाम

'चोर निकल के भागा' इस नाटक में कल्पना यानी फैंटेसी देखी जाती है। यह नाटक आज के शहरी वर्ग को संबोधित है जो कॉमिक्स, टी.वी. धारावाहिक, फिल्म, माफिया, सुपरमैन, जेम्स बांड या इसी तरह के तस्करों, जासूसों के कारनामों से भरी काल्पनिक दुनिया में डूबा हुआ है। इस नाटक में मानव-मूल्यों पर मंडराते खतरों को रेखांकित किया गया है। तथा समाज में जो व्याप्त धोखाधड़ी है उसको भी दर्शाया गया है। कम मेहनत करके ज्यादा पाने की लालसा भी प्रदर्शित की गई है।

इस नाटक में मृणाल पांडे ने समाज में व्याप्त जो बाजारीकरण है उसके कुप्रभाव को दर्शाया है। नाटक में ताजमहल की चोरी के माध्यम से देश की छवि को प्रस्तुत करने का प्रयास किया है कि किस प्रकार आज देश की धरोहर को लोग अपने फायदे के लिए प्रयोग में ला रहे हैं। इस नाटक के माध्यम से लेखिका ने समाज में व्याप्त जो धोखाधड़ी है, उसको भी दिखाया है। नाटक में जो छः मित्र हैं उनसे अलख निरंजन बाबा ऐसी-ऐसी अनहोनी बातें करते हैं जो कभी सच हो ही नहीं सकती है। आज के समाज में भी ऐसी बाबा बहुत देखने को मिलते हैं जो देश तथा जनता दोनों को अपने फायदे के लिए लुटते हैं। देश की धरोहर तक को बेचने से नहीं हिचकते।

ताजमहल की चोरी के माध्यम से लेखिका आज के समाज में जो लोगों की मानसिकता है, उसका वर्णन किया है। उन्हें केवल अपने फायदे की बात नजर आती है। आज कम मेहनत में ज्यादा पाने की लालसा भी जनता में पाई जाती है।

नाटक में लेखिका ने बाजारवाद का भी वर्णन किया है। आज भारतीय अधिक धन अर्जन के लिए अपनी वस्तु को अपने देश से ज्यादा विदेशों में बेचना पसंद करते हैं ताकि मुनाफा अच्छा मिले। सभी को मुनाफे की अधिक चिंता रहती है। देश के उद्धार की कम। इस कल्पना प्रधान नाटक में यह भी प्रदर्शित किया गया है कि लोग ताजमहल को दूसरे देशों में बेचना चाह

रहे हैं। क्योंकि इसका अच्छा दाम मिल सके। नाटक के माध्यम से लेखिका आज के लोभी समाज को भी दिखाना चाहती है। जिन्हें मानवता से कोई सरोकार नहीं है। सभी अपनी रोटी सेंकने में व्यस्त हैं।

राजनैतिक आयाम

समकालीन नाटककारों ने अपने नाटक के लिए कथानक का चयन वर्तमान जीवन के साथ-साथ इतिहास, पुराण, स्वेदशी विदेशी मिथकों आदि से किया है। कथानक चाहे अतीत से चुना हो, चाहे वर्तमान से, जोड़ा हमेशा उसे वर्तमान से है। वर्तमान की समस्याओं और सरोकारों से है। स्वाधीनता से पहले श्रेष्ठ साहित्यिक कृतियाँ वही बनी थी जो सत्ता से टकराती थी, और वर्तमान को बदलना चाहती थी। स्वाधीनता के बाद भी स्थिति यही रही है। इसीलिए इस कालावधि में लिखित तमाम नाटक वर्तमान राजनैतिक व्यवस्था की तीखी आलोचना करते हैं। साथ ही वे प्रशासन में व्याप्त भ्रष्टाचार, उसकी संवेदनहीनता, आम आदमी की उपेक्षा, यातना आदि को विशेष रेखांकित करते हैं।

इस नाटक में भी देखा जा सकता है कि आज की राजनैतिक व्यवस्था पर बड़ा तीखा व्यंग्य किया गया है। राजनीति की अवसरवादी और दायित्वहीन प्रशासन व्यवस्था की कृत्रिमता को उभार कर देखने का प्रयास भी नाटक में हुआ है। नाटककार ने राजनेताओं की उथली राजनैतिक समझ के साथ ही बुद्धिजीवियों, पत्रकार तथा सरकारी मीडिया की भी पोल खोली है। सरकारी अफसर तथा पुलिस वाले जो काम नहीं करना चाहते हैं केवल नाम और पैसा कमाना चाहते हैं, उनका वर्णन भी इस नाटक में किया गया है। इस नाटक में एक पात्र है जो ज्योतिष का रोल निभाता है क्योंकि बड़े-बड़े नेता भी अपने फायदे के लिए आसानी से ज्योतिषियों के झाँसे में आ जाते हैं। ये राजनेता केवल अपना लाभ देखते हैं। लेखिका ने इस नाटक के माध्यम से आज के भ्रष्ट शासन व्यवस्था का रूप समाज के सामने लाने का प्रयास किया है।

आर्थिक आयाम

आज देखा जा सकता है कि जीवन में धन का महत्व बहुत बढ़ गया हे। भौतिकवादी दृष्टि के विकास के साथ ही लोगों में भौतिक साधन जुटाने की आकांक्षा बढ़ गई है। भौतिक साधनों की लालसा ने आदमी को पैसा कमाने के लिए विवश किया। पैसा कमाने के लिए साधनहीन आदमी साधनों की शुद्धता की परवाह भी नहीं कर रहा है, उसे केवल धन अर्जन की चिंता लगी रहती है। उचित माध्यम से भी जीविका चलाई जा सकती है। परंतु आज विडम्बना है कि धन कमाने के लिए उचित माध्यम जैसे रोज़गार के अवसर नहीं हैं और हमारे बहुत से नवयुवक बेरोज़गार रहते हैं। यही बेरोज़गारी मनुष्य को बहुत से अनुचित कार्य करने पर विवश करती है। मृणाल पाण्डे के नाटक 'चोर निकल के भागा' में युवकों के बेरोज़गारी का चित्रण किया है। चार मित्र बेरोज़गार हैं तथा जिनके पास धनाभाव था। चारों ढाबे में बैठकर क्रांति तथा शोषित औरतों के मुद्दे को लेकर बहस करते हैं। धनाभाव के कारण ही वे अलख निरंजन बाबा की बातों

में आते हैं। बाबा उन्हें दो प्रकार की भभूत देते हैं। ये भभूत जादुई चमत्कार के रूप में इन नवजवानों को प्रयोग करने के लिए कहा गया है। इसके प्रयोग से किसी भी वस्तु को छोटा या बड़ा किया जा सकता है। जब यह भभूत नवजवानों के हाथ लगती है तो इनके मस्तिष्क में तरह-तरह की योजनाएँ बनने लगती है कि किस प्रकार इनका प्रयोग किया जाए, किस प्रकार इसके प्रयोग से धन का अर्जन किया जाए।

इस नाटक के माध्यम से लेखिका यह बताना चाहती है कि जब किसी राष्ट्र की आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं होती है तो वहाँ के नागरिकों के दिमाग में भिन्न-भिन्न प्रकार की अनुचित योजनाएँ आती हैं जिसका उद्देश्य होता है किसी भी माध्यम से धन का अर्जन करना। माध्यम सही या गलत उसकी उन्हें परवाह नहीं होती है। इस नाटक में देखा जा सकता है कि किस प्रकार ताजमहल पर भभूत डालकर उसे छोटा किया जाता है और उसको बैग में रख लिया जाता है और उसके बाद उसको महँगे दामों में दूसरे देशों में बेचने की बात चलती है। यह भी ध्यान रखा जा रहा है कि उस राष्ट्र को बेचें जो उसका अधिक मूल्य दे सके। उनका कहना है कि रकम तो बाहरी मुल्कों से ही मिल सकती है, क्योंकि अपने यहाँ तो कर, शेयर, उनका हिस्सा, अपना हिस्सा इतना लगा दिया जाता है कि फायदा होने के बदले नुकसान ही हो जाता है। यहाँ पर भी भारतीय अर्थव्यवस्था पर व्यंग्य किया गया है।

इस प्रकार इस नाटक में यह दर्शाया गया है कि आज बेरोज़गारी के कारण मनुष्य कुछ भी करने के लिए तैयार रहता है। उसे यह चिंता नहीं रहती है कि वह क्या गलत क्या सही कर रहा है। उसे चिंता रहती है तो केवल एक बात की वो कैसे अधिक धन की प्राप्ति कर सके, जीवन स्तर को ऊँचा उठा सके। इस नाटक के माध्यम से लेखिका ने ताजमहल की चोरी दिखाकर आज के पथभ्रष्ट समाज को बेनकाब करने का प्रयत्न किया है।

10.3.2 पात्रों का चरित्र चित्रण

मुख्य पात्र

मास्टर गेंदालाल

इस नाटक में मास्टर गेंदालाल प्रमुख पात्र है। ये एक प्रख्यात अभिनेता थे, जिनकी पत्नी का नाम शरीफा बी था और इनकी बेटी का नाम नीता था। हर मनुष्य में कोई न कोई खूबी होती है। वे उस खूबी का त्याग नहीं कर सकते हैं। वह खूबी जीवन की अंतिम सांस तक उसके साथ रहती है। गेंदालाल भी एक पहुँचा हुआ कलाकार था। नाटक कम्पनी बंद होने के कारण वह कुछ काम नहीं करता है, लेकिन उसका जो अभिनय वाला अंदाज है वह उसकी बातों में झलकता है। जैसे गेंदालाल के शब्दों में देखा जा सकता है-

गेंदालाल - “अरे दिवानी, तेरे होते इस घर में क्या कम?

अच्छा जाओ प्यारी, तुम पर जाऊँ वारी”

इस प्रकार गेंदालाल के शब्दों में सफल अभिनेता की झलक मिलती है। गेंदालाल अपने गुरु का अधिक सम्मान करते थे। उनका मानना था कि अगर कोई व्यकित सुकर्म करे तो बाबाजी की दृष्टि उन पर पड़ती है तो उसकी मनोकामना पूरी हो जाती है।

गेंदालाल अपनी पत्नी शरीफा से बहुत प्रेम करते थे तथा उनको इज्जत और सम्मान देते थे। गेंदालाल में हमें दूसरों के प्रति प्रेम दिखाई देता है। जैसे- सुरेश, रमेश, महेश, नीता।इन चारों को गेंदालाल नहीं जानते थे, फिर भी उनकी सहायता करते हैं। गेंदालाल के घर में खाना कम रहता है, फिर भी वे उन चारों को खाने के लिए आमंत्रित करते हैं। इस बात से गेंदालाल के स्वभाव का पता चलता है।

गेंदालाल बड़े चतुर हैं। उनको अपने जीवन का अनुभव रहा है। वे जानते थे कि नेता ज्योतिषी के दीवाने होते हैं। उनके आगे नरम पड़ जाते हैं। गेंदालाल कुछ मंत्र पढ़कर सरकारी अफसरों को कह देता है कि जाओ अब ताज की ईंट भी कोई नहीं चुरा सकता। यह खबर जब रेडियो और टेलीविजन पर आने लगी तो होटल में एम.पी., एम.एल.ए., मंत्री सभी ज्योतिषी के चरणों की धूल लेने के लिए आ जाते हैं और उन्हें पूरे बीस हजार का चढ़ावा मिला था।

ताज को खरीदने के लिए अनेक पत्र आते हैं, उसमें से एक अरबपति के वकील का था। वह चाहता था उसके भेजे डॉक्टर इमारत पर कीटनाशक दवाएँ स्प्रे करें, ताकि तीसरी दुनिया के कीटाणु वहाँ न जा पहुँचे। तब गेंदालाल का विचार सामने आता है। वह कहता है विलायती दवाओं से हम अपनी इमारत का नाश नहीं करना चाहते। यहाँ उनके देश प्रेम के दर्शन होते हैं।

शरीफा बीं

नाटक के अनेक प्रमुख पात्रोंमें शरीफा बीं भी एक हैं। ये एक सफल अभिनेत्री थीं। इनके पति का नाम मास्टर गेंदालाल तथा इनकी बेटी का नाम नीता था। इनके गुरु का नाम अलख निरंजन बाबा। वे इन्हें अपनी बेटी के समान मानते थे।

शरीफा एक सफल अभिनेत्री थी जिनका परिचय गेंदालाल के शब्दों में देखा जा सकता है। शरीफा इस प्रकार एक्टिंग करती थी कि नाटक कम्पनी वाले इनके इर्द-गिर्द घूमते थे ताकि नाटक के लिए कन्ट्राक्ट में साइन करवा सकें। इस प्रकार वह एक सफल एक्टर थी।

शरीफा बाबा को अपना गुरु मानती थी। उनके प्रति श्रद्धा और सम्मान करती थी। बाबा उन्हें बेटी के समान मानते हैं। आरंभ से लेकर अंत तक उनकी मदद करते हैं। बाबा ही उन्हें उनकी बेटी से मिलवाते हैं।

शरीफा में दूसरों के प्रति प्रेम है। जब सुरेश, महेश, रमेश, नीता उनके घर उनकी मदद लेने के लिए आते हैं तो यह उनकी मदद करती है तथा जब खाना खाने की बात आती है तो खाना कम होने के बावजूद भी उनको खाने के लिए कहती है।

शरीफा में बहुत चतुराई है। ताजमहल जैसी प्रसिद्ध इमारत को चुराने का प्लान वह बड़ी होशियारी से बनाती है। उसके अनुसार पहले ताज की चोरी होने का हल्ला मचा दिया जाएगा, यह सुन पहरा बढ़ जाएगा तथा तभी ऐसा प्रयास किया जाए ताकि उनको लगे चोर ताजमहल

को चोरी करने के लिए आए थे मगर इसमें नाकामयाब हो गए। फिर दूसरे दिन ताज की चोरी कर दी जाएगी। तब सरकारी अफसर अपनी खुशी का जश्न मना रहे होंगे कि हमने ताज की रक्षा कर ली।

जब नीता का भाई बब्बर और उसके दो गुण्डे टीटो-पीटो गेंदालाल की बरसाती में आते हैं ताज को लेने के लिए, मगर बहुत होशियारी के साथ वह बब्बर और टीटो-पीटो को चाय में भभूत मिला कर पिला देती है, जिससे उनका आकार छोटा हो जाता है। जब ताज को लेने के लिए जोकर आता है तब भी वह उसके माथे पर भभूत को लगाकर उसे चींटी के समान बना देती है। शरीफा के माध्यम से ही ताज की चोरी संभव हुई है, जो पूरे नाटक में प्रतिक्रिया पैदा करती है।

गौण पात्र

बाबा

बाबा का पूरा नाम था छबीलदास रंगीलदास तथा अलख निरंजन है। इन्हें बाबा कहकर पुकारा जाता था, जो एक पहुँचे हुए साधु थे। उस जमाने की मशहूर शै, पारसी थिएटर के आक़ा थे, आक़ा। लाहौर के दंगों के दरम्यान कंपनी पर गुण्डों ने हमला किया, जिसके कारण कम्पनी की टूटफूट हो जाने पर बाबा सब कुछ छोड़कर कफनी धारण कर चल दिए हिमालय की ओर। बाबा मददगार थे जो रमेश, महेश, सुरेश, नीता आदि की मदद करते हैं। बाबा शरीफा को भी उसकी बेटी से मिलाते हैं। बाबा नाटक के आरंभ में भी मदद के रूप में आते हैं तथा नाटक के अंत में भी मदद करते हुए दिखाई देते हैं। जब बब्बर, जोकर, बाण्ड, टीटो-पीटो ताज को लेकर मंगल ग्रह पर जा रहे होते हैं तब बाबा अपने मंत्र के माध्यम से उन्हें वशीभूत कर लेते हैं। इस पूरे नाटक में बाबा का चरित्र बहुत ही प्रभावशाली दिखाया गया है।

रमेश, महेश, सुरेश, नीता

ये चारों की स्थिति एक जैसी है। ये चारों मित्र थे। इस नाटक में ये धनाभाव तथा बेरोजगारी का रूप लेकर सामने आते हैं। ये लोग पहले नाटक कम्पनी में काम करते थे, लेकिन अब कुछ न करने के कारण धनाभाव की समस्या से घिरे हुए थे। बाबा के सहयोग से ये सब गेंदालाल के पास जाते हैं। वहीं पर रहते हुए नीता को यह पता चलता है कि शरीफा उसकी माँ है। ताज को चारी करने के प्लान में ये लोग बराबर भागीदार थे। इनके ऊपर भभूत का प्रयोग किया गया। ये सब ताजमहल में जाकर ऐसा माहौल बनाते हैं जिससे यह लगे ताज की चोरी करने के लिए चोर आए थे। मगर सफल न हो सके। ये चारों गेंदालाल तथा शरीफा के साथ मिलकर करोड़पति बनने की आशा के साथ ताज की चोरी में हिस्सा लेते हैं, ताकि इनके धनाभाव की समस्या दूर हो जाए।

10.4 पाठ सार

मृणाल पाण्डे का चौथा नाटक 'चोर निकल के भागा' 1995 में लिखा गया था। यह नाटक आज के उस शहरी वर्ग को संबोधित है जो कामिक्स, टी.वी. धारावाहिक, फिल्म, माफिया, सुपरमैन जेम्स बाण्ड या इसी तरह के तस्करों, जासूसों के कारनामों से भरी काल्पनिक दुनिया में डूबा हुआ है। यह नाटक इस चकाचौंध पूर्ण रंगीन दुनिया की पैरोडी है। नाटक के आरंभ से लेकर नाटक के अंत तक फैंटसी देखी जाती है। जैसा कि नाटक के आरंभ में देखा जाता है कि अलख निरंजन बाबा ढाबे के लड़के को शाप देते हैं कि पत्थर की मूरत बन जा तथा शाप का असर जाने के बाद अगले बारह घंटों तक उसके मुँह से कुत्ते की आवाज निकलेगी। यह एक प्रकार की फैंटसी है जो वास्तव में संभव नहीं है। बाबा इन बच्चों पर प्रसन्न होकर हवा में दो डिब्बिया निकालते हैं तथा अचानक वहाँ से गायब हो जाते हैं। नाटक की अंतर्वस्तु को उद्घाटित करने के लिए लेखिका ने प्रेम और सौंदर्य के प्रतीक ताजमहल की चोरी की कल्पना की है। वास्तव में यह एक फैंटसी है जिसके सहारे लेखिका ने उन मानव-मूल्यों पर मंडराते खतरों को रेखांकित किया है जो मनुष्य जाति की तमाम कलात्मक उपलब्धियों को निरर्थक बना रहे हैं।

इस नाटक में मृणाल पाण्डे जी ने विडम्बनापूर्ण हास्य-स्थितियों, रोमांचक घटनाओं और प्रेम तथा सौंदर्य के प्रतीक ताजमहल की चोरी की कल्पना के जरिए मानव मूल्यों और भारत की तमाम कलात्मक संस्कृति साहित्य पर फैले हुए बाजारीकरण की भयंकर विपत्ति को उद्घाटित करने का प्रयत्न किया है। बाजारवाद के कुप्रभाव को इसमें दर्शाया गया है। ताजमहल की चोरी की घटना के माध्यम से राजनीति की अवसरवादी और दायित्वहीन प्रशासन व्यवस्था की कृत्रिमता को उभार कर देखने का प्रयास भी नाटक में हुआ है। इस नाटक के माध्यम से यह भी बताया गया है कि किस तरह चुनाव आते ही नेताओं के रूप बदल जाते हैं। चुनाव जीतने के बाद वह जनता को पहचानते भी नहीं हैं। लेखिका ने नाटक में स्वार्थी राजनेताओं का चित्रण किया है। उसी प्रकार नाटककार ने राजनेताओं की उथली राजनैतिक समझ के साथ ही बुद्धिजीवियों एवं पत्रकारों की भी पोल खोली है।

लोक नाट्य की शिल्प छवियाँ इस नाटक में प्रस्तुत हुई है। इसमें कला संस्कृति से जुड़े हुए मुद्दों को पेश किया गया है। वर्तमान भारत में उपभोक्तावादी संस्कृति की सर्वग्रासी विसंगतियों का चित्रण नाटक का मुख्य उद्देश्य है। बीसवीं शताब्दी की अपसंस्कृति को भी इसमें प्रस्तुत किया गया है। हास्यावरण में गंभीर समस्या को दर्शाने की क्षमता इस नाटक की सफलता का प्रमाण है। यह समकालीन जीवन यथार्थ को प्रस्तुत करने वाला सफल रंग नाटक है।

इस नाटक के शीर्षक को आधुनिक संदर्भ से जोड़ें तो इस प्रकार भी कहा जा सकता है कि कई बार असली चीज होती है वह तो निकलकर भाग जाती है और आप लाठी पिटते रहते हैं, सांप निकल गया और आप लाठी पीट रहे हैं, ऐसी स्थितियाँ जीवन में अक्सर आती है, इस नाटक में यह भी एक विशेषता है।

10.5 पाठ की उपाब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं -

1. यह नाटक आज के उस शहरी वर्ग को संबोधित है जो कामिक्स, टी.वी. धारावाहिक, फिल्म, माफिया, सुपरमैन, जेम्स बाण्ड या इसी तरह के तस्करों, जासूसों के कारनामों से भरी काल्पनिक दुनिया में डूबा हुआ है।
2. इस नाटक में मृणाल पाण्डे ने विडम्बनापूर्ण हास्य-स्थितियों, रोमांचक घटनाओं और प्रेम तथा सौंदर्य के प्रतीक ताजमहल की चोरी की कल्पना के जरिए मानव मूल्यों और भारत की संस्कृति और साहित्य पर छाई हुई बाजारीकरण की भयंकर विपत्ति को उद्घाटित उजागर किया है।
3. लेखिका ने नाटक में स्वार्थी राजनेताओं का पर्दाफाश किया है।
4. इस नाटक में लोक नाट्य की शिल्प छवियाँ भलीप्रकार प्रस्तुत हुई हैं।
5. वर्तमान भारत में उपभोक्तावादी संस्कृति की सर्वग्रासी विसंगतियों का चित्रण इस नाटक का मुख्य उद्देश्य है।

10.6 शब्द संपदा

1.	अनमोल	=	अमूल्य/कीमती
2.	इंतजाम	=	प्रबंध
3.	इनाम	=	पुरस्कार
4.	कारखाना	=	उद्योग स्थल
5.	चतुर	=	कुशल
6.	तरक्की	=	उन्नत दशा प्राप्त करना
7.	तर्जुमा	=	अनुवाद
8.	दौलत	=	धन, संपत्ति
9.	मशहूर	=	प्रसिद्ध
10.	माफिया	=	विधि विरोधी
11.	मुकद्दर	=	किस्मत
12.	मुल्क	=	प्रदेश/प्रांत
13.	याफ्ता	=	पाया हुआ
14.	शब्द	=	अर्थ

10.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. 'चोर निकल के भागा' नाटक के विविध आयामों की चर्चा कीजिए।
2. 'चोर निकल के भागा' नाटक में क्या व्यंग्य निहित है? चर्चा कीजिए।
3. 'चोर निकल के भागा' नाटक का विस्तृत परिचय दीजिए।
4. 'चोर निकल के भागा' नाटक समकालीन समाज को किस प्रकार दर्शाता है? स्पष्ट कीजिए।
5. 'चोर निकल के भागा' नाटक की विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. शरीफा बी का चरित्र चित्रण कीजिए।
2. बाबा के चरित्र पर प्रकाश डालिए।
3. 'चोर निकल के भागा' नाटक के गौण पात्रों का परिचय दीजिए।
4. 'चोर निकल के भागा' नाटक के सामाजिक संदर्भ की व्याख्या कीजिए।
5. 'चोर निकल के भागा' नाटक के राजनैतिक संदर्भ पर प्रकाश डालिए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. 'चोर निकल के भागा' किसकी रचना है? ( )
   (अ) कृष्णा सोबती (आ) लक्ष्मी लाल (इ) मृणाल पांडे (ई) मोहन राकेश
2. 'चोर निकल के भागा' नाटक में किस वस्तु की चोरी की बात की गई है? ( )
   (अ) ताजमहल (आ) कुतुबमीनार (इ) चारमीनार (ई) मीनार स्तंभ
3. मृणाल पाण्डे कृत 'चोर निकल के भागा' नाटक किस वर्ष प्रकाशित हुआ? ( )
   (अ) 1996 (आ) 1995 (इ) 1994 (ई) 1993
4. मास्टर गेंदालाल की पत्नी का क्या नाम था? ( )
   (अ) सुल्ताना बेगम (आ) शबनम बी (इ) रुकसाना बी (ई) शरफा बी

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. 'चोर निकल के भागा' नाटक में .... वस्तु की चोरी की बात की गई है।
2. चोर निकल के भागा नाटक में बाबा का पूरा नाम ……………..है।

3. मृणाल पांडे कृत 'चोर निकल के भागा' का प्रकाशन ....में हुआ।

10.8 पठनीय पुस्तकें

1. चोर निकल के भागा : मृणाल पाण्डे
2. संपूर्ण नाटक : मृणाल पाण्डेय
3. हिंदी साहित्य का नवीन इतिहास : लाल साहब सिंह
4. हिंदी का गद्य साहित्य : रामचंद्र तिवारी

इकाई 11 : असग़र वजाहत : एक परिचय

रूपरेखा

11.1 प्रस्तावना
11.2 उद्देश्य
11.3 मूल पाठ : असग़र वजाहत : एक परिचय
11.3.1 जीवन परिचय
11.3.2 व्यक्तित्व
11.3.3 रचना यात्रा एवं कृतियाँ
11.4 पाठ का सार
11.5 पाठ की उपलब्धियाँ
11.6 शब्द संपदा
11.7 परीक्षार्थ प्रश्न
11.8 पठनीय पुस्तकें

11.1 प्रस्तावना

हिंदी उपन्यास और कहानी ने एक लम्बी विकास यात्रा तय की है। यूं तो 1882 ई. में लाला श्रीनिवास दास कृत 'परीक्षा-गुरु को हिंदी का पहला उपन्यास माना जाता है लेकिन सत्य यह है कि इससे पहले भी उपन्यास की शैली में लिखी कुछ पुस्तकें प्रकाशित हुई थीं। 'भारतेंदु युग' के नाम से जाने वाले इस काल खंड में ठाकुर जगमोहन सिंह (श्याम स्वप्न),पं. बालकृष्ण भट्ट (नूतन ब्रह्मचारी, सौ अजान और एक सुजान), किशोरी लाल गोस्वामी (स्वर्गीय कुसुम), राधाचरण गोस्वामी (विधवा-विपत्ति), राधाकृष्ण दास (निस्सहाय हिन्दू) ने हिंदी कहानी और उपन्यास के क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान दिया। इस दौर में अनुवाद के क्षेत्र में भी बहुत काम हुआ जिसमें बांग्ला, अंग्रेजी, मराठी आदि भाषाओं से हिंदी में कहानियों और उपन्यासों का अनुवाद हुआ। भारतेंदु युग में जहाँ शिक्षाप्रद कहानियाँ लिखे जाने पर बल रहा, द्विवेदी युग में यह विस्तार पा कर जासूसी, तिलस्म और रोमांस जैसे विषयों को भी समाहित करता गया। देवकीनन्दन खत्री, किशोरीलाल गोस्वामी, गोपालराम गहमरी जैसे साहित्यकारों ने इस दौर में हिंदी उपन्यास साहित्य को समृद्ध किया। द्विवेदी युग के बाद प्रेमचंद युग में सामाजिक समस्याओं को उपन्यास के विषय में लिया गया। प्रेमचंद के साथ ही विश्वम्भरनाथ शर्मा कौशिक, प्रसाद, निराला, सुदर्शन, चतुरसेन शास्त्री, वृन्दावन लाल वर्मा, प्रतापनारायण श्रीवास्तव, सियारामशरण गुप्त, पांडेय बेचन शर्मा 'उग्र', भगवती प्रसाद वाजपेयी, गोविन्दवल्लभ पंत, राहुल सांकृत्यायन और जैनेन्द्र जैसे साहित्यकारों ने भी इस दौर में

महत्वपूर्ण योगदान दिया। प्रेमचंद युग के बाद हिंदी उपन्यास की यात्रा में महत्वपूर्ण बदलाव आए। प्रथम महायुद्ध के बाद पश्चिम के पुराने मूल्यों का तेजी के साथ विघटन हुआ।पूंजीवादी समाज में व्यक्ति-चेतना उभर कर सामने आई। हिंदी उपन्यास भी इससे अछूता नहीं रहा और सन् '50 के बाद उपन्यासकारों का ध्यान व्यक्ति और समाज की मुक्ति की ओर गया। अज्ञेय, इलाचन्द्र जोशी, यशपाल, रामेश्वर शुक्ल 'अंचल', अमृतलाल नागर, फणीश्वरनाथ रेणु, उदयशंकर भट्ट, राही मासूम रजा, शिवप्रसाद सिंह, रामदरश मिश्र, धर्मवीर भारती, मन्मथनाथ गुप्त, भैरवप्रसाद गुप्त, अमृतराय, लक्ष्मीनारायण लाल, राजेन्द्र यादव, मन्नू भंडारी, प्रभाकर माचवे, सर्वेश्वरदयाल सक्सेना जैसे साहित्यकारों ने प्रेमचन्दोत्तर युग में वैश्विक स्तर पर हो रहे बदलावों के साथ-साथ भारतीय जनमानस की अपेक्षाओं और आकांक्षाओं को अपने साहित्य में समाहित किया।

उद्योगीकरण, महानगरीय सभ्यता, बदले हुए सामाजिक परिवेश, भ्रष्ट व्यवस्था, राजनीति के गिरते स्तर, आपसी सद्भाव और सौहार्द की कमी के कारण आम जनमानस जिन मनोवैज्ञानिक समस्याओं से जूझ रहा था, उसके फलस्वरूप साठोत्तरी दौर में हिंदी साहित्य में एक और महत्वपूर्ण बदलाव आया। साठोत्तरी साहित्य में मनुष्य के अकेलेपन और विद्रोही स्वभाव की पुरजोर अभिव्यक्ति हुई। असग़र वजाहत साठोत्तरी पीढ़ी के बाद के महत्त्वपूर्ण कहानीकार, उपन्यासकार और नाटककार हैं जिन्होंने हिंदी कहानी और उपन्यास की इस विकास यात्रा में अपनी रचनाओं के माध्यम से महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

11.2 उद्देश्य

प्रिय छात्रो! इस इकाई को पढ़ने के बाद आप -

- असग़र वजाहत के जीवन और साहित्य से परिचित हो सकेंगे।
- हिंदी साहित्य में असग़र वजाहत के योगदान को समझ सकेंगे
- असग़र वजाहत की कहानियों के माध्यम से साठोत्तरी साहित्य में आए बदलाव को समझ सकेंगे।
- असग़र वजाहत की नाट्य शैली से परिचित हो सकेंगे।
- साहित्यिक और सामाजिक परिवेश के अनुभवों को यात्रा-विवरण के माध्यम से प्रस्तुत करने की असग़र वजाहत की अनोखी शैली से परिचित हो सकेंगे।

11.3 मूल पाठ : असग़र वजाहत : एक परिचय

11.3.1 जीवन परिचय

असग़र वजाहत का साठोत्तरी पीढ़ी के बाद के हिंदी साहित्य में महत्वपूर्ण योगदान रहा है। इन्होंने कहानी, नाटक, उपन्यास, यात्रा-वृत्तांत, फिल्म तथा चित्रकला आदि विभिन्न क्षेत्रों में

महत्त्वपूर्ण रचनात्मक योगदान किया है। असग़र वजाहत का जन्म 5 जुलाई 1946 को उत्तर प्रदेश राज्य के फतेहपुर कस्बे में हुआ। उन्होंने अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय से एम.ए. (हिंदी) और पी-एच.डी. की उपाधि प्राप्त की। पोस्ट डॉक्टोरल रिसर्च जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, दिल्ली से किया। इन्होंने जामिया मिलिया इस्लामिया, दिल्ली के हिंदी विभाग में अध्यापन का कार्य किया। असग़र वजाहत जामिया मिलिया इस्लामिया में हिंदी विभाग के अध्यक्ष भी रहे। 5 वर्षों तक असग़र वजाहत ने ओत्वोश लोरांड विश्वविद्यालय, बुडापेस्ट, हंगरी में भी अध्यापन का कार्य किया। असग़र वजाहत एक अच्छे चित्रकार भी हैं। बुडापैस्ट, हंगरी में इनकी दो एकल चित्र प्रदर्शनियाँ भी हो चुकी हैं। अध्यापन कार्य से सेवानिवृत्त होने के बाद भी असग़र वजाहत रचनाकर्म से सेवानिवृत्त नहीं हुए और लगातार साहित्य सेवा में जुटे हैं।

11.3.2 व्यक्तित्व

अपने व्यक्तित्व के बारे में बात करते हुए असग़र वजाहत ने खुद को एक ऐसी भटकती हुई आत्मा के रूप में उल्लिखित किया जिसको कहीं भी संतोष नहीं है, कहीं भी चैन नहीं है। हालांकि उन्होंने यह भी माना कि इस बेचैनी और कभी कुछ करने की कोशिश, कभी कुछ और करने की कोशिश का कोई विशेष निष्कर्ष नहीं निकला लेकिन उनकी यात्राएँ भी इसी संदर्भ में, और लेखन भी इसी संदर्भ में, और अपने लिखे को अस्वीकार करना भी इसी संदर्भ में कि जो लिखा है, वह किसी और तरीके से लिखा जाए, जो किया है, वह किसी और तरीके से किया जाए। उनकी यह कोशिश लगातार बनी रही और अभी भी कई मायनों में है कि जो हो रहा है, जो कर रहे हैं, उससे असहमति, उससे असंतोष, उससे पूरी तरह सहमत न होना। उन्होंने कहा कि "आप कह सकते हैं कि मैं एक ऐसा व्यक्ति हूँ जो तरह-तरह की रचनाओं के माध्यम से अपने असंतोष को व्यक्त करता है।"

बोध प्रश्न

- असग़र वजाहत ने अपने आपको भटकती हुई आत्मा क्यों कहा?

11.3.3 रचना-यात्रा एवं कृतियाँ

असग़र वजाहत ने गद्य साहित्य की लगभग सभी विधाओं में लेखन किया है और हर विधा में अपनी एक अलग पहचान बनाई है। कहानी, उपन्यास, लघु कथा, नाटक, यात्रा वृत, निबंध, आलेख इन सभी विधाओं में असग़र वजाहत ने साधिकार लिखा है। इनकी पहली कहानी 1964 के आसपास छपी थी तथा पहला कहानी संग्रह 'अंधेरे से' 1976 में आपातकाल के दौरान पंकज बिष्ट के साथ (संयुक्त रूप से) छपा था। इनकी कहानियों के अनुवाद विश्व की कई भाषाओं जैसे अंग्रेजी, इतालवी, रूसी, फ्रेंच, ईरानी, उज्बेक, हंगेरियन, पोलिश आदि भाषाओं में हो चुके हैं। असग़र वजाहत का पहला नाटक 'फिरंगी लौट आये' 1857 की पृष्ठभूमि पर

आधारित था। आपातकाल के दौरान 'फरमान' नाम से इसे टेली प्ले के रूप में फिल्माया गया तथा इसके प्रसारण भी हुए थे। 'जिस लाहौर नई देख्या ओ जम्याइ नई' सबसे प्रसिद्ध नाटक है। हबीब तनवीर ने इस नाटक का पहला शो 27 सितंबर, 1990 को किया था। इसके बाद इस नाटक की इतनी चर्चा हुई कि विश्व के कई देशों में इसके मंचन हुए और कई अन्य निर्देशकों ने इस नाटक का निर्देशन किया। भारत की कई भाषाओं में इसके अनुवाद किए गए और इसका मंचन हुआ।

असग़र वजाहत टेलीविज़न व फ़िल्म लेखन और निर्देशन से भी जुड़े रहे हैं। कई वृत्तचित्रों, धारावाहिकों और कुछ फीचर फ़िल्मों के लिए पटकथा लेखन भी इन्होंने किया है। असग़र वजाहत नियमित रूप से अखबारों और पत्रिकाओं के लिए भी लिखते रहे हैं। 2007 में उन्होंने अतिथि संपादक के रूप में बी.बी.सी. वेब पत्रिका का संपादन किया था। इसके अतिरिक्त कई प्रतिष्ठित पत्रिकाओं के विशेषांक का संपादन भी इन्होंने किया।

असग़र वजाहत की प्रमुख रचनाएँ निम्नलिखित हैं: **कहानी संग्रह** : अँधेरे से (1977, पंकज बिष्ट के साथ संयुक्त संग्रह; भाषा प्रकाशन, नई दिल्ली), दिल्ली पहुँचना है (1983, प्रकाशन संस्थान, नई दिल्ली), स्विमिंग पूल (1990, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली), सब कहाँ कुछ (1991, किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली), मैं हिंदू हूँ (2006, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली), डेमोक्रेसिया (2010, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली)। **लघुकथा संग्रह** : मुश्किल काम (2010, किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली), भीड़तंत्र (2018, राजपाल एंड सन्ज़, दिल्ली)। **नाटक** : फ़िरंगी लौट आये, इन्ना की आवाज़ (1986, प्रकाशन संस्थान, नई दिल्ली), वीरगति (1981, विजय प्रकाशन, दिल्ली), समिधा, जिस लाहौर नहीं देख्या ओ जम्याइ नई (1991, दिनमान प्रकाशन, दिल्ली; वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली), गोडसे@गांधी.कॉम (2012, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली), पाकिटमार रंगमंडल, सबसे सस्ता गोश्त -14 नुक्कड़ नाटकों का संग्रह (2015, राजपाल एंड सन्ज़, दिल्ली), महाबली (2019, राजपाल एंड सन्ज़, दिल्ली)। **उपन्यास** : सात आसमान (1996, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली), पहर-दोपहर (वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली), कैसी आगी लगाई (2006, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली), बरखा रचाई (2011, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली), धरा अँकुराई (2014, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली)। **उपन्यासिका** : मन-माटी (2009, 'मन-माटी' एवं 'चहारदर' दो उपन्यासिकाओं का एकत्र संकलन, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली)। **यात्रावृत्तांत** : चलते तो अच्छा था (2008, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली), पाकिस्तान का मतलब क्या (2011, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली), रास्ते की तलाश में (2012, अंतिका प्रकाशन, गाजियाबाद), दो कदम पीछे भी (2017, राजपाल एंड सन्ज़,

दिल्ली), स्वर्ग में पाँच दिन (2019, राजपाल एंड सन्ज़, दिल्ली)। **आलोचना** : हिंदी-उर्दू की प्रगतिशील कविता (1985, मैकमिलन, दिल्ली). **विविध** : धारावाहिक : बूंद-बूंद (1990, राधाकृष्ण प्रकाशन,नई दिल्ली), बाकरगंज के सैयद (2015, राजपाल एंड सन्ज़, दिल्ली), सफाई गंदा काम है (2015, राजपाल एंड सन्ज़, दिल्ली), **निबंध** : ताकि देश में नमक रहे (2015, किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली), पटकथा लेखन : व्यावहारिक निर्देशिका (राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली)

बोध प्रश्न

- असग़र वजाहत की कुछ रचनाओं का नाम बताइए।

उपन्यासों में विविधता

असग़र वजाहत एक प्रयोगधर्मी रचनाकार हैं जो कहानी या उपन्यास लेखन के तय मानकों को तोड़ने की कोशिश करते नज़र आते हैं। 1996 में प्रकाशित उपन्यास 'सात आसमान' में असग़र वजाहत एक नया प्रयोग करते हैं। सोलहवीं शताब्दी के छठवें दशक से लेकर बीसवीं शताब्दी के सातवें दशक तक लगभग 400 सालों की लंबी अवधि को वजाहत ने अपनी कहानी का विषय बनाया है। इतनी लंबी कालावधि में एक ही कुल-परिवार की चार-पाँच पीढ़ियों के लोग 'पात्र' के रूप में एक साथ चित्रित होते हैं जो असग़र वजाहत के पुरखे हैं। इस उपन्यास को न तो इतिहास, न आत्मकथा, न औपन्यासिक इतिहास और न ही संस्मरण की श्रेणी में रखा जा सकता है। वस्तुतः यह असग़र वजाहत की अपने पुरखों के बारे में लिखी गई कहानी है जिसमें घटनाओं का उल्लेख इतिहास के सापेक्ष में किया गया है। 'सात आसमान' की कहानी के केंद्र में लखनऊ और इलाहाबाद क्षेत्र हैं। कहानी इलाहाबाद और कानपुर के बीच के उस समय के एक चकले की जमींदारी और बाद में (1826 में) जिला बन जाने वाले फ़तेहपुर की है। कहानी ने मूल में जमींदारी प्रथा और इसके अंत की कहानी भी है। अपने पुरखों के बारे में असग़र वजाहत ने लिखा कि उन्हें विश्वास था कि अंगराज तो शायद कभी चले भी जाएँ लेकिन जमींदारी खत्म नहीं हो सकती। सत्तन मियाँ (असग़र वजाहत के अब्बा के अबा मियाँ) इस उपन्यास में कहते हैं "जहाँ तक जमींदारी का सवाल है, ये बाबा आदम के जमाने से है और ताक़यामत कायम रहेगी। मियाँ जमींदारी न रहेगी तो पूरा निज़ाम दरहम-बरहम हो जाएगा। लगान कौन वसूलेगा? गाँवों के लुच्चे-लफंगों और बदमाशों को काबू में कौन रखेगा? सरकारी खजाना खाली हो जाएगा और सरकार ही नहीं रहेगी। मियाँ, यहाँ जो भी हुक्मरान आया उसने जमींदारी को जारी रखा। बिल्फ़र्जे-मोहाल अंग्रेज़ चले भी गए तो जमींदारी नहीं जा सकती।" काल परिवर्तन होने और कई पीढ़ियों की कहानी को समेटने की वजह से इस उपन्यास की आलोचना भी हुई लेकिन असग़र वजाहत की कहानी कहने की शैली की प्रशंसा भी।

विमर्शों के इस दौर में भी असग़र वजाहत जीवन को समझने के लिए उसे टुकड़ों में नहीं बाँटते और न किसी फार्मूले के अन्तर्गत सुझाव और समाधान प्रस्तुत करते हैं। वे जीवन को उसकी पूरी जटिलता और प्रवाह के साथ सामने लाते हैं। उनका मानना है कि जीवन को समग्रता में ही समझा जा सकता है। उनका उपन्यास 'बरखा रचाई' किसी विमर्श का ठप्पा लगाए बिना ठोस जीवन से जुड़ी बहुत-सी समस्याओं को सामने लाता है।

उपन्यास में एक ऐसे जीवन के दर्शन होते हैं जो लगातार प्रवाह में है। उनके रूपों, रंगों, कोणों से इस जीवन को देखने और समझने का प्रयास ही इसे महत्त्वपूर्ण बनाता है। उपन्यास का फलक बहुत व्यापक है। दिल्ली के राजनीतिक जीवन की झलकियों के साथ पत्रकार जीवन की झाँकियाँ, मध्यवर्गीय समाज में स्त्री की स्थिति, महानगर के बुद्धिजीवियों की ऊहापोह, गाँव के बदलते सम्बन्ध, स्त्री-पुरुष सम्बन्धों की जटिलता, विवाह और विवाहेतर संबंध, छोटे शहरों का बदलता जीवन और वहाँ राजनीति तथा अपराध की बढ़ती भूमिका जैसे प्रसंग उपन्यास में आए हैं। उपन्यास में न तो वैचारिक पूर्वग्रह और न किसी विशेष 'शिल्प कौशल' का दबाव स्वीकार किया गया है। पात्र स्वयं अपनी वकालत करते हैं। लगता है, पात्रों की गति और प्रभाव इतना अधिक हो गया है कि वे उपन्यास के समीकरण को खंडित कर देंगे, पर यह सब बहुत स्वाभाविक ढंग से सामने आता है। असग़र वजाहत अपनी 'किस्सागोई' के लिए विख्यात हैं। उन्होंने दास्तानों और कथाओं से जो कुछ हासिल किया है, उसका भरपूर इस्तेमाल अपनी कथाओं में किया है। जिस तरह किस्सा सुनानेवाला अपने श्रोता की अनदेखी नहीं कर सकता, उसी तरह वजाहत अपने पाठक की अनदेखी नहीं करते।

बोध प्रश्न

- असग़र वजाहत किस्सागोई के लिए क्यों विख्यात हैं?

कहानी का मकसद

अपने कहानी संग्रह 'कहानी की दोपहर' की भूमिका में असग़र वजाहत ने लिखा "कहानी लिखने की शुरूआत एक तरह से अजीब हालत में हुई थी। सन् 1964-65 के दिन थे और अपने अतिरिक्त आत्मविश्वास या मूर्खता के कारण मैं ऐसी स्थिति में पहुँच गया था जहाँ से लगता था सभी रास्ते बंद हैं और मैं एक ऐसा आदमी (उस समय युवक) हूँ जो किसी काम का नहीं है। अब याद तो नहीं पड़ता लेकिन शायद कहानी लिखने और छप जाने के बाद ही यह एहसास हुआ था कि अपनी बात कह पाना कहीं न कहीं मन को शांति देता है, सहारा देता है, आत्मविश्वास और खुशी देता है। मेरी पहली कहानी का नाम था 'वह बिक गयी'। यह किसी सच्ची घटना को केंद्र में रखकर लिखी गई थी। और दूसरी या अगली कहानी लिखने का ख़याल आते ही सबसे बड़ी दिक़्क़त यह आती थी कि कहानी किस शब्द से शुरू हो सबसे पहले कौन-सा शब्द आये लाखों,

करोड़ों शब्दों में कौन-सा शब्द कहानी का पहला शब्द हो सकता है इस तरह लंबे समय तक पहले शब्द की समस्या में फंसा रहा और परेशान होता रहा।

लेकिन फिर भी सन् 1964-65 से जो कहानी लेखन शुरू हुआ था वह मज़ेदार दुलकी चाल से चलता रहा और अगला पड़ाव आया जब मेरी पहली कहानी सन् 1965 में 'धर्मयुग' में छपी। थोड़ी भावुक क़िस्म की कहानी थी जो संबंधों के विस्तार पर आधारित थी। दूसरी कहानी जो धर्मवीर भारती (संपादक धर्मयुग) को भेजी तो वह उन्हें पसंद नहीं आई हालांकि मेरे ख़याल से पहली से अच्छी थी, पर धर्मवीर भारती को दूसरी कहानी में वह 'सुगंध' नहीं मिली जो पहली में थी। मैंने भी तय कर लिया कि किसी की 'सुगंध' के लिए तो न लिखूँगा। पहले मुझे सुगंध मिलनी चाहिए उसके बाद किसी और को मिले तो मिले, न मिले तो न मिले।

यह साठोत्तरी का दौर था और निर्मल वर्मा 'नई कहानी' का बाड़ा तोड़कर एकदम ऊपर आ चुके थे। साठोत्तरी में सेक्स संबंधी विकृतियों की ऐसी भरमार थी जो उकता देती थी। निर्मल वर्मा अच्छे लगते थे उसी तरह जैसे साहिर लुधियानवी लगा करते थे। नई कहानी की दूसी धारा की बात होती थी और उनमें अमरकांत, शेखर जोशी, फणीश्वरनाथ 'रेणु' पक्की जगह बना चुके थे।

सन् 1971 के आसपास दिल्ली आया और 'केक' कहानी लिखी जो उस समय कुछ चर्चित हुई पर मैंने वह लीक नहीं पकड़ी और इधर-उधर भटकता रहा। यह भटकन हमेशा ही मेरे साथ लगी रही। यहाँ तक कि आपातकाल में यह भटकन काम आई और मौखिक परंपरा की कहानियों ने एक रास्ता दिखाया। फिर पंद्रह-बीस साल के बाद 'संवादों' ने अपना रंग दिखाया और लघुकथाएँ लिखीं। पर लगता रहा कि लघुकथाओं के संदर्भ में अधिक गंभीर होने की आवश्यकता है।

बोध प्रश्न

- असग़र वजाहत कहानी लेखन की ओर कैसे प्रवृत्त हुए?

इतिहास के सापेक्ष लिखे गए सामाजिक नाटक

'जिस लाहौर नई देख्या' भारत-पाकिस्तान के विभाजन के दौर की कहानी है। इस नाटक के माध्यम से असग़र वजाहत ने धार्मिक सद्भाव को किसी भी धर्म का मूल स्वभाव बताया है। पूरा नाटक धार्मिक सद्भाव का संदेश और आग्रह लेकर प्रस्तुत होता हैं। धर्म कोई भी हो, चाहे हिन्दू हो या मुस्लिम हमेशा दूसरे धर्म और धर्मावलंबियों का सम्मान करने की बात करता हैं। हरेक धर्म का आंतरिक या मूल तत्व प्रेम, भाईचारा और सद्भाव ही होता है, बाह्य तत्व भले ही अलग हो। बुढ़िया माई जो अपने बेटे रतन और परिवार के अन्य लोगों के साथ लाहौर के एक हवेली में रहती है। अचानक से भारत-पाकिस्तान विभाजन की घोषणा हो जाती है और दंगे भड़क उठते हैं। दंगे की इस आंच में माई अपने परिवार को खो बैठती है। इधर सिकंदर मिर्ज़ा

विभाजन के बाद हिंदुस्तान से पाकिस्तान का रुख करते है और लाहौर में उन्हें रहने के लिए माई की हवेली अलॉट की जाती है। आरंभ में वे लोग हवेली में माई की मौजूदगी पसंद नहीं करते हैं और उन्हें वहाँ से हटाने के कई प्रयास भी करते है। परंतु माई का हृदय काफी विशाल होता है और वह हर समय हर किसी की मदद और सेवा के लिए तत्पर रहती हैं और इस तरह अपने मिलनसार स्वभाव के कारण सिकंदर मिर्ज़ा और बाकी अन्य मुसलमानों से हिल-मिल जाती है। उसे अपने लाहौर से इतना प्रेम होता है कि वह इसे दुनिया का श्रेष्ठ स्थान बताती है और कहती है कि जिसने लाहौर नहीं देखा उसने जन्म हीनहीं लिया अर्थात संसार में कुछ भी नहीं देखा। असग़र वजाहत अपने इस उपन्यास में विभाजन का दर्द, दंगे की विभीषिका, धार्मिक उन्माद और आपसी सौहार्द की आवश्यकता इन सबको बहुत ही प्रभावी ढंग से पाठकों के सम्मुख रखते हैं। लेकिन इस नाटक के मंचन के लिए लंबा इंतजार करना पड़ा। असग़र वजाहत कहते हैं "हिंदी का रंगमंच बहुत विकसित नहीं है। मेरे अधिकांश नाटकों के मंचन नहीं हुए हैं। 'जिस लाहौर नई देख्या' मैंने 1989-90 के आसपास लिखा था। लिखने के बाद मैंने दिल्ली के जाने-माने निर्देशकों को नाटक पढ़ने के लिए आमंत्रित किया। लेकिन तब कोई तैयार नहीं हुआ। प्रसिद्ध निर्देशक हबीब तनवीर ने इसे श्रीराम सेंटर के लिए चुना। इसकी असफलता को लेकर जैसे सब आश्वस्त थे। यहाँ तक कहा जा रहा था कि यह नाटक लेखक के साथ-साथ तनवीर को भी ले डूबेगा।" लेकिन हुआ इसका उल्टा, नाटक बेहद सफल रहा और इसके न सिर्फ भारत बल्कि विदेशों में भी कई मंचन हुए।

अपने नाटक 'गोडसे@गांधी.कॉम' में वह कल्पना करते हैं कि नाथूराम गोडसे के गोली मारे जाने के बाद भी महात्मा गांधी बच जाते हैं और उसके बाद देश और दुनिया के हालात पर महात्मा गांधी और गोडसे की जोरदार बहस होती है। नाटक अपने फलक में कई विषयों को समेटता प्रतीत होता है और कई पुराने सवाल जो आज भी मुंहबाए हमारे समाज के सामने खड़े हैं, एक बार फिर सामाजिक विचारकुंड में खौल उठते हैं। सही और गलत के अपने-अपने निजी रूप उठ खड़े होते हैं, लेकिन पुरातन मूल्य अपने स्थान पर चिरस्थायी रहते हुए आदर्श को यथावत रखते हैं। असग़र वजाहत को उनके नाटक 'महाबली' के लिए प्रतिष्ठित 31 वाँ व्यास सम्मान दिया गया। इस नाटक में अकबर और तुलसीदास भारतीय इतिहास के दो समकालीन पात्र हैं, जिन्हें अपनी कल्पना के केंद्र में रखकर असग़र वजाहत ने महाबली नाटक को रचा है। जहाँ एक ओर गोस्वामी तुलसीदास बनारस के तट पर बैठ अपना सारा समय ध्यान, भक्ति और साहित्य में लगाते थे वहीं मुगल सल्तनत के बादशाह अकबर चाहते थे कि गोस्वामी तुलसीदास उनके दरबार की शोभा बढ़ाये। लेकिन तुलसीदास अकबर के अनुरोध को मानने से इनकार कर देते हैं और राजसत्ता और कलाकार की स्वाधीनता का यह द्वंद्व ही इस नाटक का विषय है। तीव्र आवेग और चरम नाटकीयता से भरपूर, महाबली असग़र वजाहत के नाट्य लेखन का नया

सोपान है। महाबली सम्राट अकबर का प्रिय संबोधन था लेकिन जब गोस्वामी तुलसीदास सम्राट का कहना मानने से इनकार करते हैं तो उनके महाबली संबोधन पर प्रश्नचिह्न लग जाता है।

साहित्यिक यात्रावृत्त

हिंदी में यात्रावृत्त का समृद्ध इतिहास है। असग़र वजाहत ने भी कई यात्रावृत्त लिखे हैं जिनमें वह पाठकों को अपने साथ यात्रा पर ले जाते हैं। असग़र वजाहत जाने-माने लेखक होने के साथ-साथ यायावर भी हैं जो अपने को सामाजिक पर्यटक या सोशल टूरिस्ट कहते हैं। उनकी यायावरी के अनेक रंग हैं। वे यात्रा में केवल स्थानों को ही नहीं देखते बल्कि वहाँ के लोगों को जानने और समझने की कोशिश करते हैं। वे विवरण इतने सजीव तरीके से करते हैं मानो पाठक उनके साथ स्वयं यायावरी कर रहा है। 'रास्ते की तलाश में' लेखक की आज़रबाईजान, अंडमान निकोबार, कोंकण से शिमोगा और मिज़ोरम की यात्राओं का अद्भुत वृत्तांत है। 'चलते तो अच्छा था' में ईरान और आज़रबाईजान के यात्रा संस्मरण हैं। असग़र वजाहत ने केवल इन देशों की यात्रा ही नहीं की, बल्कि उनके समाज, संस्कृति और इतिहास को समझने का भी प्रयास किया है। उन्हें इस यात्रा के दौरान विभिन्न प्रकार के रोचक अनुभव हुए। उन्हें आज़रबाईजान में एक प्राचीन हिंदू अग्नि मिला, कोहेखाफ़ की परियों की तलाश में भी भटके और तबरेज़ में एक ठग द्वारा ठगे भी गए। यात्राओं का आनंद और स्वयं देखने तथा खोजने का संतोष 'चलते तो अच्छा था' में जगह-जगह देखा जा सकता है। असग़र वजाहत ने ये यात्राएँ साधारण ढंग से एक आदमी के रूप में की है जिसके परिणामस्वरूप वे उन लोगों से मिल पाए हैं, जिनसे अन्यथा मिल पाना कठिन है। 'अतीत का दरवाज़ा' में असग़र वजाहत अपने पाठकों को मध्य एशिया के जोर्डन, यूरोप के रूमानिया-हंगरी के मारामारोश क्षेत्र और दक्षिण अमरीका के मैक्सिको देश की यायावरी पर ले जाते हैं। तीनों जगहें जितनी यायावरी की दृष्टि से आकर्षक हैं, उतना ही उनका ऐतिहासिक और सांस्कृतिक महत्त्व भी है और यहाँ पर मानव-सभ्यता के अनेक पुरातत्व अवशेष मिलते हैं।

असग़र वजाहत की किताब 'पाकिस्तान का मतलब क्या' उनकी पाकिस्तान यात्रा पर लिखा गया यात्रावृत्त है। पाकिस्तान में आम जनमानस से बात करते हुए उन्होंने महसूस किया कि आम जनता हिंदुस्तानियों से मुहब्बत करती है और उनकी मदद करते को तत्पर रहती है। हिंदुस्तान की तरक़्क़ी से उन्हें खुशी होती है लेकिन इस बात का अफ़सोस भी कि एक साथ ही आज़ादी मिलने के बावजूद पाकिस्तान तरक़्क़ी की राह में पीछे रह गया। असग़र वजाहत लिखते हैं कि धर्म के नाम का जितना सार्वजनिक प्रदर्शन पाकिस्तान में देखा, वैसा इस्लामी गणराज्य ईरान में भी नहीं देखा था। इसके अलावा घरों पर लगे रंग-बिरंगे झंडों के बाबत पूछने पर लोगों ने बताया कि धर्म और राजनीति यहाँ एक-दूसरे से इतना घुल-मिल गए हैं कि कहाँ से क्या शुरू

होता है और कहाँ खत्म यह बताना मुश्किल है। दोनों देशों में वीजा की समस्या, जिसकी वजह से वह पाकिस्तान में कई जगह नहीं जा सके, पर उन्होंने लिखा, "दोनों देशों की आंतरिक सुरक्षा को पूरी तरह मजबूत बनाए रखते हुए भी भारत-पाक वीजा नीति अधिक मानवीय हो सकती है। सौ तरह से वीजा की समस्या पर सोचा जा सकता है, लेकिन दोनों सरकारों में कुछ ऐसे तत्व हैं जो अपने समूह के लाभ के लिए दुश्मनी बनाए रखना चाहते हैं। दुश्मनी होगी तो हथियार खरीदे जाएँगे, हथियार खरीदे जाएँगे तो कमीशन बनेगा, सेना का महत्व रहेगा।"

'स्वर्ग में पाँच दिन' यूरोप के सुंदरतम देश, हंगरी, की यात्राओं की पुस्तक है। इस पुस्तक में असग़र वजाहत हंगरी की सुंदर प्रकृति, जनजीवन और वहाँ के लोगों से इतने प्रभावित हुए कि वे इसे जन्नत या स्वर्ग की उपमा देते हैं। असग़र वजाहत ने हंगरी की कई बार यात्राएँ कीं और कुल मिलाकर उन्होंने वहाँ पाँच वर्ष व्यतीत किये। हंगरी में बिताये प्रत्येक वर्ष को वे एक दिन के बराबर मानते हैं और इसलिए इस पुस्तक का शीर्षक 'स्वर्ग में पाँच दिन है' जो अपने ढंग की अनूठी पुस्तक है जिसमें इस जन्नत के कोरे चित्र ही नहीं बल्कि हंगरी का जीवन उन्होंने पन्नों पर उतारा है।

बोध प्रश्न

- असग़र वजाहत के पाकिस्तानी यात्रा पर आधारित यात्रावृत्त का नाम बताइए।

11.4 पाठ सार

असग़र वजाहत का व्यक्तित्व संवेदनशील, कला प्रेमी, परंपरा और आधुनिकता का समन्वयक, अध्ययनशील, हिंदी प्रेमी, सांप्रदायिक एकता का हिमायती, वैज्ञानिक दृष्टिकोण और निस्वार्थ समाज सुधार की भावना से ओतप्रोत दृष्टिगोचर होता है। असग़र वजाहत का बचपन बहुत लाड़-प्यार में बीता। अनेक लोगों के संपर्क के कारण बचपन से ही समाज के बनते-बिगड़ते नियमों एवं मूल्यों से उनका परिचय हुआ। आदिवासी आदि क्षेत्रों में रचनात्मक कार्य से उनके उक्ति और कृति में समानता दिखाई देती है जो दुर्लभ है। मानवता और मानवतावाद का समर्थन उनकी स्वभावगत विशेषता है। फ़िल्म, नाटक और साहित्य के माध्यम से उन्होंने सबसे ज्यादा सांप्रदायिक सद्भाव का समर्थन किया है। असग़र वजाहत हिंदू मुस्लिम एकता के सच्चे समर्थक हैं। सांप्रदायिक और सामाजिक समस्याओं के साथ-साथ उन्होंने धर्मान्ध राजनीति पर भी अपनी तीखी लेखनी चलाई है। असग़र वजाहत के लेखन क्षेत्र की परिधि विशाल है। उन्होंने अनेक भाषाओं और अनेक विधाओं में साहित्य सृजन किया है। उनकी रचनाएँ कल्पना रहित, यथार्थवादी दृष्टिगोचर होती हैं। देश-विदेश की यात्रा और इस यात्रा के दौरान अर्जित अनुभवों से इनका साहित्य समृद्ध हुआ है। समाज के ज्वलंत प्रश्नों का चित्रण उनके कृतित्व का प्रमुख बिंदु होने के कारण उन्हें अनेक सामाजिक संस्थाओं ने पुरस्कारों से गौरवान्वित किया है।

11.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं -

1. यह स्पष्ट हुआ है कि विधा अलग होते हुए भी साहित्यकार की सोच, विषय के प्रति साहित्यकार का व्यवहार और प्रस्तुतीकरण का अंदाज बहुत अधिक नहीं बदलता।
2. असग़र वजाहत के उपन्यास, कहानी या नाटक के विषय किसी सामाजिक समस्या को इतिहास या ऐतिहासिक घटनाओं के सापेक्ष रखते हुए मानवीय संबंधों के इर्दगिर्द बुने हुए होते हैं।
3. समकालीन नाटककार के रूप में असग़र वजाहत की रचनाओं में निराशा नहीं है। उनकी रचनाओं में समस्याओं का विस्तृत विवरण है, लेकिन साथ ही समाधान की राह भी दिखाई गई है।
4. असग़र वजाहत की रचनाएँ वहाँ खत्म नहीं होतीं, जहाँ आगे घना अंधेरा हो; बल्कि गहन अंधेरे में भी रोशनी की एक किरण जलाए रखना ही असग़र वजाहत की रचनाओं की विशेषता है।

11.6 शब्द-संपदा

1. आपातकाल = शासन के द्वारा उस राष्ट्र पर घोषित आपत्ति का काल
2. भाईचारा = भाई के समान प्रिय होना, बंधुता
3. मिलनसार = आत्मीयता से मिलना
4. यायावरी = घूमना
5. हिमायती = मददगार

11.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

5. असग़र वजाहत के व्यक्तित्व और कृतित्व पर प्रकाश डालिए।
6. असग़र वजाहत के जीवन से संबंधित कुछ पहलुओं को उजागर कीजिए।
7. हिंदी साहित्य में असग़र वजाहत के योगदान को रेखांकित कीजिए।
8. 'असग़र वजाहत की रचनाओं में समस्याओं का विस्तृत विवरण है, लेकिन साथ ही समाधान की राह भी दिखाई गई है।' इस कथन की पुष्टि कीजिए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. असग़र वजाहत की साहित्यिक यात्रा के बारे में स्पष्ट कीजिए।
2. असग़र वजाहत के उपन्यासों के वैविध्य को रेखांकित कीजिए।

3. असग़र वजाहत की कहानियों की प्रमुख मकसद पर चर्चा कीजिए।
4. असग़र वजाहत के यात्रा साहित्य के संबंध स्पष्ट कीजिए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

5. असग़र वजाहत की रचना नहीं है है? ( )

(अ) डेमोक्रेसिया (आ) धरा अँकुराई (इ) कामायनी (ई) गोडसे@गांधी.कॉम

2. असग़र वजाहत को उनके नाटक 'महाबली' के लिए कौन-सा सम्मान प्राप्त हुआ? ( )

(अ) ज्ञानपीठ (आ) व्यास (इ) सरस्वती (ई) साहित्य अकादमी

3. असग़र वजाहत का पहला नाटक का नाम क्या है? ( )

(अ) फिरंगी लौट आए (आ) वीरगति (इ) इन्ना की आवाज (ई) गोडसे@गांधी.कॉम

4. 'सात आसमान' शीर्षक कहानी की मूल में .... प्रथा है। ( )

(अ) दास (आ) सती (इ) जमींदारी (ई) देवदासी

5. असग़र वजाहत किसके लिए विख्यात हैं? ( )

(अ) किस्सागोई (आ) भोलापन (इ) मक्कारी (ई) देशभक्ति

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. असग़र वजाहत का .... नाटक 1857 की पृष्ठभूमि पर आधारित है।
2. 'जिस लाहौर नई देख्या' शीर्षक नाटक में .... के विभाजन के दौर की कहानी है।
3. 'स्वर्ग में पाँच दिन' .... देश का यात्रावृत्त है।
4. असग़र वजाहत ने 400 सालों की लंबी अवधि को .... उपन्यास का आधार बनाया।

III. सुमेल कीजिए -

1. गोडसे@गांधी.कॉम	(अ) निबंध
2. मैं हिंदू हूँ	(आ) उपन्यास
3. ताकि देश में नमक रहे	(इ) नाटक
4. कैसी आगी लगाई	(ई) कहानी

11.8 पठनीय पुस्तकें

1. संचयन असग़र वजाहत : सं. पल्लव
2. पिचासी कहानियाँ - फरवरी 2015 (2014 तक की प्रायः सम्पूर्ण कहानियाँ)
3. असग़र वजाहत के आठ नाटक

इकाई 12 : 'गोडसे@गांधी.कॉम' का विवेचन

रूपरेखा

12.1 प्रस्तावना
12.2 उद्देश्य
12.3 मूल पाठ : 'गोडसे@गांधी.कॉम' का विवेचन
12.3.1 नाटक के मूल तत्व
12.3.2 नाटक का सामान्य परिचय
12.3.3 गांधी का स्वराज दर्शन
12.3.4 गांधी का ब्रह्मचर्य दर्शन
12.3.5 स्वतंत्रता के बाद कांग्रेस की भूमिका पर सवाल
12.3.6 गांधी के हिंदू विरोधी होने की अवधारणा का बचाव
12.4 पाठ सार
12.5 पाठ की उपलब्धियाँ
12.6 शब्द संपदा
12.7 परीक्षार्थ प्रश्न
12.8 पठनीय पुस्तकें

12.1 प्रस्तावना

यदि हम हिंदी के प्रमुख नाटक कारों की बात करें तो इनमें महाराजा विश्वनाथ सिंह, भारतेंदु हरिश्चंद्र, जयशंकर प्रसाद, कमलेश्वर, जगदीशचंद्र माथुर, सर्वेश्वर दयाल सक्सेना, रामकुमार वर्मा, मोहन राकेश, बिहारी लाल हरित, स्वदेश दीपक, नाग बोडस, हरिकृष्ण प्रेमी, मनोज कुमार मिश्र, राजेश जोशी, योगेश त्रिपाठी, असग़र वजाहत आदि प्रमुख हैं। असग़र वजाहत एक ऐसे लेखक हैं जिन्होंने कहानी, उपन्यास, यात्रा वृतांत आदि विधाओं में तो साधिकार लिखा ही है, नाटक के क्षेत्र में भी इनका योगदान प्रशंसनीय है। असग़र वजाहत को के. के. बिड़ला फाउंडेशन ने वर्ष 2019 में प्रकाशित उनके नाटक 'महाबली' के लिए वर्ष 2021 का 'व्यास सम्मान' दे कर सम्मानित किया। असग़र वजाहत के सबसे ज्यादा प्रसिद्ध नाटक "जिस लाहौर नहीं देख्या ओ जम्याइ नई" में भारत-पाकिस्तान के विभाजन के दौर की कहानी है। अपने नाटक 'गोडसे@गांधी.कॉम' में असग़र वजाहत कल्पना करते हैं कि नाथूराम गोडसे के गोली मारे जाने के बाद भी महात्मा गांधी बच जाते हैं और उसके बाद देश और दुनिया के हालात पर महात्मा गांधी और गोडसे की जोरदार बहस होती है।

12.2 उद्देश्य

प्रिय छात्रो! इस इकाई के अध्ययन के बाद आप -

- असग़र वजाहत की नाट्य शैली का परिचय प्राप्त कर सकेंगे।
- 'गोडसे@गांधी.कॉम' नाटक की कथावस्तु से परिचित हो सकेंगे।

- ‘गोडसे@गांधी.कॉम’ नाटक के माध्यम से गोडसे और गांधी के विचारों के द्वंद्व को समझ सकेंगे।
- इस नाटक में निहित गांधी के स्वराज दर्शन से अवगत हो सकेंगे।
- इस नाटक में अभिव्यक्त गांधी के ब्रह्मचर्य दर्शन और उसकी सीमाओं से अवगत हो सकेंगे।

12.3 मूल पाठ : ‘गोडसे@गांधी.कॉम’ का विवेचन

12.3.1 नाटक के मूल तत्व

नाटक के समीक्षकों ने नाटक के छः महत्वपूर्ण तत्व निर्धारित किए हैं। असग़र वज़ाहत द्वारा लिखित नाटक ‘गोडसे@गांधी.कॉम’ नाटक के इन सभी तत्वों पर खरा उतरता है।

कथावस्तु - किसी नाटक की सफलता के लिए ‘कथावस्तु’ बहुत महत्वपूर्ण है। किसी घटना, या चरित्र या सामाजिक समस्या इत्यादि को मूल में रखते हुए जब कोई नाटक लिखा जाता है तो इसे नाटक का केंद्रीय विषय या कथावस्तु कहेंगे। असग़र वज़ाहत ने अपने नाटक ‘गोडसे@गांधी.कॉम’ के लिए एक काल्पनिक कथावस्तु का चयन किया है जिसमें नाटककार ने माना है कि नाथुराम गोडसे द्वारा गोली चलाए जाने के बाद गांधीजी बच जाते हैं और इस घटना के बाद गांधी और गोडसे के बीच का संवाद ही इस नाटक की कथावस्तु है।

पात्र एवं चरित्र चित्रण - कोई भी नाटक अपने उद्देश्य तक नाटक के पात्रों और उनके चरित्रों के माध्यम से ही पहुँचता है। यूं तो ‘गोडसे@गांधी.कॉम’ नाटक में गांधी और गोडसे ही प्रमुख भूमिकाओं में हैं लेकिन इनके अतिरिक्त भी कई और पात्र हैं जिनके माध्यम से नाटककार ने न केवल नाटकीयता और रोचकता बनाए रखी है वरन ये पात्र नाटक के उद्देश्य की पूर्ति में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

संवाद - नाटक की कहानी या तो पर्दे के पीछे से उद्घोषणा के माध्यम से या पात्रों के बीच संवाद के माध्यम से आगे बढ़ती है। असग़र वजाहत ने इस नाटक में छोटे-छोटे लेकिन प्रभावी संवाद लिखे हैं। यह एक जटिल विषय पर लिखा गया नाटक है जिसे असग़र वजाहत ने संवाद के माध्यम से सरल और सहज बनाया है।

देशकाल वातावरण - नाटक के प्रामाणिक लगने में, नाटक में वर्णित काल खंड, वातावरण, परिवेश, परिधान इन सबका महत्व होता है। ‘गोडसे@गांधी.कॉम’, आजादी के बाद के कालखण्ड को भली-भाँती चित्रित करता है। आज़ादी के बाद कांग्रेस की भूमिका पर सवाल उठे, गांधी जी की हत्या के बाद नाथुराम गोडसे पर अदालत में चले अभियोग के दौरान बहुत सी बातें कही गईं जिनकी वजह से गांधीजी की छवि हिंदू-विरोधी के तौर पर बनाने की कोशिश हुई, गांधी जी के ब्रह्मचर्य दर्शन या स्वराज दर्शन पर भी बहुत चर्चा हुई। असग़र वजाहत ने बहुत खूबसूरती से अपने नाटक में इन सभी विषयों को समाहित किया है और इन पर अपने पात्रों के संवाद के माध्यम से अपनी बात रखी है। नाटक में गांधी, गोडसे, जवाहरलाल नेहरू, सरदार पटेल, मौलाना आजाद, नाना आप्टे, विष्णु करकरे जैसे पात्रों की मौजूदगी, दर्शकों को वापस उसी दौर में ले जाती है।

भाषा शैली - नाटक की सफलता के लिए आवश्यक है कि दर्शक नाटक के पात्रों के साथ अपने आप को जोड़ सकें। नाटक के पात्र जिस परिवेश से आते हैं यदि उनके संवाद उस परिवेश के

साथ न्याय नहीं करते तब दर्शकों का जुड़ाव इन पात्रों के साथ नहीं हो पाता। कल्पना करें यदि एक निरक्षर गाँव का किसान अपने संवाद में अंग्रेजी के शब्दों का प्रयोग करता हो तो दर्शकों को यह स्वाभाविक नहीं लगेगा। गोडसे@गांधी.कॉम नाटक में असग़र वजाहत ने संवाद लेखन में बहुत सावधानी बरती है। सुषमा जो एक कॉलेज में पढ़ने वाली लड़की है और नवीन से प्रेम करती है। सुषमा गांधीजी के प्रति अटूट आस्था भी रखती है। सुषमा के संवादों में अपने प्यार और गांधी के ब्रह्मचर्य के आदर्शों के बीच का अंतर्द्वंद्व साफ झलकता है। सुषमा की माँ निर्मला शर्मा हरियाणा से है और उसके संवादों में यह झलकता है। बावनदास बिहार से आता है और उसके संवाद उसके भौगोलिक परिवेश से जुड़े हुए लगते हैं। विचार के स्तर पर भी बावनदास गांधीवादी है और उसके संवादों में गांधी के प्रति आस्था दिखती है। निर्मला देवी भी गांधी के प्रति आस्था रखती है लेकिन जब गांधी के दबाव की वजह से सुषमा को अपने प्रेम को दबाना पड़ता है और उसकी तबीयत खराब होती है, तब निर्मला शर्मा का माँ वाला व्यक्तित्व गांधी के प्रति आस्था पर हावी हो जाता है और वह गांधी को खड़ी-खोटी बातें सुनाने में नहीं हिचकती। 'गोडसे@गांधी.कॉम' नाटक का हर पात्र और उसके संवाद बहुत सावधानी से लिखे गए हैं और यही वजह है कि कम संवाद होने के बाद भी नाटक का हर पात्र पाठकों/ दर्शकों के मन में याद रह जाता है।

उद्देश्य - हर नाटक का अपना एक उद्देश्य होता है। एक नाटककार के रूप में आप हमेशा सोचते हैं कि दर्शक जब नाटक देख कर जाए, तो वह क्या है जो उसे याद रह जाय या वह क्या है जो चाहते हैं दर्शक याद रखें। 'गोडसे@गांधी.कॉम' में असग़र वजाहत, गोडसे और गांधी की विचारधारा को सामने रखते हैं। गांधी के खिलाफ़ हिंदू विरोध, स्वराज्य, ब्रह्मचर्य जैसे जो मुद्दे उठाए गए उनपर एक तटस्थ चर्चा नाटक के माध्यम से करते हैं और बिना किसी एक पक्ष का पक्षधर बनते हुए दोनों ही तरफ के दलीलों को पाठकों के सम्मुख परोसते हैं। अंतिम निष्कर्ष असग़र वजाहत पाठक पर छोड़ते हैं।

अभिनेता - मंचन की दृष्टि से नाटक की सफलता में नाटक के पात्रों के अभिनय का महत्वपूर्ण योगदान होता है। अभिनय के अतिरिक्त, साज-सज्जा, परिधान, मंच का उपयोग आदि अनेक कारक हैं जो नाटक को सफल बनाते हैं। 'गोडसे@गांधी.कॉम' नाटक में असग़र वजाहत हर दृश्य से पहले, मंच, मंच पर रोशनी, पर्दे का उठना और गिरना आदि का विस्तृत विवरण लिखते हैं जिससे नाटक के मंचन में आसानी हो। इस नाटक के न जाने कितने सफल मंचन हो चुके हैं और इसे कई नामचीन निर्देशकों द्वारा निर्देशित किया गया है।

बोध प्रश्न

- 'गोडसे@गांधी.कॉम' नाटक का मुख्य उद्देश्य क्या है?

12.3.2 नाटक का सामान्य परिचय

असग़र वजाहत द्वारा लिखित नाटक 'गोडसे@गांधी.कॉम' का प्रकाशन सन 2012 में भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली से हुआ। नाटककार असग़र वजाहत ने गांधी के समर्थन या विरोध में उठ रहे तमाम तरह के विचारों को अपने नाटक का विषय बनाया। इस नाटक में

लेखक कल्पना करते हैं कि नाथूराम गोडसे के गोली मारे जाने के बाद भी महात्मा गांधी बच जाते हैं और उसके बाद देश और दुनिया के हालात पर महात्मा गांधी और गोडसे की जोरदार बहस होती है। गांधी और गोडसे इस नाटक के प्रमुख पात्र हैं लेकिन इनके अलावा बावनदास (फणीश्वगर नाथ रेणु के उपन्यास 'मैला आँचल' का पात्र), सुषमा शर्मा (दिल्ली की एक मिडिल क्लास फैमिली की लड़की जिसने बी.ए. पास किया है जो महात्मा गांधी की अंधभक्त हैं),नवीन जोशी (दिल्ली कॉलेल में अंग्रेजी के युवा प्राध्यायपक), निर्मला शर्मा (सुषमा शर्मा की माँ, हरियाणा की निवासी),प्यारे, जवाहरलाल नेहरू, सरदार पटेल, मौलाना आजाद, नाना आप्टे, विष्णु करकरे आदि पात्रों की भूमिका भी महत्वपूर्ण है।

नाटक का मुख्य विषय गांधी और गोडसे के बीच संवाद है लेकिन असग़र वजाहत ने नाटक में रोचकता बनाए रखने और इसे एकांकी होने से बचाए रखने के लिए कई अन्य विषय जैसे गांधी का हरिजन प्रेम, गांधी का स्वराज दर्शन, ब्रम्हचर्य पर गांधी के विचार, कांग्रेस के प्रति गांधी की सोच आदि विषयों को भी नाटक में समाहित किया है।

नाटक दृश्यों में लिखा गया है। पहले दृश्य में गोडसे की गोली लगने के बाद गांधी के बचने की ख़बर और गोडसे को 15 दिन के हिरासत की खबर आती है। इस दृश्य में कई और पात्रों का परिचय होता है जो गांधी की कुशल-क्षेम पूछने आते हैं। दृश्य के अंत में गांधी कहते हैं कि वह अकेले ही गोडसे से मिलने जाएंगे।

दृश्य-2 में गांधी, गोडसे से मिलने जेल जाते हैं। अकेले में गांधी और गोडसे की मुलाकात होती है जिसमें गांधी गोडसे को अपना अपराध कबूल करने का साहस दिखाने के लिए बधाई देते हैं लेकिन गोडसे गोली चलाने को अपराध नहीं मानता। गांधी को हिंदूओं का शत्रु मानते हुए उनका वध करने को वह अपना फ़र्ज़ मानता है। गांधी कहते हैं कि उन्होंने गोडसे को माफ़ किया, यही नहीं वह अदालत में गोडसे के खिलाफ़ गवाही भी नहीं देंगे। गोडसे इससे बेचैन हो उठता है, उसे गांधी की हत्या के आरोप में फांसी चाहिए। गांधी कहते हैं, "परमात्मा से माँगो, तुम्हारे मन को शांत रखे... दूसरे के लिए हिंसा अपने लिए भी हिंसा। ये क्या है नाथूराम...तुम ब्राह्मण हो, ब्राह्मण के कर्म में ज्ञान, दया, क्षमा और आस्तिकता होनी चाहिए।"

दृश्य तीन में सुषमा और नवीन जो एक दूसरे से प्यार करते हैं, मिलते हैं। सुषमा को तो गांधी ने आश्रम में रहने की इजाजत दे दी है लेकिन नवीन को कॉलेज में पढ़ाते रहने को कहा। अपने प्यार में इस दूरी से दोनों आहत हैं और उन्हें डर है कि कहीं गांधी जी को इनके प्यार के बारे में पता तो नहीं चल गया। इसी दृश्य में नेहरू, पटेल और मौलाना, गांधी से मिलने आते हैं जहाँ गांधी कांग्रेस को भंग करने की बात करते हैं। गांधी के अनुसार कांग्रेस की स्थापना आज़ादी हासिल करने के लिए की गई थी और अब यह अपने उद्देश्य को पा चुकी है अतः इसे भंग कर देना चाहिए। नेहरू, पटेल और मौलाना के समझाने के बाद भी गांधी नहीं मानते। तीनों यह कह कर चले जाते हैं कि कांग्रेस को भंग करने का गांधी जी का प्रस्ताव वे कांग्रेस वर्किंग कमिटी में रखेंगे। गांधी भी कहते हैं कि यदि यह प्रस्ताव पारित नहीं हुआ तो वह कांग्रेस छोड़ देंगे।

दृश्य 4: कांग्रेस वर्किंग कमिटी ने गांधी के कांग्रेस को भंग कर देने के प्रस्ताव को खारिज कर दिया। गांधी ने इसके बाद कांग्रेस से अपना संबंध तोड़ लिया। कांग्रेस के नेताओं ने गांधीजी से कांग्रेस न छोड़ने की अपील की लेकिन गांधी नहीं माने और फलस्वरूप अब अकेले रह गए। प्यारेलाल, गांधी के साथ रह जाते हैं। गांधी के कांग्रेस छोड़ने की ख़बर सुन कर फणीश्वरनाथ रेणु के उपन्यास मैला आँचल का पात्र बावनदास भी गांधी के पास आ जाता है। सुषमा, सुषमा की माँ निर्मला शर्मा और सुषमा का प्रेमी नवीन भी गांधी जी के पास आते हैं। गांधी, सुषमा और निर्मला देवी को तो आश्रम में रहने की इजाजत दे देते हैं लेकिन नवीन से कहते हैं कि वह कॉलेज में पढ़ाना जारी रखे और यदि उसकी आवश्यकता हुई तो उसे आश्रम में बुला लिया जाएगा। सुषमा और नवीन, गांधी के इस फैसले से निराश हैं लेकिन गांधी का आदेश मानने के सिवा और कोई चारा नहीं।

दृश्य 5: अदालत में चल रहे मुकदमें में गांधी बयान देने नहीं जाते हैं। यही नहीं उन्होंने लिखित में दिया कि उन्होंने गोडसे और उनके साथियों को माफ़ कर दिया है। इस बयान से केस कमजोर हो गया और गोडसे को पाँच वर्ष की सजा सुनाई गई। जेल में जब गोडसे सुनता है कि गांधी ने कांग्रेस छोड़ दी है तो वह इसे गांधी का पाखंड बताते हुए कहता है जो कभी कांग्रेस का मेंबर तक नहीं था उसके कांग्रेस छोड़ने का क्या मतलब? यही नहीं गोडसे कहता है "गांधी ने कभी सच बोला है? कहा करता था पाकिस्तान मेरी लाश पर बनेगा। लेकिन देखा क्या हुआ। पाकिस्तान का पिता जिन्ना नहीं, गांधी है। हिंदूओं का जितना अहित औरंगज़ेब ने न किया होगा, उससे ज्यादा गांधी ने किया है... पवित्र भूमि पर इस्लामी राष्ट्र का निर्माण उसकी ही नीतियों के कारण हुआ है।"

दृश्य 6: बिहार में राँची से पुरूलिया जाने वाले सड़क पर धमहो से 13 किलोमीटर दूर बेतिया जनजाति के सांगी गाँव में गांधी ने अपना आश्रम बनाया। गांधी के सहयोगी, ग्राम वासियों के साथ मिल कर समाज कल्याण के काम में लग जाते हैं। सरकार गांधी जी की गतिविधियों पर नज़र रखती है। सरकार अधिकारियों को गांधी जी के आश्रम भेजती है ताकि वहाँ अच्छी सुविधाएं और सुरक्षा का इंतजाम किया जा सके, लेकिन गांधी कहते हैं यहाँ किसी सुरक्षा की कोई आवश्यकता नहीं है, यहाँ स्वराज है और किसी भी सरकार से किसी तरह की सहायता नहीं चाहिए।

गांधी के पास जो पत्र आते हैं उन्हीं में नवीन द्वारा सुषमा के लिए लिखी गई चिट्ठी गांधी जी को मिलती है। इस चिट्ठी की वजह से गांधी, सुषमा को आश्रम छोड़ कर जाने को कहते हैं। सुषमा द्वारा प्रायश्चित करने की बात कहने पर गांधी पूछते हैं कि क्या वह नवीन को भाई मान सकती है? सुषमा इसके लिए तैयार नहीं होती लेकिन गांधी से एक और मौका दिए जाने की बात कहती है।

दृश्य 7: इस दृश्य में असग़र वजाहत, गोडसे के विचार पाठकों के सामने रखते हैं। गोडसे गांधी के स्वराज प्रयोग को ढकोसला मानता है। गोडेसे को कई लोगों ने हिंदू हृदय सम्राट की उपाधि दी है लेकिन गोडसे को पछतावा है कि वह गांधी को मार नहीं सका। गोडसे गांधी को

भारत के विभाजन का अपराधी ठहराता है और उन्हें मुस्लिम तुष्टीकरण का भी दोषी मानता है।

दृश्य 8: बिहार के मुख्यमंत्री श्री बाबू, नेहरू की चिट्ठी ले कर गांधी से मिलने आते हैं। नेहरू चाहते हैं कि आने वाले चुनाव में गांधी कांग्रेस का समर्थन करें लेकिन गांधी यह कर इनकार कर देते हैं कि वह तो कांग्रेस को भंग करने के पक्ष में हैं। गांधी, श्री बाबू को यह भी बताते हैं कि यहाँ गाँव में चुनाव हो चुके हैं और लोगों ने अपने पंचायत और प्रधानमंत्री चुन लिए हैं। गांधी नेहरू से अपील करते हैं कि चार जिलों में चुनी हुई पंचायत से साथ सरकार सहयोग करे।

दृश्य 9: नवीन चोरी-छुपे सुषमा से मिलने आश्रम आता है और गांधी उन दोनों के बीच की बातचीत सुन लेते हैं। गांधी, सुषमा को धिक्कारते हैं। नवीन, गांधी से पूछता है कि क्या किसी कीमत पर वह उसे आश्रम में नहीं रहने दे सकते? गांधी कहते है यह तभी संभव है जब सुषमा उसे अपना भाई मान ले। गांधी इन दोनों के विवाह के लिए भी राज़ी नहीं होते। गांधी, नवीन के लिए शर्त रखते हैं कि यदि वह पाँच साल तक सुषमा से दूर रहे तब वह इस प्रेम संबंध को मान लेंगे। नवीन कहता है वह पाँच साल तो क्या पचास साल भी प्रतीक्षा कर सकता है और आश्रम छोड़ कर चला जाता है।

दृश्य 10: गांधी के 'प्रयोग आश्रम' में स्वराज के प्रयोग ने आसपास के 25 गांवों को प्रभावित किया जिसमें लोगों ने अपने लक्ष्य बना कर उन्हें हासिल किया, उन्होंने किसी दूसरी व्यवस्था से सुरक्षा, न्याय और सहायता की माँग नहीं की। यह ख़बर दिल्ली तक पहुंची और इसे खतरनाक माना गया कि देश का एक हिस्सा सरकार से कुछ नहीं माँगता। संविधान का हवाला देते हुए गांधी से जबाव मांग गया और गांधी ने कहा कि यहाँ स्वराज है। आशंका है कि इस कृत्य के लिए गांधी को गिरफ्तार कर लिया जाएगा। गांधी अपने साथियों को वापस चले जाने को कहते हैं लेकिन सभी उनके साथ जेल जाने के लिए तैयार हैं। गांधी, सुषमा से अकेले में पूछते हैं कि क्या वह उनसे (नवीन से दूर कर देने के लिए) नाराज है? सुषमा हाँ या ना में जबाव न दे कर सिर्फ रोने लगती है।

दृश्य-11 में गांधी के सामने कस्तूरबा की छाया प्रकट होती है और वह गांधी को उनके ब्रह्मचर्य प्रयोग के लिए धिक्कारती है। गांधी ने जिस तरह सुषमा और नवीन को अलग किया है, कस्तूरबा इसके लिए गांधी को दोषी मानती है। लेखक असग़र वजाहत इस दृश्य में कस्तूरबा को ज्यादा तर्कपूर्ण दिखाते है जिनके तर्कों के सामने गांधी निरुत्तर दिखते हैं।

दृश्य 12 में उद्घोषणा होती है कि गांधी के खिलाफ़ 2000 पन्नों की फ़ाइल सकारी दफ्तरों से होती हुई पी.एम. सेक्रेटेरियट पहुँचती है जिसमें रिपोर्टों-गवाहों के बयानों, साक्ष्यों के बाद कानून के सैकड़ों हवालों, संविधान की धाराओं, अफसरों और मंत्रियों की 'रिकमेंडेशन' के हवाले से बिहार सरकार ने सेंट्रल गवर्नमेंट से इजाजत माँगी है कि क्या श्री मोहनदास करमचंद गांधी, पुत्र करमचंद गांधी को दफा 121, 121-ए, 123, 124-ए और 126 के तहत गिरफ्तार करके मुकद्दमा चलाया जा सकता है? नेहरू के लिए यह फैसला लेना मुश्किल है लेकिन कैबिनेट को लगता है कि संविधान और देश की अवमानना के किसी भी मामले में बड़े-से-बड़े आदमी के

खिलाफ कार्रवाई की जा सकती है। इस आधार पर गांधी जी को उनके साथियों के साथ गिरफ्तार कर लिया जाता है। जेल में गांधीजी को मालूम होता है कि गोडसे भी इसी जेल में है और गांधी मांग करते हैं कि उन्हें भी गोडसे के कमरे में ही रखा जाय। जेलर पूछता है आप उसी कमरे में क्यों रहना चाहते हैं और गांधी कहते हैं कि मैं गोडसे से संवाद करना चाहता हूँ। जब गांधी को उसी कमरे में रहने की इजाजत नहीं मिलती तब गांधी जेल में ही आमरण अनशन पर बैठ जाते हैं।

दृश्य 13 में उद्घोषणा होती है कि गांधी जी के अनशन से देश में हड़कंप मच जाता है और सरकार गांधी को जेल के उसी कमरे में रहने देने को विवश हो जाती है जिसमें गोडसे रहता है। गोडसे, गांधी से इसी कमरे में रहने का कारण पूछता है और गांधी कहते हैं "मैं घृणा और प्रेम के बीच से नया रास्ता, संवाद का रास्ता 'डॉयलॉग' का रास्ता निकालना चाहता हूँ... तुमसे बात करना चाहता हूँ।" इस दृश्य में गांधी और गोडसे के बीच भारत और हिंदु त्व पर चर्चा होती है। गांधी जहाँ हिंदुस्तान को व्यापक परिधि और वसुधैव कुटुंबकम की अवधारणा से जोड़ते हैं वहीं गोडसे हिंदुस्तान में हिंदूओं की सर्वश्रेष्ठता और सर्वोत्तमता पर जोर देता है।

दृश्य 14 में यह उद्घोषणा होती है कि गांधी और गोडसे का एक ही जेल और एक ही कमरे में रहना घातक सिद्ध हो सकता है लेकिन इन सब से परे गांधी अपने सहयोगियों के साथ जेल के उसी कमरे में हैं जिसमें गोडसे भी है। इस दृश्य में गांधी और गोडसे के बीच हिंदुत्व पर चर्चा होती है जिसमें गोडसे गांधी को हिंदू विरोधी ठहराता है और गांधी इसका बचाव करते हैं।

दृश्य 15 में गांधी जेल में जेलर के विरोध के बाद भी अपने साथियों के साथ शौचालय की सफाई का काम शुरू करते हैं। गोडसे इस सफाई में भाग नहीं लेता।

दृश्य 16 में सुषमा अपने प्रेमी नवीन से दूर होने की वजह से बीमार रहने लगी है। सुषमा की माँ, गांधी को चेतावनी देती है कि यदि उसकी बेटी को कुछ हुआ तो वह गांधी को नहीं छोड़ेगी। गांधी विचार कर नवीन और सुषमा की शादी का फैसला लेते हैं। इसी दृश्य में हिंदूओं में जातिवाद पर गोडसे से संवाद में गांधी कहते हैं "अगर तुम सब को बराबर का हिंदू नहीं मानते तो तुम हिंदू नहीं हो... पहले तो तुमने देश को छोटा किया नाथूराम... अब हिंदुत्व को छोटा मत करो... हिंदू धर्म बहुत बड़ा, बहुत उदार और महान धर्म है गोडसे... उसे छोटा मत करो... दूसरे को उदार बनाने के लिए पहले खुद उदार बनना पड़ता है।"

दृश्य 17 में सुषमा और नवीन की शादी आश्रम में होती है। गांधी और गोडसे दोनों शादी में शामिल होते हैं। गांधी नवविवाहित जोड़े को गीता भेंट करते हैं। गोडसे कहता है गीता मेरा जीवन दर्शन है। गांधी कहते हैं "कितनी अजीब बात है गोडसे।... गीता ने तुम्हें मेरी हत्या करने की प्रेरणा दी और मुझे तुम्हें क्षमा कर देने की प्रेरणा दी... ये कैसा रहस्य है?" इस दृश्य में गोडसे और गांधी के बीच गीता पर चर्चा होती है। गोडसे जहाँ निष्फल कर्म हेतु अर्जुन द्वारा अपने रिश्तेदारों की हत्या को उचित ठहराता है तो गांधी, कर्म को दूसरों की भलाई से जोड़ कर देखते हैं। गांधी, गोडसे से कहते हैं तुम मेरी आत्मा को मार नहीं सकते और शरीर तो बहुत कम महत्व की चीज है। गोडसे इस विचार पर अड़ा रहता है कि हिंदू हित के लिए गांधी की हत्या आवश्यक थी, वहीं गांधी कहते है कि "गीता शत्रु और मित्र के लिए एक ही भाव रखने की बात करती है...

यदि मैं तुम्हारा शत्रु था भी तो तुमने शत्रु भाव क्यों रखा?...गोडसे, गीता सुख-दुख, सफलता-असफलता, सोने और मिट्टी, मित्र और शत्रु में भेद नहीं करती... समानता, बराबरी का भाव है गीता में।" दृश्य के अंत में गांधी का महत्वपूर्ण संवाद है "हम सब अपने विचारों के लिए आजाद हैं... लेकिन हत्या करने की आजादी नहीं है।"

दृश्य 18 में असग़र वजाहत लिखते हैं कि सालों तक गांधी और गोडसे का संवाद चलता रहा और अंततः दोनों एक ही दिन, एक ही समय जेल से रिहा होते हैं। यहाँ एक संवाद महत्वपूर्ण है जिसमें गांधी गोडसे से कहते हैं "नाथूराम... मैं जा रहा हूँ। वही करता रहूँगा जो कर रहा था। तुम भी। शायद वही करते रहोगे, जो कर रहे थे।" असग़र वजाहत किसी एक को विजयी होता नहीं दिखाते लेकिन चलते समय गांधी और गोडसे दोनों एक दूसरे को नमस्कार करते हैं। गांधी मंच के बाईं तरफ आगे बढ़ते हैं और गोडसे दाहिनी तरफ। अचानक गांधी रुक जाते हैं, पर पीछे मुड़ कर नहीं देखते। गोडसे भी रुक जाता है और घूम कर गांधी के पीछे आता है। जब वह गांधी के बराबर पहुँचता है। गांधी बिना उसकी तरफ देखे अपना बायाँ हाथ बढ़ा कर उसके कंधे पर रख देते हैं और दोनों आगे बढ़ते हैं। यह दक्षिणवर्ती विचारधारा का वापस गांधी की तरफ आने का प्रतीक है। गांधी और गोडसे के बीच वार्तालाप का बिना कोई शाब्दिक निष्कर्ष निकाले इस प्रतीकात्मक निष्कर्ष के साथ असग़र वजाहत नाटक का समापन करते हैं।

बोध प्रश्न

- 'गोडसे@गांधी.कॉम' नाटक का मुख्य विषय क्या है?

12.3.3 गांधी का स्वराज दर्शन

सर्वसाधारण के लिए गांधी के स्वराज का मतलब था जहाँ हर व्यक्ति आत्म-संयमित हो तथा समाज की उन्नति के लिए प्रयत्नशील रहे। एक ऐसा स्वराज जो व्यक्ति को गरीब लोगों के मदद और सहयोग के लिए प्रेरित करे। एक ऐसा समाज, जहाँ जात-पात, धर्म, स्त्री-पुरुष, अमीर-गरीब आदि का फर्क न रह जाए और सभी समान रूप से समाज कल्याण में सहयोग करें।

गांधी जी ने आर्थिक समानता की वकालत की। उद्योग में मशीनों के उपयोग की बजाय श्रम शक्ति पर उनका जोर रहा। उद्योगपतियों से उन्होंने आग्रह किया कि उत्पादन मुनाफ़ा के लिए न हो कर समाज हित में होना चाहिए।

गांधी ने राज्यों की अवधारणा को सही नहीं माना। उन्होंने शक्तियों के विकेन्द्रीकरण की बात कही। स्वराज की अवधारणा में प्रत्येक गाँव में, गाँव के लोग पाँच व्यक्तियों को पंचायत के लिए चुनेंगे जो गाँव के लिए सभी निर्णय लेंगे। गाँव के ऊपर मंडल, मंडल के ऊपर जिले, जिले के ऊपर प्रांत और प्रांत के ऊपर केन्द्रीय स्तर पर पंचायत होगी।

गांधी के अनुसार यदि व्यक्ति आत्म-संयमित हो जाय तो वह अपना शासक स्वयं बन जाता है और ऐसे में उसे किसी चुने हुए प्रतिनिधि की आवश्यकता नहीं रह जाती।

गांधी ने कहा "मैं एक ऐसे भारत के निर्माण का प्रयत्न करूंगा जिसमें निर्धन से निर्धन मनुष्य भी यह अनुभव करेगा कि यह मेरा देश है और इसके निर्माण में मेरा पूरा हाथ है।"

असग़र वजाहत ने अपने नाटक में गांधी के इसी स्वराज दर्शन को सहज रूप में पाठकों/दर्शकों के सम्मुख प्रस्तुत किया है। नेहरू, पटेल जैसे कई नेताओं के बार-बार आग्रह करने

के बाद भी गांधी कांग्रेस से अपना नाता तोड़ लेते हैं और अपने अनुयाइयों के साथ बिहार में राँची से पुरूलिया जानेवाले सड़क पर धमहो से 13 किलोमीटर दूर बेतिया जनजाति के सांगी गाँव में आश्रम बना कर रहने लगते हैं।

नाटक के सीन-8 में बिहार के मुख्यमंत्री श्री बाबू, नेहरू की चिट्ठी ले कर गांधी जी से मिलने आते हैं। गांधी जब श्री बाबू से आने वजह पूछते हैं तो श्री बाबू कहते हैं कि नेहरू ने आने वाले चुनाव में कांग्रेस को समर्थन देने का आग्रह किया है। गांधी कहते हैं कि मैं ऐसा नहीं कर सकता क्योंकि मैं कांग्रेस के पक्ष में नहीं हूँ। यही नहीं गांधी कहते हैं कि इस क्षेत्र के चार जिले में चुनाव हो चुके हैं। श्री बाबू यह सुन कर आश्चर्यचकित हो जाते हैं क्योंकि अभी तो चुनाव की तिथि भी निर्धारित नहीं हुई है। गांधी समझाते हुए कहते हैं कि यहाँ के लोगों ने मिल कर चुनाव कर लिया है और बावनदास प्रधानमंत्री चुना गया है। श्री बाबू कहते हैं कि एक देश में दो सरकारें कैसे हो सकती हैं? लेकिन गांधी का कहना है "एक देश में दस सरकारें हो सकती हैं, क्या कठिनाई है? तुम अपनी सरकार चलाओ, यहाँ के लोग अपनी सरकार चलाएंगे। यही तो हमारी संस्कृति है।"

गांधी बताते हैं कि गाँव की नई चुनी हुई सरकार ग्राम की भलाई जैसे कुंआ खोदना, सड़क बनाना जैसे कार्यों में लगी हुई है। श्री बाबू जब नेहरू के लिए गांधी से संदेश पूछते हैं तब गांधी कहते हैं "नेहरू को बता दो... कि यहाँ तुम्हारे चार जिलों में सरकार बन चुकी है... उसके साथ सहयोग करने की अपील है।"

नाटक के पात्रों के माध्यम से नाटककार असग़र वजाहत ने बहुत ही खूबसूरती से गांधी के ग्राम स्वराज की अवधारणा को मूर्त रूप दिया है।

बोध प्रश्न

- गाँव की नई चुनी हुई सरकार किन कामों में जुटी हुई है?

12.3.4 गांधी का ब्रह्मचर्य दर्शन

गांधी ने अहिंसा को अपना सबसे बड़ा हथियार बनाया और यह भी माना कि अहिंसा पर पूरा-पूरा अमल करना ब्रह्मचर्य के बिना नामुमकिन है। गांधीजी ने कहा कि अहिंसा-व्रत का पालन करने वाला आदमी ब्याह नहीं कर सकता; तब फिर ब्याह से बाहर के विकारों का तो पूछना ही क्या? गांधी जी ने यह भी कहा कि यदि आपमें ब्रह्मचर्य हासिल कर सकने का साहस नहीं है तो विवाह अवश्य कीजिए, पर कम-से-कम आत्म नियंत्रण से तो रहिए। विवाह से पहले गांधी जी पुरुष और स्त्री के किसी भी तरह से नजदीक आने के विरुद्ध रहे। अपने आश्रम में गांधीजी ने स्त्री स्पर्श को भी निषेध माना था लेकिन खुद ही उन्होंने इस पर अमल नहीं किया। ब्रह्मचर्य के प्रयोग के नाम पर नग्न हो कर स्त्रियों के साथ सोने को लेकर आश्रम में ही मतभेद की स्थिति आ गई। स्त्री स्पर्श के नियम को तोड़ने पर गांधी जी ने कहा “अपने किए हुए निश्चयों के विषय में मैं शिथिल नहीं हूँ। मेरी ख्याति तो इससे विपरीत है। किंतु जहाँ मुझे स्वयं शंका हो वहाँ भूतकाल में किए गए निर्णय निश्चयात्मक नहीं माने जा सकते। यहाँ मैंने जो कुछ किया वह तो प्रयोग था। और प्रयोग में तो परिवर्तनों की गुंजाइश है ही।”

जिन महिलाओं का नाम गांधीजी के साथ जुड़ा उनमें श्रीमती प्रभावती देवी (जयप्रकाश नारायण की पत्नी), कंचन शाह, प्रेमा बेन कंटक, सुशीला नैयर, उनके पोते जयसुख लाल गांधी की पत्नी मनु गांधी, अवा गांधी और सरलादेवी चौधरानी (कवि रवींद्रनाथ टैगोर की भतीजी) आदि प्रमुख हैं। गोडसे@गांधी.कॉम नाटक में असग़र वजाहत भी गांधी के इन प्रयोगों से पूर्णतः सहमत नज़र नहीं आते। नाटक में सुषमा शर्मा एक पात्र है जो दिल्ली की एक मिडिल क्लास फैमिली की लड़की है, जिसने बी.ए. पास किया है तथा जो महात्मा गांधी की अंधभक्त है। नवीन जोशी एक ऐसा पात्र है जो दिल्ली कॉलेज में अंग्रेजी का युवा प्राध्यापक है और सुषमा से प्यार करता है। निर्मला शर्मा, सुषमा शर्मा की माँ है जिसे सुषमा और नवीन के प्यार की जानकारी है और जिसे इस प्यार से कोई आपत्ति नहीं है। गांधी जी सुषमा को तो आश्रम में रहने की इजाजत दे देते हैं लेकिन नवीन को आश्रम में नहीं रहने देते। नवीन जब चोरी-छुपे सुषमा से मिलने आता है तब गांधीजी उन्हें मिलते हुए देख लेते हैं और सुषमा पर दबाव डालते हैं कि वह नवीन को अपना भाई मान ले। ऐसा न करने पर, गांधी जी के प्रति श्रद्धा की वजह से सुषमा, नवीन से दूर रहना स्वीकार कर लेती है लेकिन विरह में उसकी तबीयत खराब होती जाती है। अंततः सुषमा की माँ गांधी जी को बहुत बुरा-भला कहती है। असग़र वजाहत भी इस नाटक में गांधी के स्वप्न में कस्तूरबा को लाते हैं। कस्तूरबा, गांधी को धिक्कारते हुए कहती है "तुमने हर औरत को दुख दिया है... सताया है, जो तुम्हारे करीब आई है। अपने आदर्शों और प्रयोगों की चक्की में तुमने हर औरत को पीसा है।" जब गांधी कहते हैं कि मैं प्रयोग कर रहा हूँ तब कस्तूरबा कहती हैं "प्रयोग में अपनी बलि दी जाती है, दूसरों की नहीं।" गांधी जब कस्तूरबा से माफी की बात कहते हैं तब करतूरबा, गांधी को कहती हैं "तुम्हें माफी तो जयप्रकाश और प्रभादेवी नारायण से माँगनी चाहिए... कि तुमने उनके वैवाहिक जीवन का सत्यानाश कर दिया था... सुशीला से माफी माँगो... मीरा से माफी माँगो... जो मेरी सौतन बनी रही... हजारों अपमान झेले और पाया क्या? दूर क्यों जाते हो अपने बेटों से माफी गाँगो... देवदास और लक्ष्मी को तुमने कितना रुलाया है... और नाम बताऊँ? आभा और कनु.. मुन्ना लाल और कंचन...।" और गांधी अपने कान बंद कर लेते हैं। इसके बाद गांधी के विचारों में परिवर्तन होता है और वह सुषमा और नवीन के शादी की इजाजत दे देते हैं।

बोध प्रश्न

- कस्तूरबा गांधी को क्यों धिक्कारती हैं?

12.3.5 स्वतंत्रता के बाद कांग्रेस की भूमिका पर सवाल

आम धारणा बन गई है कि आज़ादी के बाद गांधी जी कहते थे कि कांग्रेस पार्टी को भंग कर दिया जाय। दरअसल अपनी हत्या से तीन दिन पहले 27 जनवरी, 1948 को एक नोट में गांधी जी ने लिखा "अपने वर्तमान स्वरूप में कांग्रेस अपनी भूमिका पूरी कर चुकी है, जिसे भंग करके एक लोकसेवक संघ में तबदील कर देना चाहिए।"

गांधी जी की हत्या के दो दिन बाद 2 फ़रवरी, 1948 को गांधी जी के सहयोगियों ने गांधी जी के इस लेख को 'उनकी अंतिम इच्छा और वसीयतनामा' शीर्षक से हरिजन पत्रिका में प्रकाशित करवाया। इस लेख की वजह से आज तक कई लोग इस धारणा को मानते हैं कि गांधी

जी कांग्रेस को एक पार्टी के रूप में जारी नहीं रखना चाहते थे। लेकिन 2 फ़रवरी, 1948 को ही हरिजन में गांधी जी का एक और वक्तव्य छपा था "भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस जो कि सबसे पुराना राष्ट्रीय राजनीतिक संगठन है, जिसने कई अहिंसक संघर्षों के माध्यम से आज़ादी जीती है, को ख़त्म करने की अनुमति नहीं दी जा सकती। यह सिर्फ राष्ट्र के साथ ही ख़त्म होगा।"

हरिजन में 'उनकी अंतिम इच्छा और वसीयतनामा' नाम से छपे लेख से कांग्रेस में खलबली मच गई। कांग्रेस के कई बड़े नेताओं जैसे जयप्रकाश नारायण, रघुकुल तिलक, जे.बी. कृपलानी ने कांग्रेस के पक्ष में अपने विचार रखे। असग़र वजाहत ने अपने नाटक 'गोडसे@गांधी.कॉम' में विचारधारा के स्तर पर इसी द्वन्द्व को अपने नाटक में जगह दी है। नाटक के सीन -3 में मंच पर गांधी जी हैं और जवाहरलाल नेहरू, सरदार पटेल और मौलाना आज़ाद मंच पर आते हैं और इनके बीच कांग्रेस के विषय में संवाद होता है।

गांधी कांग्रेस को एक ऐसा मंच बताते हैं जिसका उद्देश्य आज़ादी पाना था। आज़ादी हासिल होते ही गांधी के अनुसार कांग्रेस का उद्देश्य पूरा हो गया। गांधी जी अपने संवाद में कहते हैं "आजादी की लड़ाई में हमारे साथ और हमसे अलग भी, बहुत से लोग शामिल थे... हमारे साथ ऐसे भी लोग थे जिनके ख्यालात एक-दूसरे से मिलते नहीं थे... लेकिन आजादी पाने की चाह में कांग्रेस के साथ आ गए थे... क्योंकि कांग्रेस एक खुला मंच था, जहाँ सबका स्वागत किया जाता था... अब आजादी मिल चुकी है... मंच को पार्टी नहीं बनाना चाहिए।" किसी पार्टी के सदस्यों के लिए समान विचारधारा से सहमति को आवश्यक मानते हुए गांधी जी कहते हैं "आज कांग्रेस से अलग-अलग राजनैतिक विचार रखने वाले लोग हैं... यह ठीक है कि निर्णय बहुमत से होते हैं लेकिन पार्टी में मिलते-जुलते विचारों का होना लाजिम है। नीतियाँ बनाना ही सब कुछ नहीं होता, अगर पार्टी के लोगों के विचार अलग-अलग हों तो उन्हें लागू करना कठिन हो जाएगा।" गांधी जी कहते हैं कि आजादी के बाद अब देश-निर्माण का काम जरूरी है और इसे हासिल करने के लिए कांग्रेस को भंग कर देना चाहिए।

पटेल देश में व्याप्त समस्याओं को इंगित करते हुए गांधी जी से कहते हैं "भारत को एक देश बनाने का यही वक्त है.. और अगर अब कांग्रेस को डिज़ॉल्व कर दिया गया तो.. शासन कौन करेगा।" शासन करने की बात सुन कर गांधी जी कहते हैं "बल्लभ असली बात यही है... जो तुमने अब कही है.. सवाल ये है कि शासन कौन करेगा.. तुम लोग अब शासन करना चाहते हो।" गांधी जी कहते हैं कि लोगों ने कांग्रेस को आज़ादी की लड़ाई लड़ने के लिए चुना था ऐसे में शासन की बात करना जनता के साथ धोखा करने जैसा होगा। नेहरू के सवाल पर कि क्या सरकार में रहते हुए जनता की सेवा नहीं की जा सकती, गांधी जी कहते हैं "सरकार हुकूमत करती है जवाहर.. सेवा नहीं करती.. सरकारें सत्ता की प्रतीक होती है और सत्ता सिर्फ अपनी सेवा करती है.. इस लिए सत्ता से जितनी दूरी बनेगी उतना ही अच्छा होगा।"

नेहरू जब सरकार द्वारा जनहित में पॉलिसी बनाए जाने की आवश्यकता बताते हैं तब गांधी कहते हैं "जवाहर तुम पत्तों से जड़ की तरफ जाते हो और मैं जड़ से पत्तों की तरफ आने की बात करता हूँ। तुम समझते हो कि सरकारी नीतियाँ बना कर, उन्हें सरकारी तौर पर लागू

करने से देश की भलाई होगी.. मैं ऐसा नहीं मानता... मैं कहता हूँ लोगों को ताकत दो, ताकि वे अपने लिए वह सब करें जो जरूरी समझते हैं... चिराग के नीचे अँधेरा होता है, लेकिन सूरज के नीचे अँधेरा नहीं होता।"

सबके समझाने के बाद भी गांधी अपने विचार नहीं बदलते और तब पटेल कहते हैं कि आपका कांग्रेस भंग कर देने का प्रस्ताव कांग्रेस वर्किंग कमेटी में रख दिया जाएगा। असग़र वजाहत यहाँ गांधी की हठधर्मिता दिखते हुए गांधी के संवाद में लिखते हैं "और सुनो, कांग्रेस वर्किंग कमेटी ने अगर यह प्रस्ताव पास न किया तो कांग्रेस से मेरा कोई वास्ता न रहेगा।"

नाटक के सीन-4 में उद्घोषणा होती है कि कांग्रेस वर्किंग कमेटी ने महात्मा गांधी के प्रस्ताव को खारिज कर दिया। प्रस्ताव के गिरते ही गांधी ने कांग्रेस के अध्यक्ष को चिट्ठी लिखी थी कि अब कांग्रेस से उनका कोई संबंध नहीं है। नेहरू, पटेल और मौलाना आजाद ने गांधी से कई मुलाकातें की थीं और उन्हें इस बात पर राजी करने की कोशिश की, कि वे कांग्रेस से अपना रिश्ता नहीं तोड़ें। घनश्याम दास विड़ला, जमुनालाल बजाज, पंडित सुंदर लाल, आचार्य नरेंद्र देव ने भी गांधी जी से कांग्रेस में बने रहने की अपील की लेकिन गांधी हठ के आगे किसी कि नहीं चली।

नाटक में कांग्रेस के सरकार में आते ही सामंती विचारधारा के समावेश होने की बात दर्शाने के लिए असग़र वजाहत इस नाटक में फणीश्वरनाथ रेणु के उपन्यास मैला आँचल के पात्र बावनदास को भी रखते हैं जो गांधीवादी है। गांधी के कांग्रेस छोड़ने की ख़बर सुन कर बावनदास गांधी से मिलने आता है। बावनदास कहता है "बाबा हम आपके ऊपर हमला की खबर सुना तो नहीं आए... पर जब सुना, बाबा गान्ही कांग्रेस छोड़ दिए हैं तो हम आ गया... हम भी कांग्रेस छोड़ दिया है... आपसे पहले छोड़ दिया है। रोज सपने में आता था कि भारत माता रो रहा है... रोज सपने में आता था। उधर पूर्णिया में बिरंचीलाल है न? वही जो पिकेटिंग वाले भोल्टियरों को पुलिस बुलाता था। हमें उसका लठैत और पुलिस डंडा, जूता से मारता था, वही विरंचीलाल कांग्रेस का जिला अध्यक्ष बना है। भोई पटवारी है... भोई जेल है... भारतमाता रोता है। तो हम कांग्रेस छोड़ दिया।"

गांधी जी भले ही न चाहते हों कि कांग्रेस को बिल्कुल ही खत्म कर दिया जाय पर इतना तो अवश्य है कि गांधी जी आज़ादी के बाद कांग्रेस की भूमिका के पुनर्निर्धारण के पक्ष में थे। 'गोडसे@गांधी.कॉम' नाटक के लेखक असग़र वजाहत भी गांधी की इस विचारधारा से सहमत नज़र आते हैं।

बोध प्रश्न

- गांधी जी क्यों कहते हैं कि सत्ता से जितनी दूरी बनेगी उतना ही अच्छा होगा?

12.3.6 गांधी के हिन्दू विरोधी होने की अवधारणा का बचाव

समय-समय पर गांधी के विरोध में लिखने वाले लोगों ने गांधी पर हिंदू-विरोधी होने का ठप्पा लगाना चाहा है। नाथूराम गोडसे ने भी अदालत में गांधी पर हिंदू विरोधी होने का आरोप लगाया था। 'गोडसे@गांधी.कॉम' नाटक में असग़र वजाहत तर्कपूर्ण संवाद के माध्यम से गांधी के हिंदू-विरोधी होने के आरोप का बचाव करते हैं।

नाटक के दृश्य-14 में गांधी और गोडसे संवाद के दौरान गोडसे, गांधी पर हिंदू विरोधी होने का आरोप लगाता है। गांधी, गोडसे से पूछते हैं उसे क्यों लगता है कि गांधी हिंदू विरोधी हैं। गोडसे कहता है "एक-दो नहीं सैकड़ों उदाहरण दिए जा सकते हैं... सबसे बड़ा तो यह है कि तुमने कहा था न कि पाकिस्तान तुम्हारी लाश पर बनेगा... उसके बाद तुमने पाकिस्तान बनाने के लिए अपनी सहमति दे दी।" गांधी कहते हैं कि उन्होंने विभाजन का विरोध किया था और अभी भी करते हैं। गांधी पलटवार करते हुए कहते हैं कि सावरकर ने अपने किताब 'हिंदू राष्ट्र दर्शन' में लिखा कि हिंदू और मुस्लिम दो अलग राष्ट्रीयताएँ हैं फिर उन्होंने इस विभाजन का विरोध क्यों किया।

गोडसे अगला आरोप लगाते हुए कहता है कि यदि गांधी पाकिस्तान के विरोधी हैं तो उन्होंने पाकिस्तान को 55 करोड़ रुपए दिए जाने के लिए आमरण अनशन क्यों किया? गांधी कहते हैं यह हिंदू-मुस्लिम या पाकिस्तान-हिंदुस्तान के बारे में नहीं था। हमने वचन दिया था और सवाल अपने वचन से मुकर जाने का था।

खिलाफत आंदोलन का हवाला देते हुए गोडसे, गांधी पर मुस्लिम तुष्टीकरण का आरोप लगाता है। अपने बचाव में गांधी कहते हैं "दक्षिण अफ्रीका में मैंने जो किया, क्या वह केवल मुसलमानों के लिए था? चंपारण, अहमदाबाद के आंदोलन क्या केवल मुसलमानों के लिए थे? असहयोग आंदोलन में क्या केवल मुसलमान थे? हरिजन उद्धार और स्वराज का केंद्र क्या मुसलमान थे? हाँ, जब मुसलमान ब्रिटिश साम्राज्यवाद के विरूद्ध खिलाफत आंदोलन में उठ खड़े हुए तो मैंने उनका साथ दिया था... और इस पर मुझे गर्व है।"

गोडसे अखंड भारत की बात करते हुए गांधी को इसका विरोधी बताता है। गोडसे अखंड भारत का नक्शा दिखलाते हुए गांधी से कहता है कि यहाँ भगवा लहराएगा। गांधी अखंड भारत के नक्शे पर सवाल उठाते हुए गोडसे से कहते हैं "गोडसे... तुम्हारा अखंड भारत तो सम्राट अशोक के साम्राज्य के बराबर भी नहीं है... तुमने अफगानिस्तान को छोड़ दिया है... वे क्षेत्र छोड़ दिए हैं जो आर्यों के मूल स्थान थे... तुमने तो ब्रिटिश इंडिया का नक्शा टाँग रखा है... इसमें न तो कैलाश पर्वत है और न मान सरोवर है।"

नाटक के दृश्य-16 में गांधी, गोडसे से हिंदू के जातियों में बंटे होने पर प्रहार करते हैं। गांधी पहले तो गोडसे से पूछते हैं कि क्या वह उन्हें हिंदू मानता है। गांधी यही सवाल अन्य पात्र प्यारेलाल और बावनदास के लिए भी पूछते हैं। गोडसे का जबाव इन सबके लिए हाँ होता है। फिर गांधी जेल में शौचालय साफ़ करने वाले जमादार नत्थू के लिए पूछते हैं कि क्या गोडसे उसे हिंदू मानता है। गोडसे जब इसका करण पूछता है तब गांधी कहते हैं "इसलिए कि अगर तुम इन सब को बराबर का हिंदू नहीं मानते तो तुम हिंदू नहीं हो... पहले तो तुमने देश को छोटा किया नाथूराम... अब हिंदुत्व को छोटा मत करो... हिंदू धर्म बहुत बड़ा, बहुत उदार और महान धर्म है गोडसे... उसे छोटा मत करो... दूसरे को उदार बनाने के लिए पहले खुद उदार बनना पड़ता है।"

गोडसे और गांधी संवाद में अन्य कई दृश्यों में भी गोडसे ने गांधी पर हिंदू विरोधी होने के आरोप लगाए और गांधी ने अपने तर्कों से इसका बचाव किया। असग़र वजाहत के संवाद छोटे लेकिन बहुत प्रभावी हैं। महत्वपूर्ण यह है कि लेखक या नाटककार के तौर पर असग़र

वजाहत किसी एक का पक्ष लेते हुए नहीं नज़र आते न ही अपनी तरफ से कोई निष्कर्ष देते हैं; नाटक के तर्कपूर्ण संवाद पाठकों को सही निष्कर्ष तक ले जाते हैं।

12.4 पाठ सार

असग़र वजाहत की कहानियों में जो विविधता है वह उनके नाटकों में भी नज़र आता है, इतिहास से उनका जो लगाव उनके उपन्यासों में दिखता है वह उनके नाटकों में भी विद्यमान है। विषय और संदर्भ में समानता रहते हुए भी असग़र वजाहत नाटक सिर्फ इसी नहीं लिखते कि उन्हें इस विधा में भी कुछ लिखना है; बल्कि इनके नाटकों में नाटक में वे सभी तत्व मौजूद हैं जो किसी भी नाटक को एक बेहतर नाटक की श्रेणी में स्थापित कर सके।

दो मजबूत लेकिन विरोधी विचारधारा वाले व्यक्तित्वों के बीच संवाद का विषय लिए कई नाटक लिखे गए हैं। असग़र वजाहत भी अपने नाटक 'गोडसे@गांधी.कॉम' में गोडसे और गांधी के बीच संवाद को अपने नाटक का मुख्य विषय बनाते हैं तो अपने दूसरे नाटक महाबली में तुलसीदास और अकबर के बीच संवाद को अपने नाटक के विषय के रूप में चुनते हैं।

'गोडसे@गांधी.कॉम' नाटक में असग़र वजाहत कल्पना करते हैं कि गोडेसे द्वारा गोली चलाने के बाद गांधी सिर्फ घायल होते हैं लेकिन उनकी मृत्यु नहीं होती। परिस्थितियाँ ऐसी बनती हैं कि गोडसे और गांधी एक ही जेल में एक ही कमरे में रहते हैं और इन दोनों में संवाद होता है। नाटक गोडसे@गांधी.कॉम नाटक में गांधी और गोडसे के बीच संवाद के माध्यम से असग़र वजाहत कई महत्वपूर्ण और चर्चित बिंदुओं पर इस नाटक के माध्यम से अपनी राय रखते हैं। गोडसे द्वारा गांधी को हिंदू विरोधी ठहराना या गांधी को मुस्लिम तुष्टीकरण करने वाला बताना जैसे बिंदुओं पर गोडसे और गांधी के बीच असग़र वजाहत बहुत ही प्रभावी संवाद लिखते हैं। गोडसे, गांधी को भारत विभाजन का जिम्मेदार मानता है, गांधी के कांग्रेस छोड़ देने को गांधी का पाखंड मानता है, गांधी के गीता पाठ को ढकोसला मानता है और इन सभी विषयों पर गोडसे और गांधी के बीच महत्वपूर्ण संवाद इस नाटक में लिखे गए हैं जिसमें गांधी अपना बचाव करते हैं।

नाटक का शीर्षक 'गोडसे@गांधी.कॉम' है और इस नाटक के प्रमुख पात्र भी गोडसे और गांधी ही हैं लेकिन इस विषय के अतिरिक्त असग़र वजाहत नाटक में गांधी के स्वराज दर्शन, ब्रह्मचर्य दर्शन, हरिजन सेवा आदि जैसे विषय को भी शामिल करते हैं और नाटक के अन्य पात्रों के माध्यम से गांधी के विचारों को पाठकों के सामने रखते हैं।

एक लेखक के तौर पर असग़र वजाहत गांधी की तरफदारी नहीं करते नज़र आते। वह गोडसे और गांधी दोनों को ही अपनी बात अपने संवादों के माध्यम से प्रभावी ढंग से रखने देते हैं। लेकिन जहाँ असग़र वजाहत गांधी से इत्तफाक नहीं रखते वहाँ अपने संवाद के माध्यम से उन्हें बचाने का अतिरिक्त प्रयास नहीं करते। गांधी को जब कस्तूरबा की परछाई उनके ब्रह्मचर्य प्रयोग के लिए धिक्कारती है तब असग़र वजाहत कस्तूरबा की तरफ खड़े दिखाई देते हैं। गोडसे जब गांधी को कहता है कि आपने कहा था कि पाकिस्तान मेरी लाश पर बनेगा लेकिन आपने इस विभाजन को नहीं रोका। गांधी जी इस आरोप पर अपनी सफाई न दे कर सावरकर की राय

याद दिलाते हैं जिसमें उन्होंने कहा था कि वे खून की अंतिम बूँद तक पाकिस्तान के विचार का विरोध करेंगे।

नाटक में असग़र वजाहत लिखते हैं कि गोडसे और गांधी के बीच वर्षों तक संवाद होता है और आखिर में एक ही दिन और एक ही समय दोनों जेल से रिहा होते हैं। इतने लंबे संवाद के बाद भी असग़र वजाहत किसी एक पक्ष को दूसरे से सहमत होता नहीं दिखाते। गोडसे का गांधी की तरफ आना प्रतीकात्मक है।

असग़र वजाहत नाटक में बहुत ही महत्वपूर्ण सुझाव देते हैं जब वह गांधी के माध्यम से कहते हैं कि गांधी गोडसे से संवाद करना चाहते हैं। यदि गोडसे और गांधी जैसे दो विपरीत ध्रुव आपस में संवाद कर सकते हैं तब आज किसी भी समस्या का समाधान आपसी संवाद द्वारा किया जा सकता है। इस नाटक की कथा-वस्तु काल्पनिक है लेकिन जिन विषयों पर चर्चा की गई है उसमें बहुत ही संजीदगी है। इस नाटक की उपयोगिता लंबे समय तक बनी रहेगी।

12.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं -

- असागर वजाहत ने 'गोडसे@गांधी.कॉम' नाटक के माध्यम से दो विचारधाराओं के द्वंद्व को अत्यंत तीव्र रूप में उभरा है।
- गांधी का स्वराज, लोगों को अधिक से अधिक आत्मनिर्भर बनने को प्रेरित करता है। इस नाटक में लेखक ने गांधी के स्वराज का मूर्त रूप गांधी के प्रयोग आश्रम के माध्यम से प्रस्तुत किया है।
- गांधी ने ब्रह्मचर्य के लिए स्त्री और पुरुष के अलग-अलग रहने पर बल दिया। आश्रम में गांधी ने पुरुषों के लिए स्त्री स्पर्श का भी निषेध किया। इस नाटक के माध्यम से लेखक ने गांधी के ब्रह्मचर्य दर्शन की सहज विवेचना की है।
- यह नाटक आज़ादी के बाद कांग्रेस के भविष्य को लेकर गांधी के विचारों को भी बहाली प्रकार रेखांकित करता है।
- लेखक की मान्यता है कि संवाद ही किसी समस्या को समझने और सुलझाने का एकमात्र तरीका है।
- लेखक ने आजादी की सकारात्मक अवधारणा को महात्मा गांधी के इस संवाद के माध्यम से रूपायित किया है - "अपनी बात कहने की आज़ादी सब को है लेकिन हत्या करने की आज़ादी नहीं है।"

12.6 शब्द संपदा

1. अंतर्द्वंद्व = आन्तरिक संघर्ष
2. अभियोग = दोषारोपण
3. अवधारणा = विचार
4. आहत = घायल, ज़ख्मी
5. उद्घोषणा = नाटक में मंच के पीछे से की जाने वाली घोषणा

6. एकांकी = एक अंक का नाटक
7. गीति-रूपक = एक प्रकार का रूपक जिसमें गद्य कम और पद्य या गान अधिक होता है।
8. ढकोसला = झूठा दिखावा
9. तटस्थ = किसी के भी तरफ न रहने वाला
10. दक्षिणवर्ती विचारधारा = उस पक्ष या विचारधारा को कहते हैं जो सामाजिक स्तरीकरण या सामाजिक समता को अपरिहार्य
11. नामचीन = प्रसिद्ध
12. निष्फल कर्म = बिना किसी फल के किया जाने वाला कार्य
13. पक्षधर = किसी का पक्ष लेने वाला
14. परिधान = पोशाक
15. पाखंड = आडंबर
16. प्रायश्चित = पाप कर्म के फल
17. रंगकर्म = रंगमंच से जुड़ा व्यक्ति
18. रंगशाला = नाटक मंचन की जगह
19. वसुधैव कुटुंबकम = समस्त धरती ही परिवार है (वसुधा एव कुटुम्बकम्)
20. विकेन्द्रीकरण की = लोगों को या चीजों को केंद्रीय स्थान से हटाकर पुनः विभाजित करने प्रक्रिया
21. समाहित = व्यवस्थित
22. साजिंदे = वाद्य यंत्र बजाने वाले

12.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. नाटक के प्रमुख तत्व क्या हैं और 'गोडसे@गांधी.कॉम' में इन तत्वों की उपस्थिति पर प्रकाश डालिए।
2. 'गोडसे@गांधी.कॉम' नाटक के आधार पर गोडसे और गांधी के बीच संवाद की प्रमुख बिंदुओं की चर्चा कीजिए।
3. गांधी के स्वराज दर्शन की व्याख्या करते हुए 'गोडसे@गांधी.कॉम' नाटक में गांधी ने किस तरह स्वराज की नींव रखी हैं, उदाहरण के साथ स्पष्ट कीजिए।
4. महात्मा गांधी के अनुसार कांग्रेस की स्थापना का मूल उद्देश्य क्या था? आज़ादी के बाद गांधी जी कांग्रेस को भंग करने के पक्ष में क्यों थे और 'गोडसे@गांधी.कॉम' नाटक के अनुसार गांधी ने किस तरह कांग्रेस को भंग करने की माँग की?

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. 'गोडसे@गांधी.कॉम' नाटक के विषयवस्तु पर प्रकाश डालिए।
2. गांधी को हिंदू विरोधी ठहराने के लिए गोडसे के क्या तर्क थे? स्पष्ट कीजिए।
3. 'गोडसे@गांधी.कॉम' नाटक के परिप्रेक्ष्य में सुषमा और नवीन के प्रेम और इसमें गांधी के ब्रह्मचर्य प्रयोग की वजह से उत्पन्न परिस्थितियों की चर्चा कीजिए।
4. 'गोडसे@गांधी.कॉम' नाटक के परिप्रेक्ष्य में गोडसे और गांधी के बीच संवाद की उपयोगिता पर प्रकाश डालिए।
5. 'गोडसे@गांधी.कॉम' नाटक के परिप्रेक्ष्य में गोडसे और गांधी को एक ही जेल में डाले जाने की परिस्थितियों पर प्रकाश डालिए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. गांधी और गोडसे के बीच का .... 'गोडसे@गांधी.कॉम' नाटक की कथावस्तु है। ( )
   (अ) संवाद (आ) संघर्ष (इ) भाईचारा (ई) गुस्सा
2. गोडसे महात्मा गांधी को किसके शत्रु मानते हैं? ( )
   (अ) मुसलमान (आ) हिंदू (इ) सिक्ख (ई) इसाई
3. असग़र वजाहत ने अपने नाटक 'गोडसे@गांधी.कॉम' में विचारधारा के स्तर पर क्या दिखाया है? ( )
   (अ) संघर्ष (आ) द्वंद्व (इ) सत्याग्रह (ई) अहिंसा

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. 'गोडसे@गांधी.कॉम' नाटक में गांधी के अनुसार हम सब अपने विचारों के लिए आजाद हैं, लेकिन .... करने की आजादी नहीं है।
2. 'गोडसे@गांधी.कॉम' नाटक के अनुसार गांधी पर हमला करने के जुर्म में गोडसे को .... कारावास की सजा हुई।

III. सुमेल कीजिए -

1. बावनदास	(अ) दिल्ली कॉलेज का प्राध्यापक
2. नवीन जोशी	(आ) फणीश्वरनाथ रेणु के नाटक मैला आँचल का पात्र
3. निर्मला शर्मा	(इ) नवीन की प्रेमिका
4. सुषमा शर्मा	(ई) हरियाणा निवासी

12.8 पठनीय पुस्तकें

1. संचयन असग़र वजाहत : सं. पल्लव
2. असग़र वजाहत के आठ नाटक
3. गोडसे@गांधी.कॉम : असगर वजाहत

इकाई 13 : नाटककार जगदीशचंद्र माथुर : एक परिचय

रूपरेखा

13.1 प्रस्तावना
13.2 उद्देश्य
13.3 मूल पाठ : नाटककार जगदीशचंद्र माथुर : एक परिचय
13.3.1 जीवन और साहित्यिक व्यक्तित्व
13.3.2 साहित्यिक कृतित्व
13.3.3 नाटककार जगदीश चंद्र माथुर
13.3.4 एकांकीकार जगदीश चंद्र माथुर
13.3.5 जगदीश चंद्र माथुर : मूल्यांकन
13.4 पाठ सार
13.5 पाठ की उपलब्धियाँ
13.6 शब्द संपदा
13.7 परीक्षार्थ प्रश्न
13.8 पठनीय पुस्तकें

13.1 प्रस्तावना

जगदीशचंद्र माथुर हिंदी के बहुत महत्वपूर्ण नाटककार हैं। यों तो जयशंकर प्रसाद के बाद नाटक लेखन के क्षेत्र में लक्ष्मी नारायण मिश्र एक बड़ा नाम है, पर जयशंकर प्रसाद की परंपरा से अलग हटकर प्रयोगशील नाटक लिखने की पहल जगदीशचंद्र माथुर ने अपने नाटक 'कोणार्क' से की। इनके नाटक श्रेष्ठ साहित्य होने की साथ ही रंगमंच की दृष्टि से भी खरे हैं। नाटक द्विआयामी विधा है। यह साहित्य और कला एक साथ है। यह एकांगी कला नहीं विशिष्ट कला है जो लिखे जाने पर साहित्य और फिर खेले जाने पर कला बनता है। पृथ्वीराज कपूर ने हिंदी रंगमंच का निर्माण किया तो जगदीशचंद्र माथुर ने हिंदी को पहली बार अपने मिजाज के नाटक दिए। वे एक सिद्धहस्त एकांकीकार भी थे। इस इकाई में हिंदी के प्रमुख प्रयोगधर्मी नाटककार और एकांकीकार जगदीशचंद्र माथुर के बहुमुखी व्यक्तित्व और साहित्यिक कृतित्व का परिचय आपको मिलेगा।

13.2 उद्देश्य

प्रिय छात्रो! इस इकाई को पढ़ने के बाद आप -

- जगदीशचंद्र माथुर के जीवन और व्यक्तित्व से परिचित हो सकेंगे।
- जगदीशचंद्र माथुर के कृतित्व का परिचय प्राप्त कर सकेंगे।
- माथुर की प्रमुख रचनाओं के बारे में जान सकेंगे।
- उनके नाटकों-एकांकियों की विशेषताओं को समझ सकेंगे।
- माथुर के हिंदी नाट्य साहित्य में योगदान और महत्व से परिचित हो सकेंगे।

13.3 मूल पाठ : नाटककार जगदीशचंद्र माथुर : एक परिचय

13.3.1 जीवन और साहित्यिक व्यक्तित्व

कृतिकार के कृतित्व के पीछे उसका व्यक्तित्व होता है। इसे आप लेखन और सर्जन का अंदरूनी अहसास कह सकते हैं। इसलिए किसी भी लेखक-साहित्यकार के जीवन को सबसे पहले देखा जाना चाहिए। आपने एक ओर तो आज़ादी के बाद भारत की केंद्रीय प्रशासनिक सेवा में निहायत बढ़िया काम किया, दूसरी ओर हिंदी नाटककार के रूप में अपनी अलग पहचान बनाई। जगदीशचंद्र माथुर (1917- 1978) हिंदी के एक प्रतिष्ठित लेखक एवं नाटककार हैं। वे उन साहित्यकारों में से हैं जिन्होंने आकाशवाणी में काम करते हुए हिन्दी की लोकप्रियता के विकास में महत्वपूर्ण योगदान किया। रंगमंच के निर्माण, निर्देशन, अभिनय, संकेत आदि के सम्बन्ध में इनको विशेष सफलता मिली।

जगदीशचंद्र माथुर का जन्म 16 जुलाई, 1917 को उत्तर प्रदेश के बुलंद शहर जिले के खुर्जा के पास के एक गाँव में हुआ था ।वे बड़े ही सुसंस्कृत और सुशिक्षित परिवार में पैदा हुए थे। उनके पिता कर्तव्यनिष्ठ, उदार और राष्ट्रीय विचारों के अध्यापक थे। सहभोज में अपने स्कूल के मेहतर के साथ बैठकर भोजन करने वाले पिता से उन्होंने सामान्य उपेक्षित जन का सम्मान करना सीखा। पारिवारिक संस्कारों का प्रभाव उनके सीधे, सरल, और सात्विक व्यक्तित्व पर पड़ा। जगदीशचंद्र माथुर के बचपन का कुछ आभास उनके द्वारा लिखित दो आलेखों 'मेरे पिता' और 'जीवन निर्माता' में मिलता है।

प्रारंभिक शिक्षा खुर्जा में हुई। अध्ययनकाल से ही उनका लेखन प्रारंभ होता है। आरंभ से ही आपकी रुचि अभिनय की ओर भी थी। स्कूल में उन्होंने 'बाल सखा', 'शिवाजी' और 'प्रयाग की सेवा' आदि एकांकियों में अभिनय किया था। पिता की उदारता और परिवार के खुले वातावरण ने माथुर को आम लोगों को खासकर देखने की निगाह बख्शी। बचपन के सपनों को उड़ान उन्हें इलाहाबाद के शहरी समाज में खूब मिली।

उच्च शिक्षा यंग क्रिश्चियन कॉलेज प्रयागराज और प्रयाग विश्व विद्यालय में हुई। प्रयाग विश्वविद्यालय का शैक्षिक वातावरण और प्रयाग के साहित्यिक संस्कार रचनाकार के व्यक्तित्व निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका हैं। प्रयाग विश्वविद्यालय में अपने छात्र जीवन में आपने विश्वविद्यालय के नाटकों में बार-बार हिस्सा लिया। 1930 ई. में तीन छोटे नाटकों के माध्यम से वे अपनी सृजनशीलता की धारा के प्रति उन्मुख हुए। प्रयाग में उनके नाटक 'चाँद', 'रूपाभ' पत्रिकाओं में न केवल छपे ही, बल्कि इन्होंने 'वीर अभिमन्यु' आदि नाटकों में भाग लिया। 'भोर का तारा' में संग्रहीत सारी रचनाएँ प्रयाग में ही लिखी गईं। यह नाम प्रतीक रूप में शिल्प और संवेदना दोनों दृष्टियों से माथुर के रचनात्मक व्यक्तित्व के 'भोर का तारा' ही है। इसके बाद की रचनाओं में समकालीनता और परंपरा के प्रति गहराई क्रमशः बढ़ती गई है। यह आप बखूबी देख सकते हैं, पढ़ सकते हैं। व्यक्तियों, घटनाओं और देश के विभिन्न ऐतिहासिक स्थलों से प्राप्त अनुभवों ने सृजन में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है। जब जगदीशचंद्र माथुर इलाहाबाद(प्रयाग) विश्वविद्यालय के छात्र थे तब सामाजिक स्तर पर देश का वातावरण राष्ट्रीयता और रोमानी भावनाओं से भरा था। साहित्य में छायावाद का बोलबाला था। पंत जी के व्यक्तित्व और कवित्व

से प्रभावित होकर युवा माथुर जी ने कुछ तुकबंदियाँ कीं। उनके एकांकियों और सम्पूर्ण नाटकों में भावुकता, रोमानीपन, और कवित्व का आवरण उनके युग की देन है। उनका जन्म एक मध्य वर्गीय परिवार में हुआ। उस वर्ग के अभावों, दुख-दर्द और सपनों को वे जानते थे। आप जब माथुर के कृतित्व को देखेंगे तो इन सब बातों का ध्यान भी रखेंगे क्योंकि इनका प्रभाव सब जगह फैला है।

1939 ई. में प्रयाग विश्वविद्यालय से एम.ए. (अंग्रेज़ी साहित्य) करने के बाद 1941 ई. में माथुर 'इंडियन सिविल सर्विस' में चुन लिए गए। स्मरण रहे वे अंग्रेजों के जमाने के आई. सी. एस. अधिकारी थे। सरकारी नौकरी में 6 वर्ष बिहार शासन के शिक्षा सचिव के रूप में, 1955 से 1962 ई. तक आकाशवाणी - भारत सरकार के महासंचालक के रूप में, 1963 से 1964 ई. तक उत्तर बिहार (तिरहुत) के कमिश्नर के रूप में कार्य करने के बाद 1963-64 में हार्वर्ड विश्वविद्यालय, अमेरिका में विज़िटिंग फेलो नियुक्त होकर विदेश चले गए।

वे बिहार सरकार के अनेक पदों पर रहे—कमिश्नर रहे, शिक्षा-सचिव रहे। उनके लिए कोई दायित्व औपचारिक नहीं था। वे खुद को हर ज़िम्मेदारी में मशगूल कर लेते थे। 1942 के आंदोलन के समय अपनी विचारधारा के कारण वे ब्रिटिश सरकार के घेरे में रहे और उनके पत्राचार पर कड़ी नजर रखी गई थी। पर सरकार उनके खिलाफ कुछ न पा सकी। शालीनता और विनम्रता उनमें कूट-कूट कर भरी थी। किसी को भान नहीं होने देते थे कि वे इतने उच्चाधिकारी हैं। साहित्य अवदान के अतिरिक्त उनकी सांस्कृतिक देन भी कम नहीं है। 1944 में बिहार के प्रसिद्ध सांस्कृतिक महोत्सव का शुभारंभ किया। वैशाली का 'वैशाली अभिनंदन ग्रंथ' इसका एक उदाहरण है। जिन-जिन क्षेत्रों में उन्होंने काम किया, वे उसका गहराई से अध्ययन करते थे और अनुभवों के आधार पर लिखते भी थे। वे एक असाधारण अधिकारी थे, और प्रशासन की आंतरिक दौड़-भाग और आपाधापी से उन्होंने अपने को दूर रखकर लेखन कार्य किया।

अमेरिका से लौटने के बाद विभिन्न महत्वपूर्ण पदों पर काम करते हुए 19 दिसंबर, 1971 ई. से भारत सरकार के हिंदी सलाहकार रहे। इन सरकारी नौकरियों में व्यस्त रहते हुए भी भारतीय इतिहास और संस्कृति को वर्तमान संदर्भ में व्याख्यायित करने का प्रयास चलता ही रहा। लेखन तो हुआ ही ।

यह भी नोट करने वाली बात है कि सरकारी सेवा के साथ साहित्य सेवा भी अबाध गति से चलती रही। परिवर्तन और राष्ट्र निर्माण के ऐसे ऐतिहासिक समय में जगदीशचंद्र माथुर, आईसीएस, ऑल इंडिया रेडियो के डायरेक्टर जनरल थे। उन्होंने ही 'ए.आई.आर' का नामकरण 'आकाशवाणी' किया था। टेलीविज़न उन्हीं के जमाने में वर्ष 1959 में शुरू हुआ था। हिंदी और भारतीय भाषाओं के तमाम बड़े लेखकों को वे ही रेडियो में लेकर आए थे। सुमित्रा नंदन पंत से लेकर रामधारी सिंह दिनकर और बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' जैसे दिग्गज साहित्यकारों के साथ उन्होंने हिंदी के माध्यम से सांस्कृतिक पुनर्जागरण का सूचना संचार तंत्र विकसित और स्थापित किया था। लोक जीवन, लोक नाट्य और संगीत के लिए माथुर जी ने आकाशवाणी के निदेशक के रूप में जो भी कार्य किया वह स्मरणीय है।

माथुर साहब ने 'टी.वी' का नाम 'दूरदर्शन' रखा। दूरदर्शन के लिए हिंदी के कई प्रोग्राम चलाये और चलवाये। 1959 में दूरदर्शन के उदघाटन के बाद स्टाफ मीटिंग में पंडित नेहरू के सामने उन्होंने कहा था, "सरकार किसी भी भाषा से चलाई जाए पर लोकतंत्र हिंदी और भारतीय भाषाओं के बल पर ही चलेगा। हिंदी ही सेतु का काम करेगी, सूचना और संचार तंत्र के सहारे ही हम अपनी निरक्षर जनता तक पहुँच सकते हैं। भारत के बहुमुखी विकास की क्रांति यहीं से शुरू होगी। "उन्होंने कहा था कि लोक संस्कृति के बिना शास्त्रीय कलाओं की शुचिता और सौंदर्य बाधित होगा। हमें एक क्षेत्र की लोक संस्कृति का अंतरसंबंध दूसरे क्षेत्र की लोक संस्कृति से स्थापित करना पड़ेगा।" डॉ दशरथ ओझा ने भी यही लिखा है, "जिस वातावरण में वे बाल्यकाल में पले, उसकी स्मृतियाँ रह-रहकर उनके मन में ग्रामीण जीवन के विकास के लिए कुछ-न-कुछ करने को प्रेरित करती रहती थीं।" माथुर जी ने उनके दुख-सुख दोनों को अपने लेखन का आधार बनाया। 'एक व्यस्त सरकारी जीवन के कोनों में दुबके दो चार फुरसत के क्षणों की देन' कहकर बड़े संकोच से वे अपने नाटकों को पेश कर गए हैं। पर ये नाटक दो चार क्षणों से बहुत ज्यादा वक्त तो पढ़ने के लिए ही माँगते हैं।

आप यदि विद्वानों के नपे तुले और सोचे समझे शब्दों में जगदीशचंद्र माथुर के व्यक्तित्व को चंद शब्दों में रखना चाहें तो गोविंद चातक के शब्दों में कह सकते हैं, "भाव-प्रवणता, रोमान, प्रकृति-प्रेम, सौंदर्य-पिपासा, करुणा और कल्पनाशीलता उनके व्यक्तित्व की कुंजी प्रतीत होती है।" 14 मई, 1978 को हृदय गति रुक जाने से दिल्ली में इनका निधन हो गया।

बोध प्रश्न

- जगदीश चंद्र माथुर के बचपन के विषय में दो मुख्य बातें गिनाइए।
- सरकारी सेवा में रहते हुए दो प्रमुख काम माथुर ने क्या किए?
- बिहार में रहते हुए माथुर ने जो काम किए उनमें से दो कौन से हैं?
- माथुर जी के जीवन से आपके मन में उनकी कैसी छवि बनती है?

13.3.2 साहित्यिक कृतित्व

आप समझ सकते हैं कि सरकारी नौकरी और बड़े ओहदे के होते कुछ समय निकालकर लिखना इतना आसान भी नहीं होता। पर कितने ही महारथी ऐसा करके भी दिखाते हैं। लेखन में माथुर जी की इतनी रुचि थी कि जिन विभागों में उन्होंने जहाँ भी काम किया उनकी समस्याओं के सम्बन्ध में भी बराबर लिखा। बिहार में शिक्षा सचिव के पद पर काम करते हुए उन्होंने कई सांस्कृतिक और साहित्यिक संस्थाओं की स्थापना की और उनमें गहरी रुचि ली। अपने विचारों और मूल्यों में माथुर जी ग्रामीण और शहरी, लोक और शास्त्रीय संस्कारों व परंपराओं के मेल-मिलाप के पक्षधर थे। इस पक्षधरता का स्वर उनके साहित्य में पूरी तरह से खिलकर आया है। उन्होंने अपनी रचनाओं की प्रकृति, रचना-प्रक्रिया और अपने विचारों एवं विश्वासों के बारे में पुस्तकों की भूमिकाओं में बहुत–कुछ लिखा है, जो उनके साहित्य को समझने में सहायक है। आप भी उधर नज़र दौड़ाकर देखेंगे को बहुत कुछ खुद ही जान लेंगे। आप भी जान लेंगे कि इतिहास, संस्कृति, परंपरा और लोकवार्ता की भूमिका उनके दृष्टिकोण के निर्माण

का आधार है। वे जीवन और रचना कर्म दोनों में एक सुव्यवस्था, सुरुचि और सुघडता को आवश्यक मानते हैं।

सबसे पहले आप यह जान लें कि 1936 में आपका प्रथम एकांकी 'मेरी बांसुरी' का मंचन और सरस्वती पत्रिका में प्रकाशन भी हुआ। पाँच एकांकी नाटकों का संग्रह 'भोर का तारा' 1946 में प्रकाशित हुआ। इसके बाद 'ओ मेरे सपने' (1950), 'मेरे श्रेष्ठ रंग एकाँकी', कोणार्क (1951), बंदी (1954), "कुँवर सिंह की टेक' (1954), 'गगन सवारी' (1958), 'शारदीया' (1959), 'पहला राजा' (1959), दशरथनंदन (1974) के अलावा दो कठपुतली नाटक भी लिखे। 'दस तस्वीरें' और 'जिन्होंने जीना सीखा' में रेखाचित्र और संस्मरण हैं। 'परंपराशील नाट्य' (1960) उनकी समीक्षा दृष्टि का परिचायक है। 'बहुजन संप्रेषण के माध्यम' जनसंचार पर विशिष्ट पुस्तक और 'बोलते क्षण' निबंध संग्रह है।

बोध प्रश्न

- माथुर के लेखन - दृष्टिकोण का आधार क्या है?
- माथुर जी के प्रथम नाटक और पहले एकांकी के नाम प्रकाशन वर्ष के साथ बताइए।
- नाटककार के अतिरिक्त माथुर के कृतित्व के दूसरे पक्ष का परिचय क्या है?

13.3.3 नाटककार माथुर

जब जगदीशचंद्र माथुर ने नाटक लिखना शुरू किया, तब उन्हीं के शब्दों में, 'हिंदी रंगमंच लुप्तप्राय था' किंतु माथुर ने अपने नाटकों को रंग तत्व से भर कर पेश किया। आप गौर करें कि उनके लिखे संवाद चुस्त हैं और वे देखने वालों के मन को रमाने वाले हैं। वे रंग संकेतों का उपयोग कथन, व्याख्या और व्यंग्य के लिए भी करते हैं। नेपथ्य, मौन, खाली मंच, प्रकाश और अंधकार को भी वे बताते चलते हैं। रंगमंच के लिए लिखे गए इन एकांकियों में चरित्रों के व्यवहार, रंग वातावरण, दृश्य बिंब, गीत-संगीत सभी का प्रयोग कर दिखाया। संस्कृत और पाश्चात्य नाटकों के साथ लोकमंच और रेडियो-नाट्य शिल्प को मिलाकर माथुर ने अपने नाटकों और एकांकियों के लिए मंच तैयार किया।

गोविंद चातक के शब्दों में, उनमें गेहूं भी है और गुलाब भी; भोर का तारा भी है और दोपहर का प्रचंड सूर्य भी; आकाश का इंद्रधनुष भी है और धरती के आँसू भी; स्वप्न भी हैं और जागरण भी। उनमें प्रासंगिक अप्रासंगिक दोनों की पकड़ है।"

आप जानते ही हैं कि माथुर का बचपन गाँव जैसे उत्तर प्रदेश के एक कस्बे में बीता। इस वातावरण को वे तब भी देखते रहे जब बिहार गए। लोक जीवन और धरती से जुड़ने का प्रभाव आपकी रचनाओं पर पड़ना ही था। 'चाँद, तुम देर से उगे' और 'मसूरी में बादल' आदि ललित निबंधों में प्रकृति और वातावरण इसी की बदौलत है। 'शारदीया', 'खंडहर', 'बंदी' आदि कई नाट्य कृतियों में लेखन की दिल से निकली चाँदनी बिखरी पड़ी है। एक ही मिसाल देखें। 'खंडहर' में काफिलेवालों का गीत और उनकी मस्ती उनकी जिंदगी है । चाँदनी रात का लुत्फ उठाने वाला यूसुफ बिलकुल मामूली सा आदमी है। चपरासी है किंतु जब वह ख़ानाबदोश का लिबास पहन लेता है तो उसकी मस्ती परवान चढ़ती है। वह कुछ वक्त के लिए अपना ओहदा और हैसियत भूल जाता है और बोल पड़ता है, "आज हमको चपरासी मत बोलो। देखते नहीं यह

लिबास? खानाबदोश का लिबास। जश्न का लिबास। आज मैं जश्न पर जाऊँगा। आज चाँदनी है बाबू!" आम आदमी की हमेशा हर हालत में खुश रहने की ताकत को जगदीशचंद्र माथुर ने पहचाना और अपने नाटकों में पेश किया। माथुर ने लोकतंत्र में आम आदमी की शक्ति के महत्व को अपने नाटक की चेतना का आधार बनाया।

माथुर जी के नाटकों में कौतूहल और स्वच्छंद प्रेमाकुलता है। 'भोर का तारा' में कवि शेखर की भावुकता पर्यावरण में घटित करने या रचने का मोह भी प्रारंभ से मिलता है। वे समसामयिक को अनुभव के रूप में प्रस्तुत करते हैं। उनकी रचनात्मक संभावना का प्रमाण 'कोणार्क' में है। परंपरा को माध्यम और संदर्भ के रूप में प्रयोग करने की कला में माथुर सिद्दहस्त हैं। परंतु इसका तात्पर्य यह नहीं कि यही उनका सब कुछ है, बल्कि उन्होंने रीढ़ की हड्डी आदि कुछ ऐसे एकांकी भी लिखे जिनका संबंध समाज के भीतर के बदलते रिश्तों और मानवीय संबंधों से है। 'शारदीया' के सारे नाटकों में समस्या को व्यापक परिप्रेक्ष्य में रखकर देखने का आभास अवश्य है, परंतु समस्या का दायरा इतना छोटा है कि वह किसी व्यापक सत्य का आधार नहीं बन पाती। रामचरितमानस की मुख्य कथा के एक अंश पर आधारित 'दशरथनंदन' में माथुर ने दोहा-चौपाइयों को परस्पर जोड़ने के लिए गद्यात्मक संवादों का प्रयोग किया है। इस तरह के नाटक को माथुर यूरोप के गिरजाघरों में होनेवाले धार्मिक नाटक (पैशन प्ले) के जैसा मानते हैं।

वस्तुतः माथुर छायावादी संवेदना के रचनाकार हैं। यह संवेदना 'भोर का तारा' से लेकर 'पहला राजा' तक में कमोबेश मिलती है। यह अवश्य है कि यह छायावादिता नाटक के संस्कार और यथार्थ के प्रति गहरी दिलचस्पी के कारण 'कोणार्क' और 'पहला राजा' में काफ़ी दिखाई देती है।

'कोणार्क' माथुर जी के प्रतिनिधि नाटकों में से एक है। इतिहास, संस्कृति और समकालीनता मिलकर इस नाटक का ताना बाना बना है। आप कह सकते हैं कि इस नाटक का जन्म प्रसाद के नाटकीय वातावरण में हुआ। इसलिए इस नाटक को छायावादी रुझान का नाटक कहा जाता है किंतु इसमें प्रसाद की अतिशय भावुकता, दार्शनिकता, ऊहापोह, भाषा का बोझिलपन और कथानक और चरित्र की संकुलता नहीं है। इसमें यथार्थवाद का रचाव अधिक है। नाटककार माथुर इस नाटक के द्वारा अपनी कला-धारणा के द्वारा युग का सत्य प्रस्तुत करता है। घटना की तथ्यता और नाटकीयता के बावजूद इस नाटक के मुख्य पात्र महाशिल्पी विशु की चिंता और धर्मपद का साहसपूर्ण प्रयोग, व्यवस्था की अधिनायकवादी प्रवृत्ति से लड़ने और जूझने की प्रक्रिया एवं उसकी परिणति का संकेत नाटक को महत्वपूर्ण रचना बना देता है। इस नाटक में एक भी स्त्री पात्र नहीं है। नायिका सारिका कभी रंगमंच पर नहीं आती पर प्रेम सर्वत्र है। कल्पना की रचनात्मक सामर्थ्य और संस्कृति का समकालीन अनुभव कोणार्क की सफल नाट्य कृति का कारण है।विद्वानों का मानना है कि कोणार्क के अंत और घटनात्मक तीव्रता तथा परिसमाप्ति पर विवाद संभव है, परंतु उसके संप्रेषणात्मक प्रभाव पर प्रश्न चिह्न संभव नहीं है। इस प्रकार के कथनों की सच्चाई को जानने के लिए आपको इस नाटक को खुद पढ़ना होगा। तभी आप नृत्य ,गीत और वाद्य पर आधारित भारतीय परंपरा के इस नाटक का महत्व जान सकेंगे।

माथुर का दूसरा महत्वपूर्ण नाटक 'पहला राजा' है। 'पहला राजा' नाटक के रचना-विधान और वातावरण को 'माध्यम' और 'संदर्भ' में रूप में प्रयोग करके लेखक ने व्यवस्था और प्रजाहित के आपसी रिश्तों को मानवीय दृष्टि से व्याख्यायित करने का प्रयास किया है। स्पुतनिक, अपोलो आदि के प्रयोग के कारण समकालीनता का अहसास गहराता है। पृथु, उर्वी, कवष आदि का प्रयास और उसका परिणाम सब मिलकर नाटक की समकालीनता को बराबर बनाए रखते हैं। पृथ्वी की उर्वर शक्ति, पानी और फावड़ा-कुदाल आदि का उपयोग रचना के काल को स्थिर करता है। मिथकीय वस्तु का चुनाव, नवीन रंग कल्पना, प्रतीकात्मक चरित्र योजना, मुखौटों का कल्पनाशील प्रयोग और प्रकाश व ध्वनि की मौजूदगी से 'पहला राजा' हिन्दी नाट्य परंपरा में एक महत्वपूर्ण कृति है।

'परंपराशील नाट्य' महत्वपूर्ण समीक्षा-कृति है। इसमें लोक नाट्य की परंपरा और उसकी सामर्थ्य के विवेचन के अलावा नाटक की मूल दृष्टि को समझाने का प्रयास किया गया है। रामलीला, रासलीला आदि से संबद्ध नाटकों और उनकी उपादेयता के संदर्भ में परंपरा का समकालीन संदर्भ में महत्त्व और उसके उपयोग की संभावना भी विवेच्य है। 'दस तसवीरें' और 'इन्होंने जीना जाना है' रचनाकार के मानस पर प्रभाव डालने वाले व्यक्तियों की तस्वीरें और जीवनियाँ हैं, जिनका महत्त्व उनके रेखांकन और प्रभावांकन की दृष्टि से अक्षुण्ण है।

बोध प्रश्न

- माथुर ने अपने नाटकों के द्वारा आम आदमी को किस प्रकार चित्रित किया है?
- छायावाद का माथुर के प्रारम्भिक नाटकों पर क्या कुछ प्रभाव पड़ा?
- माथुर के नाटक प्रसाद के नाटक से भिन्न कैसे हैं?

13.3.4 एकांकीकार जगदीश चंद्र माथुर

हिंदी एकांकी को सही दिशा देने वालों में जगदीश चंद्र माथुर का भी शुमार है। भुवनेश्वर, गणेश प्रसाद द्विवेदी, उपेंद्रनाथ अश्क आदि के साथ-साथ वे भी इस कला में निपुण हैं। रामकुमार वर्मा ने एकांकी के प्रतिमान स्थापित किए। भुवनेश्वर ने समस्याओं और जीवन को दिखाया। उदय शंकर भट्ट ने भाव और विचार को जोड़ा। अश्क ने समाजिकता प्रदान की। माथुर ने इन सब के साथ उसे अनुभव की तीव्रता और गहरी सामजिकता दी। जगदीशचंद्र माथुर ने एकांकी कम लिखे हैं। उनका पहला एकांकी 1935 में आया था और 1973 तक कुल 12 एकांकी उन्होंने लिखे। ये सब एकांकी 'भोर का तारा' और 'ओ मेरे सपने' में प्रकाशित हुए हैं। इतने दिनों में इतने कम एकांकी लिखकर भी वे प्रसिद्ध हुए, यह बड़ी बात है।

आपके एकांकी जीवन की यथार्थ संवेदना को चित्रित करते हैं। व्यापक परिवतर्नों का प्रभाव मध्यवर्ग पर ज्यादा पड़ता है। आपके पात्र अपना स्वतंत्र व्यक्तित्व और चारित्रिक विशेषताएँ रखते हैं। इन विशेषताओं को अंकित करने में आपको पूरी सफलता प्राप्त हुई है। आपकी शैली मँजी हुई है। कथोपकथन सुगठित और सजीव हैं। कथोपकथनों के माध्यम से आप पात्रों की मानसिकता को व्यक्त करते हैं। कथोपकथन वातावरण के अनुकूल होते हैं।

माथुर के अधिकांश एकांकी सामाजिक जीवन से जुड़े हैं। ऐतिहासिक केवल तीन हैं - भोर का तारा, कलिंग विजय, विजय की बेला। उन्होंने खुद अपने एकांकियों के बारे में जो लिखा

है उसे आप न भूलें। यह समझने की कुंजी है, 'मौटे तौर पर मेरे एकांकियों को दो वर्गों में विभक्त किया जा सकता है, एक तो वे हैं जो घटना-प्रधान हैं (घोंसले, खिड़की की राह, रीढ़ की हड्डी, विजय की बेला) और दूसरे वे जो विचार प्रधान हैं (यथा मकड़ी का जाला,खंडहर , बंदी, कलिंग विजय) (देखें, मेरे श्रेष्ठ रंग-एकांकी, भूमिका)। माथुर जी कहा करते थे कि वे अपने एकांकी 'आवेश' में लिखते हैं। माथुर के एकांकियों में पहले दौर ('भोर का तारा' संग्रह) में आवेश अधिक है और दूसरे दौर ('ओ मेरे सपने' संग्रह) में नटखटपन ज्यादा है। माथुर ने इन्हें खुद नटखट एकांकी कहा है। ये प्रहसन जैसे हैं, मन बहलाते हैं। ऐसे नाटक जिनमें पात्रों के साथ कुछ छेड़छाड़, कुछ चुहल, कुछ शरारत तो की गई हो, लेकिन उनको बिल्कुल स्याह या बिल्कुल सफ़ेद न रंगा गया हो। 'केरिकेचर' शब्द इन नटखट एकांकियों की सही व्याख्या करता है। उदाहरण के लिए 'ओ मेरे सपने' एकांकी में उन लड़कों का चित्र है जो हर वक्त फिल्मों और हीरो-हीरोइनों के बारे में सोचते रहते हैं।

विमल : सुनिए , जैसे भक्त लोग अपने इष्ट देव का ध्यान करके शांति पाते हैं , वैसे ही आप लोग भी ध्यान कीजिए किसी न किसी फिल्मी-हीरो का। जरूर शांति और हिम्मत मिलेगी। कीजिए ध्यान!

जगदीशचंद्र माथुर के एकांकियों में उस दुविधा की छाप है जो मध्य वर्ग के शिक्षित समुदाय को ग्रामीण जीवन के विकास को लेकर रही है। माथुर जी के मन में ग्रामीण, अनपढ़ और अशिक्षित वर्ग के लिए बहुत आदर और प्रेम रहा है। गाँव के जीवन और उनके संगीत-कला आदि को वे अपने एकांकियों में दिखाते हैं। उदाहरण के लिए 'बंदी', 'खंडहर', 'विजय की बेला' आदि एकांकियों में चेतू, अमीना, कंछी, भीमा, मैकू आदि पात्र सामान्य और उपेक्षित वर्ग के हैं और इन एकांकियों में आकर वे हमारे दिल को छू जाते हैं। इन्हीं गौण या सामान्य पात्रों के माध्यम से माथुर अपने नाटकों और एकांकियों में प्रभाव पैदा करते हैं। उदाहरण के लिए 'रीढ़ की हड्डी' एकांकी के अंत में मूर्ख नौकर के अंतिम शब्द 'बाबूजी मक्खन' सारे एकांकी का सूत्र वाक्य है। बंदी' में चेतराम का संवाद 'लोचन भैया, आप तस्वीर से बात कर रहे हैं!' एकांकी के सारे अर्थ को खोल कर रख देता है। 'भाषण' का भोला सिंह भी दूसरे पात्रों को आईना दिखाता है। माथुर के नाटकों और एकांकियों में उल्लास और खुशी का स्वर इन्हीं सीधे सच्चे लोगों से आया है।

बोध प्रश्न

- माथुर के एकांकियों के दो प्रमुख वर्ग क्या हो सकते हैं?
- नटखट एकांकियों से क्या अभिप्राय है?
- आवेश में एकांकी लिखने का क्या परिणाम हो सका है?

13.3.5 जगदीशचंद्र माथुर मूल्यांकन

क्या जगदीशचंद्र माथुर आदर्शवादी हैं? या केवल यथार्थवादी? या दोनों? जब हम उनके नाटकों के कुछ पात्रों को देखते हैं तो लगता है वे आदर्शवादी हैं। उनमें जिजीविषा और पुरुषार्थ कूट कूट कर भरें हैं, उनमें अध्यवसाय, त्याग, आस्था, दृढ़ता और पुरुषार्थ जैसे अनेक गुण हैं। कोणार्क, 'शारदीया', 'पहला राजा' आदि में आदर्श प्रधान है। 'रीढ़ की हड्डी', 'विजय की बेला',

'भोर का तारा' एकांकियों में भी आदर्श की प्रधानता दिखाई देती है । किन्तु उनका यह आदर्श यथार्थ की गोद से निकला है। उन्होंने अफ़सरियत के बावजूद इस दुनिया को देखा, समझा और परखा। उनके नाटकों, चरित लेखों और ललित निबंधों में ढेर सारी चाँदनी और फूल भी हैं। आदर्श और यथार्थ के साथ प्रकृति की सुंदरता का मेल है।

जगदीशचंद्र माथुर का हिंदी रंगमंच के लिए योगदान और लेखन आपको एक नहीं कई कारणों से महत्वपूर्ण लगेगा। एक तो उन्होंने पश्चिम की रंगपरंपरा का आँख मूंदकर अनुकरण नहीं किया। बल्कि वहाँ उपलब्ध ऐसे तत्वों की खोज की जो भारतीय रंग परंपरा के विकास के लिए नया रूप धर सकते थे। आप को यदि माथुर जी की अँग्रेजी-पुस्तक 'ड्रामा इन रूरल इंडिया', 'प्राचीन भाषा नाटक संग्रह' और 'परंपराशील नाट्य' जैसी पुस्तक पढ़ने का अवसर मिले तो आप बड़ी आसानी से कह सकते हैं कि माथुर जी ने समकालीन हिंदी रंगमंच के विकास और विश्लेषण के लिए आधार सामग्री हमें दी है। इन पुस्तकों में हमारी रंग सम्पदा का परिचय है और उसका विमर्श भी। भारतीय रंगमंच के लिए उनका सारा ज़ोर 'विविधता' पर है। 'कोणार्क' नाटक के परिशिष्ट (दो) में इस बात को माथुर ने जो लिखा है, उसे आप ध्यान से पढ़ें, "एक भाषा, एक राष्ट्र, एक शिक्षा प्रणाली, और एक संस्कृति, यह नारा विभिन्न देशों और विभिन्न युगों में उठाया जाता रहा है और आज भारत में भी इसकी गूंज है। किंतु और क्षेत्र में इसका जो भी फल हो, सांस्कृतिक विकास के लिए यह सौदा महंगा ही बैठता है। स्वाधीन भारत के लिए राजनैतिक एकता की जरूरत है, किंतु भारतीय संस्कृति के लिए विविधता अपेक्षणीय है।"

बोध प्रश्न

- माथुर जी के नाटक हमारी संस्कृति की विविधता की पहचान कैसे हैं?
- माथुर के एक-एक आदर्शप्रधान और एक-एक यथार्थप्रधान नाटक-एकांकी का नामोल्लेख कीजिए।

13.4 पाठ का सारांश

जगदीशचंद्र माथुर एक सुशिक्षित और संवेदनशील व्यक्ति, प्रतिभाशाली लेखक और नाटककार हैं। आई. सी. एस. की परीक्षा 1941 में पास करके आपने संस्कृतिकर्मी प्रशासक के रूप में अपना सिक्का चलाया। प्रशक्षण के लिए अमेरिका गए। बिहार के शिक्षा सचिव रहते हुए 1944 में बिहार में वैशाली महोत्सव प्रारंभ कराया। सूचना और प्रसारण मंत्रालय में रहते हुए 'आकाशवाणी' और 'दूरदर्शन' का नामकरण किया। 1936 में प्रथम एकांकी के प्रकाशन से 'दशरथनंदन' (1974) तक खूब लेखन किया। इतिहास, संस्कृति, परंपरा और लोकवार्ता से प्रेरणा लेते हुए उन्होंने कई नाटक और एकांकी लिखे। ये सब स्टेज पर खेलने लायक नाटक थे। इनमें आम आदमी के सरोकार हैं। आपने लोकतंत्र में आम आदमी की ताकत को अपने एकांकी और नाटक की चेतना का आधार बनाया। श्री माथुर के लेखन का दायरा चाहे बहुत बड़ा नहीं किंतु निगाह बहुत पैनी है। आपके नाटकों की चरित्र-सृष्टि का आधार कल्पना नहीं यथार्थ है। यथार्थ से आपने अपने पात्रों के लिए एक अचरज भरा नाट्य-संसार निर्मित किया है। इसलिए आपके नाटकों में इतिहास और मिथक के साथ-साथ यथार्थ और आम आदमी की जद्धोजहद दोनों हैं। माथुर के नाटकीय पात्र युग भावना के प्रतिनिधि हैं ।पात्रों की संख्या कम ही है पर जो भी और

जितने भी पात्र हैं वे सब बेहतरीन हैं। उनके लेखन में कहीं भी संकीर्णता नहीं, औछापन नहीं। उनके ललित व्यक्ति व्यंजक निबंध भी महत्वपूर्ण हैं जिनमें व्यक्ति-भाव और वस्तु की प्रधानता है। उनके लेखन की प्रयोगधर्मी चेतना भारतीय रंगमंच के विकास के लिए आज भी हमारी मददगार हैं।

13.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं -

1. जगदीश चंद्र माथुर ने हिंदी नाटकों और एकांकियों के लेखन द्वारा रंगमंच को नई दिशा दी।
2. आज़ादी से पहले ही देश की प्रशासनिक सेवा में आने से और आज़ादी के बाद देश के नव निर्माण में उल्लेखनीय योगदान दिया।
3. 'आकाशवाणी' और 'दूरदर्शन' का नामकरण तो किया ही इनको नई ऊंचाइयों तक भी पहुंचाया।
4. उत्तर प्रदेश में बचपन बिताकर और उच्च अँग्रेजी शिक्षा प्राप्त करके बहुत समय तक बिहार में प्रशासन संभाला और साथ ही लेखन कार्य किया।
5. नाटककार और एकांकीकार के रूप में ही नहीं गद्य की अनेक विधाओं में लेखन करके अपनी मौजूदगी दर्ज़ कराई।
6. 'कोणार्क' आदि सामाजिक-सांस्कृतिक नाटकों और 'रीढ़ की हड्डी' जैसे सामाजिक यथार्थवादी
7. एकांकियों को रचकर जगदीश चंद्र माथुर ने अपने प्रयोगवादी स्वरूप को भी कायम रखा।
8. इनके लेखन के केंद्र में देश और देश का आम आदमी सदा रहा।
9. माथुर ने रंगमंच परंपरा को सिद्धांत और व्यवहार दोनों दृष्टियों से समृद्ध किया।

13.6 शब्द संपदा

1. अक्षुण्ण = अखंडित, समूचा,अविजित
2. उर्वर = उपजाऊ, जिससे बहुत से विचार निकलें (जैसे-उर्वर मस्तिष्क)
3. ऊहापोह = अनिश्चय की स्थिति में मन में उत्पन्न होनेवाला तर्क-वितर्क, विचार-द्वंद्व
4. ख़ानाबदोश = जिसका ठौर-ठिकाना न हो, यायावर
5. जिजीविषा = जीने की प्रबल इच्छा, सहयोग देना या ढांढस बढ़ाना,
6. दुविधा = असमंजस, पशोपेश, अनिर्णय
7. द्विआयामी = दो पक्षों वाला
8. नेपथ्य = रंगमंच के पर्दे के पीछे की जगह
9. पुनर्जागरण = पुनर्जागरण एक फ्रेंच शब्द (रेनेसाँ) का रूपान्तरण है, जिसका सामान्य शाब्दिक अर्थ है- 'फिर से जागना'।
10. शुचिता = शुचि या पवित्र होने का भाव, निष्कपटता
11. संकीर्णता = संकीर्ण होने का भाव, ओछापन, क्षुद्रता, नीचता, अनुदारता
12. स्वच्छंद = मनमाना, स्वइच्छानुकूल आचरण करनेवाला

13.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. नाटककार जगदीश चंद्र माथुर के व्यक्तित्व और कृतित्व का परिचय अपने शब्दों में दीजिए।
2. जगदीश चंद्र माथुर की कुछ नाट्य कृतियों का उल्लेख करते हुए बताइए कि वे एकांकीकार बेहतर हैं या नाटककार?
3. यथार्थवादी नाटककार के रूप में जगदीशचंद्र माथुर का योगदान और स्थान निर्धारित कीजिए।
4. अन्य नाटककारों से माथुर किस प्रकार भिन्न हैं? तर्क सहित उत्तर दीजिए।
5. "माथुर के रचनात्मक कर्म के केंद्र में आम आदमी और उसके सरोकार हैं" इस कथन की समीक्षा कीजिए।
6. जगदीशचंद्र माथुर के कुछ ऐतिहासिक नाटकों का उल्लेख करते हुए उनकी श्रेष्ठता प्रतिपादित कीजिए।
7. "हिंदी रंगमंच के लिए जगदीश चंद्र माथुर का योगदान अविस्मरणीय है।" इस कथन के आलोक में उनके रचनाकर्म की समीक्षा कीजिए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. माथुर द्वारा लिखित नटखट एकांकियों की विषय वस्तु का परिचय दीजिए।
2. सूचना और संचार क्रांति के क्षेत्र में जगदीशचंद्र माथुर के योगदान को रेखांकित कीजिए।
3. माथुर के नाटक घटना प्रधान हैं या विचार प्रधान या दोनों? सप्रमाण उत्तर दीजिए।
4. जगदीशचंद्र माथुर के नाटकों की भाषा शैली पर सारगर्भित टिप्पणी कीजिए।
5. अन्य नाटककारों की तुलना में जगदीशचंद्र माथुर कैसे भिन्न हैं? विवेचना कीजिए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. यह जगदीश चंद्र माथुर का नाटक या एकांकी नहीं है - ( )
   (अ) भोर का तारा (आ) दस तस्वीरें (इ) कोणार्क (ई) शारदीया
2. माथुर के व्यक्तित्व पर सबसे अधिक प्रभाव किसका पड़ा? ( )
   (अ) पृथ्वीराज कपूर का (आ) जयशंकर प्रसाद का (इ) माथुर के पिता का (ई) किसी का नहीं
3. इनमें से किनका शुमार हिन्दी एकांकी को सही दिशा देने वालों में है? ( )
   (अ) गणेश प्रसाद द्विवेदी (आ) जगदीश चंद्र माथुर (इ) उपेंद्र नाथ अश्क (ई) इन सबका
4. 'केरिकेचर' का प्रयोग माथुर ने अपने किन एकांकियों के लिए किया है? ( )
   (अ) आदर्श एकांकियों के लिए (आ) नटखट एकांकियों के लिए

(इ) घटना-प्रधान एकांकियों के लिए (ई) इनमें से किसी के लिए नहीं

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. जगदीशचंद्र माथुर के बचपन का कुछ आभास उनके द्वारा लिखित दो आलेखों .... और .... में मिलता है।
2. 'मौटे तौर पर माथुर के एकांकियों को दो वर्गों में विभक्त किया जा सकता है, एक तो वे हैं जो .... हैं और दूसरे वे जो .... हैं।
3. माथुर ने लोकतन्त्र में .... की शक्ति के महत्व को अपने नाटक का आधार बनाया।
4. माथुर द्वारा रचित रामचरितमानस की मुख्य कथा के एक अंश पर आधारित नाटक .... है।
5. माथुर ने .... और .... का नामकरण तो किया ही इनको नई ऊंचाइयों तक भी पहुंचाया।
6. प्रयोगशील नाटक लिखने की पहल जगदीशचंद्र माथुर ने अपने नाटक .... से की।

III. सुमेल कीजिए -

1. भोर का तारा, कलिंग विजय, विजय की बेला	(अ) नटखट एकांकी
2. सरस्वती, चाँद, रूपाभ	(आ) ऐतिहासिक नाटक
3. बाल सखा , शिवाजी,प्रयाग की सेवा	(इ) आदर्श प्रधान नाटक
4. कोणार्क, 'शारदीया', 'पहला राजा'	(ई) अभिनीत एकांकी
5. ओ मेरे सपने	(उ) साहित्यिक पत्रिकाएँ

13.8 पठनीय पुस्तकें

1. हिन्दी साहित्य कोश भाग-2 : धीरेन्द्र वर्मा
2. नाटककार जगदीश चंद्र माथुर : गोविंद चातक

इकाई 14 : रीढ़ की हड्डी : तात्विक विवेचन

रूपरेखा

14.1 प्रस्तावना
14.2 उद्देश्य
14.3 मूल पाठ : रीढ़ की हड्डी : तात्विक विवेचन
14.3.1 एकांकी का वाचन
14.3.2 कथावस्तु
14.3.3 चरित्र चित्रण
14.3.4 भाषा शैली
14.4 पाठ सार
14.5 पाठ की उपलब्धियां
14.6 शब्द संपदा
14.7 परीक्षार्थ प्रश्न
14.8 पठनीय पुस्तकें

14.1 प्रस्तावना

आधुनिक गद्य साहित्य की परंपरा का प्रवर्तन नाटकों से हुआ। हिन्दी क्षेत्र में जिन नाटककारों ने बलपूर्वक रंगमंच के लिए नाटक लिखने का प्रयास किया उनमें जगदीश चंद्र माथुर का नाम अग्रगण्य है। उन्होंने नाटक को महज़ किताब की तरह से नहीं लिया बल्कि रंगमंच को सक्रिय करने के लिए अनेक एकांकी नाटक लिखे। एक अंक वाले नाटकों को एकांकी कहते हैं। अंग्रेजी के 'वन एक्ट प्ले' शब्द के लिए हिंदी में 'एकांकी नाटक' और 'एकांकी' दोनों ही शब्दों का समान रूप से व्यवहार होता है। पिछली इकाई में आपने माथुर जी के सर्जनात्मक व्यक्तित्व से परिचय प्राप्त किया। इस इकाई में आप जगदीश चंद्र माथुर के एकांकी 'रीढ़ की हड्डी' का वाचन और तात्विक विवेचन करेंगे। आप देखेंगे कि विषय तथा प्रस्तुति की दृष्टि से यह एकांकी कुछ अलग है और जो भी इसे पढ़ता है वह कभी भूल नहीं सकता। यह एकांकी किसी पुरानी कहानी पर नहीं बल्कि आज के जमाने की आम घटना पर आधारित है। पर यह भी ध्यान रहे कि ये आज का जमाना इक्कीसवीं शताब्दी का नहीं बल्कि देश की आज़ादी से पहले का है। यह एकांकी माथुर जी ने 'भोर का तारा' नामक एकांकी संग्रह से लिया गया है। इस संग्रह में उनके 1934 से 1943 तक लिखे गए पाँच एकांकी संकलित हैं। यह एकांकी एक सामाजिक नाटक है। इस नाटक में समाज की उस मनोवृत्ति की आलोचना की गई है जो स्त्री को पुरुष से कमतर समझती है। स्त्री पुरुष की बराबरी को रेखांकित करते हुए इस एकांकी का प्रभाव आप भी महसूस करेंगे।

14.2 उद्देश्य

प्रिय छात्रो! इस इकाई को पढ़ने के बाद आप -

- जगदीशचंद्र माथुर के एकांकी 'रीढ़ की हड्डी' के प्रतिपाद्य से परिचित हो सकेंगे।
- इस एकांकी की कथा वस्तु और मंतव्य से अवगत हो सकेंगे।
- एकांकी-कला के आलोक में 'रीढ़ की हड्डी' की तात्विक विशेषताओं को समझ सकेंगे।
- इस एकांकी में निहित नाटककार की रचनात्मकता के विविध पक्षों की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

14.3 मूल पाठ

14.3.1 एकांकी का वाचन

जगदीशचंद्र माथुर के एकांकी नाटक 'रीढ़ की हड्डी' हिंदी का ऐसा प्रसिद्ध नाटक है जिसका शुमार स्कूली पाठ्य पुस्तकों से लेकर विश्वविद्यालयों के पाठ्यक्रमों में भी है। यह एकांकी लड़की के विवाह की सामाजिक समस्या को पेश करता है। इस एकांकी में कुल छह पात्र हैं - रामस्वरूप, उनका नौकर रतन, रामस्वरूप की पत्नी प्रेमा, उनकी सुपुत्री उमा, शंकर के पिता गोपाल प्रसाद तथा शंकर। संपूर्ण एकांकी एक मामूली से सजे कमरे में खेला गया है। उमा को देखने के लिए गोपाल प्रसाद और उनका लड़का शंकर आने वाले हैं। यहाँ से एकांकी शुरू होता है। रामस्वरूप और रतन कमरे को सजाने में लगे हैं। तभी प्रेमा आती है और बताती है कि बेटी उमा मुँह फुलाए पड़ी है और अपने आप को मेक-अप आदि से तैयार करने से सख्त एतराज है। वह बी. ए. तक पढ़ी है, पर उसके माता पिता उसे केवल दसवीं तक पढ़ी बताते हैं। वजह यह है कि लड़के वाले ज्यादा पढ़ी लिखी लड़की से घबराते हैं। उधर रामस्वरूप नौकर को मक्खन लाने भेजते हैं, इधर गोपाल प्रसाद अपने पुत्र शंकर के साथ आते हैं। औपचारिक दुआ-सलाम के बाद रामस्वरूप और गोपाल प्रसाद बैठकर अपने जमाने की तुलना नए जमाने से करते हैं। फिर गोपाल प्रसाद अपनी आवाज़ और टोन बदलकर मतलब की बात पर आ जाते हैं, "अच्छा तो साहब 'बिजनेस की बातचीत की जाए।" वे शादी-ब्याह के मसले को बिजनेस मानते हैं। रामस्वरूप बेटी को बुलाने के लिए जाते हैं तब गोपाल प्रसाद अपने बेटे शंकर से एक तो यह कहते हैं कि उन्हें रामस्वरूप हैसियत वाला दिखाई देता है। दूसरे वे अपने बेटे को झुककर बैठने के लिए फटकारते हैं। वे लड़के-लड़की की जन्मपत्रियों को मिलाने से अधिक पढ़ाई लिखाई पर ज़ोर देते हैं। पर वे लड़के को अधिक और लड़की को मामूली पढ़ा-लिखा चाहते हैं। लड़की का नौकरी करना भी उन्हें पसंद नहीं।

उमा आती तो वैसे ही सर झुकाकर है किंतु उसके चश्मा लगाकर आने से उन्हें उमा के पढ़े लिखे होने का संदेश होता है। गोपाल प्रसाद उमा की चाल, चेहरे की छवि देखते हुए गाने बजाने के बारे में भी पूछते हैं। वह सितार बजाती है और जैसे ही उसकी नज़र शंकर पर पड़ती है वह उस लंपट को पहचान जाती है। वह सितार बजाना बंद कर देती है। बातचीत के दौरान वह हल्की पर मजबूत आवाज में अपने पिता के क्रोधित होने के बावजूद लड़की देखने दिखाने के

सारे नाटक को सख्त नापसंद करती है। अपनी नापसंदगी जाहिर करते हुए वह बता देती है कि शंकर आवारा किस्म का लड़का है जो उसके कॉलेज हॉस्टल के इर्द गिर्द चक्कर लगाता पकड़ा जा चुका है। पीटा जा चुका है। उमा कॉलेज में पढ़ी है सुनते ही गोपाल प्रसाद अपने बेटे के साथ उठ खड़े होते हैं और उमा को यह कहते हुए सुन ही लेते हैं, 'जाइए, जरूर जाइए। घर जाकर ज़रा यह पता लगाइए कि आपके लादले बेटे की रीढ़ की हड्डी है भी या नहीं।"

यहाँ आपको इस एकांकी का मूल पाठ नहीं दिया जा रहा। बस एकांकी का कथा सार इस प्रकार दिया गया है कि आप इसके कुछ महत्वपूर्ण संवादों को भी जान लें।

बोध प्रश्न

- उमा लड़की देखने दिखाने के सारे नाटक को नापसंद क्यों करती है?

14.3.2 कथावस्तु

गोपाल और उनके पुत्र शंकर उमा को देखने आते हैं। देखने आने का कारण यह है कि उमा के पिता राम स्वरूप ने अपनी पुत्री उमा का विवाह किसी सुयोग्य वर से करने का संकल्प लिया है। बाबू राम स्वरूप और उनकी पत्नी प्रेमा घर सजाने में लगे हैं। उनका नौकर रतन कमरे को सजाने सँवारने में लगा है। बाबू साहब उसको निर्देश देते जा रहें हैं। तभी घर की मालकिन उनकी पत्नी उमा आती हैं। उनका रंग गंदुमी है और कद छोटा। बाबू राम स्वरूप से उनकी पत्नी प्रेमा बता देती है कि जिसकी शादी के लिए लड़का उसे देखने आ रहा है वह तो मुँह फैलाए पड़ी है। नाराज है। पिता इसके लिए उमा की माँ को ही इसका कुसूरवार मानते हैं। इस पर प्रेमा अपने पति से कह देती है, "तुम्हीं ने उसे पढ़ा-लिखाकर इतना सिर चढ़ा रखा है। मेरी समझ में तो ये पढ़ाई लिखाई के जंजाल आते नहीं। अपना ज़माना अच्छा था। 'आ ई' पढ़ ली, गिनती सीख ली और बहुत हुआ तो 'स्त्री-सुबोधिनी' पढ़ ली। सच पूछो तो 'स्त्री-सुबोधिनी' में ऐसी-ऐसी बातें लिखी हैं- ऐसी बातें कि क्या तुम्हारी बी.ए., एम.ए. की पढ़ाई होगी और आजकल के तो लच्छन ही अनोखे हैं...।"

बोध प्रश्न

- घर के लोग किस अतिथि की तैयारी में लगे हैं?
- प्रेमा का स्त्री- शिक्षा के प्रति दृष्टिकोण है?
- प्रेमा और रामस्वरूप का नीचे दिया गया संवाद किस बात का सूचक है?

  प्रेमा : लेकिन वह तुम्हारी लाड़ली बेटी तो मुँह फुलाए पड़ी है।

  रामस्वरूप : मुँह फुलाए? - और तुम उसकी माँ किस मर्ज की दवा हो? जैसे-जैसे करके तो वे लोग पकड़ में आए हैं। अब तुम्हारी बेवकूफी से सारी मेहनत बेकार जाए तो मुझे दोष मत देना।

14.3.3 चरित्र चित्रण

इस बात को सुनकर पति पत्नी को ग्रामोफोन का बाजा कहकर ठिठोली करते हैं। वे औरतों की तुलना अनवरत बजते चले जाने वाले ग्रामोफोन बाजे से करते हैं। हँसी में ही सही, पर यह पुरुषवादी मानसिकता को प्रकट तो करता ही है।

उमा घर के किसी कोने में नाराज़ हुए बैठी है। उसे बेकार की टीम टाम अर्थात मेकअप से नफरत है। वह आजकल की फैशनपरस्त लड़की नहीं। दूसरे वह ग्रेजुएट है।इसलिए वह देखने दिखाने और सजने सँवरने से नफरत करती है। वह आजकल की लड़कियों की तरह नहीं जिनके सहारे पाउडर का कारोबार चलता है। रामस्वरूप अपनी पत्नी प्रेमा को सावधान कर देते हैं कि वे अपनी जुबान पर काबू रखेंगी और बेटी की ऊंची पढ़ाई लिखाई के बारे में कोई जिक्र न करेंगी। सब कुछ तैयार हो जाता है। मक्खन नहीं है सो उसे लेने के लिए नौकर भेज दिया जाता है।

बोध प्रश्न

- प्रेमा के इस कथन से समाज की किस दक़ियानूसी विचारधारा का पता चलता है?
- "अरे, मैंने पहले ही कहा था इण्ट्रेंस ही पास करा देते - लड़की अपने हाथ में रहती, और उतनी परेशानी उठानी न पड़ती।"

प्रेमा को बाबू रामस्वरूप बता देते हैं कि बाबू गोपाल प्रसाद और उनका बेटा शंकर दक़ियानूसी ख्यालों के हैं। खुद पढे लिखे हैं। वकील हैं, सभा-सोसाइटियों में जाते हैं, मगर दक़ियानूसी भी हैं। उनका लड़का बी एस सी कर चुका है, पर है वह भी अपने पिता की तरह दक़ियानूसी। वह कहता है 'शादी का सवाल दूसरा है, तालीम का दूसरा"।

बाबू गोपाल प्रसाद और उनके लड़के शंकर आते हैं। नौकर जो अभी मक्खन लाने न गया था वह भेजा जाता है। प्रेमा को भी समझा दिया जाता है कि उमा को कैसे व्यवहार करना है और क्या-क्या करना है।

गोपाल प्रसाद की आँखों से चतुराई टपकती है। उनकी आवाज से ही पता चल जाता है कि वे काफी अनुभवी और फितरती महाशय हैं। उनका लड़का शंकर कुछ खीसे निपोरने वाला नौजवान है। उसकी आवाज पतली और खिसियाहट भरी है। चतुराई का आलम यह है कि वह अपने पुराने जमाने की बात चीत या उस तथाकथित रंगीन जमाने की याद केवल मुद्दे पर आने के लिए करता है। और यक ब यक 'बिजनेस' की बात पर आ जाता है। 'खूबसूरती पर टैक्स'लगाने की तजवीज करता है। और अपने बेटे को तन कर बैठने की हिदायत देता है। खूबसूरती वह अपने बेटे की बहू में भी देखना चाहता है। चाहे वह टिपटॉप करने से आए। किंतु वह लड़की चाहता है मामूली पढ़ी-लिखी। वह लड़की के नौकरी करने को भी ठीक नहीं मानता। बातचीत और नाश्ते के इस दौर में कुछ बातें बेबाकी से होती हैं और कुछ दबी आवाज में। गोपाल प्रसाद अपने बेटे से कहते हैं, "आदमी तो भला है। मकान वकान से हैसियत भी बुरी नहीं मालूम होती। पता चले, लड़की कैसी है।" दबी जुबान से मगर जरा डपटते हुए वे बेटे को भी कह देते हैं, "झुककर क्यों बैठते हो? ब्याह तय करने आए हो, कमर सीधी करके बैठो। तुम्हारे दोस्त ठीक कहते हैं कि शंकर की बैकबोन...।" वे इस बात की कम परवाह करते हैं कि कुंडली मिलाई जाए पर लड़की का अधिक पढ़ा-लिखा होना उनकी निगाह में गैर-जरूरी है।

वह स्पष्ट कह देता है, "अरे मर्दों का काम तो है ही पढ़ना और काबिल होना, अगर औरतें भी वह करने लगीं, अँग्रेजी अखबार पढ़ने लगीं और 'पालिटिक्स' वगैरह की बहस करने लगीं तब

तो हो चुकी गृहस्थी। जनाब, मोर के पंख होते हैं मोरनी के नहीं, शेर के बाल होते हैं, शेरनी के नहीं।”

गोपाल प्रसाद के इस कथन से पता चलता है कि वह शिक्षित स्त्रियों के सख्त खिलाफ है। वह अपने बेटे के लिए अधिक पढ़ी लिखी पत्नी नहीं चाहता।

बोध प्रश्न

- 'गुस्सा तो मुझे आता है इनके दक़ियानूसी ख्यालों पर' किनके दक़ियानूसी ख्यालों पर किसे गुस्सा आता है?
- 'बिजनेस' की बात से क्या अभिप्राय है। इससे वक्ता के चरित्र का क्या परिचय मिलता है?
- “जनाब, मोर के पंख होते हैं मोरनी के नहीं, शेर के बाल होते हैं, शेरनी के नहीं।” आखिर यहाँ यह कहा क्या जा रहा है?
- गोपाल प्रसाद और शंकर के व्यक्तित्व का परिचय देने के लिए प्रयोग किए गए दो-दो विशेषणों को बताइए।

पान की तश्तरी लेकर उमा कमरे में आती है। इसकी सादगी और झुकी हुई गर्दन से अधिक उसके चश्मे पर दोनों की निगाह ठहर जाती है। उमा चश्मा लगाए जब कमरे में आती है तो उसे देखकर उसके पढ़े-लिखे होने का शक होता है। पर उसके पिता बात को टाल जाते हैं। वह सितार बजाकर एक भक्ति गीत भी गाती है। इस पर सब खुश हो ही रहें होते हैं कि लड़के लड़की की नज़र आपस में टकरा जाती है। वे एक दूसरे को पहचान जाते हैं। वह तो चुप बैठी रहती है पर उसके पिता उसकी तरफ से सब सवालों का जवाब देते चले जाते हैं। पिता द्वारा कहने पर भी वह जवाब नहीं देती। बस हल्की लेकिन मजबूत आवाज में कहती है, “क्या जवाब दूँ बाबू जी! जब कुर्सी मेज बिकती है तब दुकानदार कुर्सी-मेज़ से कुछ नहीं पूछता, सिर्फ खरीदार को दिखला देता है। पसंद आ गई तो अच्छा है वरना ...”

"अब मुझे कह लेने दीजिए बाबू जी! ये जो मेरे खरीदार बनकर आए हैं, इनसे जरा पूछिये कि क्या लड़कियों के दिल नहीं होता? क्या उनके चोट नहीं लगती? क्या वे बेबस भेड़ बकरियाँ हैं जिन्हें कसाई अच्छी तरह देख-भाल कर खरीदते हैं।"

पिता को बेटी से ऐसे जवाब की उम्मीद न थी। वे चौंककर खड़े हो जाते हैं। अभी उमा ने बात पूरी न की थी। वह बता देती है कि शंकर लड़कियों के हॉस्टल के इर्द-गिर्द घूमता है और उसे इसके लिए दंडित किया गया था। वह बता देती है कि उसकी शिक्षा बी.ए. तक हुई है और वह यह भी बता देती है कि शंकर को वे नौकरानी के पैरों पर गिरकर माफी मांगते देख चुकी हैं। “जी हाँ, कॉलेज में पढ़ी हूँ? मैंने बी.ए. पास किया है। कोई पाप नहीं किया, कोई चोरी नहीं की, और न आपके पुत्र की तरह तक-झांक कर कायरता दिखाई है। मुझे अपनी इज्जत, अपने मान का ख्याल तो है। लेकिन इनसे पूछिए कि ये किस तरह नौकरानी के पैरों को पड़कर अपना मुँह छिपाकर भागे थे।”

इस पर और क्या होता? गोपाल जी क्रोधित हो गए। रंग में भंग हुआ। चलने लगे। उमा ने फिर भी उन्हें सुना ही दिया। “जी हाँ, जाइए, जरूर चले जाइए। लेकिन घर जाकर यह पता लगाइएगा कि आपके लाडले बेटे के रीढ़ की हड्डी भी है या नहीं - यानी बैक बोन, बैक बोन!”
इस एकांकी का यह आँखें खोल देने वाला पटाक्षेप है। उमा अपनी शैक्षिक योग्यता पर गर्व करती है और शंकर की बेबसी और खिसियानेपन पर उसे दया आ जाती है। नौकर रतन मक्खन लेकर आ जाता है। एकांकी तो यहाँ समाप्त हो जाता है पर कुछ प्रश्न छोड़ जाता है जो समाज को बेहतर बनाने के लिए जवाब मांगते हैं।

बोध प्रश्न

- “क्या जवाब दूँ बाबू जी! जब कुर्सी मेज बिकती है तब दुकानदार कुर्सी-मेज़ से कुछ नहीं पूछता , सिर्फ खरीदार को दिखला देता है। पसंद आ गई तो अच्छा है वरना ...” उमा के इस कथन का क्या मतलब है?
- "अब मुझे कह लेने दीजिए बाबू जी! ये जो मेरे खरीदार बनकर आए हैं, इनसे जरा पूछिये कि क्या लड़कियों के दिल नहीं होता? क्या उनके चोट नहीं लगती? क्या वे बेबस भेड़ बकरियाँ हैं जिन्हें कसाई अच्छी तरह देख-भाल कर खरीदते हैं " उमा को यह सब क्यों बोलना पड़ा?

14.3.3 चरित्र चित्रण

‘रीढ़ की हड्डी’ जगदीश चंद्र माथुर द्वारा लिखित सामाजिक यथार्थवादी एकांकी है। वह एकांकी आपने अब तक पढ़ लिया होगा। नहीं पढ़ा तो अब जरूर पढ़ लें। आप जानते ही हैं कि जिस्म को मजबूत और तंदरुस्त बनाए रखने के लिए रीढ़ की हड्डी का सीधा होना जरूरी है। इसे तना रखना जरूरी है। इसलिए यह एक मुहावरा बन गया। माथुर जी ने इस नाटक में इस मुहावरे के इर्द गिर्द एक कहानी बुनी। यह बताने की कोशिश की कि वह आदमी अच्छा है जो अपनी रीढ़ की हड्डी सीधी रखते हैं। अमिताभ बच्चन के पिता श्री हरिवंशराय बच्चन की एक कविता है - रीढ़ की हड्डी। इस कविता की टेक है - मैं हूँ उनके साथ, खड़ी जो सीधी रखते अपनी रीढ़। स्वाभिमान, स्वावलंबन, साहस और त्याग के गुणों से भरे आदमी को आप ऐसा व्यक्ति कह सकते हैं जो रीढ़ की हड्डी को तनी हुई रखता है। इस एकांकी का युवक शंकर ऐसा नहीं है और यही बात उमा जैसी बी.ए. पास पढ़ी लिखी लड़की सख्त नापसंद करती है। और बड़ी बेबाकी से सबके सामने उसे बता भी देती है। शंकर का चरित्र अपने सद्गुणों के लिए नहीं बल्कि अपने पिता के पिछलग्गू बिकाऊ दूल्हे के रूप में याद रह जाता है। उदात्त चरित्र या चरित्रवान पुरुष के पौरुष की रीढ़ की हड्डी उनका सच्चरित्र ही है। इसमें कोई संदेह नहीं। जिस प्रकार रीढ़ के बिना जैसे शरीर लिजलिजा हो सकता है, उसी प्रकार चरित्र के बिना पुरुष भी गिलगिला रहेगा। केवल आदमी होने से ही कोई इंसान नहीं हो जाता उसे मर्द बनने के लिए मर्दानगी भी चाहिए। इस एकांकी में रीढ़ की दुहरी उपयोगिता है। शंकर की जिस्मानी बनावट ऐसी है, उसका शारीरिक गठन कुछ ऐसा है कि वह अपनी कमर झुकाकर चलता है। वह कमर झुकाकर बैठता है। उसके पिता उसे ऐसे बैठे देखकर टोकते हैं। दूसरी ओर लड़कियों के हॉस्टल में तांक-झांक करके गंदी हरकत करके (लड़कियों को छेड़कर) वह नौकरानी के द्वारा पकड़ा जाता है।

अपनी बेइज्जती से बचना चाहता है। इसलिए वह अपनी इज्जत (?) बचाने के लिए उस नौकरानी के पैर पड़ता है। माफी मांगता है। मेडिकल में पढ़ने वाला सुशिक्षित युवक यह सब 1930-40 में भी करता था और आज भी करता है। इसलिए वह संस्कार विहीन रीढ़ की हड्डी हीन बेशर्म युवक है। इसलिए उसे समझदार लड़की घास नहीं डालती। साफ मना कर देती है।

इस एकांकी में लड़की दिखाए जाने की अजीबोगरीब प्रथा पर भी चोट की गई है। यह एकांकी उस समय लिखा गया था जब मानव अधिकारों की घोषणा भी न हुई थी पर साहित्यकार स्त्रियों के मानव अधिकारों की वकालत करते थे। वह ज़ोर देकर कहती है कि लड़कियां कोई बेबस भेड-बकरियाँ नहीं। बेजान मेज़ कुर्सियाँ नहीं जिन्हे केवल खरीदार को पसंद आना चाहिए। उमा के कथन " जी हाँ मैं कॉलेज में पढ़ी हूँ। मैंने बी.ए. पास किया है। कोई पाप नहीं किया, कोई चोरी नहीं की, और न आपके पुत्र की तरह ताक-झांक कर कायरता दिखाई है।" से आपको उसके चरित्र की कई विशेषताओं का पता चल जाएगा। वह स्त्रियों के प्रति समाज में हो रहे व्यवहार को नापसंद करती है। उसका पुरजोर विरोध भी करती है। लड़की को पसंद करने या नापसंद करने के रिवाज को कड़े शब्दों में नकार देती है। वह मानती है कि लड़कियों को निर्जीव वस्तुओं या पशुओं की तरह नाप-तौल करने का पुरुषों को कोई अधिकार नहीं है। वह स्वाभिमानी लड़की है जो अपनी बेइज्जती के विरोध में शंकर के लिजलिजेपन और कायरतापूर्ण व्यवहार का पर्दाफाश करके रख देती है। वह अपनी शिक्षा को नहीं छिपाती। उस पर गर्व करती है । वह साहसी, स्वाभिमानी, सुशिक्षित, बुद्धिमान और सतर्क रहने वाली लड़की है। वह जमाने से आगे चलती है और अपने वजूद पर शर्मिंदा नहीं होती। उसे खुद पर नाज़ है।

शंकर और उमा से भी शायद एक कदम आगे शंकर के पिता का किरदार है। शंकर के पिता गोपाल प्रसाद का परिचय माथुर जी ने स्वयं इस प्रकार दिया है, "आँखों से लोक-चतुराई टपकती है। आवाज से मालूम पड़ता है कि काफी अनुभवी और फितरती महाशय हैं।" सही अर्थों में वे बहुत हद तक दुनियादार किस्म के आदमी हैं। वे बार-बार 'अपने जमाने' की बात करके इस जमाने को धिक्कारते हैं। वे रिश्ते की बातचीत को 'बिजनेस' कहते हैं। पढ़े-लिखे वकील हैं, पर न जाने कितनी दक़ियानूसी बातें करते हैं। वे शिक्षित लड़कियों पर शक करते हैं। उनके लिए स्त्री-पुरुष समान ही नहीं। रूढ़िवादी, दक़ियानूसी, लकीर के फकीर और स्त्री सशक्तीकरण के विरोधी गोपाल प्रसाद को यह खुशफहमी है कि औरते पैदायशी आदमी से कमतर होती हैं। उनको इस बात की परवाह नहीं कि उनका लड़का यूं ही बेकार सा है, पर उन्हें लड़के के लिए लड़की खूबसूररत चाहिए। संक्षेप में कहें तो गोपाल प्रसाद गुजरे जमाने के आदमी हैं। इनके चरित्र का जितना विश्लेषण आप करेंगे उतना ही आप उन्हें बेहूदा और बेकार पाएँगे।

आज इक्कीसवीं शताब्दी के इस समय में भी लगभग 100 वर्ष पहले लिखे गए इस नाटक में उस समय की स्त्री की बेचारगी को दिखाया गया है। यह दशा अब भी थोड़ी बहुत है। समाज कुछ बदला जरूर है। पर पूरी तरह नहीं। आप क्या कहते हैं? बेटे के पिता अपने पुत्र की टूटी रीढ़ को छिपाते हैं और बेटी के पिता अपनी बेटी की उच्च शिक्षा को। क्यों? आपस में दोनों पक्षों का

कैसा लेन देन का व्यवहार है? माथुर जी ने एक बार कहा था कि इस एकांकी के शिल्प और शैली को सँवारने का उनको मौका ही न मिला। पर यह इतना लोकप्रिय हुआ कि आज भी यह विद्यालयों और महाविद्यालयों में खेला जाता है। पात्रों की सजीवता और कथानक की कसावट के कारण एकांकी आज भी सामयिक है। आप अवश्य अपने अनुभव से बताना चाहेंगे क्योंकि यह दुनिया ऐसे शंकर और उमा से खाली नहीं है। ऐसे माता-पिता और पिता-पुत्री आज भी हैं। आप खुद गवाह हैं।

इस उपखंड का शीर्षक 'चरित्र चित्रण है और आपसे यह अपेक्षा की जाती है कि आप इस एकांकी के प्रमुख पात्रों का चरित्र चित्रण लिख सकें। उनके चरित्र की कुछ विशेषताओं को चिह्नित कर सकें। क्या आप उपरोक्त अध्ययन के आधार पर ऐसा लेखन करने का प्रयत्न नहीं करेंगे? एकांकी के सभी पात्रों के चरित्र का अलग-अलग विश्लेषण उनके कथनों, आचार विचार और व्यवहार आदि के आधार पर हो सकेगा। आपको इसे करने में कोई कठिनाई न होगी।

यह एकांकी 1940 के आसपास लिखा गया था और इसमें आप एक मध्यवर्गीय भारतीय परिवार की झलक देखते हैं। यह एक सामाजिक एकांकी है। यह अपने जमाने की सोच है कोई इतिहास के राजा महाराजाओं की कथा नहीं। इसलिए इसमें पात्र और घटनाएँ, भाषा और शैली अपने जमाने की है। आज की है। इसमें कुछ सामाजिक रूढ़ियाँ भी हैं और कुछ रूढ़िवादी भी। दूसरी ओर कुछ प्रगतिशील और जागरूक लोग भी हैं। आधुनिकता विरोधी और प्रगति विरोधी वर्ग के लोग अपने पुराने जमाने का राग अलापते हैं। वे बार-बार अपने जमाने की बात करते हैं। गोपाल प्रसाद, शंकर और प्रेमा के सोचने का ढंग अलग है, उमा का बिलकुल अलग। इस बात पर आप भी गौर करें और एकांकी में लेखक द्वारा दिए गए संकेतों को नोट करते चलें। देखें कि किस तरह यहाँ बताया गया है कि शिक्षित होना कोई छिपाने योग्य अपराध नहीं बल्कि गर्व करने की बात है। इस बात पर भी नज़र रखें कि क्या इक्कीसवीं शताब्दी के दो से अधिक दशक बीत जाने कर भी हमारे समाज के एक विशेष वर्ग या कुछ लोगों की मानसिकता वैसी ही तो नहीं जैसी इस एकांकी में दिखाई गई है? अपने से खुद प्रश्न करें। दूसरों से विमर्श करें। तभी आप किसी सही नतीजे पर पहुँचेंगे। क्या समाज के इस अंतर्विरोध को आप देख पा रहें हैं?

बोध प्रश्न

- उमा के चरित्र को यदि चार शब्दों की सहायता से उकेरना हो तो आप इन में से कौन से चार शब्द चुनना चाहेंगे और क्यों - स्वाभिमानी, आक्रोश, उद्दंडता, दृढ़ता, बुद्धिमत्ता, रूढ़िवादिता, विमूढ़ता।
- गोपाल प्रसाद और उनके पुत्र शंकर के चरित्र को उजागर करने वाले चार-चार विशेषणों को लिखिए।

14.3.4 भाषा शैली

एक बात पर भी आप गौर करेंगे। एकांकी की विषयवस्तु और कथा की तरह इसकी भाषा भी आम जीवन के करीब है। रोज़मर्रा के शब्द हैं जिनका बड़ी चतुराई से प्रयोग किया गया है। अँग्रेजी और उर्दू के शब्द भी अनेक हैं। मार्जिन, स्टैंडर्ड, बिजनेस , बैकबोन हैं तो तारीफ,

तकल्लुफ,फितरती,तालीम जैसे शब्द हैं। पौडर-वौडर, टोस्ट-वोस्ट, पढ़ाई-बढ़ाई, पेंटिंग-वेंटिग, इनाम-विनाम,मकान-वकान आदि चलताऊ वर्ण-दोहराव है। भाषा के इस प्रयोग से नाटकीय परिस्थितियों को उभारा गया है। आम बोलचाल के मुहावरे (बाज़ आना, मुँह फुलाना, खीसे निपोरना, कोरी-कोरी सुनाना, सेर पर सवा सेर होना) संवादों में रवानी लाते हैं।

आप कह सकते हैं कि जगदीश चंद्र माथुर के इस सामाजिक एकांकी की भाषा यदि मिली-जुली और आम-फहम है तो इसकी शैली भी सहज और टंच है। एकांकी की शैली व्यंग्यात्मक और कटाक्षपूर्ण है। आप खुद भी देख सकते हैं कि एक ओर तो उमा शंकर और उसके पिता को सीधे खरी खोटी सुनाती है और व्यंग्य सीधा –प्रत्यक्ष और धारदार हो जाता है। परोक्ष रूप से यह व्यंग्य सम्पूर्ण एकांकी में व्याप्त है। यहाँ तक कि एकांकी का अंत नौकर के व्यंग्यपूर्ण पद 'बाबू जी मक्खन!" से होता है। परोक्ष रूप से एकांकी के प्रारम्भ से ही लेखक की व्यंग्यात्मक शैली आपको कदम-कदम पर दिखाई देगी। गोपाल प्रसाद और शंकर के आगमन और स्वागत की तैयारी, आगमन पर उनके स्वागत-सत्कार का तरीका, उनका व्यवहार,वार्तालाप, आचार विचार आदि सब में समाया व्यंग्य है। लड़की के पिता के हर वक्तव्य में और उसकी हाँ में हाँ मिलाने की मजबूरी आप समझते हैं। उसे अपनी बेटी का विवाह जो करना है। यह भी व्यंग्यात्मक है। कहा जा सकता है कि एकांकी के शीर्षक से लेकर अंतिम संवाद तक भाषा शैली चुस्त और चौकन्नी है। यही कारण है कि यह एकांकी खूब पढ़ा जाता है और इसका मंचन भी खूब पसंद किया जाता है।

बोध प्रश्न

1. एकांकी के पाठ के बाद आप इसकी भाषा-शैली के विषय में क्या सोचते हैं ?

14.4 पाठ सार

रामस्वरूप एक मध्यवर्गीय समाज का व्यक्ति है। उसने अपनी लड़की उमा को बी.ए. तक शिक्षा दिलाई है। उसका अधिक पढ़ जाना उसके विवाह में बाधक बन गया है। रामस्वरूप और उनकी पत्नी प्रेमा के बीच स्त्री-शिक्षा और समाज की चाल को लेकर हल्की-फुल्की बातचीत होती है। माँ प्रेमा बेटी उमा को लिवा लाने के लिए घर में जाती है और नौकर रतन मक्खन लेने बाज़ार। उमा को देखने के लिए गोपाल प्रसाद नाम का व्यक्ति अपने लड़के शंकर के साथ आता है। आरम्भ में कुछ औपचारिक बातें होती हैं। कुछ समय बाद लड़के का बाप बताता है कि उसे अपने बेटे के लिए अधिक पढ़ी-लिखी लड़की नहीं चाहिए। लड़की के बाप ने उससे झूठ ही कहा था कि उनकी लड़की मैट्रिक तक ही पढ़ी है। उमा कमरे में पान की तश्तरी लेकर प्रवेश करती है। उसके चश्मा पहने होने पर दोनों बाप-बेटा घबरा जाते हैं। उसके बाद शंकर के पिता उमा से उल्टे-सीधे प्रश्न करते हैं जिससे उमा की सहनशीलता जवाब दे देती है। वह गोपाल प्रसाद को करारा जवाब देती है। साथ ही वह उनके बेटे शंकर की चरित्रहीनता का भी पर्दाफाश करती है। वह बताती है कि पिछली फरवरी में उनका बेटा लड़कियों के होस्टल के इर्द-गिर्द चक्कर लगाते हुए पकड़ा गया था और नौकरानी के पैर पकड़ कर इसने अपनी जान बचाई थी। यह सुनकर गोपाल प्रसाद तिलमिला उठते हैं और वहाँ से चलने को होते हैं। उमा तब व्यंग्य करती हुई उनसे

कहती है, “जी हाँ, ज़रूर चले जाइए। लेकिन घर जाकर यह पता लगाइएगा कि आपके लाड़ले बेटे की रीढ़ की हड्डी है भी कि नहीं।”

इस एकांकी में केवल एक ही दृश्य है। मंच सज्जा, पात्रों की वेशभूषा, तथा अभिनय के संबंध में लेखक ने स्पष्ट निर्देश दिये हैं। यहाँ तक कि पात्रों का हुलिया भी बताया है।

'रीढ़ की हड्डी' एकांकी में एकांकीकार श्री जगदीश चंद्र माथुर ने उमा नाम की एक बी ए पास लड़की के द्वारा समाज में स्त्री-पुरुष के लिए दोहरे कायदे पर तनकीद की है। साथ ही इसमें उमा के पिता राम स्वरूप और माता उमा के विचारों को भी प्रस्तुत किया गया है। राम स्वरूप और प्रेमा के विचार और गोपाल प्रसाद और उनके पुत्र शंकर के विचार दूसरी तरफ हैं जरूर, पर वे है सब थोड़े बहुत दक़ियानूसी ही। स्त्रियों के पढ़ने-लिखने और बाहर जाकर काम करने के वे खिलाफ हैं। इसलिए उमा जब शंकर को देखते ही पहचान लेती है तो उसके व्यवहार को सख्त नापसंद करती है और अपने लिए वह खुद खड़ी हो जाती है। शंकर को वह परमुखापेक्षी और व्यक्तित्वविहीन आदमी के रूप में देखकर अपने लिए ठीक नहीं समझती और यह कह भी देती है। इस एकांकी के अध्ययन के बाद अब आप समझ गए होंगे कि इस एकांकी के लिखने का एक निश्चित उद्देश्य रहा है। यानी इसके द्वारा लेखक कहना क्या चाहता है। आप देख सकते हैं कि शिक्षा, बुद्धिमत्ता, शारीरिक सौंदर्य और कुशलता में उमा और शंकर का कोई मुक़ाबला ही नहीं। उमा हर तरह से शंकर से बेहतर है, फिर भी उसे पसंद-नापसंद करने का अधिकार किसी ओर को है। उसकी पसंद या नापसंद का जैसे कोई मौल ही नहीं। लड़की के बाप से लड़के का बाप अपने आप को बेहतर समझता है। पुरुष वर्ग के द्वारा स्त्रियों को अपने से कमतर समझने की यह दूषित मनोवृत्ति कल भी थी और आज भी है। इसी को उजागर करना एकांकीकार का उद्देश्य रहा है।

14.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं -

1. ‘रीढ़ की हड्डी’ अपने लेखन के अनेक वर्षों बाद आज भी समकालीन है।
2. एकांकी का शीर्षक प्रतीकात्मक है और यह बताता है कि भारतीय समाज में लड़कियों को लड़कों से कमतर समझा जाता है।
3. विवाह के समय लड़की देखने-दिखाने की प्रवृत्ति पर भी तंज़ कसा गया है। योग्यता, गुण, रूप आदि की दृष्टि से लड़के और लड़की की कोई बराबरी नहीं समझी जाती।
4. लड़की और लड़के दोनों के माता-पिता अब भी दक़ियानूसी विचारों को पाले हुए हैं।
5. इन पुराने विचारों को ढोने वाला समाज रीढ़ की हड्डी विहीन समाज है।
6. दोहरे अर्थ वाले शीर्षक का यह एकांकी दोहरे समाज की पोल खोल कर रख देता है।
7. रंगमंच की अपेक्षाओं और दर्शकों पर पड़ने वाले प्रभाव की दृष्टि से भी यह एक सफल एकांकी है।

14.6 शब्द संपदा

1. अंक = नाटक का खंड या भाग जिसमें कभी-कभी कई दृश्य भी होते हैं।
2. एकांकी = एकांकी एक अंक का दृश्य काव्य है जिसमें एक ही कथा और कुछ ही पात्र होते है। उसमें एक विशेष उद्देश्य की अभिव्यक्ति करते हुए केवल एक ही प्रभाव की पुष्टि या सृष्टि की जाती है। कम से कम समय में अधिक से अधिक प्रभाव एकांकी का लक्ष्य होता हैं।
3. कथोपकथन = बातचीत या संवाद,किसी उपन्यास, कथा, कहानी आदि को पात्रों में आपस में होनेवाली बात चीत।
4. नाटक = नाटक में चरित्र का क्रमशः विकास दर्शाया जाता है। एकांकी में पात्रों की क्रियाकलापों और चरित्रों का संयोजन इस रूप में होता है कि एकांकी होते हुए भी उसके व्यक्तित्व का समूचा बिंब मिल जाए।
5. पटाक्षेप = परदा गिरना या गिराना, रंगमंच पर किए जा रहे नाटक का एक अंक समाप्त होने पर परदा गिरना। किसी घटना की समाप्ति
6. परमुखापेक्षी = प्रत्येक बात के लिए दूसरों का मुँह ताकने वाला; दूसरे से सहयोग के लिए लालायित।
7. स्त्री सुबोधिनी = लल्लू लाल द्वारा लिखित और नवल किशोर प्रेस लखनऊ से प्रकाशित एक पुस्तक जिसमें स्त्रियों के ज्ञान वर्धन के लिए विविध विषयों की जानकारी दी गई है।

14.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. "...आपके लाडले बेटे की रीढ़ की हड्डी भी है या नहीं ..." एकांकी के प्रमुख पात्र उमा के इस कथन का क्या अर्थ है? इस कथन के द्वारा वह किसकी किन कमियों की ओर संकेत करती है?
2. "रीढ़ की हड्डी' एकांकी के शीर्षक की उपयुक्तता और सार्थकता का विवेचन कीजिए।
3. "एक हमारा जमाना था" बार-बार कहकर रामस्वरूप और गोपाल प्रसाद वास्तव में कहना क्या चाहते हैं?
4. आपके मत में 'रीढ़ की हड्डी' नामक एकांकी का मुख्य पात्र कौन है? उसका चरित्र चित्रण कीजिए।
5. शंकर और उमा के चरित्र की तुलना करते हुए बताइए कि समाज को कैसे युवक-युवतियों की जरूरत है? तर्क सहित उत्तर दीजिए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. 'रीढ़ की हड्डी' की कथा के आधार पर बताइए कि उमा और शंकर का विवाह क्यों बेमेल होता?
2. उमा से उसके माता-पिता की क्या अपेक्षाएँ हैं? आपकी दृष्टि में यह उचित है या नहीं और क्यों?
3. 'रीढ़ की हड्डी' एकांकी का कथानक आज के समाज के लिए भी सामयिक है। क्यों और कैसे?
4. 'रीढ़ की हड्डी'के पात्र आम मध्यम-वर्ग के जीवन को चित्रित करने वाले हैं। इस कथन की समीक्षा कीजिए।
5. 'रीढ़ की हड्डी' एकांकी के अंत में नौकर के अंतिम शब्द 'बाबूजी मक्खन' सारे एकांकी के कथ्य का सूत्र वाक्य कैसे है?

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. 'रीढ़ की हड्डी' में किस पात्र की भूमिका गौण है? ( )
   (अ) रतन (आ) शंकर (इ) उमा (ई) प्रेमा
2. राम स्वरूप हर बात में गोपाल प्रसाद की हाँ में हाँ मिलाता है क्योंकि ( )
   (अ) वह चापलूस है।
   (आ) वह गोपाल प्रसाद का आदर करता है।
   (इ) वह किसी भी तरह अपनी बेटी का रिश्ता कर देना चाहता है।
   (ई) वह अपनी पत्नी पर अपना रौब कायम रखना चाहता है।
3. "रीढ़ की हड्डी" में किस 'बिजनेस की बात' की गई है? ( )
   (अ) एक्सपोर्ट- इम्पोर्ट की
   (आ) विवाह के लिए रिश्ते की
   (इ) स्वतन्त्रता प्राप्त करने की
   (ई) इनमें से किसी की नहीं
4. "मोर के पंख होते हैं, मोरनी के नहीं।" इस कथन से गोपाल प्रसाद ने क्या संकेत दिया है?( )
   (अ) शिक्षित स्त्रियों की खिलाफत
   (आ) शिक्षित स्त्रियों की बड़ाई
   (इ) स्त्री-पुरुष की समानता
   (ई) इनमें से कोई नहीं

5. शंकर के व्यक्तित्व का यह लक्षण नहीं है। ( )

(अ) खीसे निपोरने वाला नौजवान

(आ) पतली आवाज़

(इ) झुकी कमर

(ई) भावुक और स्नेही

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. 'रीढ़ की हड्डी' एक .... एकांकी है।
2. 'रीढ़ की हड्डी' की भाषा .... है।
3. "रीढ़ की हड्डी' के संवाद ....।
4. गोपाल प्रसाद और राम स्वरूप .... बातें बढ़ाचढ़ाकर करते हैं।
5. शंकर ही नहीं ....भी रीढ़ की हड्डी विहीन हैं।
6. "बाबू जी, मक्खन!" कहकर .... नामक पात्र ने स्थिति पर कटाक्ष किया है।

III. सुमेल कीजिए -

1. रामस्वरूप	(अ) बैक बोन विहीन, चरित्रहीन,परमुखापेक्षी
2. गोपाल प्रसाद	(आ) दिखावा पसन्द, विनोदप्रिय, मृदु किंतु अनृत
3. शंकर	(इ) स्वार्थी, दक़ियानूसी, अस्थिर, मतलबी
4. उमा –	(ई) पतिपरायण, भीरु, भावुक
5. प्रेमा-	(उ) स्वाभिमानी, सुशिक्षित, दृढ़प्रतिज्ञ

14.8 पठनीय पुस्तकें

1. जगदीशचंद्र माथुर रचनावली

मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी Estd. 1998 MAULANA AZAD NATIONAL URDU UNIVERSITY

इकाई 15 : सफ़दर हाशमी : एक परिचय

रूपरेखा

15.1 प्रस्तावना
15.2 उद्देश्य
15.3 मूल पाठ : सफ़दर हाशमी : एक परिचय
15.3.1 जीवन एवं व्यक्तित्व
15.3.2 कृतित्व
15.4 पाठ सार
15.5 पाठ की उपलब्धियाँ
15.6 शब्द संपदा
15.7 परीक्षार्थ प्रश्न
15.8 पठनीय पुस्तकें

15.1 प्रस्तावना

सफ़दर हाशमी एक वामपंथी विचारधारा के नाटककार और निर्देशक थे। सफ़दर को भारत में नुक्कड़ नाटकों का विकास करने वाले तथा इसके माध्यम से जनसाधारण की आवाज शासकों तक पहुँचाने के लिए जाना जाता है। वे एक अभिनेता और सिद्धांतकार भी थे और उन्हें भारतीय राजनीतिक रंगमंच की एक महत्वपूर्ण आवाज माना जाता है। वे जन नाट्य मंच और दिल्ली में स्टूडेंट्स फेडरेशन ऑफ इंडिया (एसएफआई) के स्थापक-सदस्य थे। प्रस्तुत इकाई में उनके बारे में विस्तार से चर्चा के एजा रही है।

15.2 उद्देश्य

प्रिय छात्रो! इस इकाई को पढ़ने के बाद आप -

- नुक्कड़ नाटककार सफ़दर हाशमी के जीवनवृत्त से परिचित हो सकेंगे।
- उनके व्यक्तित्व और जीवन संघर्ष को समझ सकेंगे।
- उनके कृतित्व से परिचित हो सकेंगे।
- उनकी प्रमुख कृतियों की विषयवस्तु से अवगत हो सकेंगे।

15.3 मूल पाठ : सफ़दर हाशमी : एक परिचय

15.3.1 जीवन एवं व्यक्तित्व

जन्म एवं परिवार

सफ़दर हाशमी का जन्म 12 अप्रैल 1954 को दिल्ली में हुआ। आपकी माता का नाम कमर आज़ाद हाशमी और पिता का नाम हनीफ हाशमी था। उनके बड़े भाई का नाम सोहेल हाशमी था। उनकी बहन का नाम शबनम हाशमी था।

हाशमी का परिवार एक साम्यवादी विचारधारा का परिवार था। इसलिए सफ़दर पर साम्यवाद का प्रभाव बचपन से ही पड़ा। सफ़दर के बड़े भाई सोहेल हाशमी के शब्दों में, "सफ़दर साम्यवादी के प्रभाव में कब आया, यह तो कहना मुश्किल है। पिता तो साम्यवादी

आंदोलन में ही थे। परिवार की परिस्थिति तो ऐसी ही थी। बचपन से ही सफ़दर पर साहीर लुधियानवी, फैज, कैफी, मजाज, जज़्बी, इसमत चुगताई, मंटो, प्रेमचंद, किसनचंद आदि लोगों को प्रभाव पड़ा था।" मार्क्स तथा लेनिन के सैद्धांतिक विचारों एवं सौंदर्यशास्त्रीय मान्यताओं का उन पर गहरा प्रभाव पड़ा। वस्तुत: प्रारंभ से ही उनमें सर्वहारा वर्ग के प्रति प्रतिबद्धता की भावना रूढ़मूल हो गई थी।

बोध प्रश्न

- सफ़दर हाशमी किस वर्ग के प्रति प्रतिबद्ध हैं?

विवाह एवं दाम्पत्य जीवन

सफ़दर ने सन् 1979 में उनके साथ ही सक्रिय रही नाट्यकर्मी मलयश्री (मोलोयश्री) से विवाह किया, चूंकि दोनों एक ही अभिरुचि वाले थे। आम इंसानों जैसा जीवन न था। दोनों साथ में जनजागरण का कार्य करते, भविष्य में व्याप्त भ्रष्टाचार का समाप्त कर वंचितों को उनके अधिकारों के लिए जागृत करते थे। इसे ही सफ़दर और मलयश्री का वैवाहिक जीवन माना जा सकता है। मोलोयश्री, जो उस समय केवल पच्चीस वर्ष की थीं, ने सफ़दर हाशमी और राकेश सक्सेना द्वारा लिखित मौलिक नारीवादी नाटक औरत को जीवंत किया। इस नाटक का अनुवाद भारत की बहुत सी भाषाओं में किया गया। प्रमुख नायिका मलयश्री ही रही सभी में। इसी नाटक ने उन्हें सर्वाधिक पहचान दिलाई।

बोध प्रश्न

- किस नाटक के कारण मलयश्री अपनी पहचान बना पाई?

शिक्षा

सफ़दर हाशमी की प्रारंभिक शिक्षा अलीगढ़ में हुई। उनकी स्कूल स्तर की शिक्षा दिल्ली के सरोजनी नगर में स्थित एन.डी.एम.सी. स्कूल से हुई। उच्चतर माध्यमिक स्तर की शिक्षा डी.ए.वी. स्कूल बेर्ड रोड, दिल्ली तथा लोधी स्टेट दिल्ली के कन्नड़ स्कूल से हुई। दिल्ली विश्वविद्यालय के सेंट स्टीफिंस कॉलेज में 1970 में प्रवेश लिया। यहीं से अंग्रेज़ी में ग्रेजुएशन करने के बाद उन्होने दिल्ली यूनीवर्स्टी से अंग्रेजी में एम.ए. किया। यही वह समय था जब वे स्टूडेंट्स फेडरेशन ऑफ इंडिया की सांस्कृतिक यूनिट से जुड़ गए और इसी बीच इप्टा से भी उनका जुड़ाव रहा।

नुक्कड़ नाटक आंदोलन और एक लोकतांत्रिक संस्कृति के विकास में उनके योगदान को मान्यता प्रदान करते हुए मरणोपरांत कलकत्ता विश्वविद्यालय ने 1989 में सफ़दर को डी.लिट. की डिग्री प्रदान की।

व्यक्तित्व

नुक्कड़ नाटक को देश में विशिष्ट पहचान दिलाने वाले सफ़दर हाशमी ने मज़दूरों के मुद्दों को बहुत ही महीनता से पकड़ा एवं समसामयिक मुद्दों पर गहरे व्यंग्यात्मक अंदाज़ में नुक्कड़ नाटक लिखे एवं बेहद जीवंतता के साथ जनता के समक्ष प्रस्तुत किया। नुक्कड़ नाटकों को प्रस्तुत करने का अंदाज़ कुछ ऐसा था कि वे आम लोगों से सीधा रिश्ता जोड़ लेते थे। सफ़दर और सुहैल हाशमी के मित्र रिटायर्ड प्रोफेसर मदन गोपाल सिंह, सत्यवती कॉलेज, दिल्ली उनके व्यक्तित्व

पर प्रकाश डालते हुए कहते हैं कि “सफ़दर हाशमी के साथ रहते कभी लगा नहीं कि वो कितने तरह का काम कर रहा है, क्योंकि उस दौर में मंजीत बाबा, एमके रैना, सफ़दर, सुहैल सब साथ साथ ही थे। लेकिन सफ़दर करिश्माई था। अपनी लंबी कद काठी और मोहक मुस्कान के साथ वो जो भी करता, कहता था उसका अंदाज़ निराला था। लोग सीधे जुड़ जाते थे।”

सफ़दर हाशमी के व्यक्तितव के संबंध में प्रसिद्ध नाट्य निर्देशक हबीब तनवीर ने लिखा है कि “नाटक के साथ साथ ख़ूबसूरत गाने लिखते थे, लेकिन वे खुद को गीतकार शायर नहीं मानते थे। निर्देशन करते थे, मगर हमेशा ऐसे पेश आते कि उन्हें निर्देशन नहीं आता, एक्टिंग अच्छी करते थे मगर खुद को कभी एक्टर नहीं समझा। लीडर थे, लेकिन खुद को लीडर नहीं माना। वे सादी तबीयत के हंसमुख इंसान थे, जहाँ क़दम रख देते, जिंदगी की लहर दौड़ जाती थी।”

वरिष्ठ कवि और पत्रकार मंगलेश डबराल के मुताबिक, मौजूदा दौर में सफ़दर हाशमी जैसे युवाओं की ज़रूरत कहीं ज़्यादा है। वे कहते हैं, “आम आदमी, ग़रीब मजदूरों के हितों की बात को उठाने के लिए, उन्हें उनका हक दिलाने के लिए सफ़दर ने नुक्कड़ नाटक को हथियार की तरह इस्तेमाल किया था। उन्होंने जिस तरह के नाटक किए, उसके चलते उनकी हत्या तक हो गई, उस तरह के नाटकों की कल्पना आज के दौर में भी नहीं की जा सकती।” वे लोगों के बीच में जाकर लोगों की समस्या को समझते और उनकी पीड़ा को नुक्कड़ नाटक व गीतों के माध्यम से प्रदर्शित करते थे। जनसरोकारों से जुड़े व्यक्ति तथा जिन्होंने सफ़दर का थोड़ा भी पढ़ा हो वे जब दिल्ली के मंडी हाउस के सफ़दर हाशमी मार्ग से कभी गुजरते हैं तो वहाँ की हवाओं में ज़िंदगी की लहर को महसूस करने पर सफ़दर को महसूस कर पाएँगे। सफ़दर हाशमी को भुलाया नहीं जा सकता है, क्योंकि किसी भी दौर में किसी के लिए भी सफ़दर होना आसान नहीं है।

बोध प्रश्न

- सफ़दर हाशमी के व्यक्तित्व के दो गुण बताइए।

महिलाओं, मजदूरों और किसानों के आंदोलनों में सक्रिय भूमिका

सफ़दर के जीवन से सीख मिलती है कि कला सिर्फ़ मनोरंजन का साधन मात्र नहीं है। उसका महत्व समाज में शिक्षा और जागरूकता के प्रसार, सत्ताधारियों से अपने वोट का हिसाब माँगने, उसके गलत एवं समाज के लिए अहितकारी योजनाओं की आलोचना करने में, समाज में परिवर्तन और सामाजिक क्रांति लाने में अधिक है। कला के उपासकों का उत्तरदायित्व है कि वे अपनी कला के माध्यम से दर्शकों को इस तरह प्रभावित करें कि वे अपने आसपास हो रही अमानवीयता, असंवेधानिकता को देख एवं महसूस कर पाएँ तथा उनके विरुद्ध अपनी आवाज़ बुलंद करें। सामाजिकों को सचेत करने में सिर्फ शिक्षा ही काफ़ी नहीं है, बल्कि संगीत, चित्रकला, सिनेमा, थियेटर आदि भी बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। 1975 में आपातकाल लागू होने के बाद सफ़दर नुक्कड़ नाटक करते रहे। जन नाट्य मंच ने छात्रों, महिलाओं और किसानों के आंदोलनों में अपनी सक्रिय भूमिका निभाई।

‘औरत’ नाटक के संपूर्ण भारत में बहुत से शो सफ़दर के जीवित रहते हुए किए तथा उसके बाद भी किए जा चुके हैं। मोलोयश्री ने इसी नाटक से वास्तविक अभिनय प्रारंभ किया।

पहली बार 1979 में इस नाटक का प्रदर्शन किया गया। भारतीय समाज में स्त्रियों पर आरोपित राजनीति पर 'औरत' नाटक ने भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी (मार्क्सवादी) की ट्रेड यूनियन विंग, सेंटर ऑफ इंडियन ट्रेड यूनियन्स (सीटू) के तत्वावधान में कामकाजी महिलाओं के पहले सम्मेलन का मार्ग प्रशस्त किया। इस सम्मेलन को भारत में इस प्रकार के प्रथम सम्मेलनों में से एक माना जाता है। इस सम्मेलन का आयोजन स्थल उत्तरी दिल्ली में एक रूढ़िवादी मध्यम वर्ग के पड़ोस रूप नगर में एक अधूरी इमारत थी। इस नाटक को जिस मुहिम के लिए बनाया एवं प्रदर्शित किया गया उसके पीछे जो प्रेरणात्मक सोच थी उसका जनक सफ़दर हाशमी था।

'हल्ला बोल' नाटक में भी मजदूर महिलाओं की समस्याओं को प्रस्तुत किया गया है। महिला मजदूरों को अपने नन्हें बच्चों को साथ लेकर काम करने की जगह पर जाने से मनाही है। गरीब मजदूर औरत अपने बच्चों की देखभाल के लिए नौकर तो रख नहीं सकता है। ऐसी परिस्थिति में बेचारी लाचार मजदूर औरत क्या करे। काम करना उसकी मजबूरी है और बच्चों की परवरिश उसका दायित्व। मजदूरी करना उसके पेट की मजबूरी के साथ-साथ निर्वहन का हिस्सा है।

'मशीन' को दो लाख मजदूरों की विशाल सभा के सामने मंचित किया गया। इस नाटक के द्वारा बखूबी वंचितों के शोषण को बहुत संचेतना के साथ प्रस्तुत किया जो कि बहुत ही प्रभावी रहा। सफ़दर हाशमी के कुछ मशहूर नाटकों में गांव से शहर तक, हत्यारे और अपहरण भाईचारे का, तीन करोड़, औरत और डीटीसी की धांधली शामिल हैं। इस नाटक में अभिनेतागण एक साइकिल के रूप में मंच पर प्रवेश करते हैं। सेक्यूरिटी ऑफिसर साइकिल को बहुत ही बेरहमी से पटकता है। साइकिल खड़ी करने के लिए किसी स्टैंड की भी व्यवस्था नहीं होती है। वस्तुत साइकिल के माध्यम से ही नाटककार ने मजदूरों की वस्तुस्थिति पर प्रकाश डालने का कार्य किया है। जिस प्रकार साइकिल का उपयोगकर्ता उसके प्रति लापरवाह होता है। उसका सम्पूर्ण ध्यान उसके उपभोग मात्र पर होता है उसी प्रकार मील मालिकों का भी मजदूरों के प्रति रवैया सिर्फ और सिर्फ उपभोग का ही रहता है।

बोध प्रश्न

- सफ़दर के जीवन से क्या सीख मिलती है?

नौकरी

1975 में इंदिरा गांधी द्वारा लगाए गए आपात काल की अवधि में सफ़दर हाशमी गढ़वाल में लेक्चरर के पद पर कार्य करने के लिए चले गए और वहाँ से आपातकाल समाप्त होने के बाद 1977 में वापस आए। कश्मीर और दिल्ली के विश्वविद्यालयों में बहुत कम समयक के लिए अध्यापन का काम भी किया। सफ़दर ने समाचार एजेंसी पीटीआई एवं इकोनॉमिक्स टाइम्स में पत्रकार के तौर पर कार्य किया। इसके बाद सफ़दर हाशमी भारतीय सूचना सेवा में अधिकार बने और बंगाल सरकार में इंफॉर्मेशन ऑफिसर के पद पर पदस्थ रहे परंतु सरकारी नौकरी उनको जमी नहीं। सन् 1984 में सफ़दर ने पूरी तरह से नौकरी को इस्तीफा दे दिया और अपने जीवन को समाज का समर्पित कर दिया। बाद में वह राजनीति में भी सक्रिय हो गए। सन 1984 में ही सफ़दर ने एस.एफ. आई. के मुख पत्र 'स्टूडेंट स्ट्रगल' में भी काम किया।

जीवन संघर्ष

जिस प्रकार से आम इंसान सा अन्य लेखकों का जीवन संघर्ष होता है वैसा सफ़दर का नहीं था। चूँकि सदफर एक संपन्न परिवार का युवक था। रोटी, कपड़ा और मकान के आम संघर्ष उसके नहीं थे। परंतु यह काबिले तारीफ है कि जरा सा भी अभावग्रस्त जीवन न जीने के बावजूद उसके जीवन के संघर्षों में प्रमुख थी आम आदमी की पीड़ा, वंचितों, पीडि़तों का दुख दर्द। मजदूरों, किसानों एवं स्त्रियों के अधिकारों के लिए लड़ना ही सफ़दर के जीवन का अपना संघर्ष बना और यही संघर्ष था जिसके कारण अच्छे-अच्छे मील मालिकों, पूँजीपतियों, नेताओं को अपनी कुर्सी डांवाडोल नजर आने लगी। पूंजीवाद और नेताशाही या सीधे शब्दों में कहे तो भारतीय लोकतंत्र में प्रचलित गुंडागर्दी के संपोशकों ने ही सफ़दर को असमय इस दुनिया से समाप्त कर दिया। मात्र चौंतीस वर्ष की आयु में ही सफ़दर हाशमी की हत्या कर उन असामाजिक ताकतों ने यह जता दिया कि सफ़दर अपनी कला के माध्यम से आये दिन जो सवाल उठाया करते थे उनका सामना कर पाना उनके लिए कठिन हो रहा था। वे एक सामान्य से दीखने वाले प्रभावी कलाकार के सामने बहुत ही अदने थे। सफ़दर का तथाकथित बुद्धिजीवियों को निशाना बनाना, जनता को ज़रूरी मुद्दों पर सोचने हेतु विवश करना सरकारी तंत्र का खलता था और सफ़दर जैसे लोगों को दंडित करना सरकारों के लिए कोई नई बात नहीं है। चाहे किसी की पार्टी की सरकार हो सत्ता में आते ही उनका स्वर जनविरोधी हो जाता है। सरकारी तंत्र की गलत नीतियों के प्रति संघर्ष ही सफ़दर का संघर्ष था और यही उनका जीवन था। स्वतंत्रता एवं सफ़दर की मृत्यु के बाद आज लंबा अरसा गुजर जाने पर भी देश में कुछ परिवर्तन नहीं हुआ है। परिवर्तन हुआ है तो सिर्फ सत्ताधारी पार्टियों का और शोषण करने वाले बैनरों का पर तरीके भी लगभग वैसे ही है। जनता सफ़दर के समय भी कीड़े मकौड़े का जीवन जीने पर विवश थी और आज भी।

बोध प्रश्न

- सफ़दर की हत्या क्यों की गई?

सफ़दर हाशमी की हत्या

एक नाटककार, कलाकार, निर्देशक, गीतकार जैसी कई प्रतिभाओं के साथ जीने वाले सफ़दर हाशमी की मात्र 35 वर्ष की आयु में हत्या कर दी गई। 1970 के दशक में जब इंदिरा गांधी पर चुनाव में धांधली के आरोप लगे तो सफ़दर ने 'कुर्सी, कुर्सी, कुर्सी' नामक नुक्कड़ नाटक तैयार किया और उसका मंचन कराया। अन्य स्थानों के अतिरिक्त दिल्ली के बोट क्लब लॉन में इसका मंचन एक हफ्ते तक प्रतिदिन हुआ। इस नाटक ने लोगों में अच्छी खासी लोकप्रियता बना ली। जानकारों और विश्लेषकों का मानना है कि इसी नाटक के बाद से ही सफ़दर हाशमी और जनम दोनों कुछ लोगों की आंखों में खटकने लगे। इसी खटकन का परिणाम थी उसकी सुनियोजित हत्या। जननाट्य मंच की स्थापना के बाद आम मजदूरों की आवाज़ को सिस्टम चलाने वालों तक पहुँचाने की उनकी मुहिम के तहत सफ़दर की टीम 1 जनवरी, 1989 को दिल्ली से सटे गाज़ियाबाद के साहिबाबाद में नगर पालिका चुनाव के दौरान वामपंथी प्रत्याशी

के समर्थन में नुक्कड़ नाटक 'हल्ला बोल' खेलने के दौरान कुछ लोगों ने उनके दल पर जानलेवा हमला किया। माना जाता है कि सफ़दर और उनके साथियों पर यह हमल पूर्वनियोजित था।

2 जनवरी, 1989 को सफ़दर हाशमी की नई दिल्ली के राम मनोहर लोहिया अस्पताल में मृत्यु हो गई। सफ़दर की मौत के 48 घंटों के भीतर 4 जनवरी, 1989 को उनके साथियों और उनकी पत्नी ने ठीक उसी जगह जाकर 'हल्ला बोल' नाटक का मंचन किया।

कृतित्व

सफ़दर हाशमी एक नाटककार, निर्देशक, गीतकार और कलाविद थे। भारत में नुक्कड़ नाटक को आगे बढ़ाने में सफ़दर हाशमी का महत्वपूर्ण योगदान रहा। सफ़दर ने अपने नाटकों के माध्यम से शोषित और वंचित लोगों के लिए आवाज उठाई थी।

सफ़दर जिन नुक्कड़ नाटकों के प्रमुख कर्णधार रहे उनमें से कुछ प्रसिद्ध नुक्कड़ नाटक हैं - हत्यारे सम्राट, औरत, राजा का बाजा, अपहरण भाईचारे का, हल्ला बोल, मत बाँटो इंसान को, संघर्ष करेंगे जितेंगे, अंधेरा आफताब मंगेगा, जिन्हें यकीन नहीं था, आरतनद, राहुल बॉक्सर, नहीं काबुल, वह बोल उठी और ये दिल माँगे मोर गुरुजी।

जनम के संस्थापक सदस्य सफ़दर एक शानदार सिद्धांतकार और राजनीतिक रंगमंच, विशेष रूप से नुक्कड़ नाटक के प्रैक्टिशनर थे। एक बहुमुखी व्यक्तित्व, वह एक नाटककार, एक गीतकार, एक थिएटर निर्देशक, एक डिजाइनर और एक आयोजक थे, उन्होंने बच्चों के लिए भी लिखा। उनकी फिल्मों की स्क्रिप्ट की काफी तारीफ हुई थी। उन्होंने संस्कृति के विभिन्न पहलुओं और संबंधित मुद्दों पर पत्रिकाओं और समाचार पत्रों में लिखा।

जननाट्य मंच के ज़्यादातर नाटक नुक्कड़ नाटक थे ताकि उनका संदेश ज़्यादा से ज़्यादा लोगों तक पहुँच सके। इनमें से कुछ प्रमुख नाटक हैं 'कुर्सी कुर्सी कुर्सी', जो इंदिरा गांधी के शासनकाल में किए गए चुनावी अनाचार के बारे में है, तीन करोड़ बेरोज़गारी पर और गाँव से शहर तक किसानों की समस्याओं पर आधारित थे। भारतीय स्त्रियों की पारिवारिक, सामाजिक, राजनीतिक आदि परिस्थितियों को ध्यान में रखकर सफ़दर हाशमी एवं राकेश सक्सेना ने 'औरत' नामक नाटक की रचना की जिसमें सफ़दर की पत्नी मोलोयश्री ने प्रमुख भूमिका निभाई। 'ए बार राजार पाला' (अब राजा की बारी है) नाटक सफ़दर ने संकटकाल एवं सेंसरशिप के विरोध में किया। सफ़दर के नाटकों की सूची एवं उसके जीवन काल में प्रदर्शन स्थिति को निम्नलिखित रूप में देखा जा सकता है-

क्र.सं.	**नाटक**	**रचनाकाल**	**अवधि**	**प्रदर्शन**
1.	मशीन	अक्टूबर 1978	15 मिनट	500
2.	गाँव से शहर तक	नवंबर 1978	22 मिनट	200
3.	राजा का बाजा	नवंबर 1979	25 मिनट	200
4.	अपहरण भाईचारे का	अक्टूबर 1986	45 मिनट	50
5.	हल्ला बोल	दिसंबर 1988	35 मिनट	11

सफ़दर के नेतृत्व में जन नाट्य मंच द्वारा मंचित नाटकों की सूची एवं उसके जीवन काल में प्रदर्शन स्थिति को निम्नलिखित रूप में देखा जा सकता है-

क्र.सं.	नाटक	रचनाकाल	अवधि	प्रदर्शन
1.	हत्यारे	नवंबर 1978	25 मिनट	200
2.	डी.टी.सी. की धांधली	फरवरी 1979	12 मिनट	35
3.	औरत	मार्च 1979	28 मिनट	1500
4.	तीन करोड़	जून 1979	25 मिनट	6
5.	सम्राट को नहीं दोष घुंसांय	मार्च 1980	35 मिनट	1500
6.	मिलकर चलो	मई 1980	30 मिनट	30
7.	आया जुनून	दिसंबर 1980	40 मिनट	20
8.	पुलिस चरित्रम	फरबरी 1981	20 मिनट	25
9.	काला कानून	अगस्त 1981	20 मिनट	25
10.	जंग का खतरा	फरबरी 1982	30 मिनट	6
11.	जब चोर बने कोतवाल	सितंबर 1982	30 मिनट	7
12.	वीर जाग जरा	अप्रैल 1984	14 मिनट	8
13.	इशारा	जुलाई 1984	40 मिनट	3
14.	एग्रीमेंट	अप्रैल 1986	10 मिनट	5
15.	मई दिवस की कहानी	अप्रैल 1986	45 मिनट	10
16.	चक्का जाम	नवंबर 1988	35 मिनट	29

बोध प्रश्न

- इंदिरा गांधी के शासनकाल में किए गए चुनावी अनाचार के बारे में किस नाटक में उजागर किया गया है?

प्रिय छात्रो! आगे आप सफ़दर हाशमी के कुछ प्रमुख नाटकों का परिचय प्राप्त करेंगे।

हल्ला बोल

हल्ला बोल नाटक मजदूरों की वेतन संबंधी विसंगतियों, ठेकेदारों द्वारा मजदूरों का शोषण, मजदूरों की आवास समस्या, मजदूर औरतों के बच्चों के लिए बालघर, सरकार के मजदूर विरोधी कानूनों, पुलिस के अत्याचार से मुक्ति आदि समस्याओं पर आधारित नाटक है। यह सामान्य रूप से कहीं भी मंचित करने के लिए लिखा नाटक नहीं है। इसे जहाँ फैक्टरी, कारखानें इत्यादि हैं तथा जहाँ श्रम का शोषण है वहीं मंचित करना इसके लेखन को सार्थकता देता है। इसके लेखन केंद्र तत्व सांप्रदायिक तत्वों के विरुद्ध मोर्चा लेना है। इस नाटक की व्यंग्यात्मक

शैली जहाँ दर्शकों का खूब मनोरंजन करती है वहीं मजदूरों के जीवन के एकाधिक पक्षों को बहुत ही गंभीरता के साथ प्रस्तुत करता है।

मशीन

'मशीन' नाटक में मशीन समाज का प्रतीकात्मक रूप है। मशीन के सुचारू संचलन के लिए उसके सभी कलपुर्जों का ठीक होना नितांत आवश्यक है। एक भी पुर्जा यदि त्रुटिग्रस्त हो जाता है तो वह मशीन विशेष काम करना बंद कर देती है और उत्पादन प्रभावित होता है। इसी प्रकार समाज भी मशीन होता है उसके सभी वर्गों का ठीक होना आवश्यक है। मालिक और मजदूर, गुंडे और ठाकुर, मजूदर, दलित सब समाज में रहते हैं। इस नाटक में वेतन, रहन-सहन, स्वास्थ्य सुविधाओं कुल मिलाकर रोटी, कपड़ा और मकान की उपलब्धता को केंद्र में रखा गया है।

राजा का बाजा

'राजा का बाजा' बेरोजगारी की समस्या को प्रमुखता से उजागर करते हुए बेरोजगारी संबंधित छोटे बड़े पक्षों को बहुत ही गभीरता के साथ प्रस्तुत करता है। मंत्री, व्यापारी, वकील, दानव तथा नौकरशाह आदि के रूप में सुविधा प्राप्त और शोषक वर्ग के प्रतिनिधि हैं और बेरोजगारों को अपने आप में शामिल करने किस प्रकार परेशानियां उत्पन्न करते हैं और यदि किसी प्रकार से शामिल करते भी हैं तो उसकी कीमत बेराजगार का भरपूर शोषण होता है। ईमानदारी से डिग्री युवकों से छलावा करते हुए पहले से सिफारिशी लाल को नौकरी पर रखने के प्रपंच में पात्र युवकों को उल्टे-पुल्टे प्रश्न करके उन्हें मानसिक रूप से तोड़ा जाता है।

आरिक्षत वर्ग के पदों का जानबूझ कर खाली रखकर उन्हें बाद में सामान्य श्रेणी में लाने का प्रपंच रचा जाता है और उपयुक्त पात्र न मिलने का हवाला देकर समाज एवं संविधान का शर्मसार किया जाता है। बेरोजगारी को झेलने वाला व्यक्ति उसके शिक्षकों द्वारा दिए गए ज्ञान, विज्ञान को निरर्थक मानने लगता है और उसका शिक्षा व्यवस्था से ही भरोसा उठ जाता है। पढ़ने के स्थान पर वह अनपढ़ रहकर काम धंधा, मजदूरी आदि करने की ओर प्रवृत्त होता है।

गाँव से शहर तक

यह नाटक गांव से शहर तक में बेरोजगारी, भूखमरी, गरीबों का शोषण, स्त्रियों का शोषण आदि का चित्रण किया गया है। शहर हो या गांव दो वक्त के खाने की आवश्यकता सबको होती है। इस संसार में मानव द्वारा किए जाने वाले सारे क्रियाकलापों, कार्यव्यापारों के पीछे एक ही तत्व है और वह है भूख। पेट की आग ही व्यक्ति को बेचारा बनाती है और जब आदमी का पेट भरा होता है तब वह सेठ, मालिक, अधिकारी बन जाता है। शहर और गांव दोनों में ही गरीबों, बेरोजगारों को दिन रात शोषण होता है। बेरोजगारी को छोटा भी आय का साधन मिल जाता है तो वह सोचता है उसे ईश्वर मिल गया है।

लोअर डिवीजन क्लर्क भले ही छोटा पद है परंतु पेट की आग बुझाने का आधार बनता है। एक क्लर्क का सब को उधार का हो, सुविधाएँ शहर में हों या उसके पड़ोस में पर भेट भर जाने से वह बहुत खुश हो दिन रात स्वयं को जोतता रहता है ताकि जो उसे मिल गया है वह

बना रहे। गांव में किसान साहूकारों के शोषण से त्रस्त रहते हैं दिन रात मेहनत वे करते हैं और जो उगाता है उस पर साहूकार कब्जा कर लेता है। किसान बेचार ठगा का ठगा ही रह जाता है।

अपहरण भाई चारे का

इस नाटक में व्यंग्यात्मक शैली में भारतीय समाज में दिन प्रति दिन बढ़ती सांप्रदायिकता तथा उसके फलस्वरूप बढ़ते फसाद का चित्रण करते हुए जनसामान्य पर पड़ने वाले दुष्प्रभावों को प्रस्तुत किया है। धर्म के नाम पर जनसामान्य को उल्लू बनाकर अपना हित साधने वालों पर व्यंग्यात्मक प्रहार किया है।

बाल नाटक

सफ़दर हाशमी ने सिर्फ बड़ों की नहीं बल्कि बालकों में जनचेतना जागृत करने के लिए कई नाटक रचे इनमें प्रमुख हैं गिरगिट, गोपी गवैया बाघा बजैया, मूर्तिकार, राजा की खोज, ये दुनिया रंगीन।

सफ़दर हाशमी द्वारा बच्चों के लिए लिखा गया नाटक 'गिरगिट' कक्षा या अवकाश के दौरान, असेंबली ग्राउंड या स्कूल हॉल में मंचित, यह भारतीय जीवन में सत्ता के खेल पर अपने प्रफुल्लित करने वाले, मार्मिक रूप से बच्चों के साथ जनचेतना को प्रस्तुत करता है।

सफ़दर हाशमी की पत्नी मलयश्री हाशमी द्वारा दिए गए एक वक्तव्य के अनुसार "बच्चों के लिए जो लिखा जाता है, उसके साथ समस्या यह है कि यह स्वर में नैतिक है जिसका अर्थ है कि कलात्मक अनुभव खो गया है" 1970 के दशक में। "यहाँ तक कि जब स्कूलों में गिरगिट किया जाता है, तो शिक्षक पूछते हैं: 'तो क्या सीखा?' (आपने क्या सीखा?)। लेकिन बच्चों को बिना किसी नैतिक विज्ञान के पाठ के बात समझ में आती है। यह क्रूर बल, तांडववाद के बारे में है कि शक्तिशाली कैसे दूर हो जाते हैं - वे जो कुछ भी अपने आसपास देखते हैं।" सफ़दर के नाटक न सिर्फ वयस्कों बल्कि बच्चों में भी जनचेतना जागृत करने का अच्छा माध्यम है।

सफ़दर हाशमी की कविताएँ

सफ़दर हाशमी कहते थे- मुद्दा यह नहीं है कि नाटक कहाँ आयोजित किया जाए बल्कि मुख्य मुद्दा तो उस अवश्यंभावी और न सुलझने वाले विरोधाभास का है, जो कला के प्रति 'व्यक्तिवादी बुर्जुवा दृष्टिकोण' और 'सामूहिक जनवादी दृष्टिकोण' के बीच होता है। उन्होंने नुक्कड़ नाटकों के माध्यम से आम लोगों की आवाज़ सामने रखी। सफ़दर हाशमी ने कई कविताएँ लिखीं जो आज भी बेहद पसंद की जाती हैं। जैसे -

1. किताबें

किताबें, कुछ तो कहना चाहती हैं
तुम्हारे पास रहना चाहती हैं।
किताबों में चिड़िया दीखे चहचहाती,
कि इनमें मिलें खेतियाँ लहलहाती।
किताबों में झरने मिलें गुनगुनाते,
बड़े खूब परियों के किस्से सुनाते।

किताबों में साईंस की आवाज़ है,
किताबों में रॉकेट का राज़ है।
हर इक इल्म की इनमें भरमार है,
किताबों का अपना ही संसार है।
क्या तुम इसमें जाना नहीं चाहोगे?
जो इनमें है, पाना नहीं चाहोगे?
किताबें कुछ तो कहना चाहती हैं,
तुम्हारे पास रहना चाहती हैं!

2. मच्छर पहलवान

बात की बात
खुराफत की खुराफात,
बेरिया का पत्ता
सवा सत्रह हाथ,
उसपे ठहरी बारात!
मच्छर ने मारी एड़
तो टूट गया पेड़,
पत्ता गया मुड़
बारात गई उड़।

3. पढ़ना लिखना सीखो

पढ़ना-लिखना सीखो, ओ मेहनत करने वालो,
पढ़ना-लिखना सीखो, ओ भूख से मरने वालो।
क ख ग घ को पहचानो, अलिफ़ को पढ़ना सीखो,
अ आ इ ई को हथियार, बनाकर लड़ना सीखो।

दुनिया सबकी, आज़ादी, सर्दी, समर सिंह की सालगिरह, शिव्वी का अगूंठा, बाग की सैर, पुराने बच्चे, राजू और काजू, बांसुरीवाला, छोटी का कमाल, तबियत जल्दी ठीक करो, जाती सर्दी, कुलबुली चुलबुली, मच्छर पहलवान, पिल्ल, मकड़ी का जाला, पेड़ आदि सफ़दर की कविताएँ बहुत ही विचारोत्तेजक एवं इंकलाबी प्रकृति की हैं।

अनुवाद

बीसवीं शताब्दी में संस्कृति, विशेषतः रंगमंच के क्षेत्र में जर्मन मूर्धन्य बर्तोल्त ब्रेख्त की ख्याति इतनी और ऐसी हो गई कि कई बार यह याद ही नहीं आता कि वह एक बड़े कवि भी थे। यह तो लगभग नहीं ही कि वह क्रांति के अलावा प्रेम के भी कवि थे। स्त्रियों में उनकी गहरी दिलचस्पी थी और उनके अनेक प्रणय-संबंधों के किस्से चलते रहे हैं। ब्रेख्त की बहुत सी कविताओं का बेहतरीन अनुवाद सफ़दर ने किया।

15.4 पाठ सार

भारत में नुक्कड़ नाटक 1970 के दशक में फला फूला। तब से आज तक भारतीय परिदृश्य में राजनैतिक, सामाजिक स्तर पर विभिन्न प्रकार के नुक्कड़ नाटक मनोरंजन से अधिक सांस्कृतिक हस्तक्षेप के रूप में जनसामान्य के बीच सीधे स्तर पर चेतना जागृत करने का काम कर रहा है। सत्ता एवं प्रभावशाली लोगों के द्वारा समाज में तार्किकता के साथ उठने वाली हर आवाज़ को, डराया-धमकाया जा रहा हो, जब हर किसी पर एक ख़ास विचारधारा थोपने की कोशिश की जा रही हो, तब और सत्ता के निरंकुश होने की ऐसी हर परिस्थिति में सफ़दर हाशमी जैसे क्रांतिकारी व्यक्ति प्रासंगिक बने रहेंगे और समाज में युवाओं के लिए पथप्रदर्शक का कार्य करते रहेंगे। हाशमी भारतीय वामपंथ के लिए सत्तावाद के खिलाफ सांस्कृतिक प्रतिरोध का प्रतीक के रूप में विद्यमान हैं। इस विधा को लोकप्रिय बनाने में सफ़दर हाशमी ने अपनी पूरी प्रतिभा लगा दी और इसी पर उन्होंने अपनी ज़िंदगी कुर्बान कर दी। उनके प्रमुख नाटकों में हल्ला बोल, मशीन, राजा का बाजा, गाँव से शहर तक और अपहरण भाईचारे का विशेष उल्लेखनीय हैं।

15. 5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं -

1. सफ़दर हाशमी मूलतः रंगकर्मी थे।
2. उन्होंने राजनैतिक और सामाजिक परिवर्तन के लिए नुक्कड़ नाटक का सार्थक और सफल प्रयोग किया।
3. सफ़दर हाशमी की बदलाव के प्रति जिद्द यथास्थितिवादियों को पसंद नहीं थी। इसके बावजूद सफ़दर अपने मिशन से नहीं हटे।
4. अपनी परिवर्तनकामी रचनाधार्मिता का मूल्य अंततः सफ़दर हाशमी को अपनी जान गवांकर चुकाना पड़ा।

15.6 शब्द संपदा

1. जनवाद = जनता में फैली बात
2. निरंकुश = अंकुश के बिना। करूर
3. परिवर्तनकामी = परिवर्तन चाहने वाला
4. प्रतिरोध = विरोध
5. यथास्थिति = पूर्व स्थिति बनाए रखने की अवस्था
6. वामपंथ = प्रगतिशील का समर्थक

15.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. नुक्कड़ नाटककार सफ़दर हाशमी के व्यक्तित्व और जीवन संघर्ष को स्पष्ट कीजिए।
2. सफदर हाशमी के जीवनवृत्त का संक्षिप्त परिचय देते हुए नुक्कड़ नाटक के विकास में उनकी भूमिका पर विस्तृत विवेचन कीजिए।
3. सफ़दर हाशमी ने महिलाओं, मजदूरों और किसानों के आंदोलनों में सक्रिय भूमिका है।' इस कथन की पुष्टि कीजिए।
4. सफ़दार हाशमी के प्रमुख नुक्कड़ नाटकों का संक्षिप्त परिचय दीजिए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. सफ़दार हाशमी की हत्या क्यों और किन परिस्थितियों में हुई?
2. सफ़दर हाशमी के नुक्कड़ नाटकों की विषयवस्तु पर प्रकाश डालिए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. सफ़दर हाशमी के किस नाटक में मजदूर महिलाओं की समस्याओं का चित्रण है? ( )
   (अ) हल्ला बोल (आ) राजा का बाजा (इ) गाँव से शहर तक (ई) मूर्तिकार
2. नुक्कड़ नाटक को देश में विशिष्ट पहचान दिलाने वाले सफ़दर हाशमी ने किस वर्ग के मुद्दों को प्रमुक्ता से उठाई? ( )
   (अ) पूँजीपति (आ) मजदूर (इ) वृद्ध (ई) हाशियाकृत
3. इसमें से एक सफ़दर हाशमी द्वारा रचित कविता नहीं है। ( )
   (अ) पढ़ना लिखना सीखो (आ) नीड़ का निमंत्रण (इ) मच्छर पहलवान (ई) किताबें

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. सफ़दर हाशमी .... वर्ग के प्रति प्रतिबद्ध हैं।
2. सफ़दर हाशमी की पत्नी मलयश्री को .... नाटक के कारण पहचान मिली।
3. सफ़दर ने अपने नाटकों के माध्यम से .... लोगों के लिए आवाज उठाई थी।
4. भारतीय समाज में दिन प्रति दिन बढ़ती सांप्रदायिकता का चित्रण .... नाटक में है।

III. सुमेल कीजिए -

1. सफ़दर हाशमी	(अ) मजदूरों का जीवन
2. हल्ला बोल	(आ) जनसरोकार
3. राजा का बाजा	(इ) बाल नाटक
4. नुक्कड़ नाटक	(ई) बेरोजगारी की समस्या
5. गिरगिट	(उ) आम जनता की आवाज

15.8 पठनीय पुस्तकें

1. सफ़दर (सफ़दर हाशमी का व्यक्तित्व और कृतित्व) : राजकमल प्रकाशन

इकाई 16 : 'अपहरण भाईचारे का' का विवेचन

रूपरेखा

16.1 प्रस्तावना
16.2 उद्देश्य
16.3 मूल पाठ : 'अपहरण भाईचारे का' का विवेचन
16.3.1 'अपहरण भाईचारे का' परिचय
16.3.2 'अपहरण भाईचारे का' तात्विक विवेचन
16.4 पाठ सार
16.5 पाठ की उपलब्धियाँ
16.6 शब्द संपदा
16.7 परीक्षार्थ प्रश्न
16.8 पठनीय पुस्तकें

16.1 प्रस्तावना

सफ़दर हाशमी ने आधुनिक भारतीय नाट्य साहित्य में नुक्कड़ नाटक को नई धार देते हुए उसे भारतीय जनमानस के समक्ष देशीय संदर्भों में प्रस्तुत करने का महत्वपूर्ण कार्य किया। सफ़दर लगभग सोलह वर्षों 'जननाट्य संघ' से जुड़े रहे तथा 'जननाट्य संघ' के साथियों के साथ भारतीय जनसमुदाय की आवाज को विभिन्न नुक्कड़ नाटकों के माध्यम से प्रस्तुत करते रहे। उनके हाथों में नुक्कड़ नाटक विधा न सिर्फ पुनर्जीवित हुई बल्कि धारदार और प्रभावशाली बनी। सफ़दर बहुमुखी प्रतिभा संपन्न लेखक एवं कलाकार थे। एक नाटककार, गीतकार, मंच-निर्देशक और संगठक के रूप में उन्होंने अपनी अभूतपूर्व प्रतिभा का परिचय देते हुए दर्जनों नाटकों का सृजन करते हुए उनमें प्रमुख भूमिका निभाई। नाट्य लेखन, मंच, काव्य सृजन के साथ-साथ सफ़दर न विभिन्न समाचार पत्रों एवं पत्रकाओं में संस्कृति एवं तात्कालीन सामाजिक विषयों पर अनेक लेख भी लिखे। उन्होंने सी.पी.एम. के सदस्य के रूप में भी बहुत सक्रियता दिखाई। इस इकाई में उनके नुक्कड़ नाटक 'अपहरण भाईचारे का' का अध्ययन करेंगे।

16.2 उद्देश्य

प्रिय छात्रो! इस इकाई को पढ़ने के बाद आप -

- नुक्कड़ नाटक 'अपहरण भाईचारे का' की विषयवस्तु से परिचित हो सकेंगे।
- इस नाटक की तात्विक विशेषताओं के बारे में जान सकेंगे।
- समकालीन सामाजिक-राजनैतिक संदर्भ में इस नाटक की प्रासंगिकता को समझ सकेंगे।
- इस नाटक में निहित व्यंग्य से अवगत हो सकेंगे।
- इस नाटक के उद्देश्य और महत्व को समझ सकेंगे।

16.3 मूल पाठ : 'अपहरण भाईचारे का' का विवेचन

16.3.1 'अपहरण भाईचारे का' परिचय

'अपहरण भाईचारे का' सफ़दर हाशमी द्वारा रचित एक महत्वपूर्ण नुक्कड़ नाटक है। इस नाटक में सफदर हाशमी ने व्यंग्यात्मक रूप से भारत में बढ़ते हुए सांप्रदायिक विवाद का चित्र खींचते हुए समस्या को बहुत ही सटीकता के साथ प्रस्तुत किया है। 'अपहरण भाईचारे का' की रचना 1986 में हुई तथा इसकी नाट्यावधि कुल 45 मिनट की थी। उस समय इसके कुल 50 शो किए जा चुके थे। सफदर की हत्या से विराम सा लग गया। बाद में अन्य मंचों द्वारा इसके मंचन निरंतर चलता रहा जो कि वर्तमान तक चल रहा है।

नाटक के अन्त में भाईचारे की पुनः स्थापना के लिए भारत के नवयुवकों का आह्नान किया गया है। भाईचारा कहता है - आओ भारत देश के वीरों आओ! मुझको आजाद करो, आओ मेरे बन्ध्न तोड़ो, अमन को पिफर आबाद करो। सांप्रदायिकता की बेड़ियों में जकड़े भाईचारे की मुत्तिफ-कामना को इस नाटक में कलात्मक अभिव्यत्तिफ प्रदान की गई है।

नाटक के प्रारंभ मदारी एवं जमूरे के खेल से होता है। जमूरा काली चादर लिए बैठा है। मदारी इधर-उधर घूमते हुए संवाद करता रहता है। पेट की खातिर मदारी और जमूरा जनता के समक्ष स्वयं तमाशा बन उनका मनोरंजन करते हैं। मदारी का खेल देखने के लिए एकत्रित हुए लोग परेशान नज़र जाते हैं क्योंकि उनकेभाइचारे को अपहरण हो गया है। मदारी जमूरे को लोगों में खोए हुए भाईचारे को ढूँढ़ने के लिए भेजता है। जमूरा भाईचारे को खोजने के लिए निकल पड़ता है। वह खोजने का प्रयास करता है कि आखिर गली मुहल्लों में त्रिशूल कौन वितरित करवाता है, अल्ला-ईश्वर के नाम पर सेनाओं का गठन कौन करवाता है, कौन खालिस्तान का नारा लगवाता है।

रास्ते में जमूरे की भेंट एक रिंग मास्टर से होती है। रिंग मास्टर अमेरिका से आया है और टूटी-फूटी हिंदी में वार्तालाप करता है। वह कहता है "यस बटाट है। हम एक वाइल्ड लाइफ का लवर है, यानि जंगली जानवर को प्यार करता है।" रिंग मास्टर जंगली जानवरों की देखभाल करता था तथा उनके खाने पीने की व्यवस्था करता था। हमारे देश में धर्म, जाति आदि के नाम पर लोग परस्पर लड़ते-झगड़ते रहते हैं फलस्वरूप सांप्रदायिक भेदभाव इतना अधिक बढ़ गया है कि रिंग मास्टर सांप्रदायिकता को कोई जंगली जानवर समझ उसे पकड़न के लिए भारत आता है। रिंग मास्टर कहता है-"हमने सुना है कि टुमारे डेस में एक बहुत कटरनाक जानवर होटा है जिसका नाम है सैम प्रो डाईकटा।"

जमूरे की समझ में रिंग मास्टर की बात आती नहीं है। वह सोचता है शायद सैम प्रो डाईकटा किसी साँप का नाम होगा। इस पर रिंग मास्टर और जमूरे के मध्य संवाद बहुत ही रोचक है -

रिंग मास्टर - पहचान, नाओ लेम्मी, सी, लेम्मी सी, यस आई गॉट इट। वो जिडर भी जाता है लोग लरने लगते हैं, एक दूसरे को मारने लगते हैं, और, और, और- यस-उसके हाट

पैर से नाकून नहीं, ट्रीसू निकलटे हैं, चाकू निकलटे हैं, और स्टेनगन निकलटे हैं। अब समजा।"

जमूरा - (डर जाता है) सर, आप कहीं सांप्रदायिकता की बात तो नहीं कर रहे हैं।

रिंग मास्टर जमूरे से जानना चाहता है कि सांप्रदायिकता उसे कहाँ मिलेगा। इस जमूरा जवाब देता है कि किधर मिलेगा। अरे ये पूछो किधर नहीं मिलो। सुअरिया की तरह वियाह रहा है सुसरा। इत्ते बच्चे दिए है साले ने कि दिल्ली के चप्पे चप्पे में फैल गए हैं।

जमूरा रिंग मास्टर को भारत में सांप्रदायिकता के जन्मने तथा फैलने की बात बताता है। वह कहता है कि एक अंग्रेज लाट साहब इसे भारत में लेकर आया था और बाद में सांप्रदायिकता इतनी पनप गई कि चारों तरफ मार-काट मच गई। रिंग मास्टर जमूरे से कहता है कि वह सांप्रदायिकता को ट्रेन करना चाहता है। "अरे मैन, हमने इससे बी खटरनाक जानवरों को ट्रेन किया है। अफ्रीका में एक जानवर होटा-नस्लवाड, टुमारा सैमप्रोडाइकटा जैसा खटरनाक, लेकिन हमने उसका ट्रेन किया है। टुम हमको नहीं पहचानटा, हम है द ग्रेट अमेरिकन सर्कस का मालिका हम टुमारा सैमप्रोडाइकटा को भी ट्रेन करेगा।" जमूरा रिंग मास्टर को बताता है कि सांप्रदायिकता को सरकार ने राष्ट्रीय जंतु घोषित किया है सो उसे ट्रेन करने के लिए सरकार से अनुमति लेनी पड़ेगी।

सरकारी अनुमित लेने के लिए रिंग मास्टर मंत्री से मिलने जाता है। लेकिन मंत्री से मुलाकार होने से पहले ही रिंग मास्टर हिंदू, मुस्लिम, सिख आदि संप्रदायों के लोगों के जोशीले वार्तालाप को सुनता है।

जमूरा को मदारी ने भाईचारे की खोज करने के लिए भेजा था लेकिन जमूरा तो रिंग मास्टर के चक्कर में पड़ने के कारण भाईचारे की बात भूल ही जाता है। इस पर मदारी गुस्से में आ जाता है और कहता है - "भाईचारे को भूल गया। अबे धरती के आवारा बेटे, अगर तू ही भाईचारे को भूल गया तो इस देश का क्या होगा। जा फिर से ढूँढने जा, पब्लिक इंतजार कर रही है।"

मंच पर अलग-अलग दिशाओं से तीन गुंडे आते हैं। एक गुंडा हर, हर महादेव का नारा लगता है तो दूसरा गुंडा अल्ला हो अकबर का तथा तीसरा गुंडा खालिस्तान जिंदाबाद का नारा लगाता है। तीनों गुंडे अपने अपने धर्म के नाम पर लोगों को भड़काने लगते हैं। इसी बीच भाईचारा आता है और कहता है – "खामोश, खामोश, खामोश। नहीं बंटेंगे यहाँ पर त्रिशूल, नहीं उठेंगे खालिस्तान के नारे, नहीं निकलेंगी मजहबी तलवारें। ये हिंदोस्तान है। यहाँ पर सब अमन-चैन से रहेंगे। हिंदू-मुस्लिम, सिख, ईसाई भाई-भाई की तरह रहेंगे।" तीनों गुंडे भाईचारे से पूछते हैं कि वो कौन है। उसका उत्तर है - "मैं हूँ, भाईचारा, हिंदोस्तान की एकता का रखवाला, जब तक मैं जिंदा हूँ तुम्हें फूट के शोले नहीं भड़काने दूंगा,

न हिंदूराष्ट्र
न खालिस्तान
एक रहेगा हिंदोस्तान
एक रहेंगे हिंदोस्तानी

एक रहेगा हिंदोस्तान
दीन धरम के नाम पे दंगे कोई नहीं कर पाएगा,
अब के लड़ाई लानेवाला बचके न जाने पाएगा।”

तीनों गुंडे भाईचारे को मारते पीटते हैं और उसे बुरी तरह से खस्ताहाल कर देते हैं। समाज में चारों तरफ भेदभाव और सांप्रदायिकता ने अपना वर्चस्व ऐसा स्थापित कर लिया है कि लोगों को भाईचारे नाम की कोई चीज है ऐसा लगता ही नहीं है। प्रत्येक व्यक्ति अपनी स्वार्थसिद्धि में संलिप्त है। रिंग मास्टर जो कि मंत्री से मिलने गया हुआ था वह वापस आ पहूंचता है। रिंग मास्टर तीनों गंडों से दोस्ती कर लेता है। तीनों गुंडे रिंग मास्टर को अपना परिचय देते हुए उससे सहायता मांगते हैं। सहायता भी आर्थिक सहायता उसके बदले में वे रिंग मास्टर के गुलाम बनना स्वीकार कर लेते हैं।

रिंग मास्टर और गुंडों में जब दोस्ती हो जाती है तो वे हाथ मिलाते हैं जिससे जमूरा पागल सा हो जाता है और वह रिंग मास्टर पर झपटता है। इतने में मदारी भी वहाँ पहुंचता है। मदारी द्वारा जमूरे से पूछताछ करने पर वह बताता है कि गुंडों ने उसकी यह हालत की है। वह भाईचारे के जख्मी होने की बात भी बताता है। मदारी वहाँ उपस्थित दर्शकों को संबोधित करते हुए कहता है- ‘मेहरबानो, कदरदानो, आपने सुना, आपका भाईचारा कैद है, उसके दुश्मनों का नाम भी आपने सून लिया। जाइए, जाइए, अपने भाईचारे को छुड़ाकर लाइए। क्या, आप लोग नहीं जाएँगे। ऐसे ही खड़े रहेंगे। अरे अपने भाईचारे की रक्षा आप नहीं करेंगे तो और कौन करेगा। किसके सहारे बैठे हैं आप लोग। किसकी आस लगाए हैं। क्या कहा, ये काम सरकार का है। अरे सरकार का तो न जाने क्या-क्या काम है। जानोमाल की रक्षा करना सरकार का काम है। कर पाती है। मंहगाई रोकना सरकार का काम है। रोक पाती है। रोजगार देना, शिक्षा देना सरकार का काम है, दे पाती है। अरे इसी सरकार के सहारे बैठे रहे तो देश के टुकड़े टुकड़े हो जाएँगे। ये लोग तो अब भी चुप हैं।”

जमूरा कहता है कि जो लोग तमाशा देखने यहाँ पहुँचे हैं वे तो बस तमाशा देखने लायक ही है। उनके भाईचारे का अपहरण होता रहेगा। मुहल्लों में त्रिमूल बँटते रहेंगे, खालिस्तान के नारे लगते रहेंगे और ये लोगा नारों की लपट में आकर एक दूसरे का खून होते देखते रहेंगे, लेकिन कोई भी खूनी के हाथ को रोकने की कोशिश करेंगे।

‘अपहरण भाई चारे का’ नुक्कड़ नाटक की समाप्ति भाईचारे के रिंग मास्टर एवं गुंडों के द्वारा अपहरण किए जाने से होती है। रस्सियों से जकड़ा भाईचारा आता है। उसकी रस्सियां थामें हैं रिंग मास्टर और तीन गुंडे। तब भाईचारा कहता है -
मेरा जन्म हुआ था भाई
कितनी ही सदियों पहले
कोई मुझको कहे एकता
कोई भाईचारा कह ले।
मेरे ही बूते वीरों ने
आज़ादी की जंग लड़ी

मेरी ही ताकत से डर
अंग्रेजी सेना भाग खड़ी।
आज अगर ये देश सलामत
है तो मेरे ही बल से
आज अगर में मर जाऊं तो
गृहयुद्ध होगा कल से।
आओ भारत देश के वीरों
आ मुझको आजाद करो
आओ मेरे बंधन तोड़ो
अमर को फिर आबाद करो।

बोध प्रश्न

- 'अपहरण भाईचारे का' शीर्षक नाटक में किस शैली का प्रयोग किया गया है?

16.3.2 'अपहरण भाईचारे का' तात्विक विवेचन

कथावस्तु

नुक्कड़ नाटकों की माँग संक्षिप्त कथावस्तु पर यह नाटक खरा उतरता है क्योंकि 'अपहरण भाईचारे का' की कथा बस इतनी है कि 'भाईचारा' जो कि वस्तत: परस्पर सौहार्दय की भावना है उसका अपहरण असामाजिक एवं अलगाववादी तत्वों के द्वारा कर लिया है। मानवीकरण के रूप में भाईचारे की प्रस्तुति नुक्कड़ नाटक की प्रमुख विशेषताओं में से एक है। अलगाववादी लोग जब आपस में लड़ते हैं मेलजोल की भावना को अपनी स्वार्थसिद्धि के लिए नकारात्मक रूप से प्रभावित करते हैं तब उसका लाभ कोई तीसरा अवश्य उठाता है। इस नाटक का रिंग मास्टर बाहरी तत्व है जो कि स्वतंत्रता के पूर्व का अंग्रेजी शासन है। जिससे इस देश के राजाओं के आपसी संघर्ष का लाभ उठाया और भारत पर दो सौ वर्षों तक राज किया। नाटककार इस नाटक के रिंग मास्टर के माध्यम से सचेत करता है कि यदि भारत के लोगों ने परस्तर भाईचारा, मेलभाव नहीं रखा तो हमारा देश फिर से गुलाम हो जाएगा। जमूरा और मदारी के संवादों से न सिर्फ चिंता व्यक्त होती है बल्कि कुछ करने के लिए उकसाने का कार्य भी किया गया है ताकि जनता जागृत हो जाए और अलगावादियों के प्रभाव में न आए।

बोध प्रश्न

- रिंग मास्टर किसके प्रतीक हैं?

उद्देश्य

'अपहरण भाईचारे का' प्रमुख उद्देश्य जनजागरण है जिसमें तीनों गुंडों द्वारा भाईचारे को मारा पीटा जाना तथा अपने आर्थिक लाभ को ध्यान में रखते हुए अमेरिकन रिंग मास्टर से हाथ मिलाना स्वार्थ सिद्धि एवं अवसरवादिता को दर्शाता है। लोग अपने लाभ के लिए देश का अहित करने में जरा भी नहीं हिचकिचाते हैं। इससे बचना आवश्यक है और यह तभी संभव है जब हम सभी में भाईचारा बना रहे। हम आर्थिक स्थिति, धर्म, जाति इत्यादि के आधार पर लड़ने बचेंगे तभी समाज में चैनोअमन बना रहेगा अन्यथा रिंग मास्टर जैसा कोई बाहरी हमें फिर से गुलाम

बना लेगा। अमेरिकन रिंग मास्टर सांप्रदायिकता नामक जानवर का सरंक्षण कर उसे और अधिक मोटा ताजा करना चाहता है ताकि उसका उपयोग वह अन्य लोगों को दमन करने के लिए कर सके। गुंडे भाईचारे को लहुलुहान कर देते हैं। घायल भाईचारे को जमूरा पहचान नहीं पाता है। बतौर नाटक इस दृश्य की बानगी देखते ही बनती है -

भाईचारा : अपने भाईचारे को नहीं पहचानते। उससे पूछते हो कौन है तू। यह नौबत आ गई है। जो भाईचारा हमेशा से तुम्हारे साथ, तुम्हारे गली-मुहल्लों, तुम्हारे घरों में रहा, जो तुम्हारे तीज-त्योहारों, तुम्हारी खुशी गमी में बराबर का शरीक रहा, जिसका हाथ थामें तुमने जुलमों सितम से लोहा लेना सीखा, आज उसी भाईचारे से पूछते हो कि तू कौन है।

जमूरा : भाईचारे, मुझे माफ कर दे। मैं तुझे पहचान नहीं सका। मुझे यकीन नहीं होता कि इस देश में तेरी यह हालत हो जाएगी। जो लोग तेरी खातिर अपनी जान लुटा देते थे, अपनी जान पर खेल जाते थे, वह एक दिना तेरा यह यहाल होने देंगे। चल तू मेरे साथ, जिन्होंने तेरा यह हाल किया है मैं उनको जिंदा नहीं छोडूंगा।

प्रांतों की सांप्रदायिकता को प्रस्तुत करना। राजनीतिज्ञों द्वारा जनता की भावनाओं से खिलवाड़ करना, समाज में एकता की स्थापना इस नाटक के उद्देश्य हैं।

बोध प्रश्न

- 'अपहरण भाईचारे के' नाटक का प्रमुख उद्देश्य क्या है?

अभिनय

अभिनेयता की दृष्टि को नुक्कड़ नाटक में अभिनय ही सब कुछ होता है ऐसा कहना अतिश्योक्तिपूर्ण नहीं हो गया क्योंकि बिना किसी ताम-झाम के जनता के बीच में बहुत ही सहज भाव से दर्शकों को एकत्रिता करना तथा उन्हें नाटक के उद्देश्य को समझाना तभी संभव हो सकता है जब अभिनेता सामान्य जनता के स्तर तक आकर अभिनय करे जिससे दर्शकों यह लगे कि उसकी बात उसी के जैसे व्यक्ति द्वारा सर्वहित ध्यान में रखकर की जा रही है और यह कार्य सरल नहीं है। अभिनय की सहजता ही नुक्कड़ नाटक की सफलता का मुख्य आधार होता है। जनता की बात जनता की आवाज में जनता के साथ तादात्मय स्थापित करते हुए करना ही सफल नुक्कड़ नाटक अभिनेता की प्रमुख लक्षण या अनिवार्यता तत्व कहा जा सकता है। 45 मिनट की अवधि के इस नाटक में प्रत्येक कलाकार को उचित स्थान दिया गया है ताकि वे सटीकता के साथ अपनी पात्रानुकलता बात रख सकें।

नुक्कड़ नाटक में वाचिक अभिनय, वाक भंगिमाएँ, संकेत भाषाएँ, चुप्पी की भाषाएँ आदि अभिनय प्रणाली में आते हैं। कभी कभी चुप्पी तक सहारा लिया जाता है ताकि नाटक के कथ्य और अभिनय को सघनता, सार्थकता प्रदान की जा सके। वस्तुत: अभिनय की मुख्य कसौटी ही प्रयोगधर्मिता की अनंत सभावनाओं पर टिकी हुई होती है। नुक्कड़ नाटक के अभिनय में आंगिक और वाचिक अभिनय पहलू पर अधिक बल दिया जाता है। गोलाकार अभिनय स्थल में कलाकार बैठे हैं। एक कलाकार सिर्फ पैंट पहने सीटी बजाते, करतब दिखाते, सबका अभिवादन करता है। बाकी कलाकार ताली बजाते, तरह-तरह की आवाजें कसते हैं। पहला कलाकार अंदाज

से दायरे के एने बीच में रखे सामान को पहनता है। यह सामान है- अमरीकन टीशर्ट, छड़ी, मुखौटा, अमरीकन टॉप हैट, बेल्ट में लगी पिस्तौल और एक ढीला चौगा जिस पर पैबंद लगे हैं। इन पैबंदों पर छँटनी, बेरोजगारी, महंगाई, स्कैम, केबल टी.वी., डंकल, डॉलर वगैरा लिखा हुआ होना इत्यादि।

बोध प्रश्न

- नुक्कड़ नाटक में प्रमुख रूप से किन पहलुओं पर बल दिया जाता है?

पात्र या चरित्र चित्रण

नुक्कड़ नाटक में पात्रों की बड़ी अहमियत होती है। पात्र विशेष संकेत के माध्यम से मन्तव्य को स्पष्ट करते हैं। नाटक की सार्थकता पात्रों के अभिनय पर टिकी होती है। 'अपहरण भाईचारे का' नुक्कड़ नाटक के प्रमुख पात्र मदारी और जमूरा हैं। सहयोगी पात्र के रूप में रिंग मास्टर, तीन गुंडे हैं। भाईचारा नायक है जिसपर आधारित होकर कथा आगे बढ़ती है और अपने अंजाम तक पहुंचती है। पात्रों की अहमियत की दृष्टि कहा जा सकता है कि 'अपहरण भाईचारे का' नुक्कड़ नाटकों में चरित्र-चित्रण में कई नई दृष्टियों का सूत्रपात हुआ है जिनके तहत अभिनेता अथवा पात्रों ने अभिनय करते समय चरित्र के रूप में क्रिया-व्यापार, वेषभूषा, चरित्र, संवाद को अभिनीत किया है।

सूत्रधार

'अपहरण भाईचारे का' नाटक में सूत्रधार मदारी है तथा सहयोगी सूत्रधार जमूरा कहा जा सकता है क्योंकि सम्पूर्ण कथा इन्हीं दोनों के माध्यम से चलती है और अपने अंजाम तक पहुंचती है।

वेशभूषा

नुक्कड़ नाटक में मंचीय नाटकों की तुलना में वेषभूषा को अधिक महत्त्व नहीं दिया जाता है। मंचीय तामझाम और सीधे-सादे प्रविधि के कारण इन नाटक में वेषभूषा को कम किंतु सार्थक यथायोग्य प्रयोग के रूप में अपनाया जाता है। उदाहरण के लिए 'अपहरण भाईचारे का' में मदारी और जमूरा परंपरागत साधारण कपड़ों में प्रस्तुत होते हैं। रिंग मास्टर शहर कपड़ों में तथा मुख्य पात्र भाईचारा नाटक की रचना के मूल उद्देश्य को प्रस्तुत करने के अनुरूप फटेहाल तथा नाटक के अंत में रस्सियों में जकड़ा हुआ उपस्थित होता है।

प्रतीकात्मक वेशभूषाओं का प्रयोग नुक्कड़ नाटक की खासियत रही है। उदाहरण स्वरूप नेता की भूमिका निभाने के लिए खादी टोपी, पुलिस की भूमिका के लिए बेल्ट, डंडे का प्रयोग, किसान और मजदूर के लिए गमछे का प्रयोग, गुंडे के चरित्र के लिए रंगीन रुमाल और काला चश्मा, राजा के लिए मुकुट आदि प्रतीकात्मक वेषभूषा का प्रयोग इस नुक्कड़ नाटक में भी किया गया है।

ध्वनि

ध्वनि व्यवस्था के तहत 'अपहरण भाईचारे का' नाटक में सर्वप्रथम ध्वनि के तहत मदारी की डुगडुगी का सहारा दर्शकों का एकत्रित करने लिए किया गया है। इसके अतिरिक्त गानों को

सामान्य आवाज के साथ कहीं एकल तो कहीं कोरस के रूप में प्रस्तुत करते हुए जन संदेश देने का कार्य किया गया है।

मंचन स्थल चयन

चूंकि यह शुद्ध सामाजिक चेतना का नाटक है इसका मंचन, किसी भी पार्क, मैदान, कॉलेज प्रांगण, नुमाइश, खेल का मैदान आदि में किया जा सकता है। इसकी अवधि 45 मिनट की होने के नाते इस नाटक को गली मुहल्लों या चौराहों पर प्रदर्शित करने में यातायात बाधित होने की समस्या आ सकती है। इसके अतिरिक्त 45 मिनट तक चलते हुए यथा बाजार आदि के लिए आए, किसी काम के लिए जा रहे दर्शकों को रोक पाना कठिन कार्य होगा। अत: इस नाटक का मंचन किसी भी ऐसे स्थान पर उपयुक्त होगा जहाँ लगभग एक घंटे तक लोग आराम से रुक सकें ताकि बिना असुविधा के नाटक के उद्देश्य एवं संदेशों का जन सामान्य तक संप्रेषण अबाधित रूप से हो सके।

समय

सामान्यत: नुक्कड़ नाटकों की अवधि कम से कम उत्तम मानी जाती है परंतु कई बाद विषय की गंभीरता एवं व्यापकता को देखते हुए अवधि अधिक भी रखी जाती है। सफदर हाशमी के अधिकांश नुक्कड़ नाटक 15 से 35 मिनट के हैं परंतु इस नाटक का फलक व्यापक होने के कारण इसकी अवधि 45 मिनट हुई। संभवत: यही कारण रहा हो कि जहाँ अन्य नाटकों के प्रदर्शनों की संख्या 500 तक पहुँची परंतु इस नाटक के प्रदर्शनों की संख्या 50 तक ही पहुँची थी।

प्रकाश योजना

नुक्क्ड़ नाटकों के लिए प्रकाश योजना के तहत इतना ध्यान रखा जाना चाहिए कि जब इस प्रकार के नाटकों का मंचन किया जाए तब दिन का समय होना चाहिए क्योंकि पार्कों, चौराहों, मैदानों आदि में दर्शक निश्चित नहीं होते हैं है तो चलते फिरते लोग दिन के समय ही कहीं रूक कर इस प्रकार के प्रदर्शन देखते हैं शाम होते ही अंधेरे में न तो लोग रूकना पसंद करते हैं और न ही लाइट आदि की व्यवस्था न होने पर कुछ स्पष्ट दिखाई दे सकता है। चूंकि इस प्रकार के नाटकों को मंचन बहुत ही सीमित बजट में होता है लाइट आदि की व्यवस्था पर व्यय कर पाना नाट्य समूहों के लिए संभव भी नहीं हो पाता है। इसी आलोक में कहा जा सकता है कि ‘अपहरण भाईचारे का’ मंचन भी दिन के समय ही किया गया। सफदर हाशमी ने भी कई साक्षात्कारों इस दिशा में रोशनी डाली।

दर्शक

नुक्कड़ नाटकों के दर्शक न तो निश्चित होते हैं और न ये किसी विचाराधारा विशेष के लोगों के लिए लिखे एवं मंचित किए जाते हैं। इनके दर्शक आम आदमी होते हैं जो अपने दैनिक कार्यकलापों के मध्य से थोड़ा सा समय मिलने पर जहाँ कहीं भी थोड़ी भीड़ इक्टटा होती हैं वहीं रूक कर देख लेते हैं। चूंकि जन जागृति इस प्रकार के नाटकों का मूल उद्देश्य होता है इसलिए सामान्यत: जन अधिक से अधिक लोग मिल सकें ऐसे स्थानों पर ही इनका मंचन किया जाता है। सूत्रधार की प्रमुख भूमिका होती है दर्शक इकट्टा करने में वह कोई गाना गाकर या

कविता सुनाकर, ढोल बजाने जैसी क्रियाए करके दर्शकों को एकत्रित करता है। समूह द्वारा ऐसी क्रियाएँ किया जाना आम होता है जिससे आवागमन करने वाले लोग उनकी ओर आकर्षित हो सकें। 'अहपरण भाईचारे का' नाटक में भी जनसामान्य के आकर्षण का केंद्र रहा मदारी-जमूरे के खेल का सहारा लिया गया क्योंकि बाजार, हाट, मेले, चौराहों, मैदानों में इस प्रकार का खेल देखने आम जन आसानी से रूक जाते हैं।

संवाद योजना

नुक्कड़ नाटक की संवाद योजना में वाक्यों, भाषा की सरलता और प्रभावी प्रस्तुती प्रमुख होती है। संवाद योजना एक के बाद एक कड़ी को जोड़ने वाली तथा सहजता से अर्थ संप्रेषित करने वाली होनी चाहिए। इस दृष्टि से सफदर हाशमी बहुत ही अनुभवी व्यक्ति थे उन्होंने सम्पूर्ण नाटक में संवाद योजना को यथास्थिति गत्यात्मकता के साथ योजित किया है। नाटक में संवाद सबसे प्रधान तत्व है। संवाद को लेकर प्रज्ञा का मानना है- "संवाद के माध्यम से लेखकीय पक्षधरता, समस्या, समाधान, परिवेश, पात्रों का व्यवहार आदि समझे जा सकते हैं। नुक्कड़ नाटक की विशिष्टता द्वंद्व और संघर्ष को पात्रों के संवादों से ही जाना जा सकता है। इन संवाद में नाटककार सामाजिक यथार्थ को प्रस्तुत करता है।'

संवाद के माध्यम से दर्शकों तक सामाजिक यथार्थ का संप्रेषण जनता के समक्ष किया जाता है। नुक्कड़ नाटक में संवाद को लंबे और बोझिल के स्थान पर हल्का-फुल्का, तेज तर्रार और संक्षिप्त होने चाहिए। भाषा जटिल न होकर सरल, बोधगम्य और कर्णप्रिय होनी चाहिए। मुक्तछंदों का प्रयोग भी सफदर द्वारा अधिकांश नाटकों में किया गया है। इसके अतिरिक्त गीतों, कविताओं का प्रयोग भी प्लॉट को विकसित करने के लिए किया गया है। नुक्कड़ नाटक के संवादों में छोटे-छोटे, चुस्त, सटीक संवादों का प्रयोग परिलक्षित होता है। दर्शकों का ध्यान नाटक की तरफ मोड़ने के लिए इन संवादों की विशिष्टता अधिक महत्त्वपूर्ण होती है।

'अपहरण भाईचारे का' नुक्कड़ नाटक में सांप्रदायिकता को भड़काने वाली शक्तियों को बेनकाब किया गया है। जिस भाईचारे अथवा एकता के बल पर भारत देश ने स्वतंत्रता प्राप्त की आज वही भाईचारा सांप्रदायिक उग्रवादियों के द्वारा छिन्न-भिन्न कर दिया गया है। प्रस्तुत नाटक में कहा गया है कि इस समस्या को सरकार समाप्त नहीं करती है। मदारी का यह कथन द्रष्टव्य है - "अपने भाईचारे की रक्षा आप नहीं करेंगे तो और कौन करेगा। किसके सहारे बैठे हैं आप लोग। किसकी आस लगाए हैं। क्या कहा, ये काम सरकार का है। अरे सरकार का तो न जाने क्या-क्या काम है। जानो माल की रक्षा करना सरकार का काम है। करती है। मँहगाई रोकना सरकार का काम है। रोकती है। रोजगार देना, शिक्षा देना सरकार काम है। देती है। अरे इसी प्रकार सरकार के सहारे बैठे रहे तो देश के टुकड़े-टुकड़े हो जायेंगे।"

बोध प्रश्न

- इस नाटक में किन शक्तियों को बेनकाब किया गया है?

भाषा

नुक्कड़ नाटकों में भाषा का स्थान महत्वपूर्ण है। नुक्कड़ नाटक की भाषा जनता की भाषा होती है। जनता के शब्द, मुहावरें, लोकगीत और बोली का प्रयोग किया जाता है। नाटक

देखनेवाले दर्शक शिक्षित और अशिक्षित दोनों प्रकारों के होते हैं। कथ्य, दर्शक, समूह, क्षेत्र के अनुसार भाषा का प्रयोग किया जाता है। गाँव और शहर को भी ध्यान में रखा जाता है। नुक्कड़ नाटकों में व्यंग्यात्मक और संवेदनशील भाषा का प्रयोग होता है। नुक्कड़ नाटक समस्याओं को दर्शकों के सामने लाते हैं तथा विचारात्मकता अधिक होने से भाषा का स्वरूप भी वैसा ही रखा जाता है। हिंदी नुक्कड़ नाटकों में वर्णनात्मक, विश्लेषणात्मक, हास्य-व्यंग्यात्मक, आत्मकथनात्मक शैली का प्रयोग किया जाता हैं। विशेष रूप से व्यंग्य शैली को अधिक अपनाया जाता है। 'अपहरण भाईचारे का' नाटक में भाषा सरल, वर्णनात्मक, हास्य-व्यागयात्मक अपनाई गई है।

16.4 पाठ सार

सफ़दर हाशमी का नाटक 'अपहरण भाईचारे का' एक अत्यंत विचारोत्तेजक और प्रेरणास्पद नुक्कड़ नाटक है। इसमें लेखक ने धार्मिक, सांप्रदायिक विद्वेष उत्पन्न करने वालों की जमकर खबर ली हैं। जन-जागरण के उद्देश्य से लिखे गए इस नाटक में राजनीति के स्वार्थी चरित्र का पर्दाफाश किया गया है।

16.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं -

1. 'अपहरण भाईचारे का' शीर्षक नुकड़ नाटक का मूल प्रयोजन जन-जागरण है।
2. नाटककार ने तीन गुंडों द्वारा भाईचारे की पिटाई और आर्थिक लाभ के लिए अमेरिकन रिंग मास्टर से हाथ मिलाने के माध्यम से आपराधिक शक्तियों के राजनीति पर हावी होने तथा साम्राज्यवादी ताकतों के षड्यंत्र पर व्यंग्य किया है।
3. नाटककार ने धर्म, जाति और आर्थिक स्थिति के आधार पर आपस में लड़ने से बचने का संदेश दिया है।
4. नाटककार की साम्यवाद के प्रति प्रतिबद्धता अमेरिकन रिंग मास्टर द्वारा सांप्रदायिकता नाम के जानवर को पालने के माध्यम से फलित हुई है।
5. जमूरा घायल हुए भाईचारे को पहचान तक नहीं पाता, यह आम आदमी के दिग्भ्रम की स्थिति को उजागर करता है।

16.6 शब्द संपदा

1. अपहरण = बलपूर्वक छीन लेना
2. आपराधिक शक्तियाँ = अपराध करने वाली तकतें
3. भाईचारा = भाई के समान, बंधुत्व
4. भ्रष्टाचार = अनैतिक आचरण
5. मानवता = मानव होने की अवस्था

16.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. ‘अपहरण भाईचारे का’ नुक्कड़ नाटक के आलोक में देश में विलुप्त होती भाईचारे की भावना पर विस्तृत विवेचन कीजिए।
2. ‘अपहरण भाईचारे का’ की भाषा शैली पर प्रकाश डालिए।
3. नुक्कड़ नाटक के तत्वों के आधार पर ‘अपहरण भाईचारे का’ विवेचन कीजिए।
4. ‘जमूरा घायल हुए भाईचारे को पहचान तक नहीं पाता, यह आम आदमी के दिग्भ्रम की स्थिति को उजागर करता है।’ इस कथन की पुष्टि कीजिए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. ‘अपहरण भाईचारे का’ का सारांश लिखिए।
2. ‘अपहरण भाईचारे का’ के प्रमुख पात्रों का संक्षिप्त परिचिय दीजिए।
3. ‘अपहरण भाईचारे का’ शीर्षक नुकड़ नाटक का मूल प्रयोजन जन-जागरण है।’ इस उक्ति की पुष्टि कीजिए।
4. ‘अपहरण भाईचारे का’ नुक्कड़ नाटक में सांप्रदायिकता को भड़काने वाली शक्तियों को बेनकाब किस परकार किया गया है?

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए

1. ‘अपहरण भाईचारे का’ नाटक में सूत्रधार कौन है? ( )
   (अ) मदारी (आ) जमूरा (इ) रिंग मास्टर (ई) नाटककार स्वयं
2. ‘अपहरण भाईचारे का’ नाटक की अवधि क्या है? ( )
   (अ) 30 मिनट (आ) 35 मिनट (इ) 40 मिनट (ई) 45 मिनट
3. ‘अपहरण भाईचारा का’ नाटक में भाईचारे को लहुलुहान कौन कर देते हैं? ( )
   (अ) मदारी (आ) रिंग मास्टर (इ) गुंडे (ई) राजा
4. ‘अपहरण भाईचारा का’ नाटक में घायल भाईचारे को कौन नहीं पहचानता? ( )
   (अ) मदारी (आ) जमूरा (इ) रिंग मास्टर (ई) गुंडे

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए

1. ‘अपहरण भाईचारे का’ नाटक में .... शक्तियों को बेनकाब किया गया है।
2. ‘अपहरण भाईचारे का’ शीर्षक नुकड़ नाटक का मूल प्रयोजन .... है।
3. ‘अहपरण भाईचारे का’ नाटक में जनसामान्य के आकर्षण का केंद्र .... खेल रहा।

4. 'अपहरण भाईचारे का' नाटक में सर्वप्रथम ध्वनि के तहत .... की डुगडुगी का सहारा लिया जाता है।

III. सुमेल कीजिए

1. जंगली जानवर	(अ) भाईचारा
2. मदारी	(आ) आम आदमी
3. जमूरा	(इ) सांप्रदायिकता
4. नायक	(ई) सूत्रधार

16.8 पठनीय पुस्तकें

1. सफ़दर (सफ़दर हाशमी का व्यक्तित्व और कृतित्व) : राजकमल प्रकाशन
2. कुछ नुक्कड़ नाटक और एकांकी : शैल कुमारी
3. जनता के बीच जनता की बात : प्रज्ञा
4. नुक्कड़ जनम संवाद, अंक 31-32, अप्रैल-सितंबर 2006

परीक्षा प्रश्न पत्र का नमूना

MAULANA AZAD NATIONAL URDU UNIVERSITY

PROGRAMME: M.A – HINDI

II – SEMESTER EXAMINATION

TITLE & PAPER CODE : हिंदी नाटक, एकांकी और रंगमंच (MAHN204CCT)

TIME: 3 HOURS TOTAL MARKS: 70

यह प्रश्न पत्र तीन भागों में विभाजित हैं- भाग -1, भाग -2 और भाग - 3 प्रत्येक प्रश्न के उत्तर निर्धारित शब्दों में दीजिए।

भाग – 1

1. निम्नलिखित विकल्पों में से सही विकल्प चुनिए। 10X1=10

i. नाटक की सबसे प्रसिद्ध और प्राचीन पुस्तक है- ( )

(A) नाट्यमंडप (B) नाट्यशास्त्र (C) कर्पूर मंजरी (D) नाट्य कला

ii. किस तत्व के करण एकांकी प्रभावशाली बनता है? ( )

(A) कथा (B) उद्देश्य (C) रंगमंचीयता (D) वातावरण

iii. ‘रासलीला’ में किसकी भक्ति की जाती है? ( )

(A) राधा-कृष्ण (B) राम-कृष्ण (C) सीता-राम (D) हनुमान

iv. नुक्कड़ नाटक को अंग्रेजी नाम क्या है? ( )

(A) story (B) Play (C) Street Play (D) Novel

v. ‘निम्न में से कौन सा विकल्प जयशंकर प्रसाद की रचना नहीं है? ( )

(A) आंधी (B) कंकाल (C) तितली (D) कानन-कुसुम

vi. कमला कौन हैं? ( )

(A) देवसेना की माँ (B) भटार्क की माँ (C) स्कंदगुप्त की माँ (D) कोई नहीं

vii. धर्मवीर भारती जी का जन्म कब हुआ था? ( )

(A) 1927 (B) 1926 (C) 1925 (D) 1930

viii. ‘अंधायुग’ किसका नाटक हैं ? ( )

(A) जयशंकर प्रसाद (B) भारतेंदु (C) सर्वेश्वर दयाल सक्सेना (D) धर्मवीर भारती

ix. मृणाल पाण्डे की पहली कहानी का क्या नाम है? ( )

(A) कोहरा और मछलियाँ (B) दोपहर में मौत

(C) शब्द बेधी (D) दरम्यान

x. मृणाल पाण्डे कृत 'चोर निकल के भागा' नाटक किस वर्ष प्रकाशित हुआ? ( )

(A) 1996 (B) 1995 (C) 1994 (D) 1993

भाग – 2

निम्नलिखित आठ प्रश्नों में से किन्हीं पाँच प्रश्नों के उत्तर दीजिए। प्रत्येक प्रश्न का उत्तर 200 शब्दों में देना अनिवार्य है। 5X6 =30

2. नाटक और एकांकी में क्या अंतर है? कुछ प्रमुख एकांकीकारों का परिचय दीजिए।
3. नुक्कड़ नाटक का परिचय दीजिए।
4. अंधायुग की कथावस्तु को अपने शब्दों में लिखें।
5. स्कंदगुप्त नाटक का अंत कैसे होता है?
6. हिंदी साहित्य में मृणाल पाण्डे के स्थान को निर्धारित कीजिए।
7. चोर निकल के भागा' नाटक के गौण पात्रों का परिचय दीजिए।
8. गांधी को हिंदू विरोधी ठहराने के लिए गोडसे के क्या तर्क थे? स्पष्ट कीजिए।
9. अन्य नाटककारों की तुलना में जगदीशचंद्र माथुर कैसे भिन्न हैं? विवेचना कीजिए।

भाग- 3

निम्नलिखित पाँच प्रश्नों में से किन्हीं तीन प्रश्नों के उत्तर दीजिए। प्रत्येक प्रश्न का उत्तर 500 शब्दों में देना अनिवार्य है। 3X10=30

10. नाटक का उद्भव और विकास बताते हुए उसके स्वरूप की चर्चा कीजिए।
11. प्रसाद के नाटक साहित्य की प्रमुख विशेषताओं को स्पष्ट कीजिए।
12. नाटक के प्रमुख तत्व क्या हैं और 'गोडसे@गांधी.कॉम' में इन तत्वों की उपस्थिति पर प्रकाश डालिए।
13. धर्मवीर भारती की जीवन दृष्टि पर प्रकाश डालिए।
14. 'असग़र वजाहत की रचनाओं में समस्याओं का विस्तृत विवरण है, लेकिन साथ ही समाधान की राह भी दिखाई गई है।' इस कथन की पुष्टि कीजिए।